।। श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ।।

।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ।।

श्रीपरशुराम सागर

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्य

श्रीपरशुरामदेवाचार्य जी महाराज

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥
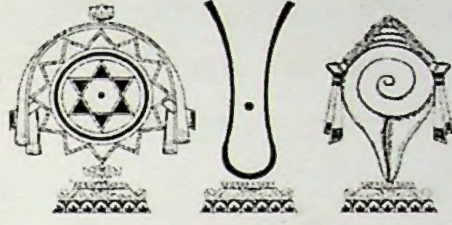
॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

श्रीपरशुराम - सागर

रचयिता-

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी (श्रीस्वामीजी) महाराज

संस्थापक :

अखिल भारतीय जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ - सलेमाबाद, पुष्करक्षेत्र जिला-अजमेर (राजस्थान)

प्रकाशक--

विद्वत्परिषद्

अ० भा० जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ

सलेमाबाद, पुष्करक्षेत्र, किशनगढ जि. अजमेर (राज०)

मिति - कार्तिक शुक्ल नवमी, सोमवार

वि० सं० २०७० दिनाङ्क ११/११/२०१३

२०७० श्रीनिम्बार्काब्द ५१०९

पुस्तक प्राप्ति स्थान :

१. **अ० भा० जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ**
निम्बार्कतीर्थ - सलेमाबाद, पुष्कर क्षेत्र
किशनगढ जि० अजमेर (राजस्थान)

२. **श्री श्रीजी की बड़ी कुञ्ज**
रेतिया बाजार, वृन्दावन (उ० प्र०)

प्रथम संस्करण : सम्वत् २०७०

प्रकाशन सेवा-
श्रीसुनीलकुमारजी–श्रीमती रेणुजी कोछड़, मुम्बई

मुद्रक :
कम्प्यूटर क्राफ्ट
दुकान नं. 152 के ऊपर
चांदपोल बाजार, जयपुर 302001

न्यौछावर
200) रुपये

॥ श्रीसर्वेश्वरो जयति ॥

॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री "श्रीजी" महाराज का प्रस्तुत ग्रन्थ विषयक पावन सन्देश-

श्रीपरशुराम-सागर का वैशिष्ट्य

जब जिज्ञासु साधक को पुण्यश्लोक आचार्यवर्यों का सान्निध्य एवं प्रपन्नता का अवसर मिलता है तब ही उसके मानस में श्रीभगवद्भक्ति का अङ्कुर प्रस्फुटित होता है। तब वह अपने जीवन को सार्थक कर पाता है। अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक सर्वनियन्ता सर्वेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश किया है--

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया। उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥

उत्तमश्लोक महापुरुषों की सेवा करें और उसके अनन्तर अपनी जिज्ञासा प्रकट करें। तब वे अपने भक्तिमय ज्ञान का उपदेश करेंगे।

श्रीहंस भगवान् महर्षिवर्य श्रीसनकादिक तथा देवर्षिप्रवर श्रीनारदजी जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यजी की पावन परम्परा में अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर रसिकराजराजेश्वर श्रीहरिव्यासदेवाचार्य जी महाराज हुए और आपके कृपापात्र शिष्य अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज जो गोवर्धन निकटस्थ निम्बग्राम (नीमगाँव) जहाँ भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यजी की तपःस्थली है वहाँ पर कुछ समय निवास के अनन्तर आपश्री मथुरा स्थित परशुरामद्वारा में विराजे। और अपने गुरुदेव की आज्ञा प्राप्त कर राजस्थान में पुष्करक्षेत्रान्तर्गत निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) पधार कर उपद्रवकारी मस्तिङ्गशाह फकीर को अपनी तान्त्रिक विद्या से परास्त किया और यहाँ निम्बार्कतीर्थ में श्रीसनकादिक संसेव्य श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा सहित भक्तों की प्रार्थना पर आपश्री ने अखिल भारतीय जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ की संस्थापना की और पुष्करक्षेत्र में भी आपश्री श्रीपरशुरामद्वारा स्थान में श्रीसनकादि संसेव्य श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा आराधना के साथ समय-समय पर निवास किया। आपश्री का कार्यकाल ५५० वर्ष पूर्ववर्ती है। और आपने यहीं निम्बार्कतीर्थ के पावन क्षेत्र में निवास कर अपने स्वरचित वृहद् आकार श्रीपरशुराम सागर की रचना की।

आपश्री के व्यक्तित्व-कृतित्व के सम्बन्ध में डॉ० श्रीरामप्रसादजी शर्मा एम० ए०, पीएच० डी० ने शोधकार्य करके सम्प्रदाय की महत्वपूर्ण सेवा की है। जयपुर से पूर्व प्रकाशित "श्रीपरशुरामसागर" की कतिपय प्रतियाँ ही शेष रही है तथा समग्र श्रीपरशुराम सागर ग्रन्थ का एक ही जिल्द में सुन्दर संशोधित स्वरूप में आचार्यपीठ विद्वत्परिषद् से प्रकाशन आवश्यक समझा गया। अतः श्रीसर्वेश्वर - श्रीराधामाधव प्रभु के अनुपम कृपाप्रसाद से इसकी विद्वत्परिषद् आचार्यपीठ से प्रथमावृत्ति प्रकाशित होकर प्रस्तुत है। जिसे विद्वद्जन अनुशीलन कर परम लाभान्वित होंगे। वस्तुतः "श्रीपरशुराम सागर का" यह परम वैशिष्ट्य है।

मिति-भाद्र कृष्ण ५ रविवार श्रीस्वामीजी महाराज का पाटोत्सव

वि. सं. २०७० दिनाङ्क २५/८/२०१३

--श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य

स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी

"आचार्यं मां विजानीयात्" इस श्रीभगवद्वचनानुसार आचार्यप्रवर श्रीभगवत्स्वरूप ही होते हैं। और श्रीभगवदिच्छानुसार ही इस भूतल पर समय-समय पर अवतरित होकर प्राणीमात्र को पावन बनाते हैं। उनका प्रत्येक कार्य श्रीप्रभु प्रीत्यर्थ ही होता है। वे निर्बाध रूप से इस भूमण्डल पर विचरण करते हुए वेदादि शास्त्रोपदेश से विभ्रान्त मानव को दिव्य आलोक की ओर अग्रसर करते हैं। सर्वदा धर्म, भगवदुपासना, वैष्णवता के प्रचार के लिये उनके सभी कार्य उत्तमोत्तम होते हैं। धर्म संरक्षण के लिये विविध कष्टों का भी वरण वे सरलता से कर लेते हैं और "वसुधैव कुटुम्बकम्" उनकी यह उदात्त भावना रहती है। अधर्म परायण प्राणियों को धर्म की ओर अभिमुख करना एवं आर्त प्रसन्नजनों को भगवत् शरणागति प्रदान करना उनका परम लक्ष्य रहता है। आचार्यप्रवर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज ऐसे ही एक महान् आचार्य थे, जिनकी असीम लोकोत्तर प्रखर प्रतिभा सर्वत्र परिव्याप्त थी। विधर्मी लोग भी आपके सुभग तेजोमय भव्य दर्शन कर भगद्भक्त बन जाते। भक्तमालकार श्रीनाभाजी महाराज ने आचार्यश्री की दिव्य महिमा का अनुपम वर्णन भक्तमाल ग्रन्थ के निम्नाङ्कित छप्पय से कितना सुन्दरतम किया है --

ज्यौं चन्दन कौ पवन निम्ब पुनि चन्दन करई बहुत काल तम निविड़ उदै दीपक ज्यौं हरई
श्रीभट पुनि हरिव्यास संत मारग अनुसरई कथा कीतर्न नेम रसन हरिगुण उच्चरई।
गोविन्द भक्ति मदरोग गति तिलक दाम सद्वैद हद। जंगली देश के लोग सबे परशुराम किय पारषद।।

--श्रीनाभाजीकृत भक्तमाल छप्पय सं. १३७

राजस्थान के खण्डेला राज्य के ग्राम ठीकरिया के गौड़ द्विज वंश को वि० सं० १४५० के लगभग अपने आविर्भाव द्वारा आपने अलंकृत। अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज से आपने वैष्णवी दीक्षा प्राप्त की और उन्हीं के संग-संग भारत भ्रमण करने को चल दिये। जब श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ने देवी को वैष्णवी दीक्षा देकर वहाँ की बलि प्रथा समाप्त कराई थी, उस समय श्रीपरशुरामदेव अपने गुरुदेव के साथ ही थे। उस घटना का स्थान आपने चढथावल और देववृन्द के बीच स्थित देवी का मन्दिर बतलाया है। इसका प्रमाण श्रीपरशुराम सागर में भी इस प्रकार मिलता है--

भजिये श्रीहरिव्यास जिनि, भगति भूपरि विस्तारी। दुति देव रीषि दुरसि, देवलोकनि अधिकारी।।
नर की कतियक बात, सुर्ग सुर सेवा आवै। भगत हूंण की हूंस, आय आगै शिर नावै।।
देवी बन चडथावड़ विचै थाम अस्थिर तामैं रहै। तिन दीच्छा लई परसराम, साखि प्रगट सब जग कहै।।

(परशुराम सागर प्रथम छन्द का जोडा ३३ वां छन्द)

जब राजस्थान, पञ्जाब, उत्तरप्रदेश आदि की प्रजा द्वारका आदि तीर्थों की यात्रा करने आती थी, तब श्री निम्बार्कतीर्थ में स्थित यवन तान्त्रिक उन्हें बहुत सताता था। दुःखित प्रजा ने श्रीहरिव्यासदेवाचार्य के चरणों में उपस्थित होकर प्रार्थना की--"आपके प्राचीन स्थल श्रीनिम्बार्कतीर्थ को एक यवन फकीर भ्रष्ट कर रहा है, उस प्रदेश में हिन्दुओं का यातायात लुप्त हो चुका है, अतः वहाँ की स्थिति सुधारने एवं उस यवन तान्त्रिक के आतङ्क से मुक्त करने के लिए अपने कृपापात्र किसी प्रतापी शिष्य को वहाँ भिजवावें।

जनता की करुण पुकार सुनकर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी ने अपने प्रमुख शिष्यों को श्रीनिम्बार्कतीर्थ में रहने के लिए पूछा तो सभी ने विवशता व्यक्त की। एक श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी ही कटिबद्ध होकर यहाँ पहुँचे और श्रीगुरुदेव

के आशीर्वाद से यवन तान्त्रिक को परास्त करके अपने इस श्रीनिम्बार्कतीर्थ की सुरक्षा की।

भक्तमालकार श्रीनाभाजी के ''बहुत काल तम निविड़'' इस वाक्य से यह भी ध्वनित होता है-यह क्षेत्र बहुत समय तक निर्जन या बीहड़ वन के रूप में रहा, और यहाँ चोर डाकुओं ने भी अपना अड्डा जमा लिया था।श्रीपरशुरामदेवाचार्य ने सदुपदेशों एवं कथा-कीर्तन आदि भगवत् आराधना द्वारा जंगली लोगों के हृदय में भगद्भक्ति का अंकुर जमा दिया। और वे सब सत्पुरुष श्रद्धालु बन गये।

यातायात की व्यवस्था सुधरने पर चारों ओर से भक्त समूह और राजा-महाराजा भी आने लगे। अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुसार नकद, जमीन, ग्राम आदि भेंट होने लगी। समय-समय पर आप मथुरा आदि तीर्थो की यात्रा भी करते थे। विक्रम सम्वत् १५१५ में जब मथुरा श्रीनारद टीला पर विराज रहे थे। तब खेजड़ला के भाटी सरदार साँवतसिंहजी ने वहाँ ही आपसे कण्ठी बँधवाई (वैष्णवी दीक्षा) और बादशाह से सलेमाबाद का ताम्रपत्र भेंट करवाया। उसके बाद यहाँ की आबादी उत्तरोत्तर बढने लगी और पास के व्यक्ति भी आ आकर रहने लगे।

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी की प्रसिद्धि सुनकर 'टीकमदास' नामक सन्त जल से आपूरित घट लेकर शरण में उपस्थित हुये। स्वामीजी ने उनका रहस्य समझ लिया और आपने उक्त घट में भगवान् का मधुर प्रसाद छोड़कर उक्त मधुर जल का आगन्तुक को आचमन करवाया। सन्त टीकमदास को अद्भुत आनन्दानुभूति हुई। फिर वे स्वतः कहने लगे ''भगवन् ! मैंने अनेक सन्त-महात्माओं का सत्संग कर अद्वैत-ज्ञान की परिपूर्णता अर्जित कर ली थी। 'ज्ञान की चरम स्थिति में भी मुझे आत्म-तुष्टि नहीं थी, मैंने आज मर्म समझा है कि माधुर्य रूपी भक्ति बिना ज्ञान अधूरा है। ज्ञान और भक्ति का सुन्दर समन्वय ही आनन्द है।' श्रीपरशुरामदेवजी ने कहा-आपने 'तत्व' समझ लिया है, आज से आप 'तत्वाचार्य' हो, जाओ, मारवाड में भक्ति का प्रसार करो। टीकमदास परशुरामदेवजी के शिष्य हो गये और फिर उन्होंने १६१६ में जयतारण (मारवाड) में गोपालद्वारा बनवाया और वहीं से आपने वैष्णव भक्ति का प्रचार किया और अद्भुत ख्याति पाई।

श्रीद्यालवाल के भक्तमालानुसार मेड़ता नरेश ने बुलवा कर अपने राजमहलों में श्रीपरशुरामदेवाचार्य का स्वागत सम्मान किया। आपके उपदेश एवं दर्शनों से मीरां के हृदय में भक्ति भाव का अंकुर सुदृढ हुआ। मेड़तिया नरेशों का आज तक श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ और आचार्यश्री के चरणों में वही श्रद्धाभाव अविछिन्न रूप से चला आरहा है।

सलेमाबाद के विकास होने के पश्चात् किशनगढ की आबादी और राज्य की संस्थापना हुई। महाराजा किशनसिंह को बादशाह से सरवाड़ आदि अन्य तीन परगनों के साथ-साथ सात गाँवों वाला परगना (सलेमाबाद) मिला और उन्होंने सर्वप्रथम श्रीपरशुरामदेवाचार्य के देवरै (मन्दिर) जमीन और कोसेटा भेंट किया। श्रीस्वामाजी महाराज की आराधना से राज्य और नरेन्द्र की उत्तरोत्तर समुन्नति होती रही। आज भी स्वामीजी के प्रति राजघराने की वही निष्ठा है।

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज को श्रीसर्वेश्वर (शालिग्राम) प्रतिमा में युगलकिशोर श्रीराधाकृष्ण का साक्षात्कार होता था। भक्त और भगवान् का परस्पर जो सम्भाषण होता था, उसका उल्लेख कृष्णगढ नरेश महाराजा राजसिंह की सुता भक्तिमती सुन्दरकुंवरिजी ने स्वरचित 'मित्र शिक्षा' ग्रन्थ में किया है।

माया सगी न मन सगो सगो न यह संसार। परशुराम या जीव को सगो सु सुरजनहार॥

इस वैराग्यपूर्ण उपदेश का किसी राजसी महन्त को अनुभव कराने के लिये श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी केवल उसे

ही साथ लेकर एकाकी नागपहाड पर एकान्त में चले गये। श्रीसर्वेश्वर की सेवा के समय प्रकट होकर श्रीकृष्णचन्द्र उनसे वार्तालाप करने लगे, किन्तु उसी समय कुछ दर्शनार्थियों को आते देख कर अन्तर्धान होने लगे। श्रीस्वामीजी उन्हें जाने देना नहीं चाहते थे, किन्तु भीड़ के अत्यन्त सन्निकट पहुंचने से पूर्व ही प्रभु अन्तर्धान होगये। वही श्रीसर्वेश्वर प्रतिमा उनके हाथों में विराजमान रह गई। भक्तों ने छड़ी चामरादि उपकरण और भोग सामग्री लाकर रखदी। जिस राजसी महन्त को श्रीस्वामीजी की रहनी और कहनी में विभेद का सन्देह होगया था, उसका वह सन्देह निरस्त होगया।

यह प्रसिद्ध जनश्रुति है कि बादशाह श्रीशेरशाह सूरी ने अपना ऐश्वर्य जतलाने के भाव से एक वेशकीमती दुशाला श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी को भेंट किया, जिसे उन्होंने अग्निकुण्ड में प्रज्वलित अग्निदेव के अर्पित कर दिया। भक्त की मानसिक वेदना मिटाने के लिये उसी अग्निकुण्ड से वैसे ही अनेक दुशाले चिमटा से निकाल-निकाल कर श्रीस्वामीजी ने उसके सामने डाल कर कहा-पहचान लो इनमें तुम्हारा शाल कौनसा है ?

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी प्रतिदिन पुष्कर स्नान करने पधारते थे और लौट कर अपना नित्य कृत्य करते थे। यह उनकी शारीरिक विशेषता थी। उसे आज उनकी चरण पादुकाओं (खड़ाउओं) और माला के दर्शन करके अनुभूत कर सहते हैं। वस्तुतः मानव के आकार और शक्ति का उत्तरोत्तर ह्रास होता जा रहा है। यह श्रीस्वामीजी की जीवनी से भी प्रमाणित हो रहा है। उनकी मानसिक और वाचिक भावनाओं का अनुभव उनकी वाणी (श्रीपरशुराम सागर) ग्रन्थ से कर सकते हैं। ''मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।'' श्रीस्वामीजी महाराज में यह उक्ति चरितार्थ होती है।

अन्तर्धान के समय पुष्कर, वृन्दावन और निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) तीनों स्थलों पर भक्तों ने आपके दर्शन किये। यह परम्परागत जनश्रुति चली आरही है--आपने जीवित समाधि ली थी। बहुत से भक्तों को बाद में भी आपके दर्शन होते रहे हैं। आपके अग्निकुण्ड (धूनी) की भस्म और नालाजी का जल अनेकों श्रद्धालु जनों के रोग दोषों को शान्त कर देता है। सौ-सौ दो-दो सौ वर्षों पूर्व के ऐसे पत्र विद्यमान हैं जिनमें दूर-दूर के राजा-महाराजा और भक्तों ने उपर्युक्त दोनों वस्तुओं सहित श्रीसर्वेश्वर प्रभु की प्रसादी तुलसीदल भिजवाने की प्रार्थना की है।

भवोहि विद्यते देवे न पाषाणे न च मृण्मये। इस उक्ति के अनुसार भाव में ही भगवान् रहते हैं, चाहे वह भाव पाषाण शिल्प में हो, रज के कण में हो। यदि भाव नहीं है तो साक्षात् प्रभु में भी प्रभु की प्रतीति नहीं होती । यह सत्य है--अन्यथा काशीराज वासुदेव पौण्ड्रक श्रीकृष्ण से युद्ध करने की धमकी क्यों देता। श्रीपरशुरामदेवचाचार्य में जिन भक्तों का श्रद्धाभाव है वे आज भी उनको प्रत्यक्ष देखते हैं और अपनी अभीष्ट प्राप्ति की कामना करके उसकी पूर्ति करा लेते हैं। मथुरा और पुष्कर का दोनों ही परशुराम द्वारा प्राचीन है। जयपुर का विशाल परशुरामद्वारा यद्यपि बहुत पीछे का है, किन्तु इन सभी स्थलों पर आपकी चित्र पूजा होती है। यहाँ श्रीआचार्यपीठ में भव्य चित्र, योगपीठ, माला, खड़ाऊ आदि आपकी स्मृति करा रहे हैं। वह एक प्रकार का प्रत्यक्ष ही समझना चाहिये। क्योंकि प्रत्यक्ष, संस्कार और स्मृति इन तीनों का कार्य-कारण सम्बन्ध माना जाता है। कारण ही कार्य रूप में परिणत होकर दिखाई दिया करता है। अतः अन्तर्हित श्रीस्वामीजी महाराज का हम उपयुक्त रूपों में प्रत्यक्ष करके परम शान्ति प्राप्त कर सकते हैं।

--अधिकारी श्रीव्रजवल्लभशरण

वेदान्ताचार्य-पञ्चतीर्थ

श्रीपरशुराम सागर परिचय

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज विरचित ३० ग्रन्थों का वृहद् संकलन 'श्रीपरशुराम सागर' के नाम से विख्यात है जिसकी सर्व प्रथम पोथी का निर्माण किसी अज्ञातनामा द्वारा 'श्रीपरशुरामवाणी' के नाम से संवत् १६७७ वि० में किया गया था तथा जिसमें इनके निम्नांकित ग्रन्थों का संग्रह किया गया था--

१. वाणी-साखी-ग्रन्थ २. छन्द कवित्त ३. प्रथम छन्द ४. दस अवतार ५. रघुनाथ चरित ६. श्रीकृष्ण चरित ७. सिंगार को जोड़ौ ८. सुदामा चरित ९. परबोध को जोड़ौ १०. नृफल विभे को जोड़ौ ११. भगति साखि को जोड़ौ १२.कर्म निंदि को जोड़ौ १३. देह देवल को जोड़ौ १४. द्रोपदी को जोड़ौ १५. गजग्राह को जोड़ौ १६. प्रह्लाद चरित १७. अमर बोध लीला १८. नांव निधि को जोड़ौ १९. सांच निषेध को जोड़ौ २०. नाथ को जोड़ौ २१. निजरूप को जोड़ौ २२. हरि को जोड़ौ २३. निर्वाण को जोड़ौ २४. समझणी को जोड़ौ
२५. तिथि को जोड़ौ २६. वार को जोड़ौ २७. नक्षत्र को जोड़ौ २८.बांवनी को जोड़ौ २९. विप्रमतीसी को जोड़ौ ।

श्रीपरशुरामसागर का दूसरी तथा अन्तिम बार संकलन संवत् १८३७ वि० में श्रीमनसाराम व्यास द्वारा किया गया था। मनसाराम व्यास ने 'श्रीपरशुरामवाणी' में श्रीपरशुरामदेवकृत ६३० गेय पदों को और जोड़ दिया, और इस प्रकार 'श्रीपरशुरामसागर' के नाम से श्रीपरशुरामदेवकृत समूचे साहित्य को लिपिबद्ध कर दिया गया। विप्रमतीसी लीला ग्रन्थ की पुष्पिका के अन्त में 'श्रीपरशुरामवाणी' का लिपिकाल संवत् १६७७ वि० अंकित किया गया है पर यहां लिपिकर्ता का नामोल्लेख नहीं हुआ है।[1] परन्तु इससे यह भ्रम नहीं होना चाहिये कि इसके लिपिकर्ता स्वयं श्रीपरशुरामदेव ही हों क्योंकि यदि श्रीपरशुराम स्वयं पोथी लिखते तो श्री 'परशुरामजी की वाणी' नहीं लिखा जाता। इससे यह भी स्पष्ट है कि पोथी का नाम 'परशुरामवाणी' पूर्ववर्ती निम्बार्कीय ग्रन्थ 'आदिवाणी'[2] 'महावाणी'[3] नाम-साम्य पर ही रखा गया था। इस पोथी के पश्चात् संवत् १८३७ वि० में परशुरामदेवकृत ६३० गेय पदों को और संग्रहीत कर तथाकथित परशुरामसागर के निर्माण की आवश्यकता क्यों हुई, यह भी विचारणीय है। संवत् १८२५ वि० में सूरसागर की सर्व प्रथम पोथी तैयार की गई थी और वैष्णव-मन्दिरों में इसके भक्ति पदों के कीर्तन की प्रथा व्यापक हो रही थी, ठीक ऐसी ही परिस्थितियों में सूरसागर के वजन पर 'परशुरामसागर' का निर्माण हुआ जिसमें 'परशुरामवाणी' के अतिरिक्त परशुरामदेव के ६३० गेय और रागबद्ध-कीर्तन-पदों को और जोड़ दिया गया।

यह भी कहा जाता है कि संवत् १६७७ वि० के पश्चात् और संवत् १८३७ वि० से पूर्व कभी किसी अज्ञातनामा द्वारा 'परशुरामसागर' की मूल पोथी का लिपिकरण कर दिया गया था तथा जिसके आधार पर संवत् १८३७ वि० में मनसाराम व्यास ने अपनी बहिन भक्तिमती अनोपा के लिये एक और प्रति लिपिबद्ध की, क्योंकि ग्रन्थ की अन्तिम पंक्तियाँ इस तथ्य की और भी संकेत करती हैं।[4] पर यह मूल पोथी अप्राप्य हैं और आज परशुरामसागर की जो प्रतियाँ वर्तमान हैं उनमें पूर्वोक्त उल्लेख मिलता है।

---

१. इति श्रीपरशुरामजी की वाणी संपूर्ण।। पोथी को संवत् १६७७ वर्षे।

२.-३. क्रमशः श्रीभट्ट और हरिव्यासदेवकृत ग्रन्थ।

४. इति श्री श्री श्री श्री श्री परशुरामदेवकृत ग्रन्थ रामसागर सम्पूर्णं।। संवत् १८३७ /मिति ज्येष्ठ बदि ९ बुधवासरे।। लिपिकृतं व्यास मनसाराम पठनार्थं बाई अनोपा।।

परशुरामवाणी में 'गेयपद' जोड़कर 'परशुराम सागर' की पोथी का निर्माण किया गया, इस प्रकार आज परशुराम सागर के नाम से परशुरामदेवकृत ३० ग्रन्थों का संग्रह उपलब्ध होता है। जिनको हमने रचना-शैली के आधार पर निम्न चार खण्डों में विभक्त किया है--

अ. वाणी-साखी-ग्रन्थ (२२२५ दोहों का एक ग्रन्थ)
ब. कवित्त-सवैयादि में रचित ग्रन्थ (छन्द कवित्त से प्रह्लाद चरित तक कुल १५ ग्रन्थ)
स. लीला ग्रन्थ (अमरबोध लीला से विप्रमतीसी लीला ग्रन्थ तक कुल १३ ग्रन्थ)
द. गेय पदावली (६३० गेय पदों का एक ग्रन्थ)

प्रकाशन की दृष्टि से प्रत्येक खण्ड को सारगर्भित आकर्षक और उपयुक्त नाम देने के लिए हमने उपयुक्त खण्डों का निम्नांकित नाम करण किया है--

१. परशुराम वाणी (परशुरामसागर का प्रथम खण्ड)
२. परशुराम-चरितावलियाँ (परशुरामसागर का द्वितीय खण्ड)
३. परशुराम-लीलाएँ (परशुरामसागर का तृतीय खण्ड)
४. परशुराम-पदावली (परशुरामसागर का चतुर्थ खण्ड)

प्रथम खण्ड 'परशुरामवाणी' में परशुरामदेवकृत २२२५ साखियों का प्रकाशन किया गया है। द्वितीय खण्ड 'परशुराम-चरितावलियाँ' में १५ ग्रन्थ प्रकाशित किये गये हैं। इस खण्ड में दस अवतार चरित, रघुनाथ चरित, श्रीकृष्ण चरित, सुदामा चरित तथा प्रह्लाद चरित प्रमुख रचनाएँ हैं। साथ ही इस खण्ड का प्रह्लाद चरित ग्रन्थ सबसे बड़ा ग्रन्थ है जिसमें ५०५ सवैया छन्द विद्यमान हैं। इन चरित ग्रन्थों के अतिरिक्त ग्रन्थों में 'प्रथम छन्द' तथा 'नृफल विभै' को छोड़कर अन्य सभी अल्पकाय हैं। 'चरित' ग्रन्थों की इन विशेषताओं के कारण हमने इस खण्ड का नाम 'परशुराम चरितावलियाँ' रखा है।

तृतीय खण्ड 'परशुराम लीलाएँ' में परशुरामदेवकृत १३ लीलाओं का प्रकाशन किया गया है। चतुर्थ तथा अन्तिम खण्ड 'परशुराम पदावली' में परशुरामदेव द्वारा विरचित ६३० रागबद्ध-गेय-पदों का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

हमने श्रीपरशुराम सागर की दो पोथियाँ देखी हैं जिनमें एक श्री श्रीजी की बड़ी कुञ्ज वृन्दावन में विद्यमान है तथा जिस पर जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य का सर्वाधिकार है। यह पोथी अब जीर्णावस्था है। आरम्भ में यह श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ परशुरामपुरी (सलेमाबाद) के संग्रहालय में सुरक्षित थी तथा जिसे सन् १९४२ ई० में स्वामी प्रयागदासजी के अस्थल उदयपुर प्रकाशनार्थ ले जाया गया जहाँ इसके प्रथम ग्रन्थ 'वाणी' को, सम्पादक श्रीवियोगीविश्वेश्वर ने 'परशुराम दोहावली' के नाम से प्रकाशित करवाया।[1] डॉ. मोतीलाल मेनारिया ने इसी पोथी को देखकर 'परशुराम सागर' का परिचय अपनी खोज में दिया है।[2] इस पोथीइस पोथी में कुल २९९ पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठ पर २५ पंक्तियाँ हैं और प्रत्येक पंक्ति में २२-२५ अक्षर हैं। लिखावट साफ है जिसे सुगमता से पढा जा सकता है। जब उदय प्रेस से इसके प्रकाशन की योजना असफल रही तो यह पूर्वोक्त स्थान पर श्रीनिम्बार्काचार्यजी के 'श्रीसर्वेश्वर

---

१. 'उदय' पत्र वर्ष ४। परशुरामांक 'दोहावली' उदय प्रेस उदयपुर में सन् १९४२ ई. में प्रकाशित।
२. राजस्थान में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज पृ.१७०-७१ सन् १९४२ ई. का संस्करण।

प्रेस' में प्रकाशनार्थ लाई गई इस प्रकार दोनों पोथियों में परशुरामदेवकृत ३० ग्रन्थ एक ही आकार और स्वरूप में हैं (वि० सं० २०२४ के संस्करण से)।

भारतीय इतिहासकारों ने स्वामीजी के समय को मध्ययुग कहा है। यही मध्ययुग मुस्लिम शासकों की निरंकुशता, अत्याचार एवं क्रूरता के लिए प्रसिद्ध रहा है। अनेक इतिहासकारों ने इस समय की राजनैतिक अराजकता-सामाजिक दुर्व्यवस्था एवं धार्मिक अत्याचारों का खुलकर वर्णन किया है। हिन्दुओं के लिए यह काल घोर कष्ट-यातना एवं अत्याचार को पशुवत् सहन करते रहने का था। क्रूर एवं धर्मान्ध इस्लामी शासकों ने हिन्दुओं के समाजिक धार्मिक नियमों और विश्वासों का अन्त कर दिया। हिन्दू भी स्वयं आत्मबल, निर्भीकता एवं कर्मण्यता को भूल चुके थे। बल प्रयोग एवं पदलोभ से हिन्दुओं में धर्मत्याग की भावना बनती जारही थी और वर्ण-संकरता का आना भी स्वाभाविक था। दूसरी ओर उनमें अपनी रक्षा हेतु साम्प्रदायिक-कट्टरता जातिपांति, धर्मान्धता और हठधर्मिता भी बढती जारही थी -इन सब परिस्थियों में हिन्दू समाज को पुनः स्वस्थ बनाने के लिए मेधावी एवं परम मनस्वी सन्तों का महान् आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। गोरखनाथ, रामानन्द, कबीर, श्रीपरशुरामदेव, वल्लभाचार्य आदि का जन्म हुआ।

धर्म के क्षेत्र में पुनः उग्र एवं व्यापक भक्ति आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। ऐसे ही विकट संघर्षकाल में पवित्र भारतभूमि पर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज का आविर्भाव हुआ। मानों मातृभूमि का उद्धार करने हेतु साक्षात् सहस्रबाहु संहारक श्रीपरशुरामदेव ने अवतार लिया था। श्रीपरशुरामदेवाचार्य युगसृष्टा साहित्यकार थे। जिन्होंने हिन्दुओं में फैले हुए जाति-पांति-धार्मिक-साम्प्रदायिक भेदभाव-बहुदेववाद-ब्राह्मणवाद तथा छुआछूत की कुत्सित परम्पराओं का खण्डन तात्कालिक हिन्दू समाज को एकसूत्रता से बांध दिया। दूसरी ओर सरस मधुर वैष्णवी उदारतापूर्ण वैष्णवी भक्तिभावना से हिंसात्मक प्रवृत्ति, कट्टरता, धर्मान्धता एवं हिन्दुओं के प्रति व्यापक अत्याचारों का अन्त कर दिया। उत्तरी भारत में रामानन्दाचार्यजी ने भी ऐसा ही सुधारवादी भक्ति आन्दोलन किया था पर उनके उपदेशात्मक सन्देश मरूभूमि तक नहीं पहुँच पाये थे, अतः परशुरामदेवाचार्य ने ही लोकभाषा के माध्यम से समूचे मारवाड का कल्याण कर दिया। रामानन्दाचार्यजी के शिष्य कबीर-रैदास-धन्ना-पीपा आदि परशुरामदेव के समकालीन थे तथापि इस काल में जो स्थान आचार्य होने के नाते श्रीरामानन्ददेवजी को प्राप्त हुआ वही स्थान मरुभूमि में सर्वप्रथम निम्बार्कीय वैष्णवाचार्य होने के नाते श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी को प्राप्त हुआ। परशुरामदेवाचार्यजी के सन्त साहित्य के आधार पर इन्हें भी सन्त साहित्य का प्रतिनिधि कवि माना जाना चाहिये और जो स्थान कबीर को प्राप्त हुआ है वही श्रीपरशुरामदेव को प्राप्त होना चाहिये।

अन्तर्साक्ष्य के आधार पर श्रीपरशुरामदेवाचार्य का जन्म स्थान खण्डेला क्षेत्रान्तर्गत स्थित ठीकरिया गांव को माना जाता रहा है। मेरे पुनरालोचित मतानुसार मैं अब स्वीकार करता हूँ कि ठीकरिया के विलुप्त गौड़ ब्राह्मण परिवार से वि० सं० १४५० के आस-पास श्रीपरशुरामदेव का जन्म हुआ था तथा बाल्यकाल में ही श्रीगुरु हरिव्यासदेवाचार्यजी के शरणागत हो गये थे। वि० सं० १५-१६ वीं शताब्दी के अत्यन्त ख्यातिमान निम्बार्काचार्य श्रीपरशुरामदेवाचार्य निम्बार्क सम्प्रदाय परम्परान्तर्गत, गुरुवर्य्य महावाणीकार श्रीहरिव्यासदेवा-चार्यजी के उत्तराधिकारी शिष्य थे जिन्होंने निम्बार्क सम्प्रदाय की ३६ वीं पीढी को अपने परम शयस्वी वर्चस्व से अलंकृत किया था।

दासानुदास-

डॉ० रामप्रसाद शर्मा

गुरु पूर्णिमा सं.२०७०

स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी के वाणी साहित्य के प्रतिनिधी प्रसङ्ग

जगद्गुरु निम्बार्काचार्य स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी के प्रणीत वाणी साहित्य में परमेश्वर का निर्गुण सगुण रूप, भगवान् की भक्ति कर्म ज्ञान योग से उपासना, भक्ति भक्त व भगवान् का लीला स्वरूप, साधना विधी, फलितार्थ चरित्रार्थ, लौकिक जगत् में धर्म भक्ति की अनुकूलता में प्रतिकूलतायें आदि के साथ जीव जगत् व परमेश्वर का वेदान्त दर्शन के अनुरूप अपना विवेकजन्य अनुभूत दर्शन व्यक्त हुआ है।

स्वामीजी के वाणी साहित्य से कुछ सारभूत प्रतिनिधी रचनायें श्रद्धालु पाठकों को स्वामीजी के विचारों का प्रारम्भिक आस्वादन करने के लिए यहां उद्धृत कर रहे हैं।

--सम्पादक

श्रीगुरु स्वरूप महिमा महात्म्य की साखी-

श्री गुरु अंकुस परसराम, तबही सुख संतोष। श्रीगुरु को अंकुस नहिं तौ, सुमिरन सील न पोष॥
हरि सुमिरण कौ संग लै, खोजे बहुत ग्रिन्थ। हरि हरि-भगत न भूलई, य परसराम को पंथ॥
बात उजागर प्रसराम, जाणै सब संसार। श्री गुरु काढै काल तै, उतरि गये भव पार॥
सांचो गुरु सांची कहै, झूठो बकै कुवांणि। सांचौ सीझै प्रसराम, झूठो दाझै जाणि॥

सतसंग की साखी-

जिहि संगति सोभा बढै, सोइ सतसंग विचारि। यिहि सुनि सोभा हीन कौ, परसा संग निवारि॥

परमेश्वर की साखी-

परसा सांचो हरि सगो, जु सबको स्रिजन हार। सबको पालैं पोष दे सब की करै संभारि॥
ब्रह्मा ब्रह्मांड परसराम, मिलि करै सब अराध। जहां सैं उप्जै फिरि बसै, सोइ हरि सिंधु अगाध॥
जन हरि आगे उद्धरे, पावन पतित अनेक। सो हरि अंतरि परसराम, व्यापक अब तब एक॥
जाने कौण अगाध की, जाकै आदि न अंत। हरि दरिया मैं प्रसराम, हम से जीव अनंत॥
कूणै कथ्यो सकैलि करि, नख सिख लौं हरि राय। हरि दरिया मैं प्रसराम, कहि सुनि सबै समाय॥
परसा व्यापक येक हरि, सब सारिखौं कहाय। ज्यौं काष्ठ रु पाषाण में, पावक रह्यो समाय॥
अंतरजामी येक हरि, प्रगट सदा सब मांहि। परसा व्यापति दूसरी, व्यापक सूझे नांहिं॥

जीव सम्बन्धी साखी-

सोइ ब्रह्म सोइ जीव है, परसा समझि विचारि। जीव करम सु·मिलत रहै, ब्रह्म कर्म तैं न्यारि॥
परसराम जलबूंद तैं, जिनि दीनूं नरदान। हरि जाणैं गति जीव की, हरि गति जीव न जान॥

जीव की कर्म गति की साखी-

अपणा कीया दूरि करि, हरि का कीया देखि। मिटै न काहू तैं कदै, परसराम हरि लेखि॥

परसा जो नर मनमुखी, चालै स्वान सुभाइ। सिंघासनि जु बैठारिये, चाकी चाट न जाइ॥
परसा प्रभु तजि आन की, हंस न करिये आस। परिहरि छीलर हीन जल, हरि सरवर करि वास॥

हरि भजन सम्बन्धी साखी-

पार उतारै संग लै, राखै अपणी छांह। हरि प्रीतम भजि प्रसराम, निर्बाहै दै बांह॥
हरि सनमुख सिरनाइये, जपिये हरि को जाप। हरि उर तैं न बिसारिये, परसा प्रेम मिलाप॥
हरि बेसास न बीसरै, रहै सदा इकतार। परसराम जन सत्य करि, तांके प्रेम सिंगार॥
जाकौ विनसै जाय कछु, ताहीं कों बहु चिंत। प्रभु कै सारै प्रसराम, सोई रहै निचिंत॥
भाजि गये भकभूरि नट, सूर न छांडै ठौर। ऐसो औसर प्रसराम, आइ मिलै कब और॥
परसराम जो मन मरै, छूटि जाय सब आस। प्रेम सरस अंतरि बसै, सुठी भगति बेसास॥

विरह को जोडो साखी-

अंतरि विथा सुतन जरै, बहुत गये टकटोय। परसा पूरै वैद बिनु, वेदनि लखै न कोय॥
दुखी पुकारै दरस बिनु, दीनानाथ दयाल। तुम बिन सुख सूझै नाहिं, परसा पति गोपाल॥

शरणागति की साखी-

तन मन हरि कौं सौंपिये, तजि आपौ अहंकार। तब प्रभु मानैं प्रसराम, जब करि रहि निर्भार॥

लोक लाज हरि भजन में बाधा की साखी-

परसा लोग न छांड़ई, लोक लाज ब्यौहार। लज्या छांडि न हरि भजै, जाय बह्यो संसार॥

काम विषय की साखी-

अप बंधनि पड़ि माकड़ी, उरझि मरै तामांहि। परसा जग जंजाल तैं, जीव विछूटै नांहि॥
जब लगि मन कै कामना, तब लगि मन थिर नांहि। परसा भरमैं भेद बिनु, भूखै भोजन मांहि॥
जनम अकारथ प्रसराम, विषई बारह मास। तातैं स्वान सुक्यारथौ, कातिक रुति बेसास॥

माया सम्बन्धी साखी-

परसा माया कारणै, कीनै बहुत उपाय। माया मिली न हरि मिल्यौ, चाले जनम ठगाय॥
माया मंदिर कर्म बंध, मोह बलींडा छानि। मेर तेर तिन जेवड़ी, परसा ग्रही अग्यानि॥
परसा माया सब डसै, माया डसी न जाय। मैं मेरी कहि बहि गये, कै राणा के राय॥
मेरि मेरि सबै कहै, कहि कहि मरि मरि जांहि। परसा समझि न देखहीं, पहली हुता कि नांहि॥

दस अवतार चरित में वामन व परशुराम सवइया-

(दुर्मिल) -- सु डिगै कइसैं जिनि टेक गही सति सेवग जो व्रतधारि कहै॥
जिनि दान दई पृथवी पति कूं तिनि पूठिम पावत भार सहै॥

छलनैं कुँ गयौ सुँइ आप छल्यौ सु बिना जनकौ इसिटेक गहै ।।
प्रसराम कहै व तँतीस लियै बलि कै चत्रमास दुवारि रहै ।।

(दुर्मिल)-- असुरां सिर जोध महादल कौ पति सीहश्रवाह संग्राम हये ।।
सबही जु खित्रीवल हीण मिटै हुइ निस्सत कच्छनि कच्छ रहे ।।
तबतैं भुवदानि दई विप्रासु महा प्रभु दीन दयाल भये ।।
प्रसराम संभारि पिता पति राखन नाथ अनाथ सुनाथ किये ।।

रघुनाथ चरित-दुर्मिल-

(मुक्त-छन्द घनाक्षरी लयाधार)--

राम स्याम सुंदर सरीर, तारन सेना सुनीर,
उदित उदधि तीर, सबही नवाइ सीस, जाय डेरा दियै ।।
अति ही सुकपिदल, देखियत महाबल, माचि रह्यो
खल भल, आई न गई कौ छेह, घासै हिये हियै ।।
वाजै वांदर वूंकार, कूदै करै किलकार,
पदम अठारह जानि, अपणी समीप मांनि, मेलि राघौ लियै ।।
सारण सुराँ कै काम, ऐसै प्रभु परसराम, भजै
जै सुनैं सुनाम, जेते केते द्रसपाय, जीव जंत्र जियै ।।

(दुर्मिल सवैया)--

प्रगटै नंदनंदन ग्वाल लिय जित ही तित प्रीत सुधाय गहीं ।।
बनमाहिं रूकी न बसाय कछू अति संकट औघट घाट जहीं ।।
करियै कहा और उपाय न कौ हरि ठाडै हुतै सबि आइ तहीं ।।
परसा सुखसिंधु समागम होइ सलिता सखी संग छाँडि वही ।।

पयार छन्द भक्तितत्व-

सुद्ध सोई आतमा रु सूर संसार मैं, सुनाम हरि नर सिंघ कौ जाहि भावै ।।
सर्व सो जाण हरि सुमरि जाणै जिकौ, परम पंडित अरु सुची सोई कहावै ।।
ग्यान करि धियान आराध कोऊ करौ, सोई सदा हरि सिंघ कौ दरस पावै ।।
या साखि लै सबै सीखौ सुणू हरि भजौ, इसौ धर्म प्रहलाद परसा बतावै ।।

नामलीलाविषयक-

उंकार अपार अति सार, सोइ है हरि पार। आदि अंत इक तार मद्धि, सोई है विसतार।।
पाछौ होत न पिवत मन, अचवत आरति वंत। परसराम आनंद पद, सेवत मिलि सब संत।।
कहण कहावण कर्म करण, कर्म कारिक कहत हर। करसणि किसाण कसु करण, कसण कसौटि कसकर।।

खेत्रगि खड वंसि कौ षिता, पिता षरा रुद्र रारि। खेमो निति खरा अरोग, खेमि कर खडग धारि॥

नामनिधी लीला-

(राग मारू)

चौपाई

हार्यो अणहार्यो सब हार्यो॥ हरि बिन जनम पदारथ हार्यो॥१॥
बीतौ अणबीतौ सब बीतौ॥ हरि बिनि जनम वादिही बीतौ॥२॥
खोयो अणखोयो सब खोयो॥ नर औतार भगति बिन खोयो॥३॥
गयो अणगयो सबही गीयो॥ हरि बिन नर निरफल बहि गीयो॥४॥
खोई अणखोई सब खोई॥ जो नर देह नांव बिन खोई॥५॥

निजरूप लीला-

सुमरि सुमरि मन हरि निरभार॥ हरि सुख सिंधु वार नहिं पार॥२॥
व्यापक ब्रम्ह कर्म तैं न्यार॥ मैं मैं रहित रमित रंकार॥३॥
हरि निजरूप निरूप पिछांणि॥ जाहि चिंतत चिंता की हाणि॥४॥
अखिल अनंत अमर नहिं मरैं॥ ना सरीर नाना तन धरैं॥५॥

हरि लीला-

रहै सदा निरभार अभारा॥ ताकौं हरि लागत अति प्यारा॥१॥
हरि प्यारौ उर तैं न बिसारै॥ रटै अखंड नाम व्रत धारै॥२॥
जो कोउ हरि सुम्रण व्रतधारी॥ सो न जन तिहूं लोक अधिकारी॥३॥
अधिकारी जो हरि विसारै॥ हरि पतिवरत न उर तैं टारै॥४॥
हरि बिनु और कहूँ सुख नाहीं॥ जहँ कहुँ जाय जरै दुख माहीं॥५॥
अति संकट दारुणि दुख भारी॥ तजत न जीव जमनिका प्यारी॥६॥
महामोह ममता मन लीनां॥ रहत सदा परवस मति हीनां॥७॥
मति हीनां रासब चढ़ि धावै॥ हरि गजराज न हिरदै आवै॥८॥
हरि रस डांरि विषै रस पीवैं॥ प्रथग सदा हरि हीन न जीवै॥९॥
महामूढ मन मरम न जानैं॥ हरिपुर तजि जमपुर रुचि मानैं॥१०॥

राग ललित-

गोविंद मैं बंदीजन तेरा॥
प्रात समै नित उठि गाऊं तौ मन मानैं मेरा॥टेक॥
किर्तम कर्म भर्म कुल करणी ताकी नाहिं आसा॥
तेरा नांव लिया मन मानैं हरि सुमरण वेसासा॥१॥

करूं पुकार द्वार सिर नाऊं गाऊं ब्रम्ह विधाता॥
परसराम जन करै बीनती सुणियौ अवगति नाथा॥२॥१॥

राग भैंरू-

सत गुरु सोज बतावै याहि॥
तन तैं बिछुरि कहां मन जाहि॥टेक॥
घट फूट्यां प्राणी कहां जाइ॥ जा तन दीसै रहै न माहि॥१॥
छांडि माया भयो उदास॥ कौण गयो कहां पायो वास॥२॥
बाजत पवन थकित होइ रह्यौ॥ माटी परी धरणी घरु गह्यौ॥३॥
बोलन हार मरे नहिं सोई॥ तौ को जीवै को मिर्तक होई॥४॥
सुरति निरति मैं रही समाइ। नां सोई आवै ना सोई जाइ॥५॥
परसराम एक अचरज भयो॥ तौ को ठाकुर को जन होइ रह्यो॥६॥१०॥

राग विलावल-

बल औतार स्याम सुखदाइक॥
पूरब प्रीति संभारि नंद की भगति हेत जसोदा वसि आइक॥टेक॥
उधौ कुबिजा अक्रूर देवकी अग्रसेन वसुदेव मनभाइक॥
संकित असुर कंस कुल जीय मैं आयो काल निकटि न सुहाइक॥१॥
घर घर मंगलाचार बधाई नरनारी गावै जस वाइक॥
परसराम प्रभु कृष्ण कंवल दल मथुरा प्रगटै वैकुंठ नाइक॥२॥३५॥

राग विलावल--

विप्र जनम सब तैं भलो जो हरि फल लागै॥ हरि लीव लीण सदा रहै जु संसारहिं त्यागै॥टेक॥
हरि जप हरि तप व्रत हरि तीरथ न्हावै॥ हरि तजि कर्म न भर्मई सोई विप्र कहावै॥१॥
द्वादश अर्द्ध सदा करै अष्टार्द्ध जानी॥ सष्टार्द्धन परहरै विप्रा सबमानी॥२॥
हरि सेवा सुमिरन करै और न करि जाणैं॥ ब्राह्मण सोई परसराम जो ब्रह्म पिछाणै॥३॥४३॥

राग रामगरी--

प्रीतम पर्म दयाल सौं मिलि मैं सुख पायो॥ पोषि सुधारस सौं हरि दुख दूरि गंवायो॥टेक॥
विरह असुर की त्रास तैं जु तन मन मुरझायो॥ जिनि मृतक जिवांवण कारणैं सु अमृत वरसायो॥२॥
जिनि विरह जरत पीय प्रेम सौं उर सीचि सिरायो॥ पीव परसि पर्म मंगल भयो मेरे मन कौ भायो॥३॥
अति आरति विलसत सदा पीय सरस सुनायो॥ परसराम मन प्यासो खरो पिवत नाहीं अघायो॥३॥३२॥

राग सारंग--

केसौ कहि तन मन छीजै॥

तुम अंतर जामी जन परचै बिन कही क्यौं प्राण पतीजै ॥टेक ॥
भौ मंडल दाझै संगि पावक बिण बिरखा क्यौं भीजै ॥
दीन दयाल सुणौ करुणामय कृपा सुकारण कीजै ॥१ ॥
होऊ कृपाल भगत हितकारी हित करि दरसन दीजै ॥
तुम बिन बिलपत परसराम जन सरणि आपणी लीजै ॥२ ॥४१ ॥

राग सारंग--

खेलत रास रसिक राधावर मोहन मंगल कारी ॥
सोभित स्याम कमल दल लोचन संगि राधिका प्यारी ॥टेक ॥
सिर सिखंड उरि विविध माल मुरलि धुनि करण मुरारि ॥
कटि काछनी बन्यो उपरैनां पीताम्बर सोभित बनवारी ॥१ ॥
बन्यो अधिक गोपिनी कौं मंडल मधि गोवरधन धारी ॥
कर सौं कर जोरैं नटनागर नाचत केलि बिहारी ॥२ ॥
राजित अति नाना गति निर्तत सुन्दर वर ब्रजनारी ॥
मोहे सिव ब्रम्हादि मनोज सुर हरि औसर सुखभारी ॥३ ॥
अविगत नाथ निर्गुण वपु धरि सगुण लीला विस्तारी ॥
भगति हेति आधीन अभै पद परसा जन बलिहारी ॥४ ॥४७ ॥

राग सारंग--

मंगल नाम हरि जो गावै ॥ सोई मंगल जु मंगल पद गावै ॥टेक ॥
मंगल हरि कीरति फल मंगल ॥ मंगल प्रेम पीवत रस मंगल ॥१ ॥
मंगल कमल नैन सुख मंगल ॥ मंगल अवलोकति सुख मंगल ॥२ ॥
मंगल वपु लीला धर्‍यो मंगल ॥ मंगल ध्यान करत निज मंगल ॥३ ॥
मंगल कृष्ण प्रणाम सुमंगल ॥ परसा प्रभु सेवत बड़ मंगल ॥४ ॥५७ ॥

राग सारंग--

भजि मन राम विसंभर राया ॥
मैं मेरि कैं फंद पर्‍यो पसु मूरखि मरम न पाया ॥
पति जियत विवचार करत कित करता आप कहाया ॥१ ॥
कनक भुवन सुंदरी सुत बंधव यह परपंच पराया ॥
ताकौं देखि फिरत कित फूल्यो अति गारै गरवाया ॥२ ॥
मेरी तेरी तेरी मेरी कहि कहि जनम गंवाया ॥
यह जाकी है ताही पैं जैहैं तू को देखि भुलाया ॥३ ॥
खेति मुगध हरि भजि मन मूरखि को करता काकी या माया ॥

परसराम भगवंत भजन बिन कह कौंणौं सचु पाया ॥४॥१०४॥

राग सारंग--

हूं गोपाल भजन कौं पाऊं॥

त्रिपति न करौं पर्मरस अचवत या रसनां रचि कैं जसु गाऊं ॥टेक॥
तिरि भव सिंधु सरणि सतन की निर्भै निज नीसांण बजाऊं॥
छांडि सबै तन मन मेरे की सनमुख होय चरननि कौं धाऊं॥१॥
यौं संसार कठिन करूणा मैं ता दुख मैं फिरि काहै कौं आऊं॥
परसराम जल बून्द होय कैं प्रभु हरि दरिया मद्धि समाऊं॥२॥११४॥

राग सारंग--

जन कौ मोहन अग्याकारी॥ भगत बछलता टरत न टारी॥टेक॥
जाकी साखि निगम निति बोलै॥ जन कै संगि लागै हरि डोलै॥१॥
लीला कौ प्रभु सेवग सारै॥ परसा जो सुमरै ताहि पारि उतारै॥२॥१५२॥

राग सारंग--

ऊधो भली भई तुम आये॥

हरि प्रीतम की कथा अनूपम हम चाहती तुम ल्याये॥टेक॥
आरती अधिक हुति सुवदन देखत ही नैन सिराये॥
मानूं ऋति ग्रीषम कैं अंत कि मैं दादुर मरत जिवाये॥१॥
निसि वासुर हेरत ही तुम कौं अति आतुर हम पाये॥
अब कहि नीकैं परसा प्रभु के गुण मुखि मीठे मन भाये॥२॥१६१॥

राग बसन्त--

वृन्दावन विहरत श्री गोपाल॥ संग सखा लिए हैं बहुत बाल॥टेक॥
बहु विलास जहां खेलि हासि॥ प्रमदा सब परी है प्रेम पासि॥१॥
रस विलास आनन्द मूल॥ निविड़ कुंज तहां फूले हैं फूल॥२॥
जहां विधि बसन्त आनब होय॥ तहां परसराम जन देखैं सोय॥३॥८॥

राग गौडी--

संतौ राम सगौ किन गावो॥

तजि सींव कौ विकार महादुख झूठ कहा चित लावो॥टेक॥
पल्लव गह्यां न पेड़ पाइये पेड गह्यां फल पावै॥
वा फल कौ रस चाखै कबहूं तौ मरै न संकट आवै॥१॥

बाहरि है सोई भीतरि खोजि सलूझै ॥
है ब्रम्हंड पिंड तैं न्यारा हरि सेवग कौं सूझै ॥२॥
रंग महल गति महली जाणैं महली मिल्यौ कहै मारौ ॥
परसा मरण सहै सोई देखै दुहूं मैं एक विचारौ ॥३॥४३॥

राग कल्याण--

श्री गोपाल गोवर्धन धारी ॥ गोविन्द गोपीनाथ बिहारी ॥टेक॥
गोपीवर गिरराज गुसांई ॥ गुण सागर गुण प्रेम तहांई ॥१॥
गुण अतीत गुण सौं मिलि गावै ॥ अगई गोकुल नाथ कहावै ॥२॥
गरूडारूढ़ हरि गरूड़ागामी ॥ गरूड ध्वज गरूड़ासन स्वामी ॥३॥
गरूडराज गुण गहर न लावै ॥ परसा प्रभु गह्यो गज मुकतावै ॥४॥५॥

राग कनडौ--

मोहन मोहनी मोह्यो मन ॥
अब न रहत इहां जात उहांई परि गयो ऐसोई बाण ॥टेक॥
अब कहा होय कहे काहू कैं नखसिख बेध्यो प्राण ॥
भृकुटी धनुष नैन सर कर सूं दै अंजन खर साण ॥१॥
नैंक चितै चित सौं चित जीत्यो दे राखी अप आण ॥
ज्यौं रवि किरण सोखि सब कौ रस नैक न दीनौं जाण ॥२॥
जाकै वसि त्रिभुवन सचराचर रज गज मसक समाण ॥
सोई वसि भयो परायैं परसा प्रीतम परम सुजाण ॥३॥१२॥

राग सोरठि--

हरि हरिजन की बोर ढरै ॥
दुरजन कष्ट दैंत तब तब ही आय साय करै ॥टेक॥
व्यंग वचन केई कहत हासि करि कैई करि क्रोध लरै ॥
कैई दुख देत लेत परचैं कौं कुल बल समत धरै ॥१॥
कैई दुर्वाद वुचारत निर्लज बंघुनि कर्न भरै ॥
फिरि सनमुख लै करत प्रसंसा मिलि नाव भरै ॥२॥
केई वुतपात उठावत हठि हठि सेवा सौंज हरै ॥
लै लै दोस लगावत हरिजन वाद विवाद अरै ॥३॥
करत उपाय मरन कौ अनहित व्है मन मतै खरै ॥
नित रक्षक करूणामय केसव दुष्टनि कहा सरै ॥४॥

चरणोदक करि पियो हलाहल जग जीवत न मरै ।।
ताकी साखि प्रगट मीरां जन जाकौं अजर जरै ।।५ ।।
सोई नर असुर आत्मा घाती जो हरि तैं न डरै ।।
भगति विमुख हरि सरण हीण नर निहचै नरक गरै ।।६ ।।
जो निंदा करै पतित पापी पसु पाथर नांव भरै ।।
सोई बूढे भगत तिरै जन परसा हरि भजि पारि तरै ।।७ ।।४७ ।।

*

श्रीपरशुराम - सागर

आमुख

पूज्यपाद वर्तमान जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री ''श्रीजी'' महाराज की कृपापूर्ण मनोवाञ्छा से अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी (श्रीस्वामीजी) महाराज की समग्र रचना साहित्य का संग्रह ''श्रीपरशुराम-सागर'' ग्रन्थाकार रूप में प्रकाशित हो रहा है इससे धर्मानुगामियों को श्रीस्वामीजी महाराज के वाणी ग्रन्थों के पठन, श्रवण, प्रवचन, स्वाध्याय, मनन व अनुशीलन का अवसर मिलेगा, जिससे धर्म व भक्ति पथ पर चलने में सुगमता होगी, श्रीस्वामीजी महाराज द्वारा रचित साहित्य पूर्ण शास्त्रीय विचारानुगत स्वानुभूत व असंदिग्ध धार्मिक, आध्यात्मिक, निष्कर्ष प्रदाता है जिसके अध्ययन अनुशीलन से मानव समाज में सद्विचार, विवेक प्रभावी होगा जिससे समाज संस्कृति का स्वाध्याय अच्छा रहेगा। जीवन आलोकित होगा व परमार्थ पथ प्रशस्त होगा।

श्रीहंस सनत्कुमारादि नारद निम्बार्क की परम्परा में ३४ वीं श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ परम्परा पर श्री श्रीभट्टाचार्यजी महाराज प्रतिष्ठित हुये जिन्होंने हिन्दी-व्रजभाषा में प्रथम रचना ''श्रीयुगलशतक'' प्रदान की। श्री श्रीभट्टाचार्य के बाद श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज आचार्यपीठ पर प्रतिष्ठित हुये इन्होंने व्रजभाषा में ''श्रीमहावाणी'' ग्रन्थ प्रदान किया है। श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज के बाद श्रीमद्परशुरामदेवाचार्यजी महाराज श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर प्रतिष्ठित हुये इनका आचार्य प्रतिष्ठा काल विक्रम सम्वत् १५१४ से १६६४ विक्रम सम्वत् माना जाता है। साखि ग्रन्थ ''परशुराम वाणी'' आपकी प्रथम रचना है । आपकी अन्य रचना छन्द, कवित्त, लीला ग्रन्थ, भगवद्पद आदि जीवन में विविध समय प्रवृत्त हुये आपकी समस्त रचनाओं का संग्रह ''परशुराम सागर'' संग्रहित हुआ। परशुराम सागर में संग्रहित साखि ग्रन्थ को ''परशुराम वाणी'' कवित्त छन्द ''चरितावली'' भक्त कथानक ''लीलावली'' व पद संग्रह को ''पदावली'' कहा गया।

भगतवंश जन परसराम, श्रीगुरु श्रीहरिव्यास।
जाति वरण कुल करण, साखी सदा निजदास।।१।। जो. भगतवंश॥

श्रीस्वामीजी ने कहा कि मैं श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी का कृपापात्र हूँ अतः भक्त वंश में ''हरिव्यासी'' हूँ। ज्ञान, धर्म, जप, तप, योग और हरि भक्ति तथा सगुण, निर्गुण, सम्पूर्ण विचार श्रेणी का सामंजस्य बनाते हुये श्रीस्वामीजी ने गहन अनुभव से सनातन धर्म समाज को आध्यात्मिक एकरूपता प्रदान की। आपने आत्यन्तिक मर्म को छूकर यह बताया कि परमार्थ की जितनी भी सद्विचार परम्परायें हैं उनका उद्गम, उनकी प्रवृत्त शक्ति, उनका प्राप्त्यार्थ, हितार्थ व कृतार्थ एक है। जीवन की संवेदनायें, आवश्यकतायें, पूर्ति एक ही नीति केन्द्र से समान भाव व रीति प्रवृत्ति से प्रभावित हैं। विचार व प्रणाली की विविधता रहते हुये भी सब सद्गन्तव्य का उद्देश्य व निहितार्थ एक है। अतः इन्होंने अपनी रचनाओं में सब मर्म की जानकारी दी, सब उपास्य, उपासना, निष्ठा व परम्पराओं का समादर किया व तुलनात्मक रूप से उन्हें धर्म परमार्थ में अनुगत बताया।

सांस्कृतिक समाज में जो कुछ भी असंवेदनशील लगा उस पर कटाक्ष किया उस कुरीति या बुराई को बताया

और यथार्थ का आह्वान किया। अतः विषय वासना, छल-कपट, लोभ-मोह, क्रोध; मद-अहं ऐसी मनोवृत्तियाँ हैं जिनसे प्रवृत्त होकर व्यक्ति दुष्कर्म, अधर्म, हिंसा, पाखण्ड, छल-कपट, क्रूरता, अशिष्ठता व आततायीपन करता है। अहं व मद, स्वार्थ से व्यक्ति में मलिनता आ सकती है अतः मनोनिग्रह पर जोर दिया। असत्य भाषण, चोरी, ठगी, दुर्व्यवहार, दायित्वहीनता, अकर्मण्यता, अनास्था, आलस्य व परस्पर की ईर्ष्या डाह से देश-समाज की आर्थिक, आध्यात्मिक व मानवीय व्यवस्थायें विद्रूप, क्लेशमय व विकृत हो जाती हैं।

यह दुष्प्रवृत्तियाँ व्यक्ति के आध्यात्मिक व सामाजिक जीवन के लिये बाधक हैं। जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य जी ने ''विरोधिनो रूपमथैतदाप्ते-र्ज्ञेया इमेर्थाः'' इन स्वार्थपरक विरोधी वृत्तियों को पहचान कर दुराचार, असदाचार व दुराचारी लोगों के संसर्ग से दूर रहने की भावना दी है। अपने आद्य आचार्य की अनुगति में श्रीस्वामीजी महाराज ने भी सामान्य जन को इन मद, अहम्, प्रवृत्त परमार्थ विरोधी प्रवृत्तियों से सावधान किया तथा धर्म अभ्युदय सद्प्रवृत्तियों की पहचान दी, सदाचार व साधुजनों की महिमा गाई। श्रीस्वामीजी महाराज ने राज, धन, विद्या, पद, कुल जाति, देह बल के मद व दुराग्रह, दुर्व्यवहार को मानव जाति के लिए सर्वथा हीन व असंगत बताते हुये सावधान किया । भगवान् की कृपा से मनुष्य जीवन मिला उसे जीव जगत् के कल्याण व परम प्रभु की उपासना में लगाना चाहिये, जो मनुष्य जीवन का दुरुपयोग करता है उसे इस लोक में कष्ट भोगना पड़ेगा व परलोक भी बिगड़ जायेगा।

''सर्वं हि विज्ञान मतो यथार्थकं श्रुति स्मृतिभ्यो निखिलस्य वस्तुनः'' कह कर श्रीनिम्बार्काचार्यजी ने श्रुति-स्मृति अनुगत सनातन संस्कृति सिद्धान्त को यथास्थान यथावत स्वीकार करते हुये परम प्रभु उनके उपास्य स्वरूप व उपासना के विभिन्न भाव परम्परा को यथातथ्य स्वीकार किया है उसी परम्परा के अनुगत श्रीस्वामीजी महाराज ने स्वयं समस्त वैदिक परम्परा का सम्मान करते हुये अपनी इष्ट निष्ठा व भक्ति भाव को प्रखर किया है व सनातन धर्म को सर्वोत्तम सम्मान देते हुये सबको एकात्म भाव से जोड़ने का सन्देश दिया है। पञ्चोपास्य शिव, सूर्य, गणेश, देवी व विष्णु की श्रद्धा के साथ भगवान् श्रीराम, श्रीकृष्ण को विशेष उपास्य निष्ठा समर्पित की है। वैष्णव उपासना की सगुण-निर्गुण परम्परा में जब तत्कालीन समय में सन्त-साधुओं द्वारा नई परम्परायें चलाई जाने लगी तो श्रीस्वामीजी महाराज के सामने यह सुझाव उपस्थित होने लगा कि पूर्वसे आपकी श्रीनिम्बार्काचार्य वैष्णव परम्परा होते हुये भी कई सन्त नई परम्परायें चला रहे हैं तो श्रीस्वामीजी ने सबको स्वीकार करते हुये यह मत प्रकट किया कि जो हरि को भजता है वे सब हमारे परिवारजन हैं। ''हरिजन सब परिवार हमारो'' (राग सारंग १६९) और भी बहुत सारी अभिव्यक्तियाँ हैं जो पूर्वाग्रह छोड़कर नई व प्राचीन व अपने समय के भगवत् भक्तों व प्रतिभाओं की प्रशंसा करती हैं। जिसके कारण उस समय धर्म के होते ह्रास में भक्ति आन्दोलन को प्रोत्साहन मिला, सनातन धर्म व भक्ति भाव पर होते प्रहारों से अविचलित रहकर व नये साधु-सन्त मत को अवसर दे उदारमना रहे व अनुगतों को सम्बल प्रदान किया तथा धर्म व भक्ति विरोधी तामसिक शक्तियों को अपने तपोबल से पराभूत किया।

''नान्या गतिः कृष्णपदारविन्दात् संदृश्यते ब्रह्मशिवादिवन्दितात्'' भगवान् श्रीकृष्ण ही जीव जगत् जन्मादि के निर्माता व नियन्ता हैं सारा देवोमय जगत् उन्हीं से गतिशील हो रहा है ब्रह्म, शिवादि देव भी उन्हीं की वन्दना करते हैं जो विभिन्न परम स्वरूप की भी अनन्य भाव से उपासना करते हैं तथा ज्ञान, कर्म, योग, जप से सगुण, निर्गुण किसी भी साधना सरणी से अनन्य निष्ठापूर्वक उपासना करते हैं उनको आत्यन्तिक अवस्था में परम कृपा समर्थ सर्वेश्वर श्रीकृष्ण की ही कृपा प्राप्त होती है क्योंकि एकमात्र वे ही सब जीव जगत् की अनन्य गति मती हैं। प्रत्येक सद्भाव में परा-अपरा सामर्थ्य के रूप में वे ही विद्यमान हैं वे ही अचिन्त्य, विचित्र, कर्तुम्, अकर्तुम्, समर्थ हैं, वे ही परा-

परमज्ञान का आलोक करने वाले हैं, वे भक्तों की भाव वाञ्छा के अनुरूप सुन्दर लीला विग्रह धारण कर ''रसौ वै सः'' के अनुसार परम रसानन्द प्रदान करने वाले हैं। निश्चय ही भगवान् श्रीकृष्ण की शरणागति के अतिरिक्त जीव की कोई परमगति नहीं है।

काहूँ के कोई भजन, काहूँ के कोई देव।
परसा तुंह करी नेम धरी, सर्वेश्वर का सेव।।
जाकों चिंता सकल की, तू तासौ लो लाय।
तेरी चिंता परसराम, करी है त्रिभुवन राय।।
जो करिये सोई सुद्धरे, बिनसै कछु न जाय।
सदा हमारे परसराम, श्रीगोपाल सहाय।।

राम भरोसा का जोड़ा।

''मन दे गाईये गोपाल'' राग सारंग १७०
''गोविन्द गाईये मन लाय'' राग सारंग १७२

श्रीस्वामीजी महाराज के व्यक्तित्व, कृतित्व से श्रीहंस उपदिष्ट मनोनिग्रह, अविचल प्रभु अनुराग सनत्कुमार उपदिष्ट आचार-विचार व आहार-विहार की शुचिता, भूमा भाव से आत्मदर्शन सर्वात्मदर्शन व सर्वेश्वर श्रीराधाकृष्ण की लीला दर्शन देवर्षि नारद उपदिष्ट परमप्रेम व श्रीनिम्बार्काचार्य उपदिष्ट परमप्रेग लक्षणा, पराभक्ति प्रवृत्त हुई है। श्री श्रीभट्टाचार्यजी महाराज ने वृन्दावनविहारी श्रीश्यामाश्याम की लीला भक्ति की जो रसधारा ''युगलशतक'' से प्रवाहित की उस रसार्णव में गहरे उतर कर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ने अपने ग्रन्थ ''महावाणी'' से वृन्दावन निकुञ्ज के रस रासेश्वर श्यामाश्याम के परम सुखवर्धक रस माधुर्य को प्रवाहित किया।

भक्ति के दो स्तर हैं अपरा व परा। अपरा भक्ति प्राथमिक है इसमें लौकिक कर्त्तव्य व्यवहार, नित नियम, विधि निषेध व सत्संग के प्रवाह हैं अपरा जीवन में धर्म व्यवहार व भगवत्-विश्वास का मिला-जुला स्वरूप है इसमें अर्थार्थी, जिज्ञासु, आर्त भाव उतरते-चढते रहते हैं अतः आस्था भाव बनाये रखने के लिये प्रयत्न करने पड़ते हैं शास्त्र सत्सङ्ग गुरु उपदेश आदेश सद्विवेक व प्रभु अनुराग बनाये रखने का यत्न करना होता है। धीरे-धीरे भगवत् निष्ठा स्थिर होने लगती है और पराभक्ति में भगवत् भाव स्वाभाविक स्थिर हो जाता है। श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज ने परा-अपरा भक्ति के स्तर अनुरूप करणीय व्यवहार का उल्लेख किया है। ''जो कोई प्रभु के आश्रय आवे सो अन्याश्रय सब छिटकावे'' से ''ये द्वादश लछिन अबगाहे जे जन परम प्रेम पद चाहे।'' यह अपरा भक्ति के करणीय व्यवहार हैं गुरु दीक्षा के बाद ''जाके दश पैड़ी अतिदृढ है बिन अधिकार कौन तह चढी है।'' से ''परमधाम परिकर मधि बसही, श्रीहरिप्रिया हीतू संग लसहीं'' (महावाणी सिद्धान्त सुख) में अधिकारी पराभक्ति के अवलम्बन हैं।

''महावाणी'' और ''युगलशतक'' में श्रीवृन्दावन निकुञ्ज में श्यामाश्याम विहारी के सङ्ग भाव वपु से ''रस विलसन'' है यह किसी भी तरह उपासना व भक्ति का सर्वोच्च मान है। अब इस रस विलसन को कौन समझे? और कैसे इस सर्वोच्च तक पहुँचे? स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज ने इस कठिनता से प्राप्त परम रस को सामान्य जन भी जीवन में प्राप्त कर सके इसलिए अपनी रचनाओं से इस गूढार्थ को सामान्य लौकिक भाषा में प्रस्तुत किया। स्वामीजी के ग्रन्थों में लौकिक जीवन में व्याप्त कुरीति, स्वार्थ, अहमता पर चेतनात्मक प्रहार है तथा धर्म व भक्ति के आचरण का प्रसारण है । श्रीस्वामीजी महाराज ''साखी ग्रन्थ'' के -''जोड़ो'' में --जौड़े के प्रकरण अनुसार गहन

विश्लेषण दिया है। मनुष्य जीवन के आचार-विचार, गुरु दीक्षा से भक्ति अवलम्बन, मनोनिग्रह, चित्त निर्मलता व अनन्य प्रभु भाववाही होने तक का समस्त गूढार्थ, अनुभव सहित श्रीस्वामीजी ने प्रदान किया है।

वृन्दावन निकुञ्ज में प्रवेश गुरु हरि कृपा से निर्मल चित्त होने पर श्रीराधासर्वेश्वरी प्रदान करती है जो निजात्म के अनुभव की स्थिति है ''वृन्दावन कलानाथौ हृदयानन्दवर्धनौ। सुखदौराधिकाकृष्णौ भजेऽहं कुञ्जगामिनौ।'' (महावाणी) ''सदानन्दरूपे प्रसीद त्वमन्तः प्रकाशे स्फुरन्ती मुकुन्देन सार्धम्।'' (राधाष्टक), प्रातःस्मरामि हृदयेन हृदीक्षणीयं युग्मस्वरूपमनिशं सुमनोहरं च।'' (प्रातःस्ममरण स्तोत्र) उस अन्तर्हृदय में प्रकाशित परम रसानन्द को आद्याचार्य ने प्रकट किया उसी अनुभूत आह्लाद को 'महावाणी' 'युगलशतक' में पूर्वाचार्यों ने व्यक्त कर दिया। ''दिल में ही दिलदार है, दूर गया कछु नाय। परसा भ्रमि न भूलिये, पति पौढे पुर माही॥'' ''जिन हरि आगे उद्धरे पावन पतित अनेक। सो हरि अन्तरि परसराम, व्यापक अब तक एक ॥३॥ 'अगाधी जौड़ो'' श्रीस्वामीजी महाराज ने उसी हृदयस्थ रस आनन्द के विषय आवरण को छिन्न-भिन्न कर परम सुख को प्रकाशित किया।

निम्बार्क सम्प्रदाय के किसी भी आचार्य या अधिकारी रचनाकार ने सम्भवतः पुनरावृत्ति नहीं की है वरन् पूर्व कथित वाङ्मय से गहराई में उतर कर नवीन नवनीत प्रदान किया है। श्रीस्वामीजी ने 'श्रीयुगलशतक' व महावाणी के रसार्णव में प्रवेश हेतु लौकिक जन हितार्थ प्रारम्भ से आध्यात्मिकता की विशिष्ठता को परम आलोकित किया है।

लोक विख्यात परमाचार्य स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज का जन्म सीकर जिला में खण्डेला निकट ग्राम ठिकरिया वर्तमान राजस्थान प्रान्त में गौड़ ब्राह्मण परिवार में हुआ। इन्होंने जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज से दीक्षा ग्रहण की उन्हीं के उत्तराधिकारी हुये। उत्तर मध्य पूर्व व पश्चिम भारत में विरक्त गृहस्थ, राजा-महाराजाओं से लेकर समस्त प्रजाजन तक आपके आश्रित हुये। अतः आपका उपदेश व रचनायें जनता की कण्ठहार रही। श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ स्थल निम्बग्राम (नीमगाँव) गोवर्धन मथुरा थी जिसे आपने निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद, किशनगढ जिला-अजमेर में संस्थापित किया।

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज की स्थानीय भाषा व्रज सम्मिलित मारवाडी हैं जिसमें लौकिक दृष्टान्त, मुहावरा, लोकोक्तियों का समावेश होने से रोचकता सहजता व सरलता हैं। आपकी रचनाओं में धर्म-दर्शन व भक्ति का शास्त्र सम्मत तथा अनुभवगम्य गूढार्थ है प्रत्येक विषय-प्रसङ्ग बद्ध है। परम प्रभु क्या हैं? परम प्रभु की प्रतिभा, क्षमता, प्रभाव, स्वभाव व अवतार लीला चरित्र आदि का यशोगान है। जीव क्या है? जीव की क्षमता क्या हैं? जगत् क्या हैं? ईश्वर जीव जगत् का सम्बन्ध व व्यवहार विधि क्या है? उपास्य, उपासक, उपासना व उसके फलितार्थ का निर्देश है निष्काम भक्ति व जीवन व्यवहार की यथायोग्य मर्यादाओं का निर्देशन हैं।

स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज रचित साहित्य से कहीं साखी, कहीं छन्द कवित्त, कहीं लीला व कहीं पद, भक्ति रूप से प्रसङ्गवत् भिन्न-भिन्न जगह विभिन्न लोगों द्वारा कहे, सुने, गाये व छापे जाते रहे हैं। उदयपुर के श्रीप्रयागदासजी के स्थालाश्रम से मासिक पत्र उदय में साखी ग्रन्थ 'परशुराम वाणी' अधिकारी श्रीवियोगीविश्वेश्वरजी के सम्पादन में सन् १९४२ में प्रकाशित हुआ। पं० श्रीमनसारामजी की हस्तकृति श्रीकैलाशचन्दजी शर्मा, निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद वालों के पास वाली व श्रीजी मन्दिर वृन्दावन की हस्तलिपि से करेन्ट बुक कम्पनी जयपुर से स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज की रचनायें ''परशुराम सागर'' के नाम से चार खण्डों में ईस्वी १९७१ में प्रकाशित हुई। प्रस्तुत प्रकाशन उक्त हस्तलिपियों व जयपुर से प्रकाशित ''परशुराम सागर'' को दृष्टिगत रखकर ही विद्वत्परषिद्, अ. भा. जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद), अजमेर द्वारा प्रथम बार प्रकाशित हो रहा है।

नौलिकता व शुद्धि का पूर्ण ध्यान रखा गया है मुद्रण में त्रुटि न हो यह भी सावधानी रखी गई है दो-तीन बार प्रूफ पढा गया है फिर भी मानवीय भूल हो सकती है, एतदर्थ क्षमा प्रार्थी हैं भूल का बोध होने पर आगे सुधार किया जा सकता है।

श्रीस्वामीजी महाराज की समग्र रचनाओं का प्रथम लिपिकरण श्रीस्वामीजी महाराज के धाम गमन के बाद विक्रम सम्वत् १६७७ में ''परशुराम वाणी'' के नाम से हुआ तब से लेकर अब तक सभी ज्ञात-अज्ञात लिपिकर्ता, पाठक, श्रोता, कण्ठस्थकर्ता, स्वाध्यायशील व ग्रन्थ के सुरक्षाकर्ता, हस्तलिखित ग्रन्थ खोज रिपोर्ट के ईस्वी सन् १६४२ में प्रस्तुतकर्ता डॉ० श्रीमोतीलालजी मेनारिया, जयपुर ''परशुराम सागर'' चार भाग के पूर्व प्रकाशक श्रीकलाधर शर्मा, ''आचार्य परशुरामदेव व्यक्तित्व कृतित्व'' के प्रकाशक अर्चना प्रकाशन, अजमेर व इसके सम्पादक तथा अनुसन्धान कर्ता डॉ० श्रीरामप्रसादजी शर्मा किशनगढ को हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करते हैं।

''परशुराम सागर'' के इस संस्करण का उद्देश्य जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर स्वामी श्रीपरशुराम-देवाचार्यजी महाराज के प्रणीत ग्रन्थ साहित्य को धर्म आध्यात्मिक अनुरागियों को यथावत् हस्तगत कराना है। इन ग्रन्थ रत्नों पर व्यक्त विचार व अनुसन्धान समीक्षा विश्लेषण पृथक् से किये व दिये जा सकते हैं। अधिक न कह कर गुरु हरिकृपा से ''परशुराम सागर'' विचार नवनीत प्रसाद के रूप में हमें स्वामीजी महाराज ने प्रदान किया उसका स्वाध्याय, अनुशीलन करके हम अपने जीवन को कृतार्थ करें, यही सविनय प्रार्थना है।

श्रीहंस सनत्कुमारादि नारद निम्बार्क व निवासाचार्य से वर्तमान आचार्यचरण पर्यन्त सनातन प्रवाही वैष्णव भक्तिभाव परम्परा को सादर दण्डवत् निवेदन करते हुये अर्चनीय, वन्दनीय स्वामी श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज का समग्र व्यक्त साहित्य का एक ही जिल्द में सुन्दर साज-सज्जा से प्रथम संस्करण भक्त, हरि और हरि व्यापक सकल लोक को सद्विचार के लिये समर्पित किया जा रहा है।

भगत भगवत अंतर नहीं, परसा भजी समानि ।
ज्यौं हरि व्यापक सकल में, हरिजन त्यौं ही जानि ।।७।।

ह० व्या० जो०

गुरु हरि स्नेहाकांक्षी :
मोखमपुरा वास्तव्य
पं० रामस्वरूप गौड़ निम्बार्कभूषण
जयपुर

श्रीपरशुराम सागर

क्रमणिका

सनकादि संसेवित श्रीसर्वेश्वरप्रभु एवं जयदेवकवि आराध्य श्रीराधामाधव भगवान्

सुदर्शनचक्रावतार जगद्गुरु श्रीभगवन्निम्बार्काचार्य
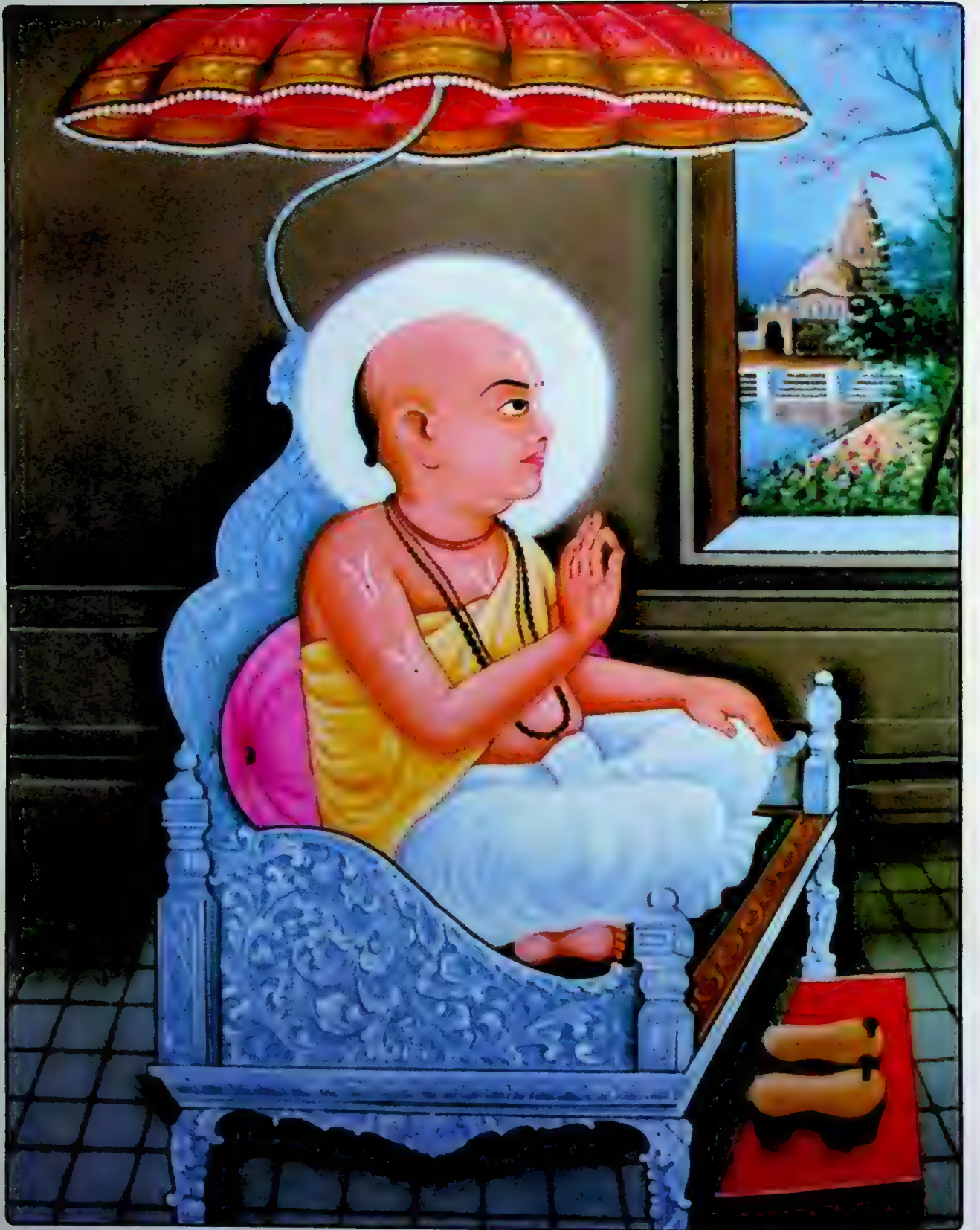
अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीपरशुरामदेवाचार्य जी महाराज

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर
श्रीराधासर्वेश्वरशरण देवाचार्य श्री श्रीजी महाराज
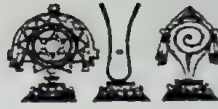
परशुरामसागर (प्रथम - खण्ड)

परशुराम - वाणी

(श्रीपरसरामदेवजू की वाणी – साखी ।।)

श्रीगुरु कौ जोड़ौ-१

श्री गुरु संत समान हरि, जो उपजै वेसास। दरसन परस्यां परम सुख, परसा प्रेम निवास॥१॥
परमेसुर कै परम गुरु, परम सनेही साध। इनकैं सुम्रनि परसराम, कियां कटै अपराध॥२॥
श्रीगुरु समझि सनेह करि, बारुं बार संभारि। परसराम भव सिंधु की, नांव उतारै पारि॥३॥
नाव तिरै भव सिंधु मैं, श्रीगुरु को उपगार। परगट दीसै परसराम, हरि सेवग निरभार॥४॥
अदेसो अनुराग को, सिंधु सकल संसार। तामैं परै न प्रसराम, श्री गुरु राखनहार॥५॥
कटुक बचन गुरु के भले, जिनतैं कारज होइ। अमृत बाणी जगत की, परसा निरफल सोइ॥६॥
श्रीगुरु कहैं सो मानियें, सत्य सबद बलि जांउं। झूठ बकै जग प्रसराम, सुमरि सांच हरि नांउं॥७॥
परसराम सुनि सीखि लै, हरि सुमिरन की साखि। श्री गुरु दइ दयाल होई, सोइ हिर्दै धरि राखि॥८॥
परसा बड़ दातार गुरु, जिनि दीनों हरिदान। ता हरि कै गुण गावतां, प्रकट भयो विज्ञान॥९॥
तासों रहिये दीन होय, जिनि दीनों हरिनाम। गुरु अपणैं को प्रसराम, करिये नित परिनाम॥१०॥
हितू हमारे परम गुरु, और हितू हरिदास। मंसा वाचा परसराम, है हरि को वेसास॥११॥
गुरु थापै सौ थापिये, ऊँचा हो या नीच। जाकैं मस्तक परसराम, बैसे आय अमीच॥१२॥

श्रीगुरु सर कौ जोड़ौं-२

श्री गुरु लई कमान करि, बाहण लागे तीर। परसा कइ घाइल भए, मुएं जु भिदै सरीर॥१॥
घाइल घूमैं गहि भर्‌यो, राख्यो रहै न वोट। परसा जतनिन जीवई, लागि मरम की चोट॥२॥
लागी वासूं नीसरै, छानि कदै न होइ। परसा मार्‌यो मरम को, जीवै नाहिंन सोई॥३॥
परसराम गुरु बाण लै, मार्‌यौ मरमि जु प्राण। जीवण का संस्या पड्या, सालै सकल संधाण॥४॥
परसराम सति सूर गुरु, बाहनहार अथाह। एक जु बाही प्रीती सों, बैठि फोड़ि सनाह॥५॥
सतगुरु मार्‌यो बाण भरि, घर बन कछु न सुहाइ। तन मन विकल सुपीड़ तैं, परसा कहिए काहि॥६॥

हँसै न बोलै उनमनी, चंचल छोड्यो मारि। परसराम भीतर भिद्यो, सतगुरु कै हथियारि॥७॥
परसराम भीतर भिद्यां, छूटि गई सब आस। मन कैं लागौ प्रेम सर, कटे भरम भव पास॥८॥
परसा पूर्यो प्रीति सौं, प्रेम बाण गुरु सूरि। बाहिर तजि भीतर भिद्यौं, समायौं राम हजुरि॥९॥
मन मूवौं क्यौं जानिएं, क्यौं घरि सहजि समाइ। परसा पीवै प्रेम रस, पिव सौं प्रीति लगाई॥१०॥
पिव सों प्रीति लगाइ कैं, सुमरुं तजि अभिमान। पलभरि पलक न बीसरूं, परसा प्यारो राम॥११॥

प्रेम रस कौ जोड़ौ-३

प्रेमरस अंतरि बस्यो तां, प्राण रह्यो बिरमाइ। लागी प्रीति अपार सों, परसा तजी न जाई॥१॥
लागी प्रीति अपार सों, अब मन अनत न जाइ। परसा बोलै आन सों, तौ फिरि राम रिसाइ॥२॥
भय भागा निरभै भया, जामण मरण न पास। लौ लागी हरिनाम सों, परसा सुख मैं दास॥३॥
लौ लागी तब भय मिट्या, निर्भै भया प्राण। परसा राम न वीसरूं, देख्या आवण जाण॥४॥
आवण जाण तो भर्म है, जानैगा जन कोइ। परसा प्रीतम राम बिन, जाकैं दुति ना होई॥५॥
खंडैला मैं ठीकरी, अणबूछी पहिचांणि। भजन उजागर प्रसराम, प्रगट प्रेम तैं जाणि॥६॥
साखी सुणु मुरारि की, परसा प्रीति लगाइ। एक पलक कैं प्रेम मैं, मन दैं गयो समाइ॥७॥

गुरु अंकुस अमांनी कौ जोड़ौ-४

गुरु अंकुस को परसराम, पसू पिछाणै नाहिं। हरि अमृत कौं बेचि करि, विषै बिसाहण जांहि॥१॥
परसा मन मैंमन्त गज, गुरु अंकुस मानिं नांहि। मंजन करि मड्यो सिंदूरन, सैहि लई सिर मांहि॥२॥
मन मैंमंत न मानई, गुरु अंकुस को ग्यान। परसा तै पूठि फिरै, अपबलि अंध अग्यान॥३॥
वदै न श्री गुरु सबद की, मन हाथी मैंमंत। परसा अंध अचेत पसु, अपणैं बाय बहंत॥४॥
पहर्यो पूरि सनाह तन, परसा लगै न काय। प्रेम बाण भेंद्यौ नहीं, श्री गुरु दोख न लाय॥५॥
परसा श्री गुरु का करै, रह्यौ बहुत समुझाय। गाफिल मनुवाँ बरजंताँ, चाल्यौ दोजगि जाय॥६॥
सिर पर अंकुस परसराम, तब लगि निर्मल देह। हाथी अंकुस बाहिरौ, लेय सदा सिर खेह॥७॥
आग्या अंकुस परसराम, मानै सो निजदास। आग्या अकुंस सिर नाहीं, भाव भगति को नास॥८॥
श्री गुरु कौ अंकुस नाहीं, हिर्दै नाहिं हरि पीव। कह्यो न मानैं प्रसराम, निडर निरंकुस जीव॥९॥
कहै कहा पसु अंध सों, माथे आंखि न कान। कह्यौ न मानै प्रसराम, अभिमानी रु अज्ञान।१०॥
हाथी अंकुस सीस तैं, डारैं ताहि कुंवांणि। परसा जन गुरु सबद कौं, मेटे सोइ बड हाणि॥११॥

गुरु सनेह कौ जोड़ौ-५

श्री गुरु अंकुस परसराम, तबही सुख संतोष। श्रीगुरु को अंकुस नहिं तौ, सुमिरन सील न पोष॥१॥
गुरु कौ पण प्रसराम तौ, सदा जीव को पोष। गुरु अंकुस सिर नाहीं तो, सुख न कहूं संतोष॥२॥

सदा सुख है परसराम, जो चालै गुरु भाय। गुरु कै भाय न चालई, सो निरफल बहि जाय॥३॥
परसराम क्यौं बिसरैं, गुरु गोविंद सरीर। हिर्दै बसै ज्यौं सीप कै, सुतौ स्वाति को नीर॥४॥
मोती निपजै सीप कै, सुर्ति सुवाति को नीर। गुरु स्नेह भजि परसराम, निपजै सीष सरीर॥५॥
परसा तरवर धर मिल्यौ, जल पी करै बिस्तार। अमिल रहै तर भौमि तैं, सो उखलि होइ छार॥६॥
विरष भोमि लागो पिवै, फल पावै जलपोष। तुटि पडै जल परसराम, सु फल न लहै संतोष॥७॥
गुरुद्रोही जो आतमां, सो मम द्रोही जाणि। गुरु भगत जो परसराम, सो मम भगत पिछाणि॥८॥
श्री गुरु तर की प्रसराम, जब छाया तब पोष। हरि अमृत फल पाइये, तब ही सुख संतोष॥९॥
हरि सुमिरन दै परसराम, जिनि कीनों उपगार। और न कोई जाणियें, गुरु सारिख दातार॥१०॥
जो श्री गुरु मिलता नहीं, रु हिर्दै न हुता राम। तौ भांडि हुति परसराम, बहि मरता बेकाम॥११॥
हरि सुमिरण कौ संग लै, खोजे बहुत ग्रिन्थ। हरि हरि-भगत न भूलई, य परसराम को पंथ॥१२॥
बात उजागर प्रसराम, जाणै सब संसार। श्री गुरु काढै काल तै, उतरि गये भव पार॥१३॥

प्रेम निषार कौ जोड़ौ-६

गुरु साबण संगति सिला, पाणी प्रीतम सार। परसा जन बस्तर भये, धोवै प्रेम निषार॥१॥
परसराम तन मन बसन, हरि जल बिन बलहीण। जबहि धोवै तब नृमलाँ, नांतरू सदा मलीण॥२॥
तन बस्तर उज्जल भये, परसा पाणी धोय। जब खरिआवै रहति कै, तब मन उज्जल होय॥३॥
मन नृमल तब परसराम, जब हरि जल सूं धोइ। हरि सुमरन बिन आतमां, निरमल कदै न होइ॥४॥
परसा मैली देह कै, मल धोवन कौं नीर। मन मंजन कौं हरि भजन, प्रगट प्रेम की सीर॥५॥
परसराम हरि नीर सौं, मन मंजन जो होइ। तौ सदा सुचि निर्मल रहै, जनम मरण मल धोइ॥६॥
हरि भजि जीवन प्रसराम, सो जीवन परवान। हरि सुमिरण बिन जीवनूं, सु जीवन मृत समान॥७॥
जनम कर्म कै परसराम, हरि मेटण दुषदाग। जहि ऐसो हरि भावै नहिं, तांको बडो अभाग॥८॥
गुणदाता हरि नाम सो, औगण दहण न और। सोई हरि भजि परसराम, परहरि दूजि ठौर॥९॥
परसा पानी न्हाय कर, पतित न पावन होइ। पावन करसी हरिभजन, साखि कहै सब कोय॥१०॥
बाहरि मल कों सुद्ध जल, धोवण कूं सरनांम। पतित न धोवन हरि सरन, परसराम हरि नाम॥११॥
सुदिन महूरत सुभ करन, मंगल पद हरि नांउं। बिघण हरण हरि प्रसराम, भजि लीजै बलि जांउं॥१२॥
सोइ कुलीन पावन सुचि, जो सुमरै हरि नांउं। भजन न भूलै प्रसराम, हूं तां की बलि जांउ॥१३॥
जन की चिंता हरण कौं, हरि सारिखौ न और। सोइ हरि भजि परसराम, पर-हरि दूजी दौर॥१४॥

श्रीगुरु विचारि कौ जोड़ौ-७

जो द्रिष्या लइ न देखि करि, गुरु नहिं कियो विचारि। गयो भगति फल प्रसराम, अति मन कै अविचारि॥१

गुरु सिखि काचा सांच बिन, हरि सुमरण सुख नाहिं। परसा दोऊ जगत मैं, भगति विमुख बहि जांहिं॥२॥
दिख्या लीजै देखि करि, श्री गुरू कीजै सोचि। परसा सोच सबै मिटै, हरि निजु लीजै लोचि॥३॥
हरि निज लीजै लोचि करि, परसा प्रीति लगाय। सकल सूल संसौ मिटै, पीजै प्रेम अघाय॥४॥
श्रीगुरु सुमिरै ध्यान तैं, मन के मिटै विकार। साचो श्रीगुरु प्रसराम, झूंठो सब संसार॥५॥
नर साखित रहये नहीं, दीख्या लीजै देखि। देखि लियां तैं प्रसराम, उपजै भगति विसेखि॥६॥
चरणामृत हरि कौ भलो, लागै मीठो स्वाद। तामैं अमृत परसराम, श्रीगुरु को परसाद॥७॥
नातो गुरु गोविंद सौं, जो निरवाह्यो जाय। ताकौं तजैं न प्रसराम, अंति मिलै हरि आय॥८॥

सांचौ गुरु कौ जोड़ौ-८

सांचै गुरु को सांच घर, झूठो झूठि समाय। सांचो अस्थिर परसराम, झूठो आवै जाय॥१॥
सांचो झूठि न राचई झूठौ मिलै न सांचि। झूठौ झूठि समाय है, परसा सांचौ सांचि॥२॥
सांचो गुरु सांची कहै, झूठो बकै कुवांणि। सांचौ सीझै प्रसराम, झूठो दाझै जाणि॥३॥
सांचो सीझै भौतिरै, हरि पुर आडी नांहि। झूठो दाझै प्रसराम, बूडै भव जल मांहि॥४॥
समुझि च सांचौ गुरु कियो, मिटयो न मन अभिमान। परसा सुघरि न हरि, बस्यो, न उपज्यो उरि विज्ञान॥५
सो गुरु सांचो प्रसराम, जासों मिलि गति होय। गुरु सिखि गति प्रापति नहीं, अफल गये फल खोय॥६॥
स्वारथि गुरु कीया घणां, कारज सर्‌यो न कोय। परसा परमारथ कहै, सांचो सतगुरु सोय॥७॥
सांचै गुरु कै प्रसराम, सांचौ ही सिख होइ। तिनकी निर्मल भगति मैं, लगै कलंक न कोइ॥८॥
सांचो गुरु सांची कहै, झूठो हरि सो पूठि। परसराम राचै नाहिं, सांचो श्री गुरु झूठि॥९॥

सतसंग कौ जोड़ौ-९

ज्यौं जल परसैं सिन्धु कों, लै सलिता को संग। राम मिलन कुं परसराम, है मारग सतसग॥१॥
सत संगति बिन जो भजन, लहै न सुख की सीर। परसा मिलै न सिंधु सो, नदी बिहूणां नीर॥२॥
नीर बिना निपजै नहीं, परसराम भूवमंड। साध न निपजै साध बिन, भावै खोजि नवखंड॥३॥
सीप न निपजै सिंधु बिन, मुकता हल बिन सीप। साधु न निपजै साध बिन, परसराम कऊं दीप॥४॥
जो बूझ्यो तिनि यो कह्यो, हरि मारग सतसंग। पार पहुँचै परसराम, हरि भजि रहै अभंग॥५॥
साध समागम सत्य करि, करै कलंक बिछोह। पारस परसत प्रसराम, भयो कनक ज्यौं लोह॥६॥
हरि पारस सों प्रसराम, परस्यां मन निकलंक। हरि पारस परसै नहीं, तब लग मन सकलंक॥७॥
हरि पारस सु परसराम, जो न लियो मन चेढि। बांकि न भांगी जीव की, रही तेढि की तेढि॥८॥
जा संगति गुण ऊपजै, औगुण जांइ बिलाइ। सो सत संगति परसराम, कीजै प्रीति लगाइ॥९॥
गुण आयो तब जाणिये, औगुन नाम बिलाइ। अर्थ भलो यह परसराम, जो अनरथ बहि जाइ॥१०॥

मै मतिमंद सु अंध अति, गति जानत नहिं काहि। परसा प्रभु सतसंग दै, अपणूं करि निर्वाहि ॥११॥
परसा संगति साध की, कीयां दोष दुरांहि। पीजै अमृत प्रेम रस, रहिये हरि सुख मांहि ॥१२॥
संगति कीजै साध की, पलक भरी घड़ी एक। पहर दिहाड़ौ देह लगि, परसा जनम सुलेख॥१३॥
जनम सुलेखै प्रसराम, साध समागम होइ। तन मन निर्मल हरि भजन, करि लेसी मल धोइ॥१४॥
पानी सहै न प्यास कौं, भोजन भूख हराध। परसा दरसन साध कै, कियां कटै अपराध॥१५॥
संगति कीजै साध की, मन दै प्रीति लगाइ। प्रीति कीयां परसराम, मिलि हैं केसौराइ॥१६॥
ज्यौं तीरथ तट जाइये, परसराम जल हेति। मंजन करिये अंचये यौं, हरि सुख साध समेति॥१७॥
सत संगति तैं हरि भजन, हरि तें हरि निज रूप। ता हरि को सुख प्रसराम, अस्थिर अभै अनूप॥१८॥
भगति प्रगट सतसंग तैं, परसराम जन होइ। बरिखा बादल तैं प्रगट, यह समझो सब कोइ॥१९॥
परसराम तन मन सुफल, जब कीजिये हरि जागि। हरि सुमिरण सतसंग सुख, पाईजै बड़भागि॥२०॥

सतसंग सुख कौ जौड़ौ-१०

परसराम सतसंग सुख और सकल दुख जाणि। निर्वैरी निर्मल सदा, सुमरण सील पिछाणी॥१॥
निहकामी निकलंक नित, निर्वैरी निरभार। परसराम ता दास कै, सुमिरन सील सिंगार॥२॥
परसा निर्मल साध को, सरन सदा निकलंक। सेवत हरि सुख सिंधु कौं, चढ़ै न कदै कलंक॥३॥
परसराम सतसंग को, फल निर्मल निजसार। भव तारण निर्भै करण, मन कै हरण विकार॥४॥
निर्मल दीसै सत्य करि, सदा सुखी सतसंग। भाव भगति बेसास रत, परसा प्रभु को अंग॥५॥
निर्वैरी निर्मोह तरू, छाया सुफल अनूप। परसा हरिजन हरि जिस्या, संत सदा सुखरूप॥६॥
परसा साध समागमी, कीजै प्रीति लगाय। प्रेम कथा रस राम रमि, सुख मैं रहौ समाय॥७॥
सत संगति सुख परसराम, पायो महाप्रसाद। निहचल सुमिरूं राम को, करूं न वाद विवाद॥८॥
जे भगतां भजनीक जन, भजन भज्यां जीवंति। प्रेम सहित जन प्रसराम, हरि अमृत पीवंति॥९॥
भगति उजालौ हरि भजन, जाकै सोइ सदगति। पारग रांगी प्रसराम, रवि पहली ऊगंति॥१०॥
हरि जन पुज्यां परसराम, मानै श्री हरि राय। सोभा सुख सा बिंब को, ज्यौं प्रतिबिंब दिखाय॥११॥
परसा दर्पन नैन को ज्युं, उभै मिलाप अनूप। जु देखै अपने रूप को, सु देखै हरि को रूप॥१२॥
ज्यौं दर्पन पावक पड़ै, परसत ही रवि धूप। पर्म नाम तैं परसराम, प्रगटै हरि निजरूप॥१३॥
फल मैं बिरज परसराम, बीरज महिं विस्तार। फल ताही बिस्तार मैं, ता रस को सुख न्यार ॥१४॥
साध समागम प्रसराम, यहै भक्ति उपचार। रतिवंती पति को भजै, कारण रहत न वार ॥१५॥
सुफल सोइ दिन प्रसराम, जिहि कीजै सतसंग। सत संगति तैं पाइये, हरि विश्राम अभंग॥१६॥
परसराम सो दिन सुफल, जिहि कीजै सतसंग। संग न कीजिय जांहि दिन, सो निर्फल रसभंग॥१७॥

पारस परस्यो प्रसराम, हरि ले गयो विकार। कंचन कीनूं लोह तैं, श्री गुरु को उपकार॥१८॥
जिहि संगति सोभा बढै, सोइ सतसंग विचारि। यिहि सुनि सोभा हीन कौ, परसा संग निवारि॥१९॥

अगाधि कौ जोड़ौ-११

ब्रह्मा ब्रह्मांड परसराम, मिलि करै सब अराध। जहां सैं उप्जै फिरि बसै, सोइ हरि सिंधु अगाध॥१॥
ब्रह्मा निपज्यो ब्रह्म तैं, हर निपज्यो हरि लागि। यों सब निपजे प्रसराम, लागे हरि सों जागि॥२॥
जिन हरि आगे उद्धरे, पावन पतित अनेक। सो हरि अंतरि परसराम, व्यापक अब तब एक॥३॥
सुमरि सुमरि सब सुधरे, परसा अबगति नाथ। जाणै कौण कबीर से, केते हरि के साथ॥४॥
हरि दरिया में अन्त बिन, उपजै सींव असींव। को जाने केते बसै, परसराम से जीव॥५॥
जाने कौंण अगाध की, परसा परमिति नांहि। हरि मांहिं हम सारिखे, कैते आवे जांहि॥६॥
जाने कौण अगाध की, जाकै आदि न अंत। हरि दरिया मैं प्रसराम, हम से जीव अनंत॥७॥
परसराम भवसिंधु को, सूझै बार न पार। तामैं है हम सारिखे, हरि जल जीव अपार॥८॥
हरि ही मैं उपजै खपै, को बांधे परबंध। ऐसी समझै प्रसराम, हरि सब जीव को सिंध॥९॥
कूणै कथ्यो सकैलि करि, नख सिख लौं हरि राय। हरि दरिया मैं प्रसराम, कहि सुनि सबै समाय॥१०॥
परसा कहिये कहांलौ, कहन सुनन सुखराह। ज्यौं को त्यौं ही देखिये, आदि न अन्त अगाह॥११॥
परम पदारथ परमधन, धीरज धर निरभार। परसा पंथ ना पंथिया, हरि गति बार न पार॥१२॥
अस्त न उदै उजास नित, देखै को निज दास। रवि तैं पहली प्रसराम, प्रभु को पर्म प्रकास॥१३॥
केतां पानीं पियो रुचि, रु केतां खायो अन्न। को जानै केतां भज्यो, परसा राम रतन्न॥१४॥
माता पिता न कुल कुटुम्ब, कर्म न करणी जाति। हम तुम हेति न प्रसराम, यां आयो ज्यों जाति॥१५॥
ब्रह्म अग्नि मिलि परसराम, दाझि गयो अंकूर। छूटो जामण मरण तैं, जिनि पायो हरि पूर॥१६॥
ज्यौं तरंग ज़ल सिंधु की, त्यौं ही हरि औतार। किये अंत बिन परसराम, करिसी और अपार॥१७॥
सोइ ब्रह्म सोइ जीव है, परसा समझि विचारि। जीव करम सु मिलत रहै, ब्रह्म कर्म तैं न्यारि॥१८॥
किरनि विलंबे परसराम, दनिकर कोटि प्रकास। अमरापुरि अवगति रहै, देखै को निज दास॥१९॥

जानराय कौ जोड़ौ-१२

हरि प्रीतम सुं परसराम, कीजै अति मनुहारि। अंतरगति की आप ही, लेसी सबै बिचारि॥१॥
अंतर की जाणैं सबैं, प्रभु को परम स्वभाव। दुरि संभारै परसराम, तिन सों किस्यौ दुराव॥२॥
साहिब सब को प्रसराम, सुणैं सकल की बात। दुरै न काहू की कदै, लखै जु लखी न जात॥३॥
दुख सुख जामण मरण की, कहो सुनो कोई बीस। जीव न जाणैं प्रसराम, सव जाणैं जगदीस॥४॥
परसराम जलबूंद तैं, जिनि दीनूं नरदान। हरि जाणैं गति जीव की, हरि गति जीव न जान॥५॥

झूंठ सांच सुख प्रसराम, कहिबो मन की दौर। आस ईसर जाणि हैं, मेरी तेरी और॥६॥
परसा अकलप कलपनां, निहकामी सहकाम। जानन हारो जानि है, जहँ मन को विश्राम॥७॥
जिन सिरजै सो जानि है, सबकै मन की बात। परसा घर तें क्यों दुरै, घर की जो घर बात॥८॥
जल छानी सोथल बसै, थल की जल अविसार। जल थल जामैं प्रसराम, जानै सब की सार॥६॥
सर्व जीव को परसराम, गुन औगुन को ग्यान। उदै अस्त आदि अंत गति, जानै सोई भगवान॥१०॥
ग्यान धर्म बैराग सुख, ईसुर जेता अंस। श्री जस जाको प्रसराम, सोई सूर बड़बंस॥११॥
दिष्टक दीसै विनसतौ, अविनासी हरि नाउं। सो हरि भजिये हेत कर, परसराम बलि जांउं॥१२॥
सब जीवनि मैं हरि बसै, हरि मैं सब जीव। सर्व जीव को जीव हरि, परसराम सो सीव॥१३॥
हरि जल थल व्यापक सकल, सबकी करण संभाल। सोई हरि भजि परसराम, तजिये जग जंजाल॥१४॥

हरि व्यापक कौ जोड़ौ-१३

परसा व्यापक येक हरि, सब सारिखौं कहाय। ज्यौं काष्ठ रु पाषाण में, पावक रह्यो समाय॥१॥
ज्यौं घृत दीसै दुग्ध मैं, सुमिल आपके अंगि। त्यौं हरि प्रीतम प्रसराम, प्रेरक सबकै संगि॥२॥
ज्यौं वा तेल तिल मैं बसै, जीवति फल रस आथि। परम स्नेही परसराम, व्यापक सबके साथि॥३॥
ज्यौं दर्पन में दिष्ठक बसै, दीसै गह्यो न जाय। यौं अंतर्जामी प्रसराम, सबमैं रह्यो समाय॥४॥
अंतरजामी परसराम, सब घटि रह्यौ समाय। दीसै जल में अंक ज्यौं, लिखि बांचणूं न जाय॥५॥
सदा अलीपित नीर तैं, निर्मल नारायण। परसराम ज्यौं सुरग के, दीसै नारायण॥६॥
भगत भगवत अंतर नहीं, परसा भजि सामानि। ज्यौं हरि व्यापक सकल मैं, हरि जन त्यौं ही जानि॥७॥
अंतरजामी येक हरि, प्रगट सदा सब मांहि। परसा व्यापति दूसरी, व्यापक सूझे नांहिं॥८॥
और न सूझै प्रसराम, सिंधु संपूरण नीर मैं। सर्वे ब्रह्म जीव जंभादि काष्ठ पषाण मृग मैं॥६॥
हरि काष्ठ पाषान मैं, परसा रह्यो समाय। अंध हीनता अधिकता, दिठि तैसौ दरसाय॥१०॥
दीसै विधु तिथि सारिखौ, अधिकौ वोछो नाहिं। को मति अनुमांन कछु कहौ, परसा पति सब मांहि॥११
सुरति समागम ब्रह्म सों, परसै कहै न काय। परसा अष्यिर नीर परि, लिखि बांचणूं न जाय॥१२॥
जोति काठ पाषाण कुलि, मिली रहै सब मांहि। काचा चमकत प्रसराम, प्रगट होय किहुं नांहि॥१३॥
जग मंहि विचरत प्रसराम, दरपण पडै न आगि। रवि सनमुख दरपन रहै, तब ही ऊठै जागि॥१४॥

हरि आस्ति कौ जोड़ौ-१४

परसा आस्तिक रूप कौं, नास्तिक हीये नाँहि। आस्तिक कौ नास्तिक कहै, सौ नर नास्तिक मांहि॥१॥
परसा नास्तिक नांम बिन, आस्ति जहां हरि नाउ। हरि आस्ति कौ आदर नहिं, तहीं नास्तिकौ ठांउं॥२॥
आसति सब नासति भई, हरि सुमिरन की हाणि। सांचि आसति हरि भजन, परसा लेउ पिछाणि॥३॥

हरि की आस्ति परसराम, रही सकल भरि पूरि। सब मैं वरतैं को लखै, है हाजरि पैं दूरि॥४॥
हरि आस्ति कौं छांडि कर, भरम न जाई दूरि। सोइ पावे परसराम, जु रहिबो करि हजूरि॥५॥
जल थल व्यापक देखिये, समुझि विचार अनूप। परसा प्रेरक प्राण को, सो सब आस्ति कौ रूप॥६॥
आस्तिक चिन्है आतमां, आपा पर मन लाय। ता आस्ति कौ परसराम, माने त्रिभुवनराय॥७॥
सर्व सिद्धि की सिद्धि हरि, सब साधन को मूल। हरि सर्व सिद्धि सिद्धार्थ बिन, परसा सबै अस्थूल॥८॥
नास्ति जहां निहचौ नाहिं, आस्ति तहां संतोष। नास्ति निर्फल परसराम, आस्ति कै फल पोष॥९॥
आस्ति जहां आनन्द फल, नास्ति तैं निज न्यार। आस्ति उज्जल परसराम, नास्ति मैं घोरंधार॥१०॥

हरि लिखत कौ जोड़ौ-१५

कर्म हीन कलपत फिरे, सदा दुखी जे प्रान। गिरि कंचन को प्रसराम, छुवत होई परवान॥१॥
वापी कूप समंद जल, जाहुं कहूं चलि प्रान। कुंभ कलस ज्यौं परसराम, लेसी भरि उनमान॥२॥
परसा संपति विपति सुख, जहां तां एक समान। जाउ कहूं भावै जहां, हरि लिख्यौ सो परवान॥३॥
कछू हमारो बस नहीं, करि न सकैं कछु आन। हरि का किया परसराम, दुख सुख सोक समान॥४॥
दोस न दीजै और कों, कृत आपणौं पिछाणि। परसा प्रभु जो निरमयो, होसी सो निरवाणि॥५॥
हाथि बात काहु और क, कलपि मरौ मत कोइ। परसराम जन सत्य करि, हरि जो करै सु होइ॥६॥
संपति जो उरि हरि बसै, विपति जु बीसरि जाइ। परसा संपति विपति दुख, जगत जलै जिहिं लाइ॥७॥
अपणा कीया दूरि करि, हरि का कीया देखि। मिटै न काहू तैं कदै, परसराम हरि लेखि॥८॥

हरि उपकार कौ जोड़ौ-१६

सबकौं पालै पोष दै, सबको सिरजनहार। परसा सो न विसारि हरि, जपिए बारंबार॥१॥
परसा सिरजनहार कौ, हित करि लीजै नांउ। जिन राख्यौ जठरा जरत, ता हरि की बलि जांउ॥२॥
जठर जरनि ग्रभवास तैं, जिनि हरि लीयो राखि। परसा सो न विसारि हरि, सुमिर सदा सुणि साखि॥३॥
जिनि सीरज्यो परसराम, ताको सदा संभारि। निति पोषै रक्षा करै, हरि प्रीतम न विसारि॥४॥
परसा सिरजनहार कौं, तूं कबहूं न बिसारि। परम सनेही आपणों, हित करि सदा संभारि॥५॥
जो तुहि जाणैं प्रसराम, तूं ताही को जाणि। परम सनेही आपणों, आपण मांहि पिछाणि॥६॥
जो हरि जाणैं आपको, सोई जाणियत लाभ। परसा हरि जाण्यो नहीं, तो जाणिवो अलाभ॥७॥
हरि प्रीतम को प्रसराम, तू कबहूं न बिसारि। सनमुख रहि निति नेम गहि, मन दै राम संभारि॥८॥
परसराम जो हरि भजै, सो कदै न पछताय। बसै सदा हरि लोक मैं, सो जमलोक न जाय॥९॥
राख्यो जठरा जरत जिनि, रु दान दई नर देह। ता हरि को गुण प्रसराम, मांनि षाय करि खेह॥१०॥
परसा आसा आन की, करि जमपुर को जाय। राख्यो जठरा जरत जिनि, सो भजिये मन लाय॥११॥

जीव जतन ग्रभवास मैं, जिन राख्यो दस मास। सोई हरि भजि परसराम, परहरि दूजी आस॥१२॥
मनिख जनम को प्रसराम, हरि सांचौ दातार, ता हरि कौं जो परिहरैं भौजल बूड़णहार॥१३॥
हूं जातौ जमलोक तैं, जिन हरि लीयो राखि। हूं न भजौ क्यौं प्रसराम, परमेसुर की साखि॥१४॥
परसराम बैंकुठ के, हरि दीन्है दर खोलि। दरसण अपणै दास कों, दियो प्रकट मुख बोलि॥१५॥

हरि सुभाव कौ जोड़ौ-१७

कहा चमारी बांमणी, पहुंची जाइ निवाण। परसराम भरि बाउड़ी, जल सब एक समान॥१॥
जल कै दोऊ सारिखी, पणिहारी तट तीर। रही न रीती प्रसराम, भरन गई हरि नीर॥२॥
परसा सकुचि न दुरि रहै, पाणी देखि चमारि। आवै सरकि न सनमुखौं, जल बांमणि विचारि॥३॥
पानी परसि न पलटई, उतम मद्धम जानि। परसा श्री गुरु सारिखौ, सब सों एक समानि॥४॥
लघु दीरघ अवरण वरण, नैंक न मानैं संक। हरि पावक ज्यूं प्रसराम, लागै उडि जु निसंक॥५॥
परसराम हरि नाम मैं, सब काहू को सीर। कहि जाणै सोई कहै, अंतिज विप्र अहीर॥६॥
हरि सुमरण सुख प्रसराम, भेव न कछु अभेव। सब काहू कों सारिखो, जहि भावै सो लेव॥७॥
ज्यौं रवि राजा रंक सिर, परसा प्रकट दिखाउ। सुर्ग सकल सौं एक रस, हरि कौ यहै सुभाउ॥८॥

जीउ सुभाव कौ जोड़ौ-१८

मान सरोवर बग तजैं, जहं छीलर तहं जाइ। परसा हंस न सेवई, छीलर यहै सुभाइ॥१॥
खर भसमी सुणहां सठी, सूकर सर्प बिलाव। परसा अमृत पाई तउ, छांडै नहीं सुभाव॥२॥
परसा प्रेम जिमाइये, करि अमृत कौं पूर। काग करंक हिरौ करै, परिहरि राम कपूर॥३॥
कूकर काग करंक सों, रुचि मानैं मन मांहि। परसा अमृत पान सों, पोषै तउ कछु नांहि॥४॥
परसा जो नर मनमुखी, चालै स्वान सुभाइ। सिंघासनि जु बैठारिये, चाकी चाट न जाइ॥५॥
सूकर स्वान बिडाल खर, उष्ट्र जूंणि व्यौहार। परसराम पसु आचरन, मिथ्या नर औतार॥६॥
परसा प्राण न छांडई, जो जाको विश्राम। माया जीवनि जीव की, जन की जीवनि राम॥७॥
वैसां जोगि अगनि धन, पसू व तुरक तुलार। परसा इता न आपणां, विषई सर्प सुनार॥८॥
परसा नर गोली घड़ै, चलै भूंड कै भाइ। ऊपरि हो कबहूं तलैं, काल काग ले जाइ॥९॥
परसा प्रभु तजि आन की, हंस न करिये आस। परिहरि छीलर हीन जल, हरि सरवर करि वास॥१०॥

अंकुर सुभाव कौ जोड़ौ-१९

परसा गुड़ की मेड़ करि, सींचै दूध बणाइ। अंति निंबोली आप गुणि, अमृत गियो बिलाइ॥१॥
अमृत बरख्यो विष भयो, त्यौं श्रीगुरु की सीख। आक धतूरो प्रसराम, पलटि न होहीं ईष॥२॥
एकै संगति सब बसै, आक धतूरो आंब। पलटि न जाहिं परसराम, पान फूल फल कांब॥३॥

साध समागम प्रसराम, अमृत नित ज्यौं ईष। ताकी संगति तोरई, खारी सुणै न सीख॥४॥
बहु विसै लवन तोरई, परसा तीरथ धोइ। तऊ बनि न तजि लवणता, मीठी कदै न होइ॥५॥
संगति साध असाध की, पावै नही समाख। परसा तूंबनि तोरई, वांछी होइ न दाष॥६॥
परसा तूंबी तूस रस, खारौ बन विस्तूर। हरि निज निर्मल देखिये, ज्यौं मधु अमृत अंकूर॥७॥
स्वाति सुधाकर ईष रस, परसा साध सुभाव। जहर भुजंग मलेछ मन, जो सुख तऊ कुभाव॥८॥
परसा पापी प्राण कै, अंतरि बसै विकार। अमृत बरख्यौ ऊस में, पलटि भयो सब खार॥९॥
टारण दुर्गं घई सुवास, असाध साध सुभाय। परसा निसि दिन बसुदेव, मंगल नाम सुनाय॥१०॥

सुभाव पतिव्रत कौ जोड़ौ-२०

इहै स्वभाव पतिव्रत कौ, जु हरि तजि अनत न जाय। प्रिया सुपिय तजि प्रसराम, काहू कौ न पत्याय॥१॥
ज्यौं अग्नि न सहइ नीर कौं, परसत ही मरि जाइ। यौं प्रसराम पतिव्रत मैं, और न कछू समाइ॥२॥
परसराम पतिवरत कौ, वदि ऐसो निरवाह। सिंघणि करै न स्वान सों, संगति यहै सुभाह॥३॥
परसा पतिव्रता सोई, पिय तजि अनत न जाय। रहै सरणि छांड़े नहीं, सेवै प्रीति लगाय॥४॥
सिंघणि बरै न स्वान कों, कुल लज्या बल जाणि। परसराम पतिवरत कौ, नेम जाय जस हाणि॥५॥
सिंघणि तजै न सिंघ कौ, भजै न स्वान सनेहु। परसराम पतिवरत कौ, पण ऐसो सुण लेहु॥६॥
पतिव्रता कौं परसराम, नेम तिलक संसारि। गत गनिका पतिवरत बिन, गई जनम कौं हारि॥७॥
परसराम पतिवरत को, जन जानै पण राखि। सिंघ न लागै स्वान के, पांय सुनों यह साखि॥८॥
स्वामि धर्म खरि राखि थिर, दूजो देइ बहाइ। जिनि तूं किया परसराम, सो उरि आणि बसाइ॥९॥
सांई सिर पर एक हरि, रु दूजो नाहिं कोय। परसा वर दूजौ वरूं, तौं कलि उत्थल होय॥१०॥
तर छाया पण प्रसराम, सों पतिवरत कहाय। नख सिख संग लागी रहै, तरवर त्यागी न जाय॥११॥
जदपि रवि तर तैं बड़ो, परसराम दरसाय। तर तांतै लागी रहै, रवि सनमुख न जाय॥१२॥
पतिवरता पति कौं भजै, तजै आन की आस। होय न कबहुं परसराम,पातिव्रत को बिनास॥१३॥
पति को वरत न उर धरै, करै आनहिं उपास। आन उपासन प्रसराम, पातिव्रत को बिनास॥१४॥
सतवंतीनी सत करी, सकी न राम सगाहि। कीनी पंचाली सती, परसा नेम निबाहि॥१५॥
भगत भगति रत प्रसराम, हरि लाइक को एक। पतिवरता इक आधसी, बिभचारनी अनेक॥१६॥
हरि कौं सेवै नेम धरि, क्यौं आन कों पत्याय। पड़ै न कबहुं परसराम, सिंघ स्वान कै पांय॥१७॥
पतिव्रता सो परसराम, जाकै हरि भरतार। सहै न दूजो सत्य करि, येकहिं सों इकतार॥१८॥

हरि कृपा मानी कौ जोड़ौ-२१

हरि तरवर विस्तार ज्यौं, पोषै एकहि भाय। परसा मानै पोषफल, तरवर तहीं समाय॥१॥

श्री गुरु राजा रंक सिर, दीनूं लैकर येक। परसा सनमुख साध को, रु पूठा पसु अनेक॥२॥
रन बन पोषत प्रसराम, श्री गुरु सकै नांहि। सूकै काठ पषाण मैं, बरखै तउ कछु नांहि॥३॥
हरि की कृपा न मानहीं, ताहि कहूं सुख नांहि। कृपा पिछाणै प्रसराम, रहै सदा सुख मांहि॥४॥
कृपा सकल सौं सारिखी, जाय मिली वेसासि। अति आरति सुं परसराम, मानि लई निज दासि॥५॥
कृपा सिंधु की परसराम, कृपा सकल सौं जाणि। सेवक संत न लाभई, जो राखै कृपा पिछाणि॥६॥
सबसों कृपा कृपाल की, सम वरतै ज्यौं भांण। कृपा पिछाणै परसराम, सेवक संत सुजांण॥७॥
कृपा सकल सौं सारिखी, साखि स्वर्ग ज्यौं सूर। परसा पड दै करणि कै, दुर्‌यो दिष्टि अंकूर॥८॥
परसा दिनकर ज्यों दया, दीसे कहूं न हीण। रूप न दरसै आंबिली, तब लगि रहै मलीण॥९॥
परसराम विधु कौन कों, अपबसि लेत निहोरि। सब परि सहजि सुधा श्रवै, लीनौ मांनि चकोरि॥१०॥
कदै न व्यापै दास कौं, हरि सनेह तैं रोर। परसराम बलि चंद कै, पावक चुगै चकोर॥११॥

हरि सनेह कौ जोड़ौ-२२

माया सगी न कुल सगौ, सगौ न यौ संसार। परसराम या जीव को सगौ तो स्रिजन हार॥१॥
हरि प्रीतम सुं परसराम, सगौ न सूझै कोइ। सब कों सिरजैं संग्रहै, सगो कहावै सोइ॥२॥
परसा सांचो हरि सगो, जु सबको स्रिजन हार। सबको पालैं पोष दे सब की करै संभारि॥३॥
सबै सगाई स्वार्थ की, हरि बिन कीजै और। परसा सांचो हरि सगो, सब काहू की ठौर॥४॥
उत्तम मध्यम नीच को, एकहि सिरजन हार। राजा प्रजा परसराम, हरि भजि पावै पार॥५॥
अंतरजामी आतमा, हंस जीवधर देह। परसा प्रभु सबको सरण, पारब्रह्म निज गेह॥६॥

हरि भजन कौ जोड़ौ-२३

परसराम हरि भजन बिन, पायो जनम न हारि। राम सुमरि जनि बीसरै, प्रीतम प्रेम सम्हारि॥१॥
प्रीतम प्रेम संभारिये, जीवनि प्राण अधार। परसा पल न बिसारिये, सु जपिये बारंबार॥२॥
जो न बिसारै आपको, सो प्रीतम न बिसारि। परम स्नेही परसराम, हरि तारैं भव पारि॥३॥
पार उतारै संग लै, राखै अपणी छांह। हरि प्रीतम भजि प्रसराम, निर्बांहै दै बांह॥४॥
हरि सुमिरन संतोष धन, जाके आयो होई। परसराम निहकाम जन, कलपि मरै नहिं सोय॥५॥
अस्थिर बैठे आतमां, अंतरि प्रगटै आप। रोम रोम सुमरन करै, परसा कहिये जाप॥६॥
हरि श्रवणां सुनिये भलो, मुख सुमरैं तो लाभ। हरि हिर्दै थिर परसराम, बसै सु मोटी भाग॥७॥
हरि हिरदै थिर राखिय, रहिये हरि सों लागि। परसा हरि न बिसारिये, भजिये सो बड़भागि॥८॥
हरि सुम्रण सुख परसराम, बस्यौ रहै मन मांहि। अविनासी आनन्द पद, जु सुकृत भूलै नांहि॥९॥

आतुर भजन कौ जोड़ौ-२४

बेगौ होय न बिरंब करि, निर्मल हरि गुन गाय। सौंज पराई प्रसराम, जासी अंत बिलाय॥१॥
अंति बिलाय न ऊबरै, परसराम नर देह। नारायण भजि नेम धरि, जनम सुफल करि लेह॥२॥
परम स्नेही परसराम, हरि दातार वरेह। सो प्रीतम जनि बीसरै, जिनि दीनी नर देह॥३॥
जिन हरि दीनी हेत करि, पर्म सुमंगल मौज। परसा सो न बिसारिये, भजिये अंतरि हौज॥४॥
अंतरजामी परसराम, हरि प्रीतम निज रूप। दरसी परसी सुख पाइये, प्रेम प्रसाद अनूप॥५॥
परम सयानप प्रसराम, हरि हिरदै थिर होय। ग्रभ संकट जामण मरण, आवागमन न होय॥६॥
जनम सफल तब प्रसराम, प्रभु सों परम सनेह। हरि हरि रटत न बीसरै, पर्म सयानप येह॥७॥
जीवन झूठा जानिये, मरणा सांच संभारि। है उतावलि परसराम, हरि उर तैं न बिसारि॥८॥
परसा जीवन दूरि है, मरना निकट विचारि। तातैं कछू न कीजिये, भजिये देव मुरारि॥९॥
सब देखत ही जीव कों, ले जासी जमराय। विरम न करिइ परसराम, हरि भजि यहै उपाय॥१०॥
राछ परायो प्रसराम, रहै न राख्यौ जाय। अपणूं काज सुधारि लै, हरि भजि विरम न लाय॥११॥

सुमरन संतोष कौ जोड़ौ-२५

भूखै कौं भोजन त्रपति, प्यासें को जल पोष। हरि सुम्रन फल परसराम, उपजै यों संतोष॥१॥
परसा हरि संतोष बिन, सदा रहै मनि भूष। सौंपि दियो जिमि जीव कौं, जनम जनम को दूष॥२॥
अंध अचेतन आस बसि, भर्मे भव जल मांहि। परसा हरि संतोष बिन, सदा दुखी सुख नांहि॥३॥
हरि सुमरन संतोष धन, जाके आयो नांहि। परसा निहचै मूढ मन, मरसी माया मांहि॥४॥
सप्तदीप नव खंड को, राजा तउ कछु नांहि। परसा हरि संतोष बिन, भर्मे भव जल मांहि॥५॥
सदा एक रस निरबहै, पलटि न होय दुराज। परसा चढै न ऊतरै, अविचल हरि को साज॥६॥
सूखी कड़ाही ज्यौं बड़ौ, दाझै सब संसार। परसा हरि संतोष बिन, सदा जीव कौं मार॥७॥
हरि हथूस कौं हाथि करि, बाहि काल ककपालि। पुठि न लागै परसराम, तुं सोई लेउ सम्हालि॥८॥
माथो धूणै देह दुख, जग जाणै यह बाणि। परसा माखी कर धसै, हरि न भज्यो या हाणि॥९॥
साखी सबै सोइ भली, जामैं हरि को नांउ। हरि बिना जो प्रसराम, सबै दुष घर गांउं॥१०॥

सेवा सुमरिन कौ जोड़ौ-२६

सेवा सुमिरन परम सुख, भाव भगति बेसास। हरि अम्रत रस परसराम, पीवै कोई दास॥१॥
बहुत कुसगति बहि गये, सेवा सुमिरन हीन। भूखैं भर्मे परसराम, जीव जगत आधीन॥२॥
केइ लोभी केइ लालची, कै कामी विष लीन। परसा नरकि समांहि नर, सेवा सुमिरन हीन॥३॥
सेवा सुमिरन सत्य करि, कीजै जो व्रत धारि। परसा जामण मरण की, हरि मेटै जु उधारि॥४॥

हरि प्रीतम तजि आन को, परसा चित न डुलाय। सेय सुमरि सुख सिंधु कौं, दरसि परसि सुख पाय॥५॥
परसा हरि सुख सिंधु कों, सेय सकै जो कोय। जो सेवै सो थिर रहै, आवागवण न होय॥६॥
हरि गयंद भजि नेम धरि, गत खर संग निवारि। परसराम हरि सेवतां, कदै न आवै हारि॥७॥
हारि न आवै सत्य करि, हरि सेवत सुख होय। परसराम हरि सिन्धु की, साखि भरै सब कोय॥८॥
जिहिं सेवा सुख पाइये, रहिये प्रेम समाय। परसराम जन सत्य करि, कीजै प्रीति लगाय॥९॥
हरि श्रवणां सुणिये भलो, हरि मुखि सुमरे जाग। हरि हिरदै थिर प्रसराम, रहै तो बड़ो भाग॥१०॥
सुमरि राज दातार कौं, परसा पल न विसारि। छत्र धर्‍यो जिन सीस पर, ताको सदा संभारि॥११॥
सेवा सुमरन हीन पसु, ताहि काल छलि खाय। परसराम जो हरि भजै, सो नर हरि पुरि जाय॥१२॥
हरि सुमर्‍यां सुख प्रसराम, बिन सुमर्‍यां दुख जाणि। भजिये तों बड़ लाभ है, भजै नाहिं बड़हाणि॥१३॥

सेवा प्रीति कौ जोड़ौ-२७

हरि सेवा सुमरन सुफल, परसराम जो प्रीति। प्रीति बिना मानै न हरि, कियो न आवै चीति॥१॥
परसा मानै प्रीति हरि, मानै ग्यान न जोर। निर्गुण से वे गुन करै, इस्यौ ह माखन चोर॥२॥
प्रीति बिना निर्गुण न कछु, और सगुण बेकाम। परसा मानै प्रीति की, सेवा सालिगराम॥३॥
निर्गुण सगुण प्रीति बसि या, साखि सुणूं मन सुद्ध। परसा पायो नामदे, हरि मूरति कूं दुद्ध॥४॥
निर्गुण सगुण सब प्रीति बसि, ज्यौं गिर नीर निवाणि। नामैं पायो प्रसराम, पीयो दूध पखाणि॥५॥
हरि प्रीतम बसि प्रीति कै, ज्यौं दर्पन दिसि नैन। परसा अपने रूप कों, देखि लहै नर चैन॥६॥
श्रवनि सुनै बिन प्रसराम, बादि गये बहु बैंण। अतर जामी प्रीति बिन, होय न कबहूं सैंण॥७॥
कोइ कहो करौ कछु सब, वादि बडाई डिंभ। हरि प्रीति बिन परसराम, मिथ्या सब आरंभ॥८॥
ताकी हरि मानै नहीं, जाकै प्रीति न प्रेम। तांकी मानैं प्रसराम, जो सेवै धरि नेम॥९॥
पानी भजै निवाणी कौं, तजै आन गिरि ऊंच। परसराम हरि प्रीति बसि, गिनैं न नीचा ऊंच॥१०॥
परसा नीर निवाणी दिसि, चलि आवै इह टेवु। प्रीतम वसि हरि प्रीति कै, जिहि भावै सो लेवु॥११॥
श्री गुरु सालिगराम की, सेवा कीयां सोभ। दूजी सेवा प्रसराम, सोभा तऊ कु सोभ॥१२॥

साच अदिष्ट कौ जोड़ौ-२८

जो अदिष्ट सो देखिये, जो दीसै सो नांहि॥ दिष्टक झूठो परसराम, सांच अदिष्ट कहांहिं॥१॥
दिष्टक सब आदिष्ट मैं, आदिष्ट रहै निर्धार। रूप वर्ण गुण तैं अगम, परसा प्रगट अपार॥२॥
नांव भरम काया करम, मन अवरण तन मांहि। तन मन विलै समाय है, परसा कहा कहांहि॥३॥
सकल विराजै अकल में, अकल सकल को मूल। परसा दीसै सो दुरै, है हरि अस्थिर अस्थूल॥४॥
सुन्दर वर सोभित सदा, सुख दाता सुख रूप। परसा सो पद सेइये, अविगत अगह अनूप॥५॥

कहं काबुल कहं खुरसान, कहां दिल्ली मुलतान। चहुं धामैं जो राजई, परसा समुझि सुभान॥६॥
आवै जाय न दुरि रहै, दीसै उग्र अनंत। परसा औसर आस बिन, अस्थिर जो आदि न अंत॥७॥
परसा हरि आकास ज्यौं, थिर देखौ किन जागि। लागै लोह न लाकड़ी, पाणी पवन न आगि॥८॥
परसराम आकास कों, हरि कहिये आकास। सब बाहरि भीतर बसै, सुहरि सांस को सास॥६॥

सांच ग्राहज कौ जोड़ौ-२६

परसा झूंठ न राचई, सांचो सिरजन हार। पहली देसी मांग तूं, पाछै कहि दातार॥१॥
कपट कियां रीझै नहीं, सांच सनेही सार। परसा तन मन सौंपिये, तबहि मिलै अपार॥२॥
तन मन दिया न हरि लिया, परि गई बीचि विराय। परसा तन मन सौंपि करि, लियो न द्वारि बुलाय॥३॥
परसा कहियां का सरै, हरि हिरदा की लेय। जो मनु दीजै आपनो, तों पाछै प्रभु देय॥४॥
कपट कियां रीझै न हरि, रीझै सांचै हेति। कपट न कीजै प्रसराम, रहिये सांच समेति॥५॥
तन मन हरि कौं सौंपिये, रु रहिये नित निर्भार। कियो करायो प्रसराम, मानै सिरजनहार॥६॥
सांच पियारो सत्य करि, कपट न रीझै सोय। अंतरजामी प्रसराम, सब लखै अंतर जोय॥७॥
सांचो साहिब प्रसराम, रीझै मन कै सांचि। निकट न जाई झूठ कै, इहै साखि सुनि बांचि॥८॥
सांचो साहिब झूंठ की, कछू न मानैं कानि। परसा आदर सांच कौं, होसी हरि दीवानि॥६॥

तन मन दिये जोड़ौ-३०

मन दीयो जिन सब दियो, देबै रह्यौ न और। जहं मन मानै प्रसराम, तन कूं देई बौर॥१॥
जप तप संजम परसराम, अथवा विषै विकार। जहं जहं मनवो अनुसरै, तहं तहं तन भी लार॥२॥
जो मन हरि कों सौंपिये, तौ तन अनत न जाय। तन हरि को मन आन दिसि, परसापति न पत्याय॥३॥
जो मन परम सनेह रत, सो तन ता मन भेति। परसा नृफल सो सुफल, जो तन मन हरि हेति॥४॥
हरि प्रीतम वरि हेत करि, तन मन हरि कौं देह। तन मन साटै प्रसराम, हरि प्रीतम करि लेह॥५॥
सर्वस हरि कौं सौंपिये, हरि न मिलै क्यौं आय। परसा तन मन प्राण दै, पीजै प्रेम अघाय॥६॥
जिनि हरि आपनपौ दियो, ता हरि कौं मन देह। परम स्नेही परसराम, हरि प्रीतम करि लेह॥७॥
सेवा सुम्रण परसराम, कीजै प्रीति लगाय। परम सनेही आपणौ, हरि लीजै उरि लाय॥८॥
तन कौं तबही ओपमां, मन कै सांच सिंगार। तन मन परवसि प्रसराम, मिलै न कदै अपार॥६॥
चलै न सूधौ नीच मन, अपणी जाणैं राखि। तन बपुरै की प्रसराम, मन की लार कुसाखि॥१०॥
हरि अपणों राखैं रहा, हमहिं हमारो देउ। मन साटै मन प्रसराम, जो लाभै तो लेउ॥११॥

राम रतन कौ जौड़ौ-३१

परसा राम रतन मिल्यां, छूटि गई सब टेक। हीरै हीरा बेधियां, हरि मन हुआ एक॥१॥

एक मिल्यां तै एक ही, दूजा नाहीं कोय। परसा भर्मि न भूलिये, कहन सुनन कों दोय ॥२॥
एकै करता एक घर, अंतरि बसै सु देखि। पड़दौ धरि दूजौ भयो, परसा भूलौ भेषि॥३॥
परसा जोति अनंत की, सब घटि रही समाय। मूरख मरम न जाणई, भेदी जन पतियाय॥४ ॥
हरि दरिया मैं सब बसै, सब ही भीतर सोइ। बाहरि भीतर एक ही, परसा धरी सुदोइ॥५॥
उत्तर दिसि कौं हरि बसै, पछिम बसै खुदाय। परसा पति अंतरि बसै, दुविध्या दऊं दिसि जाय॥६॥
उतपति पानी पवन की, ताको यौ विसतार। ब्रह्म निरंतर देखिये, परसा भेद अपार॥७॥
भेद अपार अधार बिन, देखे बिरला कोय। परसा ऐसे दरस बिन, सेवक सुखी न होइ॥८॥
परसा पूरन प्रीति करि, हरि भेटियो हजूरि। साहिब तौ दिल मैं बसैं, दुणी बतावे दूरि॥६॥
परसा केइ पछिम नवैं, केई पूरब मांहि। पूरब पछिम जास महिं, ताकी गम कछु नाहिं॥१०॥

राम कृष्ण कौ जोड़ौ-३२

राम कृष्ण मैं परसराम, करिये नाहिं विवेक। काष्ठ मथि या पषाण, पावक को गुन एक॥१॥
राम कृष्ण हरि नाम मैं, भेद अभेद न कोय। पार करण कौं प्रसराम, परम पोत प्रभु सोय॥२॥
नाम अगिण हरि एक ही, कृष्ण कहौ या राम। परसराम प्रभु सेय सुनि, सुमरि सरै सब काम॥३॥
भेद नहीं हरिनाम मैं, क्यौंहि भजौ सुभाय। परसा पानी जो पीवै, तिस ताही की जाय॥४॥
रामकृष्ण फल प्रसराम, जाणै जाण प्रवीण। भिनिभाव हरिनाम मैं, करै मूढ़ मति हीण॥५॥
सोलह करि लै सेर की, मण की एक पकाय। परसा कारण भूखकै, हरि सुमर्‌या दुख जाय॥६॥
रामकृष्ण मैं प्रसराम, सब काहू को सीर। कहि जाणैं सोई कहै, अतिज विप्र अहीर॥७॥
परसा पृथवी सुरग को, नीर नांउं गुन एक। रामकृष्ण फल सारिखो, क्यौंहीं कहो अनेक॥८॥
निरगुण सगुण एकै गुण, नई पुरानी आगि। ऊभै कहावत लोक की, परसा पूरै लागि॥६॥

अस्तुति कौ जौड़ौ-३३

नैनां निज पद निरखिये, रसुनां दीन दयाल। श्रवण सुधारस प्रसराम, पीजै प्रेम रसाल॥१॥
हस्त कमल हरि बारनैं, चित चर्ण कंमल सुं लाय। सौंज सुफल करि प्रसराम, हरि सनमुख सिरनाय ॥२॥
हरि सनमुख सिरनाइये, जपिये हरि को जाप। हरि उर तैं न बिसारिये, परसा प्रेम मिलाप॥३॥
प्रेम मिलाप सुमिलि करै, हरिजन हरि संग लागि। परसराम जल जीव ज्यौं, जलै न जम की आगि॥४॥
परसराम जन परम सुख, रसना रमिये राम। रछ्याकर आणन्द पद, अभै अमोलिक नाम॥५॥
अभै अमोलिक प्रसराम, सुमरन कौं हरि नाउं। जा समर्‌यां सुख पाइये, ता हरि की बलि जाउं॥६॥
चतुर बरन हरि नाम कै, लिखिये उभै बनाय। वेद सुमृति की आदि है, परसराम चित चाय॥७॥
परसराम कह सांभलौ, प्रीति येह विवहार। नवां को अंक जु नहिं मिटै, बहुत करौ बिस्तार॥८॥

जैति कौ जोड़ौ-३४

प्रथम लंक भै कंप प्रगट, रिण राम पधारण। सिला सिंधु सर पूरि पार, कपि जूथ उतारण॥१॥
असुर संधारण सुरसवर, सुहरि हरि भगवंत है। अकल सकल पूरण धणी, परसा प्रभु राम जै॥२॥
जयो राम रघुनाथ, नाम निज रोर विहंडण। उधधि बांधि पाषाण, राम रावण सिर खंडण॥३॥
आदि अंत तारण तरण, पतित पावन व्रत जिनि गह्यो। परसा प्रभु हरि सुजाण, रघुनाथ राम तोकुं जयो॥४॥
रघु राम राजीव नैन, तुमी सरवगि सयान। परसराम यौं बदत सिंधु, सुर नर जीवनि जान॥५॥
महाराज रघुवीर काज, असुर निकै सारण। लंक लुटि दल कूटि, बीस भुजदंड उतारण॥६॥
असुर सरण सुर उद्धरण, राज वभीषण कौं दयो। परसराम प्रभु राम जपि, जिन रघुपति रावण हयो॥७॥
हरि सधीर मंदर धरण, तरण तारण समत्थ। परसराम पूरन धनी, व्यापक सबकै सत्थ॥८॥
नरसिंघ देव नर हरि नरिंद, महा असुर संघार। परसराम प्रह्लाद हिति, धर्‍यौ प्रगट औतार॥६॥
निकलंक कलंक न व्यापई, कलिमल हरन विकार। परसराम निर्मल अकल, सकल प्राण निज सार॥१०॥

रघुनाथ चरित कौ जोड़ौ-३५

राम राम कहि राम जी, परसा कियो पयाण। राम वियोग न सहि सक्यो, राजा त्यागे प्राण॥१॥
परसा जिनि देखत तिरै, जाणै संत पुराण। राम सुमंगल नाम बलि, पाणी तरै पषाण॥२॥
जो पैं कह्यो न मानहीं, दिष्टि देखि दसकंध। परसराम प्रभु नांव बलि, प्रगट तिरै सिल सिंध॥३॥
जे जलि बूड़ै सो तिरै, यौ अचरज अति कंत। परसा प्रभु तैं जाणिये, लंकापति को अंत॥४॥
सिव कौं सीस चढाइ दस, बहि गयो रावण रंक। नवत वभीषण प्रसराम, रघुपति दीनी लंक॥५॥
लंक विभीषण कौं दई, सिर नायो तिहि बार। परसराम प्रभु राम सम, और न को दातार॥६॥
रघुपति कीयो जानि कैं, विभीषण कुं लंकेस। परसराम प्रभु हेत करि, दियो लंक कौ देस॥७॥
रघुपति रावण रद कियो, रु विभीषण राजाधि। हरण करण प्रभु प्रसराम, हरि सम्रथ आराधि॥८॥
रंक विभीषण कौं दयो, लै रावण को राज। परसा परम उदार अति, राम गरीब निवाज॥६॥
विभीषण राजा कीयो, रु रावण कियो रंक। सोई रघुपति सोंक हर, परसा सेइ निसंक॥१०॥
परसा हित करि सेइये, हरि तारण भवपार। और न को रघुनाथ सम, नेह निबाहण हार॥११॥
धनि रावण रघुपति बर्‍यो, प्रगट बुलायो द्वारि। परसा तन मन सूंपि करि, मेटी सिंभु उधारि॥१२॥
घर बाहर सनमुख सदा, हरि जहं तहं इक तार। रामचन्द्र भजि परसराम, दाता परम उदार॥१३॥
रामचन्द्र दसरथ सुवन, परसा परम उदार। लंक दई जिन हेत करि, भयो अवधि दातार॥१४॥
जिनि रघुपति रावण हयौ, दियौ विभीषण राज। परसराम सोइ सुमिरिये, हरि सारण सब काज॥१५॥
रामचन्द्र को दंड धर, लीयो जिनि कर बान। परसराम सो सुमिरिये, हरि कपिंद्र राजान॥१६॥

जिन तारी सिल सिंधु परि, परसराम सो राम। ता सुमर्‌यां सब सुद्धरै, करिये जो कुछ काम॥१७॥
परसा प्रभु गुण देखिया, श्री लंकेसुर राण। हरि आग्यां तैं तिरि चलै, पानी परि पाषाण॥१८॥
परसा प्रभु पाषाण की, हरि करि भई जिहाज। देखो आवत सिंधु तिरि, दल लीये मति राज॥१९॥

भगत वछल कौ जोड़ौ-३६

परसा ब्याई धेनु कै, ज्यौं दुग्ध बछ कै हेति। भगत बछल भै हरन हरि, नाम सुभगति समेति॥१॥
कामधेनु अप बछ सौं, मोह करै लघु जानि। प्रेम भगति सों प्रसराम, प्रभु की परम पिछानि॥२॥
भगत वछल हरि प्रसराम, सदा भगति के पास। भगति दई करि दान हरि, मान लई निज दासि॥३॥
हरि प्रीतम सों प्रसराम, कोई करै सनेहु। ताही सौं फिरि हरि करै, प्रीति सर्व सुनि लेहु॥४॥
परसा लागै लोह उड़ि, ज्यौं चुंबक पाषाणि। हरि प्रीतम जन सौं मिलै, जासों प्रीति पिछाणि॥५॥
ज्यौं जल तैं सब उपजै, सब कौं पोषै जाणि। परसा दीसै बरसतौ, चाल्यौ जाय निवाणि॥६॥
सदा भगत आधीन हरि, रहिबौ करै हजूरि। परसा बांध्यौ प्रेम को, छांडि न जाई दूरि॥७॥
बंध्यौ प्रेम की दाम हरि, परसराम प्रभु आपु। साध साध मुखि उच्चरै, करै भगत को जापु॥८॥
पराधीन हरि भगत कै, बंध्यौ प्रेम की दाम। अंबरीष हित प्रसराम, दुर्वासा सर नाम॥९॥
सुखदाइक दुख हरण जे, हरि सारण सब काज। परसा प्रभु प्रह्लाद कौं, दियो इन्द्र को राज॥१०॥
जग्य जेबनि दासी भवनि, ता मिलि लेत प्रसाद। सोई जाणै परसराम, भाव भगति को स्वाद॥११॥
भगत बसहिं ताकौं सदा, हरि बरि लियो सनेहु। संख पंचायन प्रसराम, साखि भरै सुणि लेहु॥१२॥
सबै जिमाये प्रसराम, जगत राट ब्रह्मग्य। येक भगत पूज्यां भयो, पूरन नृप को जग्य॥१३॥
धर्म रह्यौ तब सब रह्यौ, धर्म गयां सब जाय। धर्म हीण नर परसराम, अंत मरै पछिताय॥१४॥

साध विरोध न असह कौ जोड़ौ-३७

साध विरोधि परसराम, सहि न सक्यो जैसिंध। हिरणाकुस प्रह्लाद कै, बैरि हयो नरसिंघ॥१॥
भगत विरोध्यो प्रसराम, प्रभु सौं कियो विरोध। प्रलाद हेत नर्हरि कियो, हरिनाकुस सौं क्रोध॥२॥
सह न सकी प्रभु सासना, परसा दई जु प्रेति। हरि धार्‌यो नरसिंघ वपु, आप भगत कैं हेति॥३॥
राम निपात्यौ भगत हित, रावण अपणैं हाथ। राखि लियो जन प्रसराम, बिभीषण जु रघुनाथ॥४॥
स्वामि धर्म सों प्रसराम, नहिं जीव की पिछाणि। दोषी जो हरि भगत कौ, सो हरि दोषी जाणि॥५॥
परसुराम पसु जीव कौं, सूझै लाभ न हाणि। बैर जितौ हरि भगत सौं, तितौ जु हरि सों जाणि॥६॥
राखिलई प्रह्लाद की, परसराम प्रभु पैज। हरि फेर्‌यौ जन बैर तैं, हिरणाकुस को तैज॥७॥
दोष सहे सब आपके, जनकै सहि न गुपाल। जग्य सभा मैं परसराम, हरि मार्‌यो सिसुपाल॥८॥
जन की निंदा परसराम, सहै न दीनदयाल। हरि आपन सिसुपाल को, सिर काट्‌यो तत्काल॥९॥

भगति रतन कौ जोड़ौ-३८

परसराम को आदरै, भगति अग्नि की झाल। कोक बंध भौरिण भिड़ै, कर काढ़ै करवाल॥१॥
कहा करै डर सूर को, कर लीनी करवाल। संक न मानै मरन की, परसा प्रेम रसाल॥२॥
जो रस लूधौ रणि भिड़ै, तन मन लीयैं हाथि। परसा ताहि न भै बरै, जो निरभै बर साथि॥३॥
सूर अभै वर उरि धरै, सो रिण संकै नांहि। परसा ताकों भै नहीं, और सकल भै माहिं॥४॥
भाजि न जाई देखि करि, रिणि आवत अरि पूर। परसराम छांड़ै नाहिं, जहं पग मंडै सूर॥५॥
लज्या घाइल सूर कौं, जगत जीव कीं नांहि। परसराम रिण खेत की, कीरत पतिमुख मांहि॥६॥
घावां पूरो घाइलां, जिनि छांडै रिण खेत। परसा कीरति कलि समी, मरिबो पति के हेत॥७॥
जामण मरण बिसारि करि, भर्मि धरै नहीं भेष। भागाँ पीछै बाबुड़ैं, परसा जन को येक॥८॥
भागि जाय उर भै धरै, दुहुं पख जल्यां जाणि। परसा पति सों साई दो, कौण सहै साहाणि॥९॥
आगैं अरि पाछैं सुपति, सिर ऊपरि सुर होय। परसा आई अपसरा, तब भागै धृग सोय॥१०॥
जाकौ अरि न बखानई, काणि न दरि दीवाणि। परसराम रिण मैं मिटै, सो कायर धृग जाणि॥११॥
परसा भिड़ै निसक हो, भै धरि भाजै नांहिं। कूंवारी आरणि बरै, सूर सदा सुख मांहिं॥१२॥

भजन वेसास कौ जौड़ौ-३९

हरि हिरदा भीतर बसै, अस्थिर अनत न जाय। परसराम ता दास कै, और न व्यापै आय॥९॥
और न व्यापै दूसरो, जो हरि हिर्दै विश्राम। परसराम रिख्या करण, हरि सारण सब काम॥२॥
काम संवारै सत्य करि, जहं तहं रहैं हजूरि। परसराम प्रभु दास कौं, छांडि न जाई दूरि॥३॥
छांडि न जाई हरि हितू रहिबो करै हजूरि। परसराम ता दास कै, रह्यौ सकल भर पूरि॥४॥
पूरि रह्यौ पूरो सदा, मती हीण कैं हीण। परसराम सत्य करि कोइ, जाणै जन लिवलीण॥५॥
लीन रहै निर्मल सदा, हरि संगति सुख वास। परसराम तहं जाणिये, जहं हरि को बेसास॥६॥
हरि बेसास न बीसरै, रहै सदा इकतार। परसराम जन सत्य करि, तांकै प्रेम सिंगार॥७॥
परसा प्रेम सिंगार उरि, सोभित ज्यौं सिर फूल। ज्योति उजालो देखिये, सुमिरन सार अभूल॥८॥
भजै अभूल न भूलई, हरि सुमरण निज सार। परसराम ता दास कौ, प्राण सदा निरभार॥९॥
भजै सदा निर्भार मति, तजै न पति को हेति। परसराम रिण सूर ज्यौं, मरि सेवैं रिण खेति॥१०॥
हरि खेत समात न संकइ, मरै निसंक न मूंद। परसराम ता दास की, सुरति सिंधु मैं बूंद॥११॥
जो सलिता सुख सिंधु सों, परसा प्रीति करांहि। फेर कदै न बीछड़ै, जाय मिली जे मांहिं॥१२॥

वेसास परबोध कौ जोड़ौ-४०

मौन गही तौ का भयो, काह धर्‌यो जो ध्यान। परसराम बेसास बिन, काह कथ्यो जो ग्यान॥१॥

परसा हरि बेसास बिन, जीवन नाहीं सोय। सो जीवन मूंवां बहै, हरि बेसास नहिं होय॥२॥
परसा जीवन तब लगै, जब लगि हरि बेसास। हरि वेसास न ऊपजै, तौ जीवन जनम निरास॥३॥
जीवनि हरि बेसास सों, सो जीवनां सजीव। परसराम बेसास बिन, जीवन सोइ अजीव॥४॥
परसा हरि बेसास सों, जब लगि नहीं पिछाणि। तब लगि जो कछु कीजिये, जीवन सो धृग जाणि॥५॥
जीवन तब लग जानिये, जबलग हरि सुख मांहि।परसराम हरि सुख बिनां, सदा दुखी सुख नांहि॥६॥
जीवन तब लग जानिये, जब लगि रमिये राम। परसराम प्रभु राम बिन, जीवन जनम हराम॥७॥
मनसा वाचा हरि भजै, सब तजि रहै उदास। परसराम तब जानिये, उपज्यौ दृढ बेसास॥८॥
वैष्णव बेसासी भलो, कै मूरखि संसार। परसराम परचा प्रवै, बूडै चतुर अचार॥६॥
परसा निर्फल जीवनूं, जो जीवन दुख मांहिं। सो जीवन मूंवां बुडै, हरि सुमरन सुख नांहिं॥१०॥

राम भरोसा कौ जोड़ौ-४१

जागै राजा तापसी, रु विषइ दुखी उदास। राम भरोसे प्रसराम, सुख मैं सोवै दास॥१॥
जाकौ विनसै जाय कछु, ताहीं कों बहु चिंत। प्रभु कै सारै प्रसराम, सोई रहै निचिंत॥२॥
जाकै चिंता सो दुखी, सुखी जु रहै निचिंत। अकल भरोसे प्रसराम, कलपि न कदै मरंत॥३॥
परसा जाकै कलपना, कलपि मरै दुख मांहिं। अकलप सारै अकल कै, सदा सुखी दुख नांहिं॥४॥
सदा सायक परसराम, जन के दीन दयाल। ताको कछु नहिं बीगड़ै, रिछ्या करै गुपाल॥५॥
जो करिये सोइ सुद्धरे, विनसै कछु ना जाय। सदा हमारै प्रसराम, श्री गोपाल सहाय॥६॥
जिनि मुंहि सिरजै प्रसराम, चिंता करि हैं सोय। हरि बिन दूजो जीव को, नाहिं भरोसो कोय॥७॥
काहू कै कोई भजन, काहु कै कोइ देव। परसा तुहुं करि नेम धरि, सर्वेश्वर की सेव॥८॥
फाटै अंबर थेगली, एक दैंन को राम। है सम्रथ हरि परसराम, पुरवै सबकै काम॥६॥
जाकों चिंता सकल की, तूं तासौं लौ लाय। तेरी चिंता परसराम, करि हैं त्रिभुवनराय॥१०॥

स्वान गयंद कौ जोड़ौ-४२

का गयंद को करि सकै, सिमिटै स्वान अपार। ऐसी विधि जन प्रसराम, सोधि सकल संसार॥१॥
गति गयंद छांड़ै नाहिं, कूकर करैं कलेस। परसा टेक न छांडई, भगत जगत उपदेस॥२॥
कहा जगत कौ रूसिबौ, तुस्टयां सरै न काम। ज्यां रूस्या दुख प्रसराम, सो जनि रूसौ राम॥३॥
जाहि दया जगदीस की, काह करै को जीउ। सो न पिवै क्यौं प्रसराम, जाहि पिवावै पीउ॥४॥
परसराम जा दास की, छाप न छांनी होय। राम कृपा करि कैं दई, सु मेटि न सकै कोय॥५॥
जग उपहासिन प्रीति सुख, दउ दारुण दुख सूल। परसा दुख सुख भै हरण, हरि सुमरण सुख मूल॥६॥
सुख नाहीं संसार मैं, रु उपजै दुख अपार। परसा सो तजि हरि भजौ, दुख सुख हरण विकार॥७॥

कहा भलो संसार को, हरि सुमरण की हाणि। कण बिण आसै प्रसराम, निर्फल जगत पिछाणि ॥८॥
जग निर्फल परसराम, हरषि न कीजै हेति। हरि हरि कहै न कहन दे, ऐसो जगत अचेत ॥६॥
संक न मानौ जगत की, अरु सुमिरौ हरि नांउं। परसराम हरि हरि कहत, नरक देय तउं जाउं ॥१०॥
कहा जगत की पोष तैं, जामैं हरि सुख नाहिं। परसराम हरि पोष तैं, सब दुख दोष दुराहि ॥११॥
जगत अपूठै कछु नहीं, जो सनमुख श्रीराम। राम कृपा बल प्रसराम, सुफल सरै सब काम ॥१२॥

सुरति सनाह कौ जोड़ौ-४३

परसा सुरति सनाह लै, मरण चढ़ै कहि राम। सूर रहै कायर मरै, तो सांचौ संग्राम ॥१॥
सूर रह्यौ क्यौ जाणियें, क्यौं कायर मरि जाय। प्रेम पिवै परसा कहै, सुख मैं सुरति समाय ॥२॥
गैणि विलग्गी ही रहै, पंखणि परम निवासि। परसा प्रेम समाय कैं, रस विलसैं पिय पासि ॥३॥
सुंदरि मिली दयाल सौं, अंतरगति की खोय। पारस परस्यो प्रीति सों, परसा दुवधि न होय ॥४॥
बिछुटी मिली दयाल कौं, पायो निर्भै संग। परसा सुख मैं सुंदरि, राती पति कै रंग ॥५॥
परसा तेज अनंत कौ, ऊगी सूरज सेणि। पति संग जागी सुंदरि, कौतिग दीठा तेणि ॥६॥

कायर सूर कौ जोड़ौ-४४

ढ़ाबै कौण कमान कौं, काठी कसी न जाय। परसा कायर सूर तैं, कठिन कसीस न खाय ॥१॥
परसा दीसै चौहटै, विकत्ती बादि कमाण। कायर खैंचि न जाणई, सूरन को सुरताण ॥२॥
मनसा सर मन गुण भयो, काया भई कमाण। कायर खेलै काल संग, परसा रहै न प्राण ॥३॥
देखा देखि सूरिवां, मरण न करई कोय। पति कारण देहि तजै, परसा सूरौ सोय ॥४॥
घर द्वारे बैरी बसै, परसा मारण मांहि। सूरा डरै न मरण भै, कायर कृपण डराहिं ॥५॥
परसा कायर नहिं मरै, मरै जहँ गर्व गुमान। सूर बीर डरपै नाहिं, तहं मरणुं तिण मान ॥६॥
सूर सनाह न पहिरई, मरिवै तैं न डराहिं। परसराम संग्राम मैं, निर्भै होय सुजांहि ॥७॥

पीड़स पीड़ा कौ जोड़ौ-४५

पीड़ सुं पीड़ा प्रसराम हितकारि कोइ एक। और सहरि की सेविका, आवैं जांहि अनेक ॥१॥
पीड़ सुं पीड़ा प्रसराम, कोई एक जन जांणि। फिरि आये सब कौतिगी, यक पहुँचि सति मसांणि ॥२॥
आय गये बहु कौतिगी, कहत न पीडी बात। परम हितु बिन परसराम, को बूझै कुसलात ॥३॥
आवै जांहिं सुकौतिगी, खरा न छांडै खेत। परसराम तन मन तजै, सूर सुपति कै हेत ॥४॥
भाजि गये भकभूरि नट, सूर न छांडै ठौर। ऐसो औसर प्रसराम, आइ मिलै कब और ॥५॥
ज्यौं जल तजै न जलचरी, भजै न दूजी ठौर। यौं निज सेवक प्रसराम, प्रभु बिन भजै न और ॥६॥
ज्यौं जल मैं बसि जलचरी, जल तजि अनत ज जाइ। परसराम निज दास की, सुरति सनेह समाइ ॥७॥

परसराम जलजीव कै, प्रीति न अतंर होइ। नीर घट्यां तन मन तजै, जीवै नहिं पल सोइ॥८॥
प्रीतम परम सनेह सों, मिलि जानैं जो कोय। परसराम जल चोट ज्यौं, लागै संधि न होय॥९॥
साध सपीड़ै तैं बसै, नेड़ौ त्रिभुवनराय। वादि नपीड़ौ प्रसराम, नर निर्फल बहि जाय॥१०॥
पीड़ सपीड़ा प्रसराम, कोइ एक जन जाणि। बहुत निपीड़ा नीच नर, हरि सौं नाहिं पिछाणि॥११॥

बैद योगि कौ जोड़ौ-४६

वैद बिसारी औषदी, पाइ किनऊं अजान। परसा मरम न जाणिये, तौ उषदि विष समान॥१॥
अंतरि विथा सुतन जरै, बहुत गये टकटोय। परसा पूरै वैद बिनु, वेदनि लखै न कोय॥२॥
विरह पीड़ परसा दुखी, निसिदिन सोचत जाइ। पूजा परचै प्रेम बिन, वैद मिलै क्यौं आय॥३॥
वैदनि वैद न जाणई, सरस प्रेम की पीड। परसा भेदी को कही, है उषदि निज नीड॥४॥
रोगी रोग न समुझई, तौ उषद गई निरत्थ। राम निआदर प्रसराम, बिन जाणै दसरत्थ॥५॥
लछि न लाई वैद कौं, ऊषदि गई निरत्थ। रोगी रोग न तजि सक्यो, परसा समुझि अरत्थ॥६॥
रोगी बूझै वेद कौं, मांग्यां सर्वसदेय। बिथा पिछाणैं प्रसराम, मन दै ऊषद लेय॥७॥
बिथा पिछाणैं आपणी, सो न मरै पछिताय। अति आरती सौं प्रसराम, जहं ऊषद तहं जाय॥८॥
यहि जो जाणै सत्य करि, यउ उखदि यउ व्याधि। ताहि न पीड़ै प्रसराम, जग रिपु रोग असाधि॥९॥
आग्यां मानै वेद की, पथि रहि ओखद खाय। बिथा न व्यापै प्रसराम, श्री गुरु सदा सहाय॥१०॥
परसराम भ्रम दूरि करि, वैदनि वैद पिछाणि। जामण मरण छूटि जाय, सो ऊषदि धरि आणि॥११॥
हरि उखदि कौं परसराम, पत्थि न बेलां वार। लीयां दोष सबै मिटैं, निरमल नाम उदार॥१२॥
हरि सुख जाकै प्रसराम, सोई तन आरोगि। हरि सुमरण जाकै नाहिं, वपु जीत्यौ जग रोगि॥१३॥
परसा निरफल बैदगी, गई सकल कहु पापि। मूवों धनवंतरि देखतां, खायो कालै सांपि॥१४॥
तेरूं बूडै देखतां, बैद मरै मिलि रोग। परसा जीवै हरि भजै, रु रहै सदा अरोग॥१५॥
विथा न जाणि प्रसराम, तौ उखदि करी सुवाइ। कीयो सुकृत क्रोध तैं, ज्यौं निर्फल हो जाइ॥१६॥
जहं संजम आहार कौ, तहं न उपजै रोग। मन कै संजम प्रसराम, मिटै बिघन बल भोग॥१७॥

भै कौ जोड़ौ-४७

भै बिण भार न ऊतरै, उपजै भगति न भाव। परसराम भै भेद अति, भौ जल तिरण उपाव॥१॥
भै बिण भरम न छूटई भोजन भोग विलास। भर्मत कटहिं न परसराम, भै बिण भव के पास॥२॥
जब कबहू भै ऊपजै, तब छूटै संसार। परसा लिपहि न जीव कौं, मन कै विषै विकार॥३॥
जब लगि मन मैं भै बसै, तब लगि हरि की आस। परसराम जब भै गयो, तब जीव को विणास॥४॥
तबलगि भै उपजै नाहिं, मिटै न मन की आस। परसराम जब भै गयो, तब जीव को विणास॥५॥

जब लगि भै उपजै नाहिं, मिटै न आसापास। परसा भै उपज्यां बिना, निर्भै होय न दास॥६॥
जहं निर्भै तहं भै नाहिं, भै तहं निर्भै नाहिं। भै निर्भै सुख परसराम, लाभै हरि घर मांहिं॥७॥
मिटहिं न कबहूं भै बिना, मन कै विषै विकार। हरि दीपग बिण प्रसराम, मन्दिर सदा अंधार॥८॥
जाकै भै हरि भगत सो, भाव भगति लौ लीण। परसा जाकै भै नाहिं, सो गाफिल मति हीण॥९॥
जा काहू कैं भै बसे, सो नर चेतन होय। परसा जाकैं भै नाहिं, सदा अचेतन सोय॥१०॥
आयौ कांजी भवन मैं, भाव भजन कौं नास। परसा भै बिन भगत कौ, होसी अति विणास॥११॥

जन एक आध कौ जोड़ौ-४८

दाता पंडित कवि गुणी, सूरो तउ सुख होय। परसा कथा करीम की, जाणैगा जन जोय॥१॥
परसा रामहिं सो मिलै, जाकै आस न काय। भौ सागर तैं नींकलै, अणभै संग समाय॥२॥
अणभै संगति सो रहे, परसा सूरौ होय। फिरि पाछैं चितवे नाहिं, मरण मतै जन सोय॥३॥
ऐसैं मारग सो बहै, जाकै आस न संक। परसुराम निज दास हो, पूरै मतै निसंक॥४॥
दरिया मारग दास बिण, चालन हार न कोय। परसा प्रीतम राम बिण, जाकै दुती न होय॥५॥
दरिया मारग छांडि करि, सेरी तकैं न सूर। परसराम पति सुंमरिये, तजि आसा अंकूर॥६॥
परसा नीसत सत बिना, कायर भागै जांहि। बहुत गये केइक रहै, जे लागै हरि नांहि॥७॥

निर्भार जन कौ जोड़ौ-४९

हरि आग्यां सब ऊपजै, रु आग्यां सब बिलाय। सबै पराई परसराम, क्यौं अपणी कहाय॥१॥
तन मन अपणो प्रसराम, तौं अपणों सब जांणि। अपणों कछु जाणैं नाहिं, हरि सों करै पिछांणि॥२॥
तन मन जौ तेरौ नाहिं, तौं तैरो कछु नाहिं। यहि विचार करि प्रसराम, रहो सदा हरि माहिं॥३॥
तन मन जाकों प्रसराम, सब ताहि को विस्तार। तामैं तेरो कछु नाहिं, हरि भजि रहि निर्भार॥४॥
सबै पराइ परसराम, खैंचि लेहु जनि भार। अपणी कछु नहिं सूझई, हरि भजि रहै निर्भार॥५॥
जब लगि मैं मेरी कहै, तब लगि नांहिं पिछाणि। सबै पराइ परसराम, अपणी कही सुहाणि॥६॥
मैं मेरी मति हीण कै, हरि सौं परचौ नांहि। हरि सौं परचौ प्रसराम, तब हरि सूझै मांहिं॥७॥
परसा पसु म्हारो कहै, मरतो राखै नांहि। जाको थो तिनहिं लीयो, मूरख रोवै कांहि॥८॥
करि न परायो अपणों, जो जनमें मरि जाय। परसा अपणो जाणिये, लीजै क्यौं न बुलाय॥९॥
परसा जनमैं जो मरै, तासों किसी पिछाणी। आवै जाय न वपु धरै, ताहि गयां बड़ हाणि॥१०॥
परसा तरुवर छांह की, रवि जाणौं कुसलात। जीव कहै मेरी सबै, हरि सारै सब बात॥११॥
कहै पराई आपणी, सु धणी बिहुणौं जीव। सूझै नाहिं परसराम, परमेस्वर सों पीव॥१२॥
परसा सम्रथ सब करै बैठो तन मन मांहि। भिन्न भाव करिये रूधिर, राखै एकहिं ठांहिं॥१३॥

देखि पराइ परसराम, तासौं न करि सनेह। तैरो साथी हरि भजन, छांडि देइ वा लेह॥१४॥
परसा परचै हीण नर, हरि सों नाहिं पिछाणि। सौंज पराई कौं पसु, अपणी कहै सुहाणि॥१५॥
हरि कौ जांणैं प्रसराम, अपणौं जाणैं नांहि। अपणों जांणै जगत सब, जाके सिर हरि नांहि॥१६॥
सोइ कुलीन पावन सुचि, उत्तम नर औतार। परसा निर्मल नांव रत, रहै सदा निर्भार॥१७॥

निर्भार मति कौ जोड़ौ-५०

मेरो तेरो बस नाहिं, राम करै सो सांच। परसा नाचै पूतली, हाथ कहै ज्यौं नांच॥१॥
परसा मन मैं फूलि करि, भार लेहु जनि कोय। कीया होय न जीव का, राम करै सो होय॥२॥
जो कछु करै सु हरि करै, हरि का कीया होय। परसराम जग जीव का, कीया कछु नहिं होय॥३॥
कीया होइ न जीव का, कछु न जीव कै हाथ। हरि का कीया प्रसराम, को मेटन समराथ॥४॥
हरि को कियो न देखहीं, जीव बिना निर्जीव। वादि बिगुतै परसराम, करम कलेसी जीव॥५॥
परसा जो कछु हरि करै, और न करई कोय। रहै न कीया और का, बिणसै अंत न होय॥६॥
कीया होय न और का, हरि का कीया होय।हरि का कीया प्रसराम, मेटि न सक्कै कोय॥७॥
जो कछु करै सु हरि करै, हरि का कीया होय। हरि जो कियां परसराम, करि जाणै नहिं कोय॥८॥
वो ही जाणैं क्यौं करै, करता की गति काय। परसा अबगति नाथ की, मोपै कही न जाय॥९॥
मेरा तेरा सत्य करि, साखी सिरजनहार। मनसा वाचा कर्मणां, परसा जन निरभार॥१०॥
ग्यान उजालौ परसराम, जाकैं सो निरभार। सूझै सकल प्रकास तैं, दोष दुरैं अधियार॥११॥
हरि सारै सुख प्रसराम, सरधा सारै नांहि। सरधा सारै बहि मरण, सुख हरि आग्या मांहि॥१२॥
सांनि पचायो प्रसराम, नर बधेर रु अजाति। लागो दाग न ऊतरै, ज्यौं बस्तर की भांति॥१३॥
परसराम प्रभु सब करै, करि सिर भार न लेय। करै करावै आपही, दोस और कों देय॥१४॥
ऊंट चढ़ण कुं परसराम, बुढ़िया कियो उपाय। अजरांमर सारै भई, जाणै तंह लेजाय॥१५॥
करि जाणै हरि प्रसराम, सोइ जाणैं न कोय। होसी सब हरि का कियां, तेरा किया न होय॥१६॥
परसा झूंठि कलपना, कीया तैं का होय। यहि बिचारि हरि भजन कर, बाल न बांका होय॥१७॥
इहां उहां हरि एक ही, जाय रहौ कहु कोय। जाकै सारै प्रसराम, राखौ रहिहै तोय॥१८॥

सीख निर्भार कौ जोड़ौ-५१

मेर तेर मैं बहि गये, मेर तेर के जीव। परसराम निर्भार जन, जो सुमिरै हरि पीव॥१॥
कियो करायो सब गयो, जब आयो अहंकार। परसा प्रभु मानैं नांहिं, करि लीजै सिर भार॥२॥
जप तप संजम ग्यान गत, जो अहंकार न जाय। अहं न आवै प्रसराम, तौ मानैं हरिराय॥३॥
आपौ धरि करियें न कछुं, करणी कर्म न टेक। परसा प्रभु मानै नाहिं, करिये विधि जु अनेक॥४॥

आपौ धरि करियें न कछुं, यो जीव कौ विकार। परसा दीन स्वभाव बिण, मिथ्या ग्यान विचार॥५॥
परसा जो कछु हरि करै, सोइ सत्य करि होय। नर आपौ धरि जो करै, निर्फल रहसी सोय॥६॥
तन मन हरि कौं सौंपिये, तजि आपौ अहंकार। तब प्रभु मानैं प्रसराम, जब करि रहि निर्भार॥७॥
परसा आपौ जिन धरै, मेटि परायो लेखि। अपणों कीयौ दूरि करि, हरि को दीयो देखि॥८॥
संका करि स्रिजणहार की, आपौ लियां न बोलि। सबकौ बरजै प्रसराम, श्री गुरु अंतर खोलि॥९॥
आपौ खोया हरि मिलैं, हरि खोयां सबुं जाय। परसा नर औतार हरि, बहुरि मिलैं कबुं आय॥१०॥

आप विचार कौ जोड़ौ-५२

बात बिडानी दूरि करि, कछु आपणी विचारि। अंति जहां कहुं जाइये, परसा सुघरि संभारि॥१॥
सुघर सम्भार्‌यां प्रसराम, दुख नाहीं सुख होय। हरि निर्मल निजरूप बिचि, अंतर रहै न कौय॥२॥
जिहिं सेवा सुख पाइये, रहिये प्रेम समाइ। परसराम जन सत्य करि, कीजै प्रीति लगाइ॥३॥
हरि रस पीवै प्रीति करि, सुनि संतन की साखि। परसा अपणैं जानि जन, सरणि लियै हरि राखि॥४॥
परसा प्रभु क्यौं पाइये, क्यौं तिरिये भौं पारि। साध कवन परि होइये, सोई कथा विचारि॥५॥
सगुरौं समुझै सबद मैं, मुगधा लाठि लात। साध विचारै आप तैं, परसराम सहि बात॥६॥

आप समझि कौ जोड़ौ-५३

परसा कहिये कौण सों, घटि घटि मतां अनेक। दुनियां सब संसै डसी, छूटा जन को एक॥१॥
परसा कहिये कौण सौं, कही न मानै कोय। राम सुधारस आपणैं,आप पियां सुख होय॥२॥
परसा कहिये कौण सों, रामकथा उपगार। भीतर मन समझाइये, काटैं विषै विकार॥३॥
परसा बकिये कौण सों, बादि बक्यां कछु नांहि। आपा पर सौ खेल है, जो मन समुझै मांहि॥४॥
राचि रहि सबै आदि सों, अण भै सों को येक। परसराम सब को सुखी, अपणी अपणी टेक॥५॥
काची पाकी सत्य करि, आई जो व्रतधारि। सो फलदाय परसराम, जो पाकड़ी विचारि॥६॥

होत विजात वि कौ जोड़ौ-५४

होत विजातवि सहज हो, करि लीजै सो दूरि। परसा सारै प्यास कै, हरि सुख सिन्धु हजूरि॥१॥
प्यास न बिसरै नीर को, जिहिं अचवण की आस। परसा प्यास न ऊपजै, का बहु नीर निवास॥२॥
परसराम हरि नीर कौं, पी जाणैं जो कोय। जो पीवे सो थिर रहै, आवागमण न होय॥३॥
प्यासौ पीवै प्रेम सों, हरि जल कौं को एक। परसा सरणैं भेख धरि, मंजन करैं अनेक॥४॥
पीवौ को मंजन करौ, जल अपणैं सुभाय। परसा हरि सुखसिंधु को, सेय सुमरि सुख पाय॥५॥
पाणी प्यारो प्यास कौं, तिसौं और को नांहि। प्रीति जाहां परसराम, हरि प्रकटै ता मांहि॥६॥
चाली आवै एक रस, पाणी दिसि पणिहारि। प्यास बिहुणौं परसराम, पंथी छुवै न वारि॥७॥

भोजन भावै भूख कौ, पाणी तृषा सनेऊ। प्रीत भजै हरि प्रसराम, साखि प्रकट सुनि लेऊ॥८॥

सहज कौ जोड़ौ-५५

ग्यान अग्नि मैं जरि मुयें, सहज सून्य के साथि। सहज सून्नि जामैं बसै, परसा चढ़्यौ न हाथि॥१॥
सहज सहज करि बह गये, परसा जग ब्यौहारि। कौण सहज संसौ मिटै, सहज न लियो विचारि॥२॥
सूनां सून्नि पुकारतां, भयो सून्नि मैं वास। परसा अबगति नाथपति, भज्यौ न रामनिवास॥३॥
काम क्रोध तृष्णा मिटि, भागे भरम विकार। परसा हठ संकट मिट्यौ, आयो सहज उदार॥४॥

निर दावा कौ जोड़ौ-५६

दावैं दूसण प्रसराम निरदावै दुख नांहि। मुकत भयो हरि कों भजै, रहै सदा सुख मांहि॥१॥
परसा नर अवतार वर, पायो हरि संजोग। सुमिरि सनेही आपणों, का परमोधैं लोग॥२॥
छांदै चालै लोक कै, लाजां मांखी खाइ। पासी पडै न प्रसराम, मुकता रमैं सुभाइ॥३॥
इहि विचारि जो हरि भजै, हरि भजि तजै विकार। निर्मल सोई परसराम, जो भर्मि न लेइ भार॥४॥
भार न लेई भै धरै, रहै सदा निरभार। पार पहुंचै परसराम, बहै नाहिं भ्रम धार॥५॥

बल घट्यां कौ जोड़ौ-५७

दीन गरीबी प्रसराम, करि जाणैं जो कोय। बिना गरीबी बंदगी, कृष्ण कृपालु न होय॥१॥
लोभ मोह तृष्णा तपति, क्रोध हतै जो कोय। परसा जारै काम रिपु, राम कहै जन सोय॥२॥
राम राम सबै जपैं, दसरथ जपै न कोय। परसा जो दसरथ जपैं, भगत कहावै सोय॥३॥
माया तूटै बल घटै, परसा विणसै वास। सुमिरण साल सरीर मैं, का जीवण की आस॥४॥
भोमि उतार्‌यो बल घट्यो, छूट्यो जगत सनेह। दुख सुख पलट्यो प्रसराम, हरि प्रीतम सों प्रेह॥५॥
मृतक भयौ बल मिटि गयो, तूटी तन की आस। भयो नृमोहि परसराम, तब हरि को बेसास॥६॥
परसराम जो मन मरै, छूटि जाय सब आस। प्रेम सरस अंतरि बसै, सुठी भगति बेसास॥७॥
चिंता तूटै मन मिटै, छूटे जग ब्यौहार। परसराम तब जाणियै, ब्रह्म लियो औतार॥८॥

करुणा गरिबी कौ जोड़ौ-५८

परसा केसू फूल ज्यौं, फूल्यौं कहा गंवार। दिन दो राम संभारि लै, अंति परै मुख छार॥१॥
झूठै सों झूठो रच्यौ, सांच न आयो चीति। इत उत नैन नचावतां, परसा तन बह्यौ बीति॥२॥
परसा तन धरि का सर्‌यौ, सक्यौ न राम संभारि। ज्यौं आयौ त्यौंही गयो, जनम पदारथ हारि॥३॥
परसा तन धरि का सर्‌यो, सक्यो न गोविंद गाय। आयै थे नर लाभ कौं, चाले मूल गमाय॥४॥
मूल बिणट्ठौ डाल तैं, डाल न सकियो मोड़ि। परसा विष कै सीचिबै, सक्यो न बीज बहोड़ि॥५॥
परसा बीज न बावुडै, भू षारच मद मेह। वाहि जोति निर्फल चले, लग्यौ न राम सनेह॥६॥

गलित गरीबी कौ जोड़ौ-५६

प्रभु मेरे औगुण सबै, तुम हरि गुणहिं अगाहिं। दरिया कै भावै नाहिं, परसा जीव बहाहिं।।१।।
जीव बह्यां बह जावगा, जो तुम कृपा न कीन। परसराम हरि दरस बिन, दुखी पुकारै दीन।।२।।
दुखी पुकारै दरस बिनु, दीनानाथ दयाल। तुम बिन सुख सूझै नाहिं, परसा पति गोपाल।।३।।
दीन पुकारै दरद सौं, दुखिया सुख न लहाय। परसराम प्रभु राम बिन, जनम अकारथ जाय।।४।।
जनम अकारथ राम बिन, दिन-दिन पूरी हाणि। परसा पति न पिछाणिये, तौ जीवन धृग जाणि।।५।।
तन-मन-जीवन झूंठ सब, परसा पति चितनांहि। राम विमुख जामण मरण, फिरि-फिरि भौजल मांहि।।६।।
झूंठा तन झूंठा सुमन, झूंठ सुपन संसार। परसा जो फूटो फिरै, हरि बिन अंध असार।।७।।
सुपनों देखि न भूलिये, भरम सकल ब्यौहार। परसराम संभारिये, निर्भै पद निज सार।।८।।
परसराम सतसंग बिन, दुख सुख बांधि विकार। भवसागर भरमत फिरै, सही सुबूड़ण हार।।९।।
भवसागर भरमत फिरै, सूझै वार न पार। परसा दीपग राम बिण, अंध सकल संसार।।१०।।
परसा पंथ न पाइये, कंटक बन बिस्तार। छाया फल जामैं नाहिं, काल रूप संसार।।११।।
अति संकट सेरी नाहिं, आइ पहूंचौ काल। राखि सरण परसा दुखी, समरथ रामदयाल।।१२।।
दह दिसि दाझणि दौं बलै, उबरण को नहिं ठौर। परसा राम दयाल बिनु, हितू ना कोई और ।।१३।।
परसा दुख संकट सदा, या सूनै संसारि। हितू न कोइ परसराम, देख्या बहुत विचारि ।।१४।।
परसराम संभारिये, तन मन धन दातार। परम हितू पालै सदा, सो जपि बारंबार।।१५।।
स्वर्ग म्रति पाताल लौं, मैं देखि सबहिं ठौर। परसराम ता हरि बिनां, सुमरण कूं नहिं और ।।१६।।
हरि हिरदै थिर राखिये, तजिये आसा और। परसा भजिये भेद सौं, राम सकल सिरमौर।।१७।।
परसा प्रभु असरण सरण, प्रगट बिड़द जग मांहिं। दोष हमारै चिति करैं, हम कूं ठोहरि नांहि।।१८।।

कुल निंद कौ जोड़ौ-६०

जाति जनेऊ जनम भरि, जाप्यो जगत अपार। कारज सर्‌यो न प्रसराम, बूडे लै सिरभार।।१।।
जाति बरण कुल प्रसराम, खरे कठिन बिन राम। हरि हरि कहै न कहण दे, मांगै खांहि हराम।।२।।
जाति हमारी प्रसराम, जगत मिली चलि जाइ। हम फिरि हूये राम जन, श्री गुरु कौं सिर नाय।।३।।
जाति न छांड़ै जगत कौं, जगत जाय तहं जाय। परसराम श्री गुरु सरण, जीवै हरि गुण गाय।।४।।
हरि सुख परहरि प्रसराम, भरमैं करम कुसंगि। जिन सिरजै तिन तैं फिरैं, चले जगत कै संगि।।५।।
विप्र जनम धृग प्रसराम, हरि निहकर्म न साथि। भव बूडण की सारधा, दीपग लियें हाथि।।६।।
जिन सिरज्यो तिन वीसर्‌यो, कर्म भरम कौ मानि। विप्र किये जिनि प्रसराम, ब्रह्म न सक्यो पिछाणि।।७।।
विप्र जनम कौं प्रसराम, जिनि दीन्हो तन तूसि। पहरि जनेऊ जोर करि, रहै षसम तैं रुसि।।८।।

गयो जनेऊ जाति मिलि, माला आई हाथि। परसा श्री गुरु आदरै, अब हम हरि कै साथि॥९॥
जाति हमारि परसराम, हम सों कह्यो सिधाय। मूंड मुंडावो हरि भजो, माला पहिरो जाय॥१०॥
जाति हमारि परसराम, रही मनावत हारि। रूसि रहै तौं ऊबरै, श्री गुरु कै उपगारि॥११॥
ब्रह्म कर्म करणी गई, गई जनेऊ जाति। तब हम हूये राम जन, परसा पर्म सुजाति॥१२॥
परसा श्री गुरु कुल भयो, माला धारी जाति। राम कृष्ण आचार नित, संजम हरि दिन राति॥१३॥

कुल निर्वर्ति कौ जोड़ौ-६१

साख सगाई कर्म कुल, संसौ देहि बहाय। परसा अमृत कुल छांडि कैं, कौण हलाहल खाय॥१॥
परसा प्रीतम राम है, ताही सौं लौ लाय। कर्म भर्म कुल कीच है, गडयां न निकस्यो जाय॥२॥
कै करणी कै कुल रचै, बेदि रहे उरझाय। परसा मन राघौ बसै, ता बिन रह्यो न जाय॥३॥
जो करनी कुल कर्म बसि, बांधे वेद भुलाय। परसराम डिगाय करि, दीनैं धार बहाय॥४॥
जाति पांति आचार कुल, करणी सों नहिं काम। निसिदिन ल्यौ लायें भजूं, परसा प्यारौ राम॥५॥
रामहि मिलौं तौ का करौं, कुल करणी आचार। परसा हरि भजि सब तजै, लोक वेद ब्यौहार॥६॥
परसा लोग न छांड़ई, लोक लाज ब्यौहार। लज्या छांडि न हरि भजै, जाय बह्यो संसार॥७॥
लज्यां बूडी भरम संग, छांदे कहती राम। उघड़ि न चीनहिं चोहटै, परसा सर्‍यौ न काम॥८॥
परसा खोई जाणि कै, कुल करणी भ्रम लाज। बाहरि निकसैं लोक तैं, राम कहण कै काज॥९॥
परसा हरि भजि कुल रहै, कुल राख्यां कुल जाय। राम निकुल कुल मेटिये, सब कुलि रह्यौ समाय॥१०॥
परसा कुल भजि बहि गये, बूड़ि भरम भव मांहि। राम निकुल कुल भेंटि करि, हरि जन प्रेम समांहि॥११॥
हरि कुल जाकैं प्रसराम, सो कहिये कुल सुद्ध। हरि कुल करै न आतमां, सो नर नांव असुद्ध॥१२॥
हरि भजि जांणै प्रसराम, नर सोई सकुलीन। हरि कौं भजि जाणै नाहिं, सो मद्धिम कुल हीन॥१३॥
परसा छांदे जगत कै, मो पै चल्यौ न जाय। मटुका फोर्‍या हाट मैं, लज्या गई रिसाय॥१४॥

विवेक कौ जोड़ौ-६२

जेता मन तेता मता, भरमत सिद्धि न होइ। परसा परम विवेक बिनु, कारज सरै न कोइ॥१॥
कछु कारज सर्‍यौ न देह धरि, वादि विगूते आय। परसा नर औतार धृग, गयो विवेक बिलाय॥२॥
चूक पड़ी क्यौं सुद्धरै, परसा बिना विवेक। देही धारि न करि सक्यौ, हरि सुमरन धरि टेक॥३॥
मौन गहै कै हरि कहै, नर सोई संसारि। परसा बडो विवेक यहि, बोलै सबद विचारि॥४॥
जाकै बुद्धि न राघि से, निरबुद्धी नर घिंघ। परसराम बल बुद्धि कै, ससै निपात्यौ सिंघ॥५॥
परसा बुद्धि विवेक बलि, बालक बड़ौ कहां हिं। बुद्धि विवेक विचार बिनु, बडौ मात ग्रभमांहि॥६॥
परसा सेवक संतजन, मैं तिनकी बलिहारि। अविवेकी हरि भाव बिन, ताकौ संग निवारि॥७॥

का कहिये समुझाइये, हिरदै न उपजै एक। पसु न समझै परसराम, हरि सुख पर्म विवेक॥८॥
परसा श्री गुरु को कह्यो, हिरदै राखि विचारि। अपणो अंतर और कों, दै गुरु लाज न मारि॥९॥

बूंद विचार कौ जोड़ौ-६३

परसा पावस बूंद कौं, सिन्धु समागम नांहि। दिष्ट करत जेइ आतमां, मिलै नाहिं हरि मांहि॥१॥
बूंद सुरग की जल विना, भू मिलि बादि बिलांहि। परसा प्रभु बिन आतमां, भरमि मरै भव मांहि॥२॥
सुरग नीर धर प्यास करि, पियौ आपणे अंगि। सुजल सिंधु सौं प्रसराम, मिलि है कहूं प्रसंगि॥३॥
सुर्ग नीर प्रथवी पियौ, सु लियो संगि मिलाय। सो पाणी फिरि प्रसराम, सुर्गि मिलै कब जाय॥४॥
जलधर तजि भू मिलि गयो, अल्प नीर कों नास। परसा हरि तजि जगत मिलि, यौं जीव कौ विनास॥५॥
बूंद सिंधु मैं जो मिली, न्यारी कदै न होय। परसा पलटि न वपु धरै, हरि सुख तजै न सोइ॥६॥
बूंद स्वर्ग कै नीर की, परी नीर मैं आय। निर्मल की निर्मल रही, परसा प्रेम समाय॥७॥

सबद पारिख कौ जोड़ौ-६४

बाजो देखि बजाइये, तब पारिख परवांण। परसा जब रव सरि हुये, सरि बाजै नीसांण॥१॥
बोल्यां तैं सब जांणिये, जाकै जैसा होय। परसा पारिख पुरिख की, प्रगट सबद में जोय॥२॥
परसा दुरै न जीव को, मन आसै बेसास। हिरदै होय सुमुख कहै, वाणी प्रगट प्रकास॥३॥
बीज भौमि कौं प्रगट ज्यौं, बरिखा बिना न होय। परसा मन की सबद सौं, निकसै अंतर खोय॥४॥
रहै न छानौं दोष सुख, भाव कुभाव विकार। बाहरि प्रगटै प्रसराम, भीतरि बसै विचार॥५॥
सीतलता संतोष बुधि, परचौ बाद बिवाद। परसराम सुणि पाइये, श्रवण सबद को स्वाद॥६॥

भजन प्रकास कौ जोड़ौ-६५

घण अहरणि संकट मिल्यां, निकसै झूठ रु सांच। परसा पारिख पाइये, जु यौ कंचन यौ कांच॥१॥
काच कथीर अधीर नर, कस्यां न उपजै प्रेम। परसराम कसणी सहै, कै हीरो कै हेम॥२॥
कांच कसौटी क्यौं सहै, जतन करत हो भंग। परसराम कंचन कस्यां, चढै सवायो रंग॥३॥
काच कायर कथीर कूं, कसि कीजै चकचूर। कसणी पूजै प्रसराम, साध कनक नग सूर॥४॥
कायर कस्यां न सुख लहै, दरि काचौ मन खोट। सूर धीर जन प्रसराम, सहै घणां की चोट॥५॥
कसणी सहै न प्रसराम, कामी भर्‌यो कुबानि। कायर खरो बखानिये, जाय रहै उनमानि॥६॥
प्रांणी जब कसणी सहै, मेटै मन की वांठि। परसराम अपणेस करि, तब गुरु बांधै गांठि॥७॥

हरि रंग कौ जोड़ौ-६६

परसा आस न भजन की, पलक पलक मै भंग। मन कंचन जब जाणिये, चढै न दूजा रंग॥१॥
रंग न दूजौ तौ चढै, हरि रंग राचै प्राण। परसा निबहे एकरस, सो रातौ परबाण॥२॥

बड बखान हरि रंग को, पलटि न होय कुरंग। परसा रहै न आन रंग, फीकौ परै पतंग॥३॥
जो मन हरि कै रंग रंग्यौ, सो मन सदा सुरंग। परसा चढ़ै न ऊतरैं, लग्यो करारो रंग॥४॥
रंग करारो प्रसराम, लग्यो सुदूरि न होय। सदा एक रस निर्बहै, उलटि न पलटै सोय॥५॥
वुलटि न पलटै प्रसराम, जो प्राणी निर्भार। जामैं मरै न औतरै, हरि सुमरैं इकतार॥६॥
जाके अंतरि येक रस, सो निर्मल निकलंक। परसा रहै न और उरि, हरि बिन कर्म कलंक॥७॥
अब न चलै निहचल भयो, चलि चलि करतौ भग। परसराम निज नाम सों, लग्यो करारो रंग॥८॥
गा सकै तौ गाय लेउ, परसराम हरि रंग। घर तैं सारंग जायगौ, पाछै रहै कुरंग॥९॥
मनसा मुइ समान है, मनसा भई तरंग। परसा इनकै गुनि मिलैं, सो करिहैं बहुरंग॥१०॥
रंगि न राचै प्रसराम, करि जाणै बहुरंग। बहु रंगी हरि रंग कौ, करै न कदे प्रसंग॥११॥
जो रातौ हरि रंग सों, सो न करै बहुरंग। बहुरंगी कैं प्रसराम, लागै नहिं हरि रंग॥१२॥

कु दै प्रकास कौ जोड़ौ-६७

परसा प्रीतम निकट है, अपणूं आप संभारि। निज प्रतिबिंब उजास उरि, पायो महल न हारि॥
नाभि कमल तैं प्रगट हो, हिय कमल करै वास। परसा वाणी कंठ तैं, रसना करै प्रकास॥२॥
हृदै कमल मैं हरि बसै, दरपण मैं प्रतिबिंब। परसा दरसै दास नित, अति आरति आलंब॥३॥
हृदै कमल मैं हरि बसै, हरि मिलि हृदौ सिराय। सो हरि सेवत प्रसराम, गावत मन पतियाय॥४॥
हृदै कमल भीतर बसै, अकल निरंजन राय। परसा पर्म प्रकास कौ, रूप न वरण्यौ जाय॥५॥
परसराम परचै बिना, करणी कथनी कांच। सुणि कहिये सोई भली, देखी कहै सुसांच॥६॥
सुणि कहिये करिये जिका, सांची होय न होय। देखी कहिये प्रसराम, झूंठी कदे न होय॥७॥
हृदै प्रकास्यो प्रसराम, दीपक दीन दयाल। सूझै सकल उजास नित, अंधकार कौ साल॥८॥
परसा परम प्रकास तैं, सब सूझै सुख होय। हृदै कमल तैं एक पल, हरि दीप दुरि न होय॥९॥
श्री गुरु दीनूं प्रसराम, अंजन अपणूं जाप। गयो तिमिर अज्ञानता, सूझण लागो आप॥१०॥
सोय निहारूं आपणों, उत्तम आतम ग्यान। परसराम सुख रूप कौ, करूं सुरति सूं ध्यान॥११॥
अपणां नैणां प्रसराम, जो दीसै सौ सांच। दिष्टि पराई देखिये, सो देखिबो असांच॥१२॥
और रूप कों प्रसराम, देखण कौं भय नैन। दर्पण देख्यां देखसी, आप रूप को चैन॥१३॥

पिंड प्राण कौं जोड़ौ-६८

प्राण गयौ तजि पिंड कौं, पिंड गयो तजि प्राण। होय न कबहूं प्रसराम, दुहुं मिलि एक बंधाण॥१॥
उतपति परलै देखिये, पार ब्रह्म गति काम। माया मन्दिर तन तजै, परसा जिव कहं जाय॥२॥
प्राण गयो ब्रह्माण्ड मिलि, पिंड गयो मिलि छार। परसा बूझै हरि कहै, चहुं दिस मंगलाचार॥३॥

परसा अवगति नाथ कै, नैणां निरख नैण। अरु सति करि श्रवणां सुनैं, हरि मुख के मधु बैण॥४॥
जाय तु मारग देखिये, रहै न या तन मांहि। परसा जीव जहां तहां, अपणैं सहज समांहि॥५॥
जाय न आवै कौ कहीं, गयां न आवण होय। जल मैं बूंद जहां तहां, परसा सो गति जोय॥६॥

परदेसी प्राण कौ जोड़ौ-६९

इहां कोउ तैरा नहिं, हरि बिन और सहाइ। और जगत मिलि प्रसराम, काहे कौं सिर खाइ॥१॥
परदेसी अड़ि मति मरै, बाहर पहुंची लार। परसा समुझि सम्हारि हरि, रेड़ि पराया भार॥२॥
भार पराया प्रसराम, तू जनि लेहि उठाय। बाहर दै ठालै भई, बिरंब कियां पति जाय॥३॥
परसा भूखै भख लह्यौ, दुख पायो मुखि राखि। डारि दियो तउ सुख लह्यौ, कुरर पंखि की साखि॥४॥
परसराम सांची भई, अब न करौ जिय लाज। बिरियां आई ब्याह की, गयो बनीरा बाज॥५॥
परसराम मुसकलि पड़ी, आइ मिल्यो रवि नाहु। लोक तमासो मिटि गतो, दुल्हनि दुलह ब्याहु॥६॥
परसराम जाणी सबै, देखि सुणि पुकार। तउ पावक पड्यौ पतंग उड़ि, जलत न लागी बार॥७॥
देखत ही जरि बरि मुवौं, पड़ि पावक की धार। जो गति भइ पतंग की, परसा इहै विचार॥८॥
प्राण मयो तउ सब्ब गयौ, ग्यान विवेक विचार। प्राणी सों प्राणी मिल्यौ, परसा मिटी पुकार॥९॥

सुद्ध मारग कौ जोड़ौ-७०

सूधै मारग मिरगड़ौ, चाल्यौ जाय निसंक। प्रभु सौं सनमुख प्रसराम, कहा जगत की संक॥१॥
इत उत बांवै दाहिणै, तकै फेर पछिताय। सूधे मारग प्रसराम, हाजरि बिलै न जाय॥२॥
हरि तजि बावैं दाहिणै, भरमैं सो वर बारि। सूधै मारग प्रसराम, चलै सु पहुंचै पारि॥३॥
मारगि चालि कुमारगी, कह्यौ मानि बलि जांउं। परहरि बांवां दाहिणां, परसा सुमरि सुनांउं॥४॥

प्रान अगोचर कौ जोड़ौं-७१

माणस माटी मिलि गयो, मड़हट मांहि मसाण। परसराम पायो नाहिं, कोउ पिंड कौ प्राण॥१॥
परसा मान्यो सांच करि, झूठो माया जाल। तन को माटी दै चलै, मन की सुधि न सम्हाल॥२॥
कइ जालै कइ जलि मिलै, कइ गाड़ै लै पालि। परसा कीनी पिंड गति, प्राण न सक्यो सम्हालि॥३॥
परसा देही दुख सहै, पासी पड़ै न प्राण। जाणै को कै बार यौं, मरि मरि गयो मसाण॥४॥
मृतक कहायो बल घट्यो, भोमि उतार्‌यो आंणि। सो फिरि जियौ परसराम, लीयो बोल पिछांणि॥५॥
माणस माया मोह कै, भर्मि पड्यो जंजाल। प्रेम भजन बिनु प्रसराम, खायो छलि जमि काल॥६॥
काल गयो छलि प्राण कौं, चहुं दिस पड़ि पुकार। परसा बाहर कौ लगै, सूझै वार न पार॥७॥
राजा राणा छत्रपति, पंडित गुणि सुजाण। परसा जाणैं को नाहिं, गयो कहूं चली प्राण॥८॥
तब लगि जाणै सब कहै, जब लगि तन संजोग। प्राण गया कीं प्रसराम, है को कहिबै जोग॥९॥

को जाणैं गति प्राण की, तन तैं होय उदास। परसा भीतरि भेद की, हरि जाणैं कै दास॥१०॥
जिनि कछु कियां परसराम, सोई जाननहार। गयो सबै तजि वौ कहूं, सौंज चलावनहार॥११॥
यहि अंदेस परसराम जु, आय कहं गयो जीव। दुखी सुखी राख्यो जहां, सो जाणैं मम पीव॥१२॥
खणि काड्यौ जड़ मूल तै, तायो तातो तेल। परसा तऊ सु पांघस्यौ, मन पापी का खेल॥१३॥
माटी पड़ी रहीं कहूं, प्राण रह्यौ कहु जाय। फेरि मिलण की प्रसराम, दुहुं मिलि कही न काय॥१४॥
तरवर पंखि परसराम, दुहुं क्यौं एक सुभाव। पंखी कहै न जात हूं, तरु न कहै फिरि आव॥१५॥

सैदेसी परदेसी कौ जोड़ौ-७२

सैदेसी संसार सब, संसै सुमिल सरीर। निर संसै निज प्रसराम, परदेसी हरि पीर॥१॥
सैदेसी को संग तजि, परदेसी सौं नेह। परदेसी सुख प्रसराम, सैदेसी दुख देह॥२॥
परदेसी सौं प्रीति करि, सैदंसिया बिसारि। सैदेसी भौ प्रसराम, परदेसी भौ पारि॥३॥
परदेसी सौं प्रसराम, प्रीति न करई कोय। जो करिहै सो जाणिहै, सो सुख जैसा होय॥४॥
प्रीति न कीजै प्रसराम, काहू सौं मन लाय। प्रीति सु रीझै प्रीतमां, तासों प्रीति लगाय॥५॥

परदेसी प्रीतम कौ जोड़ौ-७३

परदेसी रे प्रीतिमां, कहां बसै हो जाय। परसा हितू संदेसड़ा, कौण कहेगा आय॥१॥
प्रीतम परदेसी भयौ, बस्यौ बिराने देस। परसा कौण पठाइये, हरि सनमुखां संदेस॥२॥
हितू संदेसा किण कहूं, सबै बिराणां लोग। परसा प्रीतम राम बिण, निस दिन मन मैं सोग॥३॥
सोग मिटै जो पिय मिलै, प्रीतम प्राण अधार। परसा तब सुख सुन्दरी, गावै मंगलाचार॥४॥
अब कै जो प्रीतम मिलै, परसा अविगति नाथि। तन मन सौंपौं प्रीति सों, बहुरि न छांडू साथि॥५॥
साथ न छांडौ मिलि रहूं, तन मन आस गवाय। परसा प्राण सनेहिया, अबकी बेर मिलाय॥६॥
परसा अंतरि मिलण कौ, संदेसो जो आय। औरूं फेरि पठाइये, लीजै मिल्यौ मिलाय॥७॥
परसा पिव कै प्रेम को, आवै जो संदेस। श्रवणां सुणि सुख पाइये, व्यापै नाहिं अंदेस॥८॥
अंदेसो व्यापै घणो, सदेसौ कछु नांहिं। सोच सिंधु सम प्रसराम, जब लगि पिय न मिलाहिं॥९॥
जो चकवी निस बीछड़ी, सो मिलिहैं परभाति। प्रभु सौं मिलबौ प्रसराम, सूझै द्यौस न राति॥१०॥
परसा प्रीतम प्रीति करि, सक्यौं न मैं आराधि। जिहिं प्रीति कियां पि पाई, सु प्रीति न जाणि साधि॥११॥
यहै अपरचौ पीव सौं, नेड़ौ सक्यौ न जाणि। परदेसी मांनै नाहि, परसा प्रीति पिछाणि॥१२॥
सदा अपरचौ जीव जो, मन उनमनि न समात। अंतरजामी प्रसराम, कहै न हित की बात॥१३॥

ब्रह्म अगनि कौ जोड़ौ-७४

ब्रह्म अगनि मंदिर जलै, दह दिसि भयो उजास। परसा प्रेम प्रकासिया, पाया हरि वेसास॥१॥

परसा घर तजि बन गये, पाछें भयो अकाज। पहिलै हुती सुजलि बुझी, मेरे लागी आज॥२॥
भींति भर्म की ढह पडी, बलौ काम बंध नांहि। परसा मंदिर भणहणों, दीपग दीसै मांहि॥३॥
मोह बलींडा काम बंध, दाधै मदिर मांहिं। घर की संपति ऊबरी, परसा क्यौं पछितांहिं॥४॥
परसा उठी अनंत बलि, परजलियो असमान। घर में हुतै सुजलि मुएं, घर हूं बस्यौ अमान॥५॥
परसा ज्वाला परजली, पूरो भयो सुकाम। दुबध्या तजि सीतल भई, अंतरि प्रगटे राम॥६॥
परसा छानि नाहि रहै, लागी लाय संजोग। देखि उजालो दौरिहैं, अति आतुर ह्वै लोग॥७॥
परसराम अति अगनि बलि, झालि उठी स्वर्गै गई। भेटी सीतल सिंधु कौं, दरिया आगैं हद भई॥८॥

नांव अगनि कौ जोड़ौ-७५

परसा सेरी सांकड़ी, आतुर चल्यो न जाय। विरम कियां वणि नांवईं, दह दिसि लागी लाय॥१॥
परसा पावक प्रबल कौं, जारत संक न जाय। दाझै रन बन गिरि सघन, जल न उलंघ्यौ जाय॥२॥
कहा करै जल सिंधु कौ, जो पावक बलवंत। परसा जन हरि उच्चरै, का भव दोष अनंत॥३॥
परसा निर्मल होय मन, हरि सुमरण सौं लागि। पाप पुरातन फूंस कौं, को बालै बिन आगि॥४॥
ज्यौं पावक मिलि फूस कौं, जारि करै निर्भार। यों हरि पारस प्रसराम, परसि बिलाय विकार॥५॥
परसा प्रभु बिनु और कछु, कीयां भलो न होय। पाप हरिण हरि नांव बिण, और न सूझै कोय॥६॥
निसि न रहै रवि कै उदै, देखि दुरै अंधार। पाप प्रबल कौं प्रसराम, हरि सौं करण प्रहार॥७॥
अर्द्ध नांव हरि को हरै, कलि कै सकल विकार। परसा प्रभु तैं जीव कै, अघ न कछु अधिकार॥८॥
पावक कनिका एक हो, काठ सहस्र जु भार। परसा लागै एक बेर, जारत करै न बार॥९॥
हरि सुमरण आगै न कछु, कलि विष प्रबल अपार। पल मैं जारै प्रसराम, पावक नांव उदार॥१०॥

विरह अगनि कौ जोड़ौ-७६

आगि जु लागी विरह की, बाहरि निकसी झाल। परसा मूल उबारताँ, दाझण लागी डाल॥१॥
डाल जलै तौ जलण दै, मूल रहै आमांण। मूल रहयां फल पाइये, परसा पद निर्वाण॥२॥
आगि जु लागी मूल तैं, डाल गई कुमिलाय। परसा कौंपल सालगी, प्राण तहां बिरमाय॥३॥
परसा कूंपल सालगी, मन गिरम्यो तिहिं आस। सीतल छाया सुख भयौ, फल लागौ आकास॥४॥
सीतल छाया ना तजै, सेवै सहज सुभाय। परसा फल सो चाखिहै, सुरगि रहै घर छाय॥५॥

सम प्रीति कौ जोड़ौ-७७

प्रीति दुहां सूं जाणिये, ज्यौं लोहा खरसांण। परसा घूरो ऊतरै, सो प्रीतम परवांण॥१॥
जिमि पतंग दीपग जरै, प्रीति कहावै सोय। दीपग जीवै जिय मरै, परसा प्रीति न होय॥२॥
मीन मरै जल थिर रहै, यह नेह की न रीति। मीन मरतां जल मरै, परसा सोई प्रीति॥३॥

जल जीवै मछां मरै, परसा प्रीति बिछोह। मीन मरंता जल मरै, सुफल मिल्यां को मोह॥४॥
परसराम ज्यौं हंस कै, बसै सरोवर चीति। सरवर सुमरैं हंस कौं, कहिये सांची प्रीति॥५॥
पंखी तरवर कौं भजै, सीतल छाया देखि। तरवर पंखी कौं भजैं, परसा प्रीति विसेषि॥६॥
परसा राम सबै जपैं, सेवक सबै कहांहिं। साहिब जन मैं लौ नाहिं, तब लगि क्यौंहि नांहि॥७॥
मेलौ साहिब दास कौ, प्रीति न अंतर नेक। परसराम तब जाणिये, साहिब जन मन एक॥८॥
भंवर न भूलै प्रसराम, कवल कोस रस नेह। कुसुम सम्हारै भंवर कौ, सांचौ प्रीति सनेह॥९॥
परसा पै पावक सहै, करि पाणी सौं प्रीति। पाणी दाझै पै निमति, यह सनेह की रीति ॥१०॥
हरि जल थल व्यापक सकल, ढुलि आवै जहं प्रीति। परसा नीर निवाण ज्यौं, यह सनेह की रीति॥११॥
नीर निवाण न परिहरै, चल्यौ जाय जह छेह। रोक्यो रहैं न प्रसराम, लोचन सुमन सनेह॥१२॥

एका अंग प्रीति कौ जोड़ौ-७८

घण दामिनि धीरज धरै, लगै सनेह न और। परसा पल न बिसारहीं, अति आतुर रुति मोर॥१॥
रुति चात्रिग पिव पिव करै, परसा प्रेम पुकारि। घणहर पीड़ न जाणई, क्यौं ही मरै असारि॥२॥
चात्रिग चित न बीसरै, रुति पावस की प्रीति। परसराम व्यापै नाहिं, दरद सघण कै चीति॥३॥
परसा जन तुम बिन दुखी, राम बिहंडण रौर। प्राणी प्रीति न जाणहीं, सुख सुमिरै सालौर॥४॥
हंस विसूरै सर बिनां, नहि मन कौं बिखाउ। परसा सर न संभारहीं, को आवै को जाउ॥५॥
मीन तलफि तन मन तजै, जीवै नहिं बिन नीर। सोक न व्यापै सिंधु कौं, परसापति गंभीर॥६॥
परसा जीव न जल तजै, जल कै जीव अपार। जीव मरै जा जल बिना, जल निर्भै निर्भार॥७॥
दीपक दया न जाणई, जीव जलै जा मांहिं। परसा प्रीति पतंग की, तन मन राखै नांहि॥८॥
दीपग दरद न उर धर्यौ, भयो जीव को भंग। परसा हितू पतंग वदि, जरत न राख्यो अंग॥९॥
परसा दीपग देखि करि, अनत पतंग न जाय। वाही मैं जलि बलि मरै, सो सेवग सो भाय॥१०॥
परसा प्रेम समंद सौं, ज्यौं सलिता जु कराहिं। प्रीति जो पंखी तरवरां, यौं हरि सेवग रांहि॥११॥
मधुकर धसै सुवास कौं, कुसुम संभारै नांहि। यहि प्रभुता यो दास गुण, परसा फल या मांहि॥१२॥
परसा मन सुख आपणौ, को क्यौं ही करि लेहि। करै न काहू सों कदै, प्रीतम प्रीति सनेहि॥१३॥
परदेसी सों प्रसराम, कीजै नाहिं पिछांणि। जेता सुख्य सनेह का, दुख तेता ही जाणि ॥१४॥
दुख सुख अपणों आपकौं, बाकौं व्यापै नाहिं। परसा प्रीति न बीसरै, हरि प्रीतम मन मांहि॥१५॥
परदेसी सों प्रसराम, कीजै नांहिं सनेह। नीर न जाणैं मीन कों, तलफि तजैगी देह॥१६॥
अमिलैं अमिल मिलैं मिल्यों, परसा समुझि सुभावु। पाणी प्रीति न मानई, जीवौ को मरि जावु॥१७॥

समीप अबोल कौ जोड़ौं-७६

यौं दुख व्यापै दास कौ, घरी सर्‍यौ नहिं काम। रहै समीप न बोलई, परसा प्यारो राम॥१॥
जीव कहां विरमाइए, कइसे धरिये धीर। परसा राम न बोलई, मोहि विरह की पीर॥२॥
परसा प्रभु सुनि बीनती, तो बिन अकल उदास। मो तो किस्यौ अबोलणो, तू साहिब मैं दास॥३॥
तुम बिच अतर मो घणों, पर्‍यो सुदूरि न होय। खोट हमारो प्रसराम, प्रभु बिन लखै न कोय॥४॥
करूणासिन्धु कहाइये, करिये क्यौं न सहाहि। परसराम प्रभु बिड़द की, लीजै पैज निबाहि॥५॥
परसा प्रभु या बीणती, सुनिये संत सहाय। अंतर तजि सनमुख रहौ, जीवौ दरसन पाय॥६॥
दरसन दीजै दास कौं, हित करि अंतर खोय। परसा प्रभु सनमुख रहौ अंतर कदै न होय॥७॥
मो तो अंतर दूरि करि, जन कौं लेहु मिलाय। परसा प्रभु या बीणती, सुनियै राम सहाय॥८॥
मोहि तोहि अन्तर कौ नहिं, दरिया लहरि तरंग। परसा प्रभु अंतरि मिल्यौ, साहिब जन इक संग॥६॥
मन मिलिये तब जाणियै, परसा प्रभु अपणेस। मेरे मन कै केसबै, तेरो मन परदेस॥१०॥

बिरही जन कौ जोड़ौ-८०

मोहि उदासि अति खरी, निसि दिन सोचत जाय। परसा प्यारे राम बिन, मन न कहूं विरमाय॥१॥
मन न बिरमै राम बिन, व्याकुल तन अकुलाय। परसा विरह वियोग सर, मोपैं सह्यो न जाय॥२॥
विरह अगनि तन मन जलै, जल बिन जिवै न मीन। हरि प्रीतम बिन प्रसराम, दुखी पुकारै दीन॥३॥
परसा तन मन आस तजि, दिन्हो विरह जराहि। हम तुम बिन मरि जांहिगे, तब सुख दैही काहि॥४॥
प्राण पतंग मरण कौ, मरिवै तैं न जराय। परसा दीपक ना लहै, जामैं रहै समाय॥५॥
विरहनि विरह न सहि सकै, तन मन धरै न धीर। बेंगि बुझावै प्रसराम, आय मिलै हरि नीर॥६॥
मार्‍यो पण मूवौं नाहिं, मरमि न लागो धाय। परसा पीड़ न सहि सकौं, ताते कहौं सुणाय॥७॥
प्राण परायें बसि भयो, तन मैं मन न समाय। परसा पालि न प्रेम की, पल पल निघट्यौ जाय॥८॥
हरि दीपक कौं प्रसराम, सोखै प्राण पतंग। आतुर आरतिवंत सों, मिलत न राखै अंग॥६॥
अंग न राखै आपणौं, दीपक मिलत पतंग। यों विरही जन प्रसराम, हेरत हरि को संग॥१०॥

अस्थाईक बिरह कौ जोड़ौ-८१

बिरह न उपजै दरद बिनु, दरद न होय निपीड़। परसराम रोवै न क्यौं, प्रीतम बिना सुपीड़॥१॥
विरह सूर संसौ तजै, परसा भिड़ै निसंक। तिहि औसर संसार की, नैंक न मानैं संक॥२॥
जा घट वासो विरह को, सो कित छानौ होय। परसा पीड़ विंराम की, सदा पुकारै सोय॥३॥
परसा दास पिछाणिये, जाकै विरह विराम। सो पतिवर्त न बीसरै, सती भजै तजि धाम॥४॥
तन मन त्यागै हरि भजै, नहिं जीवनि की आस। परसराम तहं जाणिये, सही विरह को वास॥५॥

जब लग विरह न ऊपजै, तब लग प्रेम न प्यास। परसा कदै न पाइये, विरह बिनां बेसास॥६॥
विरह पीर अंतर बसै, करै सकल को नास। परसराम इक बल रहै, प्रगट प्रेम की प्यास॥७॥
विरह विसूरै प्रसराम, हरि सुख आवै चीति। हित करि आरति मिलन की, हरि प्रीतम सों प्रीति॥८॥
प्रीति बिना क्यौं पिय मिलै, मन सोचौ तन मांहि। परसा प्रीति न प्रेमरस, राम मिलावै नांहि॥६॥
हरि आरति कर पाइये, बसै विरह उर साल। विरह न आरति प्रसराम मिलै न दीनदयाल॥१०॥
आरतिवंत न बीसरै, पिव मिलिवे की आस। प्रसराम प्यासो पीवै, हरि जल प्रेम निवास॥११॥

भीतरि विरह कौ जोड़ौ-८२

दुखिया रोवै दुखभरी, सालै दरद दुसार। परसा पीड़ सनेह की, मनहीं मनहिं सुमार॥१॥
हंसै न रोवै सो विरह, मनहिं मनहिं सुमार। परसा प्रीति पिछाणिये, ज्यौं घुण भीतरि दार॥२॥
प्रीति दहै घुण दाह ज्यों, भीतर छीजै देह। परसराम तब जानिये, उपज्यो विरह सनेह॥३॥
पिव वियोग तन मन विकल, ताहि न जाणै कोय। परसा चोली पान ज्यौं, दिन दिन पीला होय॥४॥
परसा प्रेम वियोग सर, जिनकै लग्यौ सुभाय। तन मैं हुतो सुहरि लियो, कंवल रह्यो कुमिलाय॥५॥
परसा पारिख अहि सखी, पति सों प्रीति करांहि। प्रेम वियोगनि मृतक तन, मन जु कंवल कुमिलाहिं॥६॥
परसा विरह न वीसरै, सुमिरै सदा सनेहु। अपणी जीवनि और कों, यौं न कहै तुम लेहु॥७॥
परसा जारयो विरह को, सूको जात सरीर। सो तन फिरि कब पाइये, बिना प्रेम निज नीर॥८॥
विरहनि विरह न सहि सकै, सालै माहैं मांहिं। हरि प्रीतम बिन प्रसराम, घर बाहरि सुख नांहि॥६॥
पीड़ पराई को लखै, तुम बिन स्याम सहाय। तुम अंतर की जाणौ सबै, परसा प्रभु हरिराय॥१०॥
पीड प्रकट हरि विरह की, परसा छानी नांहि। मिटै नाहिं हरि मिल्यां बिनु, करक कलेजे मांहि॥११॥

विरहनि कौ जोड़ौ-८३

परसा हेरै विरहनि, हरि मारग मन सुद्ध। आरतिवंती पंथ सिरि, ठाडी आसा लुद्ध॥१॥
हरि मारग हेरत सखी, झीणैं पड़िगै नैंण। परसराम प्रभु कब मिलै, प्राण सनेही सैंण॥२॥
कब दरसौं कब परसिहौं, कब बोलौं हरि साथि। सबै हमारी प्रसराम, आरति हरि कै हाथि॥३॥
पंथ निहारैं प्रीति सौं, पंथी बूझै धाय। अति आरति सौं प्रसराम, कब मिलिहैं प्रभु आय॥४॥
पंथी बूझै पांय परि, वचन कहै अति दीन। परसराम प्रभु बिन सदा, विरहनि मनहिं मलीन॥५॥
पंथ निहारत दिन गये, हरि प्रीतम कैं हेति। परसराम प्रभु बिन सखि, मरिहैं विरह समेति॥६॥
तन मन दाझै विरह संगि, विरहनि करै पुकार। हरि प्रीतम बिन प्रसराम, कौण करै रखवार॥७॥
परसा प्रभु बिन विरह वसि, जरि मरिहैं बेकाम। जीवौं जो हित करि मिलैं, हरि मन कौं विश्राम॥८॥
अति आरति सौं विरहनी, ठाड़ी लेत उसास। हरि प्रीतम बिन प्रसराम, को पुरवै मन आस॥६॥

विरहनि विरह न सहि सकै, उमग्यौ उर न समाय। परसा पिय बिन तन विकल, मन व्याकुल अकुलाय॥१०॥
विरहि आतुर पिय कठोर, जनम अकारथ जाय। परसा जन मरि जाहिंगे, किणहिं मिलौगे आय॥११॥
दरसन बिन बिरहनि दुखी, घर बाहरि सुख नांहि। परसा स्याम सनेह कौं, साल सदा मन मांहि॥१२॥
नैणां नींद न भूख मुख, प्यास न भावै नीर। परसा विरह सनेह तैं, सूकौ जात सरीर॥१३॥
अति आरति सों बिरहनी, ठाड़ी करै पुकार। परसा प्रभु बिन को गहै, बहुत विरह की धार ॥१४॥

प्रीति विचार विरह कौ जोड़ौ-८४

प्रीतम प्रीति विचारि करि, बेगि मिलौ किन आय। परसराम प्रभु तुम बिनां, जैहै विरह जराय ॥१॥
प्रेम नीर बरखा करण, विरह बुझांवण झाल। परसा प्रभु मोकौं न सुख, तुम सबकै रछिपाल॥२॥
पाल हमारी करो किन, तुम सब कैं प्रतिपाल। परसराम प्रभु दीन हम, तुम हरि दीन दयाल॥३॥
हरि प्रीतम सों जो मिलौं, गहि राखौं उर बीचि। विरह बुझावों प्रसराम, प्रेम नीर सों सींचि॥४॥
अब न तजौं कबहू सखी, हौं सेवौ मन लाय। तन मन सौपौं संगि रहौ, परसा पियहिं मिलाय॥५॥
अंतरजामी सौं सखी, मिलि हौं अंतरि खोय। संचर सहौं न प्रसराम, मन एकै तन दोय॥६॥
दो तन पैं मन एक ही, समुझि विरह अरु प्रेम। यों विरहनि पिय परसराम, प्रेम विरह कौ नेम ॥७॥
आये आरति जाणि हरि, आतुर दीन दयाल। ल्याये सुख प्रभु प्रसराम, प्रेम विरह कौ साल॥८॥

कंवल नैन विरहनि कौ जोड़ौ-८५

कंवल नैण कैं बीछुरै, विरहनि खरी उदास। परसराम संसौ तजै, सुदरि लेत उसास॥१॥
नैंण नीर नीझंर भये, निसिदिन बरिखत जांहि। परसराम प्रभु स्याम बिनु, विरहनि विरह समांहि॥२॥
विरह सलिल सलिता नयन, सिंधु स्याम गंभीर। परसराम प्रभु दरस बिन, विरहनि मनहिं अधीर॥३॥
परसा विलपै विरहनी, तन मन अंतर खोय। जो मिलि बिछुरी पीवु तैं, दरद पुकारै सोय॥४॥
परसा विरहनि सोवई, सालै उर दुख सूल। सदा पुकारै पीड सों, उठै दरद की रूल॥५॥
सोव निपीड़ी प्रसराम, सुखी जगत कै संगि। ताकौं नीद न आवहीं, रची जु पिय कै रंगि॥६॥
प्राण सनेही पर्म सुख, प्रीतम पर्म निवास। परसराम परदेस पिवु, मिलिहैं तब की आस॥७॥
परसा पूरो होय कबुं, यो मन को अभिलास। कब मिलिहै हरि पीव सों, करिहैं भोग विलास॥८॥
बूंद बिसूरैं सिंधु बिन, जब लग मिलै न मांहि। मांहि मिल्यां तै प्रसराम, दुख सुख व्यापैं नांहि॥९॥

मिलि विछूटै कौ जोड़ौ-८६

हम जब हरि तैं बीछुड़े, तब ही तैं उर साल। परसा पीड़ सदा नई, मिलिहिं न दीनदयाल॥१॥
बिछड्यां मिल्यां सुख हुवै, मिलि बिछुड्यां नहिं जाय। प्रेम पलटियां हे सखी, परसा पति न मिलाय॥२॥
अबहिं विसूर्यां का सरै, पहली कियो अकाज। परसा प्रीतम क्यौं मिलै, नहिं औसर जो आज॥३॥

परसा प्रीतम प्रीति बिन, मिलै न सांई दोहि। प्रथम प्रेम हमहीं तज्यौ, प्रेम गयो तजि मोहि॥४॥
रंग न लागौ प्रेम सौं, प्रेम भयो रस भंग। परसा प्रीतम क्यौं मिलै, बिनां प्रेम निज रंग॥५॥
अबहिं कहा धोखो धरै, रंगी न मति निज रंगि।परसा औसर बहि गयो, मिलसी किहीं प्रसंगि॥६॥
परसा औसर बहि गयो, बहुरि मिलै कबुं आय। लागि विरंबनि लोक की, भज्यौ न राम सहाय॥७॥
पाछें का पछिताइये, पहिली भयो अचेत। परसा निर्फल मरि गयो, लग्यौ न हरि सौं हेत॥८॥
कन रस नैण महारसी, मिल्यां न भाजै भीड़। परसा मिटसी हरि मिल्यां, हरि बिछुर्‍याँ की पीड़॥९॥
पीड प्रगट हरि विरह की, परसा छानी नांहि। मिटै नहीं हरि मिल्यां बिनु, करक कलेजा मांहि॥१०॥
मिलि बिछुड्यां की प्रसराम, हिलग रही मन मांहि। कै हरि आयां भाजसी, कै हरि पास गयांहिं॥११॥

विरह पलट कौ जोड़ौ-८७

अंतरि जो कोइ विरह थौ, पलटि भयो सोइ प्यार। परसा गावै सुंदरी, पिय मिलि मंगलाचार॥१॥
सुंदरी गावै नेम धरि, हरि मंगल निजसार। विरह पलटि गयो प्रसराम, पायो प्रेम सिंगार॥२॥
प्रेम तिलक लै घरि बस्यो, मिटी विरह की आण। पायो प्रीतम प्रसराम, प्रगट प्राण को प्राण॥३॥
विरह जो पावक सम हुतौ, पलटि भयो सो हेम। परसा सेवै सुंदरी, हरि प्रीतम धरि नेम॥४॥
विरह गयो दुरि प्रेम तैं, प्रेम बजावै तूर। पर्म सनेही परसराम, धरि आयो हरि सूर॥५॥
विरह वाद करि बहि गयो, कटे कष्ट दुख फंदु। भयो समागम प्रसराम, सखि सलिता हरि सिंधु॥६॥
जिन बिछुर्‍यां मन विरह थौ, तिनि मिलि तनि आनन्द। परसा घर बाहरि बसै, पूर्‍यौ परमानन्द॥७॥

प्रेम विगत कौ जोड़ौ-८८

आयो प्रेम कहां गयो, देखै था सब कोय। हंसता बार न रोवतां, परसा प्रेम न होय॥१॥
आयो हो तो जाय क्यौं, पीड़ बिनां न पुकारि। लोग दिखावो प्रसराम, करै सुमाथै मारि॥२॥
प्रेम प्रीति अंतर नाहिं, कथा सुणै चित भंग। पहिली पास बिणासियां, परसा चढै न रंग॥३॥
कहि सुनि भर्मि लगाइये, मन की मिटै न पीड़। परसा प्रेम न ऊपजै, भेख न भाजै भीड़॥४॥
प्रेम कथा थोड़ां घरां, बहुतां भरम विकार। परसा प्रीतम प्रेम बिन, बूड़ै काली धार॥५॥
परसा प्रेम न उपज्यौ, लगी न पिउ सौं प्रीति। देखादेखी बहि गये, बिना प्रेम की रीति॥६॥
देखादेखि पाकड़ी, गई अपरचै छूटि। परसा प्रभु के प्रेम बिन, लिये बहुत जम लूटि॥७॥
देखादेखि पाकड़ी, गई प्रेम बिन छूटि। प्रसराम पाई नाहीं, हरि निधि प्रेम समूठि॥८॥
देखादेखि बहि गये, बहुत जीव जग आस। रहे प्रेम रत प्रसराम, जिनकैं हरि बेसास॥९॥
हरि सुमिरण निर्वाण पद, परसा प्रेम प्रकास। आयो तबही जाणिये, करै तिमिर को नास॥१०॥
वस्तु अगोचर ग्यान तैं, पाई नाहिंन जात। परसराम सूझै नहीं, बिन प्रेम परभात॥११॥

परसा प्रेम न ऊपज्यो, सुणी पराई सीख। सतगुरु मिल्यो न भै मिट्यो, फिरि फिरि मांगी भीख॥१२॥
भीखाँ भूख न भाजई, जो घरिने पै नांहि। घर कीने पै बाहिरै, परसा भूख न जांहिं॥१३॥

प्रेम आरति कौ जोड़ौ-८६

जाई जूही केतकी, फूलि गई कुमिलाय। परसराम प्रभु प्रेम सों, बेगा सींचौ आय॥१॥
बेगा सींचौ प्रेम सों, प्रीतम करि अपणेस। परसराम प्रभु दास कौ, मिलि मेटिये अंदेस॥२॥
हरि प्रीतम सों मिलन कौ, बांधि लियो निति नेम। परसा तन मन प्राण मैं, बस्यौ रहै सो प्रेम॥३॥
ज्यौं चात्रिग रूति प्रसराम, प्रीति करै पिवु पीवु। प्यासो अमृत प्रेम कौं, पीयां जीवै जीवु॥४॥
परसा पीवत प्रेम रस, कदै न करिये नांहि। आरति करुणा सिंधु की, सदा रहै मन मांहि॥५॥
परसराम हरि सुमरिए, प्रेम सहित ज्यौं मीन। पल न बिसारै नीर कौं, भजै सदा लवलीन॥६॥
जल मैं जीव सबै बसैं, जाणैं आवणजाण। परसा बसिवो मीन को, घट्यां घटै सो प्राण॥७॥
मनसा वाचा कर्मणा, जे हरि सौं आधीन। नीर घट्यां तैं प्रसराम, जीवै नहिं पल मीन॥८॥
परसा प्रीति सनेह की, कदै न छानी होय। जब प्रीतम मिलि बीछुड़े, प्रगट दिखावै सोय॥६॥
छानी रहै न प्रसराम, मिलि बिछुरे की प्रीति। दरस दिखावै दूरि तैं, प्रगट प्रेम की रीति॥१०॥
मिल्यौ न संचर सहि सकै, लाभ होउ वा हाणि। लोक वेद की प्रसराम, प्रीति न मानै काणि॥११॥

प्रेम नेम कौ जोड़ौ-६०

दोय सुमिल पैं एकहीं, कुसल कहौ वा खेम। परसा तन कै नेम तैं, लाभै मन को प्रेम॥१॥
प्रेम लखावै नेम तैं, जाके जैसो होय। परसा जो अंतर मिलै, अंतर कदै न होय॥२॥
पीवैं जल सैझैं मिलैं, कबहू सूकि न जाय। परसा पोखै प्रेम कै, तरवर सरस दिखाय॥३॥
तरवर सरस सदा रहै, हरि अमृत रस लीन। प्रेम पलटै प्रसराम, विरह न करै मलीन॥४॥
जगत विसास्यो प्रसराम, लगी विरह की चोट। पीयो प्रेम अघाय कैं, गरे गर्व्व से खोट॥५॥
दिष्टक जब जल तैं भयो, नाना रंग अनूप। मोती निपज्यो प्रसराम, प्रगट प्रेम को रूप॥६॥
एक भयां तैं प्रसराम, साहिब दास न भेह। भाव भगति को गुण गयो, हरि सेवा न सनेह॥७॥
ओलो पालो लूंणगुण, जल सौं मिलि जल सोय। जल तैं मोती प्रसराम, निपज्यो नीर न होय॥८॥

आन धर्म विवचार कौ जोड़ौ-६१

आन धर्म विविचार करि, पतिवरता न कहाय। परसा जग मैं हीण अरु, जनमि कलंक न जाय॥१॥
परसा पति को नेम तजि, जो आन कों पत्याय। सो कहिये विभचारिणी, भ्रमि पति वरत लजाय॥२॥
तजि सेवैं भरतार कौं, मनहिं विराजै जार। परसराम पतिवरत मुखि, हृदै बसै विभचार॥३॥
परसा पिउ कै प्रेम सों, नेम न बांध्यौ जाय। प्रिया सु पसु पतिवर्त विण, विभचारिणी कहाय॥४॥

पतिव्रता के परसराम, सिरि ऊपरि पति यैक। पतिव्रत विभचारिणी, ताकै पुरुष अनैक॥५॥
परसा स्वारथ कारणै, जीव जगत आधीन। हरि पतिवरत न साधई, महामूढ़ मति हीन॥६॥
स्वामि धर्म साध्यौ नाहिं, साधै सांई दोह। परसा हरिपुर परहर्‌यो, करि जमपुर सों मोह॥७॥
हरि रछंया बिन प्रसराम, जीव जात जमलोक। तिणिं औसर अपणेस करि, सक्यौ न कोऊ रोक॥८॥

आन धर्म कौ जोड़ौ-६२

आन धर्म तैं भजन की, बढत बेलि कुमिलाय। परसा निर्मल भगति बिण, जीव बादि बहि जाय॥१॥
आन धरम रुचि प्रसराम, पति संजम सौं टोक। कूप परै चंधन रचै, जाय जहां जम लोक॥२॥
धरम विमुख नर प्रसराम, आन धरम ल्यौ लीन। हस्ती तजि रासिब चढ़ै, जीव दिखावै हीन॥३॥
कहूं आन सुख प्रसराम, कहूं भगति सुख राज। चाटैं पसू पिछौकड़ौ, नर कौं आवै लाज॥४॥
आन धर्म कों सत्य करि, हरि भगति करै त्रिसकार। सिंहनि सेवै स्वान कौं, परसा यहै विचारि॥५॥
जंहं साधन हरि धर्म कौं, तंहं आन कौ उलंघ। परसा जाकैं पतिवरत, घास चरै क्यौं सिंघ॥६॥
हरि हिरदै थिर प्रसराम, तौ न आन आरंभ। ताहि न संका स्वान की, जो बैठो गज कुंभ॥७॥
हरि सुमिरण सुख जीव कौं, तर कौं जल संतोष। मूल डाल बल प्रसराम, पुहुप पत्र फल पोष॥८॥
साखी सींच्या प्रसराम, उपजै नहिं संतोष। जड़ मैं जो जल नाइये, तरवर पावै पोष॥९॥
हरि पूज्यां पूजै सबै, जीव जंत्र कुलदेव। परसराम हरि सेवतां, सुफल भई सब सेव॥१०॥

सीतल सरोवर कौ जोड़ौ-६३

परसा सीतल सरभर्‌या, हंसा केलि करांहि। मरै तिसाई मेदिनी, अमृत पीवै नांहि॥१॥
हरि अमृत को डारि करि, पीवै विष संसार। परसा प्यास न भजन की, अंतरि बसै विंकार॥२॥
परसा सीतल सिंधु कौं, मरम न लहै गंवार। अहि अमृत पीवै नाहिं, पीवै होय विकार॥३॥
परसराम सुखसिंधु सर, दीरिया भर्‌यौ अपार। भागि बिनां क्यौं पाइये, जन जीवनि आधार॥४॥
परसा दरिया प्रेम कौ, सीतल सरस दिखाय। देखि कहीं सचु पाइए, जो पैं पियौ न जाय॥५॥
हरि अमृत रस प्रसराम, सीतल सरस सुवास। जो पीवै तो त्रिपति हो, सब तजि रहै उदास॥६॥
हरि अमृत रस प्रेम सौं, पीवै जो इकतार। परसा चढ़ै न ऊतरैं, लागी रहै खुमार॥७॥

हंसनि कौ जोड़ौ-६४

सरवर तट हंसनि बसै, प्यासी मरै गंवारि। परसा मरम न जाणई, प्रेम न पिवै विचारि॥१॥
टेरै विरहि वियोगिनी, कंत फिरी बनवास। ना पिवु मिल्यौ न सुख भयो, परसा सखी उदास॥२॥
सुंदरि बन ढूढ़त फिरैं, पति न पिछाण्यो जाय। धीरज पकरि न घर बसै, परसा सो पछिताय॥३॥
बन जनि भर्मे सुंदरि, तोहि कहूं समुझाय। मिलण करै परसा पियहिं, भेदहिं बूझि बुलाय॥४॥

परसा भेदि को कही, मिलै न मन पतियाय। सुनि सुंदरि पिय तंहं बसै, प्रेम धजा फहिराय॥५॥
एक अचम्भो देखि मन, पति पौढ़ै पुर मांहि। परसराम सुंदरि रमैं, प्रेम धजा की छांहि॥६॥
पति पौढ़ैं घर छांडिं कैं, खोजै औघट घाट। पंथ न चालै अगम गति, परसा लहै न बाट॥७॥
दिल ही में दीदार है, दूरि गयां कछु नांहि। परसा भरमि न भूलिये, पति पौढै पुर मांहि॥८॥
परसा ढूंढत हम फिरैं, मन कारण विश्राम। मन पाकड़ि दिल खोजिये, घटहि भीतरि राम॥९॥
घट ही भीतरि घर करो, खोजो राम अपार। घट औघट जामैं बसै, परसा प्राण अधार॥१०॥
दिल भीतरि दरिया बहै, तहां न्हाय जो कोय। परगट देखै राम को, परसराम जन सोय॥११॥
परसा दरिया राम है, लहरि भये निजदास। केलि करैं हरि नांव सों, फिर ताही मैं वास॥१२॥
परसा दरिया ऊबक्यौ, रहै न राख्यो जाय। कूप कर्म बोरै सबै, पूर्‌यो ब्रह्म अघाय॥१३॥

बगां कौ जोड़ौ-९५

तजि मोती मींझक चुगै, सेवै छीलर ताल। हंस कहावै प्रसराम, चलै बगां की चाल॥१॥
उज्जल दीसैं हंस सै, परख्यां बग होय जाय। भव छीलर मैं प्रसराम, फिरि फिरि केल कराय॥२॥
खीर नीवरैं नीर तै, परसराम वै हंस। खीर नीर निवटैं नाहिं, भव छीलर बग वंस॥३॥
मान सरोवर हंस है, रु भवसागर हु हंस। राम सरोवर जै बसैं, परसा तै बड़ हंस॥४॥
परसा हंस सबै भला, भेद बड़ौ तिन मांहि। हरि सरवरि हंसा बसै, प्रेम मुकत फल खांहि॥५॥
चींचड़ि ज्यूं चिउंट्या रहै, परसा लखै लुहाणि। लागा लोहि सुवाद सौं, नाहिं दूध सों पिछाणि॥६॥
बगुलौ वीणै मछिका, फिरि फिरि भौजल मांहिं। मानसरोवर प्रसराम, हंस मुकत फल खांहि॥७॥

सिंघवानां कौ जोड़ौ-९६

वाणौं पहिरैं सिंघ को चलै स्वान की चाल। सोभा लहै न प्रसराम, जीव जगत मैं घाल॥१॥
परसा बाणौं सिंघ कों, जीव पहरि इतराय। बौल्यां भैड़ पिछाणि करि, स्वान समूली खाय॥२॥
नीलि रंग्यो तन प्रसराम, जंबुक ज्यौं असम्हाल। राजा हूवौ वरण मिलि, वांणि स्याल को स्याल॥३॥
भगत कहायो भेख धरि, मतै जगत सिरिभार। हरि न भज्यौ जिन प्रसराम, तजि न भयो निरभार॥४॥
भारि मरै सब लोह कै, कइ कायर कइ सूर। जुद्ध मिलैं सों जाणिये, पारस प्रभु कौ नूर॥५॥
भेख बराबरि करि मिलै, आसै मिल्यौ न जाय। परसा मोती हंस रुचि, बग मच्छी चुंगि खांहि॥६॥
भेख बराबरि प्रसराम, भेद बराबरि नांहि। तौल बराबरि गूंघची, कंचन मोल न पांहिं॥७॥
भेख बराबरि प्रसराम, गुण को जुदो बखाण। सीधो मिलसी नीर सौ, मिलै न फटिक पखाण॥८॥
बरण सकल जल एक ही, चाख्यां तैं गुण दोय। जीभ लखै सुख प्रसराम, हरि मानैं जन सोय॥९॥
हरि मानैं जा दास कौं, कर्म करै नहिं सोय। हरि सुमरण सुख प्रसराम, करि कछु करणां होय॥१०॥

गांव गरासिया कौ जोड़ौ-६७

खोयो गाम गरासियां, नित की मारा मारि। परसा क्यौं सरिपाइये, बैरी सौ व्यौहारि॥१॥
खरा दुहेला दोरिजै, नगर न बसै नृवाणि। ऊजड़ रहसी राजबिण, परसा या बड़हाणि॥२॥
भारी हाणि पिछांणि बिण, नहिं परचौ परतीति। कइसे मिलिये राम सौं, परसा बड़ नहिं प्रीति॥३॥
त्रिकुट कोट घाटि विकट, सून्य न चढ़ई प्राण। परसा पंथ न चालई, पायो प्रेम बिवाण॥४॥
परसा प्रेम बिवाण चढ़ि, पहुंच्या पहुंचण हार। धीरज उपज्यां भै मिट्या, देख्या त्रिभुवन सार॥५॥
दास पुकार्‍या दीन हो, परसा पति पै जाय। दोषी मेटो कैसवै, जन कौं लेहुं छुड़ाय॥६॥
साहिब सुणी हजूरि हो, जन की प्रीति पुकार। परसा प्रीतम बाहरू, आये राम अगार॥७॥
प्रगट पधारे राम जी, जन की कथा विचारि। परसा राघौ राजई, ताहि मिलै सब हारि॥८॥
परसा राम सुबसि कियै, प्रथम सुबैर विचारि। राजा त्रिकूटि चढि गयो, पावक दीनो छारि॥९॥
परसा दाधौ गांव सब, उबर्‍यौ नाहिं न कोय। गढ को राजा ऊबर्‍यो, तिणकैं साथ रिसोय॥१०॥

पंच असाध कौ जोड़ौ-६८

परसा पंच असाध की, संगति साधन होय। कायर कह्यो न मानहीं, रु कियो रालैं खोय॥१॥
परसा प्राण कुरंग ज्यौं, देखत खोटो खाय। नाद लीण चेत्यौ नाहिं, काल पास पड़ि जाय॥२॥
परसा कुसुरि कुरंग ज्यौं, मानि लियो रस रंग। पर्‍यो काल की पासि पसु, श्रवण सुनत सारंग॥३॥
सारंग सरां न डरपई, चरै निसंक निजीव। परसा प्रथम न जाणियों, क्यौं राखिये सुजीव॥४॥
चरै कुरंग सुरंग ज्यों, सारंग सर कै साथि। सो न मरै क्यौं प्रसराम, जिन मन लियो न साथि॥५॥
परसा विणसै जलचरी, जीवन लीयो हाथि। हरि जीवनि जल छांडि करि, गई जाल कैं साथि॥६॥
चंचल मन जलमीन ज्यौं, कलपत परि गयो जालि। परसा न्यारो नीर तैं, करि खायो जम कालि॥७॥
बनसी बंधन मीन मन, पर्‍यो लाभ कौं जाणि। ब्याज विसाहत प्रसराम, भई मूल की हाणि॥८॥
परसा कांटो केतकी, कुसुम कीट को काल। बास लुबध सूली चढ़यौ, तन मन सुधि न संझाल॥९॥
हरख्यौ दिपक देखि करि, परसा प्राण पतंग। उड़ि जु मिल्यो रस लेण कौं, होय गयो तन भंग॥१०॥
परसा प्राण पतंग, ज्यौं हरिख्यो दिपक लागि। जलती देखि न भै धर्‍यो, दाझि मुवौं जिहि आगि॥११॥
परसा परबंधन पर्‍यौं, पारावति निरबंध। पंखी काम कु कलपना, गिर्‍यो सुरग तैं अंध॥१२॥
गज मोह्यो खाई पड्यो, काल बूति कै जालि। परसा सांकलि पग पर्‍यो, अंकुस चढ्यो कपालि॥१३॥
परसा स्वारथ जे बंधे, जिव्हा इन्द्री हेत। जग मृग मीन पतंग अलि, खासी खता अचेत॥१४॥
गज मृग मीन पतंग अलि, एक एक मरि जांहि। परसा पांचौ जंह बसै, तंह कुसल कछू नांहि॥१५॥

ब्रह्म बल हीन कौ जोड़ौ-६६

परसा सुमरण भाव बिन, अलप नीर बल हीण। कांजी नील सिंवाल ज्यौं, बिन जल पूर मलीण॥१॥
ज्यौं सिंवाल जल तैं उपजि, जल कौं करै मलीण। परसराम गुण कर्म बसि, ब्रह्म रहै बलहीण॥२॥
तातौ सीलौ रुति करै, जल जल होय। प्रेरक प्रकृति सौं मिल्यौं, परसा बरतै सोय॥३॥
सोलह तैं सातो भयो, कंचन बाणी हीण। कर्म कुसंगति प्रसराम, प्रभु बिन जीव मलीण॥४॥
कला हीन कंचन भयौ, मिलि दूसरी विभागि। परसा व्यापक बल बिना, कर्म कुसंगति लागि॥५॥
ज्यौं जलघुलि बन भोमि सों, मिलि ताही सो होय। यौं हरि सब संगि प्रसराम, रमैं वरण बल खोय॥६॥
जगपति तैं जग प्रसराम, उपजि भयो सो जाल। निर्मल मैलो देखिये, ज्यौं जल सुमिल सिवांल॥७॥
परसा सीतल तपति रुति, ज्यौं समीर बल हीण। यों प्राण पुरुष परकर्ति बसि, दीसै बहुत मलीण॥८॥

संगति विमुख कौ जोड़ौ-१००

संगति त्यागै साध की, जीव जगत आधीन। परसा नर नरकहिं सदा, पड़ै भगति फल हीन॥१॥
संगति करै असाध की, सतसंगत न मिलांहिं। ग्यान हीन नर प्रसराम, निहचै नरक पड़ाहि॥२॥
संगति त्यागै साध की, जीव विषै ल्यौ लीण। परसा नरकि समांहि नर, सेवा सुमिरण हीण॥३॥
भौ बूड़ण की सारधा, छाडि दियो सतसंग। परसा कियो अजानि नर, भाव भगति को भंग॥४॥
परसराम चंचल चलै, फिरि फिरि भांडै वास। सतसंगति बांछै नही, करिसी बहुत विणास॥५॥
जगत जीव कौं प्रसराम, सतसंगति जबु नांहि। तौ भवसिंधु अथाघ जल, बूडि मरै ता मांहि॥६॥
दुख सुख दाझण प्रसराम, संपति विपति विणास। सतसंगति निर्वाण पद, ज्यौं उपज्यै बेसास॥७॥
परसा जग जलनि तैं, जो मन रहै उदास। सतसंगति छूटै नांहि, तब सब मिटै बिणास॥८॥
हरि प्रीतम कौ प्रसराम, मान लियौ अभरोस। जीव जगत मैं मिलि गयो, जमहिं न दीजै दोस॥९॥
भौंजल बूडै भर्म तै, परसराम बेकाम। तिर न सकै सतसंग बिंन, भूलि गयै हरिनाम॥१०॥
परसा भूलि न जाइये, अविवेकी की लार। सतसंगति तैं नीकलै, जाय जहां संसार॥११॥
जो सुख नहिं सतसंग कौ, हृदै नहिं हरि नांउं। भगति विमुख नर प्रसराम, निर्फल सूनि समांउं॥१२॥

हरि भगति हीन कौ जोड़ौ-१०१

हरि भगति हीन नर प्रसराम, करै पेट हित नाठ। नवै त भाजै बीचि तैं, साखित सूकौ काठ॥१॥
सुमरण सेवन बंदगी, उपजै भगति न भाव। भव बूडण कौं प्रसराम, नर कौं यहै उपाव॥२॥
परसा हरि की भगति बिन, करिये सोइ हराम। नर औतार सुफल तवै, भजै प्रेम सों स्याम॥३॥
प्रेम भगति सौं प्रसराम, जो मन लागै नांहि। स्वारथ स्वांग बनाय करि, परवसि आवै जांहि॥४॥
आवण जाणा प्रसराम, विमुख जीव कै होय। हरि रस पीवै प्रेम सों, जनमैं मरै न सोय॥५॥

परसराम हरि भजन कौं, जब लगि साधन नांहि। कियो करायो करम सब, मिलिसी माया मांहि॥६॥
माया भगत न होइये, भगत सही जो भावु। भाव भगति वेसास बिण, परसा सो बहि जावु॥७॥
माया ब्रह्म अपार की, जनकी जीवनि निभावु। भाव बिनां जो दास है, परसा सो बहि जावु॥८॥
बस्ती बहुत उजाड़ि सम, भाव न भगति विचार। परसराम निजदास बिन, सूनों सब संसार॥९॥
परसराम जल केलि बिन, कैंरि कपूर न होय। भगति विमुख नर कर्म करि, सुख पावै नहिं कोय॥१०॥

सुमिरण हीन जीव कौ जोड़ौ-१०२

परसा दीन दयाल कौ, नांव न लीयो जाणि। अंति कलपणौं जीव को, हरि सुमिरण की हाणि॥१॥
हरि सुमिरण बिन प्रसराम, जीव जगत कै राछि। दूध दही घृत सों मिल्यां, निकसि गयां तैं छाछि॥२॥
परसा पर्म दयाल सौं, प्रीति ना कछु पिछाणि। ना जाणौं गति जीव की, होसी का निरवाणि॥३॥
साच बिसार्‌यो प्रसराम, लागो झूठे स्वादि। नर तन धरि न हरि सेयो, जनम गमायो वादि॥४॥
परसा प्रभु सों एक रस, रहै न मन इकतार। हरख सोक जामण मरण, आवण जाण अपार॥५॥
जनम सुफल सो जाणिये, जो भजिये हरि नांउं। और जनम बहु प्रसराम, निर्फल आवैं जांउं॥६॥

मति मावस की राति कौ जोड़ौ-१०३

परसा छाई बादलां, मति मावस की राति। नैण न दैखैं नैण कौं, जो दर्पण ले हाति॥१॥
सदा अमावस मैं बसै, जनमि उजालौ नांहि। दीपक जलत न सहि सकै, परसा परघर मांहि॥२॥
परसा रैणि अंधार की, ऐसो मन तन मांहि। चोर उजालौ क्यौं सहै, अंतरि उजालौ नांहि॥३॥
कहा उजालौ और कौ, जो आपणैं अंधार। बस्त गबांई प्रसराम, जीवन जग व्यौहार॥४॥
नैणां कछू न सूझई, अंतरि सदा अंधार। परसा प्रेम प्रकास बिन, पोषै विषै विकार॥५॥
परसा नर औतार धरि, हरि सुमरण सुख नांहि। तौ सदा अचेतन आतमां, अंध अंधारा मांहि॥६॥
सदा अंध भै भाव बिण, नाहिं भगति निति नेम। बस्त अगोचर प्रसराम, को पावै बिन प्रेम॥७॥
द्वैजि अमावस पाछिली, नवि नवि करै जुहार। पूरण चंद न वंदही, परसा यो संसार॥८॥
परसा झूंठ न राचिये, सुपनो सब संसार। जब लग नैन न ऊघड़ै, तब लग घोरंधार॥९॥
साच बिसार्‌यो सोय करि, निसि व्यौहार समूठ। सुपनैं को सुख प्रसराम, जब जागै तब झूठ॥१०॥
ताकौं निसि सूझै नाहिं, सो देखै परभाति। परसा अंध उलूक नर, कहै द्यौंस कौं राति॥११॥
प्रात भयो निसि मिटि गई, उदै भयो निज भाण। परसराम जन सत्य करि, साखी पद निर्वाण॥१२॥
कुहु कलंक सदा रहै, नहिं विधु कौ परवेस। राका निर्मल प्रसराम, जाकै वसि राकेस॥१३॥

कुबुद्धि कुवाव कौ जोड़ौ-१०४

झोलै मारै काल कै, निपजै निर्फल जांहि। परसा श्री गुरु सींचतां, सूकै पाणी मांहि॥१॥

हरि बरिखा मानै नाहिं, ताहि न फल की आस। परसा सूकै सीचतां, ज्यौंचि जगत जवास॥२॥
हरि निर्मल जल प्रसराम, पियो न भावहिं जाहिं। ज्योचि जवासो जगत ज्यौं, सूकै सींचै ताहि॥३॥
परसा झोलौ जंह बहै, तहं तहं करै मलीण। करसण कुबुद्धि कुवाव वसि, अंति रहे फल हीण॥४॥
परसा कुबुद्धि कुवाव तैं, करसण सकण न होय। वादि हर्‌यो हरि भगति बिन, निर्फल सूकै सोय॥५॥
आसा जमपुर जांण की, हृदै नाहिं हरि पीव। पोष न मानै भगति की, परसा जगत न जीव॥६॥
निपजैं साधु सुबुद्धि तैं, हरि भजि सीतल होय। परसा जग की जलनि तैं, भै धरि भाजै सोय॥७॥
भै धरि भाजै जगत तैं, निर्भै संगति जाय। परसराम ता दास को, लगै न ताती बाय॥८॥
हरि पिछांणि कर प्रसराम, निर्फल जगत पिछाणि। जग पिछाणि तैं हरि भजन, जासी सो बड़ हाणि॥९॥
काला मुंह संसार का, जामैं वाद विवाद। परसा कहूं न पाइए, हरि सुमरण को स्वाद॥१०॥

हरि कीर्ति कौ जोड़ौ-१०५

हरि कीरति फूलै फलै, बाजै सदा सुवाव। परसा जनहिं न व्यापही, कलिजुग कर्म कुवाव॥१॥
सीरी सिरजनहार सौं, करि जाणैं जो कोय। ताको कारज प्रसराम, सुफल सत्य करि होय॥२॥
काया खेत किसान मन, वीरज हरि का नावुं। साध सबद बरिखा भई, परसा सहज कमावुं॥३॥
निपजै सुबुद्धि तैं, हरि भजि सीतल होय। परसा जग की जलनि तैं, भै धरि भाजै सोय॥४॥
सुमरण कौं सारंग धर, सारिख और न कोय। परसा परचौ सत्य करि, सुमिरन ही सुख होय॥५॥
जो सुमिरै हरि नाउं कौं, हूं ताकी बलि जाउं। परसा मंडन सकल कौ, श्री गुरु मुखि हरि नावुं॥६॥

भगति सुख कौ जोड़ौ-१०६

जहं जहं बरिखा प्रसराम, तहं तहं सदा सुकाल। जहं बरिखा नहिं नीर की, परै तहं तहं अकाल॥१॥
ज्यौं बरिखा बिन प्रसराम, रुति निर्फल फल नांहि। जनम अफल हरि भगति बिन, नर रूप धरि पछितांहि॥२॥
ज्यौं बरिखा बिन प्रसराम, जीव दुखी सुख नांहि। त्यों प्राणी हरिनाम बिन, आवै फिरि मरि जांहि॥३॥
अमीराज बिन प्रसराम, सोभा लहै न रैणि। नर ऐसो हरि भगति बिन, जोति नाहिं जां नैणि॥४॥
हरि दीपक बिन प्रसराम, अंधकार उर नैणि। नर ऐसो हरि भगति बिन, चंद बिना ज्यौं रैणि॥५॥
जननी बिन बालक दुखी, सुख न लहै बिन पोष। परसराम हरि भगति बिन, जीव सरासर दोष॥६॥
ज्यौं दरपण मुख देखिये, आडौ तेडौ सुद्ध। और जनम मैं हरि भजन, परसा समुझि विसुद्ध॥७॥
जनम अकारथ प्रसराम, जो प्रभु सो न सनेह। ऊजड़ दूढ़ौ मनुष बिनु, यौं हरि बिन नर देह॥८॥
हरि अमृत रस प्रसराम, तजि पीयो विष मूढ़ि। सहसी जामण मरण कौं, अरु लेसी जम दूढ़ि॥९॥

अहं कौ जोड़ौ-१०७

तन मन सेझैं सों मिल्यो, पिवै नीर तहिं वास। रुति न पलटी प्रसराम, दुम देखिये उदास॥१॥

अपगुणि बाजी बीगड़ी, प्रभु सों कियो हराम। परसा तरुवर नीर कौं, मेटि दियो गुण नाम॥२॥
अहं जीव कै प्रसराम, सो जीव कौ विनास। कियो फटिक पाषण ज्यौं, गज दंतनि कौ नास॥३॥
सिंघ उझकि प्रतिविंब कौं, पर्‌यो कूप में धाय। पसू प्राण कौं प्रसराम, यौं छलि आपौ खाय॥४॥
कांच महल कूकर बक्यौ, भ्रमि कीनी तन हाणि। अहं बिगाड्यौ भगति फल, परसा बिना पिछाणि॥५॥
उपजै काल कुबुद्धि तैं, उलटि जीव कौं खाय। परसा रिछया को करै, बिन हरि दीन सहाय॥६॥
भगति न उपजै प्रसराम, जब लगि मन अभिमान। हरि सेवा सुमरण जहां, तहां न गर्व गुमान॥७॥
समझि गंवाई प्रसराम, गहि राख्यो अभिमान। सुणै कौण मुख को कह्यो, कीटी रोक्यो कान॥८॥
कियो करायो सब गयो, जब आयो अहंकार। परसा कोटि कर्म लगै, एक अहं की लार॥९॥
हरि बेसास न हरि कथा, जहां बसै अहंकार। ग्यान प्रकास न प्रसराम, तहं निसि घोर अंधार॥१०॥
काम क्रोध मद लोभ छल, ममता माया मोह। विरति जीव की प्रसराम, अहं तिलक सो दोह॥११॥
परसा मिटै न जीव को आपौ मन अभिमान। योंही अंतर हरि बिचैं, गाहड़ि गर्व गुमान॥१२॥
भौ बूड़ण कौं तीन गुण, काम क्रोध अरु लोभ। इनकौं परहरि प्रसराम, हरि सुमरै तो सोभ॥१३॥

असमझि कौ जोड़ौ-१०८

हीरौ राल्यौ हाथ तैं, कांकर लियो उठाय। परसा काग बसाय कैं, दीनों हंस उड़ाय॥१॥
हंस गयो उड़ि प्रसराम, काग बस्यो घरि आय। मोती चुगि जाणै नाहिं, जगत झूठिकौं खाय॥२॥
सुंदर बाग अनूप फल, पुहुप पर्म सुख दाय। परसराम परचा पखै, अजा आक करि खाय॥३॥
भाव हीण कै प्रसराम, अंतरि सदा उजाड़ि। तूंबड़ी सींचै दूध सौं, नाखै दाख उपाड़ि॥४॥
मन हठि चालै आपणै, सुणै न गुरु की सीख। परसा वरतै एक रस, आक धतूरो ईख॥५॥
लाड पराया प्रसराम, देखि मूढ़ पछिताय। सेवै सदा बंबूल कौं, आम कहां तैं खाय॥६॥
सावण रुति बरखा भई, बाह्यो बीज बंबूल। करसण निबट्यां प्रसराम, विलसन कौं फल सूल॥७॥
कनक कलस अमृत भर्‌यो, दियो अंध कै हाथि। आखड़ि डार्‌यो ऊस मैं, परसा गयो अकाथि॥८॥
डारि दियो पीयो नाहिं, अमृत प्रेम अकाथि। परसा प्यासो मरि गयो, भरमि जगति कै साथि॥९॥
अमृत डारै अंध मन, जाणि बूंझि विष खाय। परसा न जीवै जिव सो, देखत ही मरि जाय॥१०॥
छीलर ऊस अपीव जल, पिवै जिकौ पसु होय। हरि अमृत कौं प्रसराम, अंचवैगा जन कोय॥११॥
ऊसर खार अपीव जल, पीवै सब संसार। हरि अमृत रस प्रसराम, हरि जन अंचवनहार॥१२॥
सबै ग्रंथ को अर्थ यहि, भजिये हरि करि हेत। लिपै नाहिं संसार सौं, परसा सोइ सचेत॥१३॥

अप बंधन कौ जोड़ौ-१०९

अप बंधनि पड़ि माकड़ी, उरझि मरै तामांहिं। परसा जग जंजाल तैं, जीव विछूटै नांहि॥१॥

पर्यौ काल कै गाल मैं, भवसागर को जीव। परसराम निकसै नाहिं, बिन सुमरयां हरि पीव॥२॥
परसराम भवसिंधु कौ, जीव निकसि कहं जाय। ताहीं मैं उपजै खपै, जनमि जनमि जम खाय॥३॥
जीव जाल मैं जो पर्यौ, ताहि न और उपाय। हरि सम्रथ बिन प्रसराम, करै न और सहाय॥४॥
और सहाय न हरि बिनां, जीव जंत कौं आन। परसराम समुझै नाहिं, मो पसू अंध अज्ञान॥५॥
बंधनि बांधे मोह कै, छुटि न सकै संभारि। मांहि गरै न प्रसराम, भज्यो न देव मुरारि॥६॥

निर्दई कौ जोड़ौ-११०

जीव हतै जम काल नर, नारायण बिन नाग। परसा कर्म कठोर नर, करणी कूकर काग॥१॥
दया हीन नर निर्दई, करता कौ डर नांहि। निंदि करम कौ प्रसराम, करत न सो पछितांहिं॥२॥
दिल मैं दया न आनहीं, देखत बुरो कमांहिं। नर न कहीजै प्रसराम, कलि जम रुप कहांहिं॥३॥
रइयति की रख्या करै, सो राजा सो राय। दूजो राकस प्रसराम, सबकौं मारै खाय॥४॥
जीव सदा ही प्रसराम, रहै काल की घात। दादुर संगति सरप की, काहै की कुसलात॥५॥
क्रोध निर्दई म्लेच्छ अति, काम निलज अंधान। परसा लोभ निसूग अति, अभिमानी अज्ञान॥६॥
बहिरो सबदि कहा करै, का सठ सुम्रिण की साखि। कौण काम मन अंध कै, परसा सक्यौ न राखि॥७॥

मनस काम कौ जोड़ौं-१११

मिटै न मनकी कामना, रहै सदा सर वैर। परसा सो न पिछाणई, को निर्मल निर्वैर॥१॥
जब लगि मन कै कामना, तब लगि मन थिर नांहि। परसा भरमैं भेद बिनु, भूखै भोजन मांहि ॥२॥
व्यापै लहरि विकार की, भरम्यौ दह दिस जाय। परसा अधिक सुजान पति, कपटि नाहिं पतियाय॥३॥
परसा जीवत जीव कै, मिटै न विषै विकार। स्वांग धर्‌यो पति मिलण कौं, तो क्यौं मिलै भर्तार॥४॥
कइसैं सहिये नित नवां, परसा विषै सनेह। निसिदिन मन परवसि रहै, छिण-छिण दाझै देह॥५॥
विषै विकारी आतमां, सेवा सुमरण हीण। राम विमुख नर प्रसराम, मध्धिम मनहिं मलीण॥६॥
विषै विकारी आतमां, हरि सुमिरण न सुहाइ। परसराम ता जीव कौं, काल हेति करि खाइ॥७॥
विषै विकारी आतमां, अंध अचेतनि जीव। परसा दीपक ज्ञान बिन, को जानै या सीव॥८॥
जनम अकारथ प्रसराम, विषई बारह मास। तातैं स्वान सुक्यारथौ, कातिक रुति बेसास॥९॥

पाप उपाय कौ जोड़ौ-११२

धर्म न उपजै परसराम, तंह पाप को उपाय। पसु कै संगति सिंघ की, मन मानै तब खाय ॥१॥
परसा धर्म न बधिक कैं, जहां पाप सूं हेत। ऊखलि जासी देखता, ज्यौं मूलां को खेत॥२॥
कूंपल काहे की बधै, अगनि जलै जिहिं ठौर। धर्म निपौरिस प्रसराम, दहणि पाप की दौर॥३॥
जीव तहां जो निर्दई, पाप तहीं तहं जोय। दया बिहूणूं प्रसराम, धर्म कहूं तैं होय॥४॥

विरकत सींचाणूं रहैं, सर्व संग तैं न्यार। जीव हतन कौं प्रसराम, निसिवासर इकतार॥५॥

निन्दा कौ जोड़ौ-११३

श्रीगुरु की निन्दा करै, रहै विषै सौं लीन। परसा नरकि समांहि नर, सेवा सुमरन हीन॥१॥
परसा खोयो भगति रस, उर औगन को कीच। पहली पूजै ब्रह्म करि, पांछै निंदै नीच॥२॥
निंदैं निर्मल साध कौ, विषयां सौं मिलि जांहिं। परसा ताकी बुद्धि कौ, नास भजन सुख नांहि॥३॥
हरिजन की निंदा करै, हरि की रति न सुहाइ। परसा निर्फल नीच नर, भव जल बूडण जाइ॥४॥
निंदक चाले नर्क कौ, हरि परहरि मति हीण। भूल गये बैकुंठ कों, परसा मनहिं मलीण॥५॥
परनिंदा करि हरखई, कैसो भयो विकार। परसा हरि तजि नरक कौं, चाल्यौं सब संसार॥६॥
हेत नाहिं हरि नाम सों, पर निंदा सौं प्यार। परसा दास कहा करै, जाय बह्यो संसार॥७॥
परसा राम न भावई, निंदा सुखहि समांहि। बांधै विष की पोट सिरि, चाले जमपुर जांहि॥८॥
निंदक चाले नरक कौं, बांधि जगत कौ भार। परसराम सेवै सदा, जनमि जनमि जम द्वार॥९॥
परसा पाहण सिरि धरै, तिरि पहुंचिये न पारि। भरै पराये भार सों, बहुत रहै वर वारि॥१०॥
परसा भार न सिरि बहूं, मेरा कंत रिसाय। हरि सुमिरन कौ बीसरूं, सेवा निर्फल जाय॥११॥
संसारी सैंधो मिलै, बोलै वोछी बाणि। प्रभुता मेटै प्रसराम, हीण कहै उरि आणि॥१२॥

सोवण खाणै कौ जोड़ौ-११४

सोवण खाणै चित लग्यौ, और न का परतीति। परसा यो सुख मनि बसै, राम न आवै चीति॥१॥
सोवण खाणै सावधां, हरि सुमरत मुरझाय। परसा लालच लोभ तजि, हरि कौं ना पतियाय॥२॥
पापी सुणै न हरिकथा, ऊंघै कै उठि जाय। परसा औगुण उरि धरै, सुणै न फिरि पछिताय॥३॥
प्रीति न प्रीतम सों लगी,उपज्यौ प्रेम न आय। परसा सोवत खात पसु, ज्यौं आयो त्यौं जाय॥४॥
सीख्यो हंसिबौ खेलिबौ, सोवण खाणौ जाणि। परसा पाड़ी प्रीति बिन, हरि सुमरण की हाणि॥५॥
खेलण लागौ खलक मिलि, लागै किन हरिनाउं। कौड़ी साटै प्रसराम, हीरौ हारैं काउं॥६॥
सूतां जो सुख पाइये, परसा रहिये सोय। लाहो कछू न सूझई, टोटो हो सो होय॥७॥
परसा सोवत सुख नाहिं, काल गरास्यां जाय। भै धरि दिल मैं दरद करि, राम सुमर ल्यौ लाय॥८॥
परसा सोवत सब मुयें, काल कर्म की चोट। जे जागैं तैं ऊबरै, राम रतन की ओट॥९॥
आदर दै अपणेस करि, श्री गुरु संगति लागि। सोवै कहा अचेत मति, परसराम सुणि जागि॥१०॥
परसा सोवत सुख नहीं, काल गरास्यां जाय। निस वासर आनंद मैं, हरि सुमरौ ल्यौ लाय॥११॥
कै खाणौ कै सोवणौ, और न दूजी बात। परसा म्हारी तौ भई, हरि सारै कुसलात॥१२॥

गुण छेद कौ जोड़ौ-११५

निगुणा गुण नहिं मानई, ज्यौं जल सूक निवाण। ठंठ भाणीजै प्रसराम, ज्यौं बिण जीव मसाण॥१॥
गुणहिं न मानै कृतघनी, औगणगारा जीव। परसा ताहि न जाणई, जिनि ऐसा कछु कीव॥२॥
सुमिरन सेवन बंदगी, मनहीं मनहिं सुजाण। हरि भाव न भेदै प्रसराम, मनु मोदै पाषाण॥३॥
हिरदै हेत न हरि कथा, सूकै रहत सिंवाण। भीतरि भिदै न प्रसराम, भव जल के पाषाण॥४॥
टांची लगै न लोह की, घसि न सकै खरसाण। परसा कर्म कठोर नर, उर भये वज्र समाण॥५॥
हरि बरिखा मानै नाहिं, ऊंधै कंवल मलीण। परसा बीज कुभोमि ज्यौं, अंति रहै फल हीण॥६॥
परसा पानी प्राण कै, अंतरि वसै विकार। अमृत बरख्यो ऊस मैं, पलटि भयो सब खार॥७॥
सुणी न कबहूं हेत करि, जो श्री गुरु की सीख। हरि सुमरन बिन प्रसराम, निर्फल नर ज्यौं ईख॥८॥
नख सिख मीठो ईख अति, पैं थोथौ कणहीन। नाम हीण नर प्रसराम, निर्मल तऊ मलीन॥९॥
बाहरि भलो तु का भयो, अंतरि बसै कुबांण। परसा सारंग गुण पखै, तातैं बहै न बांण॥१०॥
सैल खार मति हीण नर, अलप नीर की नांव। परसा प्रीति न मानहीं, बेगि दिखावै पांव॥११॥
कफ कांकर चमकत मिल्यां, पावक ऊठै जागि। रेसम ऊंचौ प्रसराम, लगि न सकै लघु आगि॥१२॥
खणि काड्यो पाताल तैं, सोधि सकल जड़ मूल। परसा संगति सरप की, चंदन गयो निर्मूल॥१३॥
आदर ऊंदर कौ कि्यौ, परसा हंस विसेखि। काटी पांख सम्हारि सब, गुण मान्यो सो देखि॥१४॥
खणि काड्यो जड़ मूल तैं, सोधि सकल विस्तार। परसा चंदनु सर्प की, संगति कौ उपगार॥१५॥

निर्फल विभै कौ जोड़ौ-११६

दिष्टक पावक जीव कौं, दाझि मरण की आस। परसराम हरि भगति बिन, निर्फल विभौ विसास॥१॥
जिनकैं गैंवर गांव गढ़, दल बादल विश्राम। परसा नर निर्फल गये, जो न संभार्‌यौ राम॥२॥
सिंघासण आसण तुरो, चलत छत्र की छांहि। परसा धृग वो जीवणों, राम भगति हित नांहि॥३॥
कनक भुवन सुंदरि सखी, माया भोग विलास। परसा राम न मनि बसै, नहचै नरक निवास॥४॥
परसा पुहुप पराग बिन, फूलै तउ कछु नांहि। यों नर वै हरि भगति बिन, निर्फल आवैं जांहि॥५॥

कनक कामिनि कौ जोड़ौ-११७

परसा प्रीतम परहर्‌यौ, हिरदै धर्‌यौ हराम। हरि की भगति न भावई, भावै काम निकाम॥१॥
कामणि कनक बराबरी, कहुं वां येक सरीर। परसा तिनकौं देखि करि, धरि न सकैं मन धीर॥२॥
परसा कामिणि जो तजै, कनक तजै नहिं कोय। जो को त्यागै कनक कौं, कामणि तजै न सोय॥३॥
सब कोई कामणि भजैं, कामणि तजै न कोय। परसा जो कामनि तजै, सूर कहीजै सोय॥४॥
एक कनक अरु कामिणि, दोंऊ भजन विनास। परसा ए तजि हरि भजै, सो सांचो निजदास॥५॥

भामिनी कौ जोड़ौ-११८

मन मनसा करि भोगवै, माया भोग विलास। परसा कदै न ऊपजै, भाव भगति बेसास॥१॥
भाव भगति क्यौं ऊपजैं, जहं भामनि को वास। परसा करिहै भामनी, भाव भगति को नास॥२॥
नाहिं सुनर पंडित गुणी, लारैं लागै जांहिं। परसा जाणि डबोइहै, भामनि भौजल मांहि॥३॥
मन रंजन मन मोहनी, मोहे लखै न भेव। मोहनी तजि मोहन भजै, परसा सो सुकदेव॥४॥

सखी कौ जोड़ौ-११९

मैंधी मौली मनिवसि, भये मरद तैं रांड। परसा सेवै भामनि, भगत नाहिं वे भांड॥१॥
प्रेम भगति साधी नहीं, लागै भरम विकारि। परसा सेवै भामनि, भये पुरुष तैं नारि॥२॥
परसा परहरि स्वामिनी, भज्यो न केवल स्वामि। तौं तनकौं योंही धर्‌यो, लाग्यो जीव हरामि॥३॥
परसा ब्रह्म अपार कौ, जपै जु अजपाजाप। भूलि गये हरि भगति कौ, लागौ सखी सराप॥४॥
मन मैं सखी सरुप कै, तन धारै ज्यौं दास। परसराम ता दास कैं, हिरदै जुगल निवास॥५॥

जमराज द्वार कौ जोड़ौ-१२०

जम द्वारै सब जात हैं, करम किराणा लेर। तिनकौं तैसा देत है, परसराम बिण झेर॥१॥
भले बुरे सब एक हैं, जब लगि उहां न जात। जम कै द्वारे प्रसराम, सही न्याव की बात॥२॥
और राज तैं देखिये, अधिकाइ बहिठांहिं। जमराजा कै प्रसराम, अपण पराया नांहिं॥३॥
पूछत है सबकौं यहै, कहा कियो वहं जाय। परसराम नरदेह धरि, कियो सु मोहि बताय॥४॥
करि नांहीं हरि की भगति, अरु साधन को संग। रतन जनम नर प्रसराम, खोयो भलो कुढंग॥५॥
यहै कहत प्रसराम, बार बार जमराय। अधम करी नहिं हरि भगति, कियां आपणा पाय॥६॥
परसराम इहि राज मैं, है जु बड़ाई येक। किया आपणां पाइये, चलै न किउंकी टेक॥७॥
कियो आपणौं पाइये, परसराम यह सार। जोर न कोई करि सकै, दुल्लभ राजदुवार॥८॥
राज भलो राजा भलो, पड़िग्यौ बीचि कुभाव। परसा दुनियां दूसरी, जलि उठ्यो जमराव॥९॥
सबै करी बसि आपणैं, लीनि पटै लिखाय। परसराम निज दास बिन, सब जम कै गृह जाय॥१०॥
परसा प्रीतम उरि धरै, रहै जु प्रेम समाय। छूटै रंक न छत्रपति, काल सबन कौं खाय॥११॥
काल विरख ब्रह्मांड फल, भौमिका सब संसार। याही मैं उपजै खपै, परसा बारंबार॥१२॥
सरण जीव कौं प्रसराम, प्रभु बिन सूझै नांहि। हरि सुमरण बिन देखिये, सकल काल मुख मांहि॥१३॥
खेलनि लाल चलै गयो, लख्यौ न अंध अपार। कागद रीतौ रहि गयो, परसा बहि गई बार॥१४॥
परसा फिरि फिरि जगत मैं, औगुण किये अपार। गुण सागर गोपाल बिनु, को तारै भव पार॥५॥
जो सुमरै सीखैं सुणैं, हौं ताकी बलि जाउं। पाप हरण मंगलकरण, है परसा हरि नाउं॥१६॥

जाकौं अपणैं बिडद की, लैं निबहण की लाज। सोई भजिये परसराम, हरि सारण सब काज॥१७॥

काल पाचर कौ जोड़ौ-१२१

परसा पाचर काल की, तूडी देही मांहि। सतगुरु बिना न नीसरै, सालै मांहै मांहि॥१॥
नाटक चेटक स्वांग बहु, प्रथिमी भर्म अपार। परसा श्री गुरु सबद बिन, भाजै नाहिं प्रहार॥२॥
स्वांग धर्‌यां सुख को नाहिं, जो अंतरि बसै विकार। परसा श्री गुरु सांच बिण, बूडत है संसार॥३॥
दिलि सांची सब सांच है, दिलि झूठी सब झूठि। स्वांग धर्‌यां सुख को नहीं, परसा श्री गुरु छूठि॥४॥
परसा श्री गुरु सांच तै, अतर रहै न कोय। हरि निर्मल निजरूप नित, दीसै दूरि न होय॥५॥

उद्यान कौ जोड़ौ-१२२

आय पड़े उद्यान मैं, तहं न आपणो कोय। परसा क्यौं सुख पाइये, पीड न बूझै सोय॥१॥
पीड़ न बूझै प्रीति करि, सब आनादेसी लोग। हरख न उपज्यै प्रसराम, सदा सवाया सोग॥२॥
सोक सवायो प्रसराम, दिन भरिये दुख मांहि। पीड़ बटावण कौं हितू, सैंदेसी को नांहि॥३॥
सैंदेसी सुपिछाणी बिण, को बूझै कुसलात। यौं न कहैं को प्रसराम, कहं आयो कहं जात॥४॥
कहं तैं आयो कौण तू, कहि जो कछु मन मांहि। परसा पीड़ पिछाणि बिनु, बूझै कोई नांहि॥५॥
को बूझै अपणेस करि, दुख सुख बात विचार। हरि प्रीतम बिन प्रसराम, सूनों सब संसार॥६॥
जाकूं भावै प्रसराम, सो बूझै कुसलात। बिना सनेह न मुखि वसै, हरि प्रीतम की बात॥७॥
लोक बिरानूं प्रसराम, चलै न पी की बात। तहं को बूझै को कहै, हरि सुख की कुसलात॥८॥
सारा सूरा सुखि फिरै, परसा पड़ी न भीर। चोट न चावक की लगी, क्यौं जाणैं पर पीर॥९॥
पीड पराई सो लखै, जो रस पीड्या होय। पसू न परचौ प्राण सों, परसा लखै न सोय॥१०॥
तिनहीं सुणायां का सरै, जिन कै नाहिं सुपीड़। परम हितु बिन परसराम, भाजै नांही भीड़॥११॥
भीड़ न भाजैं और तैं, कहा सुणायां होय। हरि प्रीतम बिन प्रसराम, झाल बुलावै कोय॥१२॥

उझड पंथ कौ जोड़ौ-१२३

उझड़ चालै पंथ बिण, आगै बस्ती नांहि। परसा भरमैं गुरु बिना, बूडै भौ जल मांहिं॥१॥
सूझै नांहिं जीव कौं, प्राण सनेही साथि। सदा अंधारो प्रसराम, गुरु दीपक नहिं हाथि॥२॥
परसा दीपक रवि बिना, श्री गुरु सूझै नांहि। भौजल घोरंधार मैं, परवसि आवै जांहि॥३॥
विषै बिकारी आतमां, हरि गुरु सूझै नांहि। परसा दीपक गुरु बिना, सदा अंधारौ मांहिं॥४॥
श्रीगुरु सबद विचारि करि, किया न हरि सौं हेत। परसराम भ्रम कूप मैं, पड़ि पड़ि मुवा अचेत॥५॥
श्री गुरु संगति सत्यकरि, जो कीजै न विचारि। परसराम हरि गुरु बिनां, कौ तारै भव पारि॥६॥
परसराम हरि गुरु कथा, सब ही कै उर नांहिं। सगुरां जाणैं सत्य करि, निगुरां बादि बिलाहिं॥७॥

कांटौ पांव न भाजई, जो सूधे मारग जाय। उझड़ि चालै प्रसराम, जीव सदा सिरि खाय॥८॥

विद्यारथी कौ जोड़ौ-१२४

कथणी कथि पंडित मुये, देख्यो नाहिं विचारि। परसा आसा बसि भयें, चले राम धन हारि॥१॥

परसा सब सीख्यो सुण्यो, रहीं न प्रेम सराक। केती बरिखा संग्रही, पृथ्वी अंति फराक॥२॥

पढि गुणि नृफल बहि गये, रहीं न प्रेम सराक। परसराम हरि भगति तैं, पंडित भये फिराक॥३॥

पढि गुणि सुणि पंडित भये, बांधे कोटि गिरत्थ। भगति न उपजी प्रसराम, कहि सुणि सबै निरत्थ॥४॥

पोथा शोथा प्रसराम, जो हरि सौं न सनेहु। हरि सुमिरण बिन जीव तैं, जम न डरै सुणि लेहु॥५॥

परसराम गुण सीखि सुणि, मन संसार सुरंत्त। हरि सुमिरन सेवा बिनां, हारै हरत परंत्त॥६॥

पढ़ि गुणि पर बंधनि पर्यौ, सूवौ पिंजर मांहि। परसा पंखि अजांण धणि, जो निरबंध रहांहिं॥७॥

परसा हरि बेसास बिण, पंडित गुणी कहांहिं। आसा वसि नर बहि गये, बूडै माया मांहिं॥८॥

आसा तृष्णा मनि बसै, राम न आवे चीति। परसा पढि गुणि पाकड़ी, भौ बूडण की रीति॥९॥

हेत कियां हरि सुमरिये, रहिये प्रेम समाय। जगत अरुझणि प्रसराम, विद्या पढै बलाय॥१०॥

सबै पुराण नौ ब्याक्रण, पढि गीता गुणि लागि। परसराम उपजै नाहिं, भाव भगति बिन भागि॥११॥

मिथ्या बकवाद कौ जोड़ौ-१२५

हरि गुण सुणै न हेत करि, मिथ्या बकै निसंक। सिर परि धरै न प्रसराम, वरि श्री गुरु को अंक॥१॥

मिथ्या बकिबो प्रसराम, जो हरि सौं न पिछांणि। हरि सुमरण बिण बोलिबो, बकिबो दोजग जांणि॥२॥

हरि सुमरण बिण प्रसराम, बकिबौ वादि बिलाय। बांध्यो जल कै जीव ज्यौं, परवसि आवै जाय॥३॥

बोल्यो सोई जाणिये, बोल्यो बिलै न जाय। परसा बोल्यां का सरै, बोल्यो वादि विलाय॥४॥

मुख बांबी जिभा भुजंग, बाणी जो विष झाल। परसराम हरि भजन बिन, बकिबो केबल काल॥५॥

परसा वाद विवादणी, वाणी जो विष लीण। खंड खंड करि काटिये, रसुनां जो रस हीण॥६॥

झूठि बकणी क्यौं बकै, बकणी बहुत बिणास। परसा राम न मनि बसै, आन कथ्यां की प्यास॥७॥

परसा बकिबो भजन बिनु, बोलै प्रेत समाण। राम सुमंगल गाइये, बाणी सोइ बखाण॥८॥

बाणी सफल सु प्रसराम, सति करि रमिये राम। बाणी जो हरि भजन बिनु, बाणी सो बेकाम॥९॥

परसराम कूक्यां बिणां, चिड़ियां खाया खेत। कूंकणहारो खाजिसी, लाधौ नाहीं भेत॥१०॥

हरि सुमरण बिण सत्य करि, बकिबो केवल काल। सुखित बही जन प्रसराम, भजैं जु दीनदयाल॥११॥

हरि सुमरन द्वै एक पल, एक घड़ी सो सत्य। हरि सुमरन बिनु प्रसराम, आठौं पहर असत्य॥१२॥

ज्ञान अफल कौ जोड़ौ-१२६

ग्यान कथै समुझै नाहिं, मूरखि माया आस। परसा भौ जल बहि गये, बूडै बिण बेसास॥१॥

ग्यान कथै गाफिल थकां, अंतरि नांही सांच। परसा कंचन डारि करि, मुगधि बिसायौ कांच ॥२॥
भाव भगति बेसास बिनु, निपट निपौरख ग्यान। परसराम सो आदरै, निगुरौ नर नादान ॥३॥
बकि बकि थोथे पडि गये, तिन अंतरि कण नांहि। परसा प्रेम कथा बिनां, चालै जमपुर जांहि ॥४॥
प्रेम कथा थौड़ा घरां, बहुतां भरम विकार। परसा प्रीतम राम बिण, बूडै काली धार ॥५॥
लू लागी जलि जाय सब, बरिखां तैं सब होय। ग्यान अफल जु प्रसराम, हरि सुमरण फल सोय ॥६॥
जल्यौ ग्यान की अग्नि तैं, हरि सेवा को नेम। बिन बिरखा क्यौं पांघरै, परसराम सौ प्रेम ॥७॥

हरि माया कौ जोड़ौ-१२७

परसराम हरि सुमरिये, जब लगि घट में सास। अंति मरण जीवण नाहिं, झूठी माया आस ॥१॥
माया मारि पछाडिया, ऊंच नीच भ्रम भेक। परसराम हरि भजन बिनु, अगिणत अंध अनेक ॥२॥
परसा माया कारणै, कीनै बहुत उपाय। माया मिली न हरि मिल्यौ, चाले जनम ठगाय ॥३॥
परसराम नर देह धरि, सर्‌यौं न एकौ काम। दुबिध्या तैं दोऊ गया, माया मिली न राम ॥४॥
परसा भरम सनाह लै, बैठे माया औट। तिन को बाण न बाहिये, भीतर भिदै न चोट ॥५॥
माया माटी मिलि गई, मोह गयो मिलि सूनि। परसा जीव जहीं तहीं, हरि बिण भरमैं जूनि ॥६॥
माया मंदिर कर्म बंध, मोह बलींडा छानि। मेर तेर तिन जेवड़ी, परसा ग्रही अग्यानि ॥७॥
परसा माया सब डसै, माया डसी न जाय। मैं मेरी कहि बहि गये, कै राणा के राय ॥८॥
मेरि मेरि सबै कहै, कहि कहि मरि मरि जांहि। परसा समझि न देखहीं, पहली हुता कि नांहि ॥९॥
परसा मैं मेरी कहै, उपजै खपै बिलाहिं। यह तौ इत ही देखिये, चलै न कौ लै जांहि ॥१०॥
पूरै पूरी प्रसराम, करि मेल्ही अपणाय। घटै न कबहू सो बधै, आवे कहूं न जाय ॥११॥
जाणी जाय नाहिं कछू, कीनी जो करतार। सब तैं वहै अगोचरी, परसा यहै विचार ॥१२॥
बाजीगर की प्रसराम, बाजी अगम अपार। नाचै मनवा लालची, नहचावै करतार ॥१३॥
कर्म जंजरनि जग जर्‌यौ, रहै सदा सहकाम। मुकत करण कौं प्रसराम, हैं सुकृत हरि नाम ॥१४॥
रोके माया महल मैं, दीने करम कपाट। जगत सहित जम प्रसराम, पठये नरकि निराट ॥१५॥
माया कहै न जीव सों, तू मो मैं मिलि आय। लोय लुबध मिलि प्रसराम, पडि पतंग जलि जाय ॥१६॥

बेलि कौ जोड़ौ-१२८

बेलि सहर के पंथ की, केते गये ढंढोरि। सब कूं मीठी प्रसराम, जिनि-जिनि चाखी तोरि ॥१॥
मीठी सुपनै सोवतां, खरी लगै न खात। तब लगि मीठी प्रसराम, जब लगि होय न प्रात ॥२॥
खारी काहू एक कौं, सब कौं खारी नांहिं। परसा निकसै भेखधरि, उलटि परैं तामांहिं ॥३॥
बेलि ब्रह्म लगि बधि गई, सकी न काहू मोडि। परसा नव तर नेह सौं, निकसै लेत बहोडि ॥४॥

हंसि हंसि अपने बसि किये, जीव छूटि कहं जांहि। परसा पंखी कूप कै, निरबंध बंधन मांहिं॥५॥
जाण न पावै पंथिया, देखि रूप उरझांहिं। उरझि पुरझि करि प्रसराम, परबंधनि पड़ जांहिं॥६॥
परवसि बंधन पड़ि गये, स्वारथ सोचे नांहिं। परसा पंखी आस कै, आस मद्धि समाहिं॥७॥
परसा पंखी आस कै, दीसैं मनहिं मलीन। संबल सेय अफल गये, भूखै भोजन हीन॥८॥
परसा प्रभु सों मिलि रही, माया मोह लगाय। आप चरण सेवा करै, और छुवै तिहिं खाय॥९॥
कमला खेलै कंत सौं, मिली सुप्रीति विचारि। परसराम पतिवरत सौं, सेवै पद उरधारि॥१०॥
परसराम पतिवरत कौ, नेम रह्यो भरि पूरि। हरि कैं चरण सनेह तैं, करैं न उर तैं दूरि॥११॥

भाव भगति कौ जोड़ौ-१२९

भगति न उपजै भाव बिन, भाव न बिन मन सुद्ध। होय न कबहुं न परसराम, बिन ब्याई कै दुद्ध॥१॥
लागो लालचि दूध कै, नर धीणां सौं लीन। यौं हरि नर सौं प्रसराम, भगति हेत आधीन॥२॥
अणकीयां तैं सत्य करि, कारिज सरै न कोय। परसा पर्यौ रहै भलां, पूरौ कदे न होय॥३॥
जाय जहीं घरि जाव सीं, जहं जाको विश्राम। करम करौ को प्रसराम, भजौ भरम तजि राम॥४॥

आलारासी कौ जोड़ौ-१३०

आलारासी मन मुखी, रल बेहलि निज दास। इनि पांचन मैं प्रसराम, एक भगत की आस॥१॥
मतै न मिलहीं प्रसराम, रु सब कहावै दास। हरि हिरदै भीतरि कदै, बसै न धरि बेसास॥२॥
जाणै जन हरि भजन की, बांधि लई जिन टेक। मनसा वाचा प्रसराम, प्रेरक सबकौ एक॥३॥
भरम गये बहि हरि बिनां, कुल करणी आचारि। तिरि न सकै भव प्रसराम, श्री गुरु ग्यान विचारि॥४॥

प्रभु आज्ञा कौ जोड़ौ-१३१

परसराम प्रभु कों कियौं, को मेटन कौ और। बनैं नाहिं गज कुंभ विनुं, सिरि रासिब को चौर॥१॥
परसा हरि तजि आन कौ, भगत न जांचन जाय। सिंघ सहस लंघन करै, निहचै घास न खाय॥२॥
सकल बिसारै थिर रहै, सुमरै राम अपार। ता सेवग कै सत्य करि, निति प्रति मंगलाचार॥३॥
द्रोपत राजा कै भयौ, सो आचिरजि विचारि। कन्या तै प्रभु प्रसराम, कीनूं कुंवर मुरारि॥४॥

साध निंदा कौ जोड़ौ-१३२

परसा निंदा साध की, करै सु रासिब होय। भार बहैं घूरै चरै, आदर करै न कोय॥१॥
परसा निंदा साध की, करैं सु नर्कि समाय। जनमि जनमि जमलोक मैं, निर्फल आवै जाय॥२॥
परसा निंदा साध की, करै सोइ चांडाल। सोई मद्धिम नीच नर, है जीवत जम काल॥३॥
निंदा पराइ परसराम, कियां कछू फल नांहिं। निर्फल बकिबौ हरि बिनां, जियो सु मूवां मांहिं॥४॥
परनिंदा कीजै नांहिं, कीजै हरि कौ जाप। हरि सुमरण बिनु प्रसराम, कीजै सोई पाप॥५॥

साध असाध कौ जोड़ौ-१३३

साध असाधहिं प्रसराम, राति द्यौस कुं विचार। वहि सारै निति कर्म कै, वहि निति हरि की लार॥१॥
परसा साध असाध की, संगति मणि रु भुजंग। वह विषकर विष हरै, उपजि येक ही संग॥२॥
विष तैं अमृत नीपजै, अंकुर बीज समाय। परसा बीरज गुण मिलै, अमृत विष हो जाय॥३॥
खार समंद जल मेघ की, संगति मीठी होय। अहि पीयो पै प्रसराम, भयो हलाहल सोय॥४॥
परसा अमृत अहि पियो, भयो पलटि विष पूर। सो विष चंदन संगि मिलै, पावै नांव कपूर॥५॥
परसराम श्रीखंड की, संगति जो अहि जाय। सो सुख पावै विष झरै, परम कपूर कहाय॥६॥
परसा चन्दन गरल कौं, ज्यौं कपूर करि देय। कटुक वचन सुणि साध कै, बुद्धि विमल करि लेय॥७॥
लेत असाधैं साध करि, साधैं करत असाध। विविध मतौ जग प्रसराम, जन कै हरि आराध॥८॥

स्वारथ परमारथ कौ जोड़ौ-१३४

अकरम करम कमाय करि, स्वारथ पोष्यो जाणि। परसराम प्रभु राम सौं, करी न कदै पिछाणि॥१॥
परसा भावै जीव कौं, खात जगत की जूठि। स्वारथ सौं सनमुख सदा, परमारथ सौं पूठि॥२॥
लाहै लोटै आतमां, टोटै निकट न जाय। ताहि न कबहूं प्रसराम, हरि प्रीतम पतियाय॥३॥
खाये माया ब्रह्म की, करम भरम कै जीव। भज्यो न केवल प्रसराम, सोधि सकल वर सींव॥४॥
प्रेम समाय न हरि भज्यो, परसा धरि बेसास। भगति गमाई भरमतां, लोक वेद की आस॥५॥

कामी निहकामी कौ जोड़ौ-१३५

परसा कामी कंध लै, निहकामी तजि जाय। कामी रिति की प्रीति हरि, सबकौं दई बताय॥१॥
भाव भगति फल प्रसराम, अंहकार तै जाइ। मिलि गोपिका गर्व तैं, कृष्ण दई छिटकाइ॥२॥

हरि गोप्य प्रगट कौ जोड़ौ-१३६

कहूंक ढमकै ढोल कै, कहू पुरस दस बीस। कहू प्रगट निधि प्रसराम, पाणी त्यौं जगदीस॥१॥
भौमि निपाणी है नाहिं, कहू निकट कहु दूरि। यौं हरि सब मैं प्रसराम, पड़दै कहू हजूरि॥२॥
जाहि चिंतन चिंता मिटै, सो निजरूप निरूप। परसराम हरि भजन बिनु, भर्मै जनि भौ कूप॥३॥
दरस परस जन प्रसराम, हरि अमृत भरि पीव। ता हरि कौं जनि बीसरौ, होइ रहौ हरि जीव॥४॥

क्रोध अहं कौ जोड़ौ-१३७

पावक उपज्यो काठ तैं, तहू काठ कौ काल। देह दहन कौं प्रसराम, क्रोध अगनि की झाल॥१॥
आगि न जारै एक तै, हौय काष्ठ पाषाण। दुहुं मिलि धूवों प्रसराम, होसी इह सहनाण॥२॥
आग जाल कै काष्ठ कूं, करै आप परकास। करम जाल कै प्रसराम, करै सकल परकास॥३॥

बंसी सुहाग कौ जोड़ौ-१३८

हरि सबकैं मोहन हुंतै, मोहे बंसी आय। परसा बंसीधर भयै, अब मोहन नाम दुराय॥१॥
बंसी कुल उज्जल कियो, मिली स्याम सों जाय। परसा निर्फल और कुल, जिकै जलत जम लाय॥२॥
मुरली मोहन सूं मिली, मिलि कीनौं भरतार। बंस उजागर करि लियौ, परसा बड़ उपकार॥३॥
मुरली पटरानी भई, चलत छत्र की छांहि। परसा कर अधरनि मिली, वदै न प्रेम पियांहिं॥४॥
मुरली अति बड़ भागिनी, हरि लीनी अपणाय। परसा मुख हरिमुख मिल्यौ, और मुंई पछिताय॥५॥
परसा मुरली मोहनी, मोहे स्याम सुजाण। सौंपि दियो हित करि सबै, तन मन अपणूं प्राण॥६॥
सखी स्याम सों प्रसराम, मिली करै रसकेलि। उरझी श्रीगोपाल सौं, ज्यों तरवर-सों बेलि॥७॥
मुरली वदै न और की, जो चढि गई गुमानि। परसा प्रभु सों सब कहै, लागि रही हरि कानि॥८॥
जाकी माया प्रसराम, मोहे सिव ब्रह्मादि। ताको मन मोहन हुतौ, मोह्यौ मुरली नादि॥९॥
खग मृग मारुत विधु गणन, मोहे स्याम सुजान। जमना जल कौं प्रसराम, जलधि न देई जान॥१०॥
एक पांय ठाड़ि रही, निसि वासुर इकतार। परसा प्रभुतौ आदरी, सुनी सनेह पुकार॥११॥
ताते तीषण लौह के, सहै सकल सूलाक। अधर सिंघासण प्रसराम, छत्र भयो हरि नाक॥१२॥

सांप छछूंदरि कौ जोड़ौ-१३९

सांप छछुदरि पाकड़ी, परसा गिली न जाय। ऊगलै तो दिष्टि हीण, निगलै तौ मरि जाय॥१॥
सांप छदुंदरि सहित ही, निगली न्यूलि निधान। पेट पचै विष प्रसराम, जड़ी तणां परवांन॥२॥
हिरदै कतरणी जीभ रस, मुख उपरलौ नेह। ताको दरसण प्रसराम, सुपनैं ही मति देह॥३॥
छांदै चालै जगत कै, भगत होण कौ नांहि। भाव हीण नर प्रसराम, बूड़ि मरै भव मांहि॥४॥

असुभ कर्म कौ जोड़ौ-१४०

परसा जुर कै जोर सौं, भोजन की रुचि जाय। असुभ करम उदै हुवां, हरि चरचा न सुहाय॥१॥
भांड़े घड़े कुम्हार कै, ऊंचा नीच कहांहिं। जहं तै उपजै प्रसराम, फिरि तहं मद्धि समांहि॥२॥
असुभ करम अति प्रबल है, सुभ किरत हौं न देय। परसा जुर मैं सर्करा, मिष्ट तबुं कटु पेय॥३॥
जुर मैं लंघण जउ करै, जुर को जोर घटाय। परसा प्रभु के भजन तैं, असुभ कर्म मिटि जाय॥४॥
सत संगति हरि भजन बल, बड़ी गरीबी पुष्ट। परसराम निर्वैर सुख, प्रभु गायै संतुष्ट॥५॥

मोह उपदेस कौ जोड़ौ-१४१

मोह बंध्यो जग में भ्रमैं, प्रभु सों सुरति बिसारि। परसराम या जीव कौं, भई जनम की हारि॥१॥
कहा हिंदू अरु कहा तुरक, भ्रमत मोह कै मांहि। परसराम सतसंग बिन, ईश्वर की सुधि नांहि॥२॥
मोह पासि तैं बंधि रहह्यौ, पकड़ी जीव कुवांणि। परसा जे मन दुख सहै, भाव भजन की हाणि॥३॥

परसा या संसार सों, करिये नाहिं सनेह। हाणि सदा हरि भजन की, मरि मरि धरिये देह॥४॥
निर्मोही जग मोह सों, कीयां कछु फल नांहि। परसा प्रभु बिन बहि मरण, आवण जाणां मांहिं॥५॥
परसा मिटै न मोह की, लहरि विषम भ्रम पास। गाफिल मन दोजिग चल्यौ, छांडि भिस्ति की आस॥६॥

मोह जगत कौ जोड़ौ-१४२

मोह जगत सों प्रसराम, कीयां भलो न जाणि। जासी उर तैं हरि भजन, लाभ जाणि भावै हाणि॥१॥
परसा निर्फल जगत सों, मिलि करिये नहिं वाद। अमिल रह्यां तैं पाइये, हरि सुमरन को स्वाद॥२॥
परसा मन संसार मिलि, कछू न मानै हाणि। माखी घृत मंजन भई, लाभ हुवो सो जाणि॥६॥
मोह जाल पड़ि प्रसराम, उरझि सरूझै नांहि। ज्यौं कपोत सुत ग्रेहणी, परी काल मुख मांहिं॥४॥
सलिल मोह संसार को, लग्यो न छूटै रंग। परसा दाझै मूल मिली, दीपग मांहि पतंग॥५॥
महा मोह की धार मैं, जगत बह्यौ सब जाय। परसराम ता मोह मिली, तू जिनी गोता खाय॥६॥
परसा मन संसार सुख, तजै न मानैं हारि। बनचर ज्यौं परवसि पर्‍यों, नाचै घर-घर बारि॥७॥
मार्‍यो माया मोह कौ, भूखौ भरमैं जीव। परसराम संतोष पद, भज्यौ नाहिं हरि पीव॥८॥

मोह वरत कौ जोड़ौ-१४३

परसा बरतै मोह जग, रु जहं मोह तहं जाय। महा मोह मांही सबै, उपजै मोह समाय॥१॥
परसा तन मन धन गयो, भई जनम की हाणि। सर्वस खोयो मोह मिलि, मानि जगत की काणि॥२॥
मोह विटंबे जीव सब, लीये संगि मिलाय। सोइ मोह लै प्रसराम, निरमोही सौं ल्याय॥३॥
आवण जाण प्रसराम, आसा माया मोह। मोह विसूरै दुख सहै, सदा सुखी निरमोह॥४॥
येक भूप के दोय सुत, येक हरिख येक सोक। हरख सुखी नित प्रसराम, सदा दुखी रह सोक॥५॥
परसा धृग संसार सुख, झूठा भाई बंध। सौ लकुटी कूवै परै, बरज न मानै अंध॥६॥
कूवै परत न संकई, ताको कहा अंदेस। परसराम ता जीव कौं, तजि कीजै आदेस॥७॥
मोह न कीजै मोह सौं, निरमोही सौं मोह। निरमोही सौं प्रसराम, मिलि छूटै सब मोह॥८॥
धीरज वांधि विसास करि, भरि भरि नैन न रोय। और मोह तजि प्रसराम, हरि भजि अंतरि खोय॥९॥

करम करणी कौ जोड़ौ-१४४

करणी तौ इक कर्म है, देखि दिखावण आस। परसा पद निर्वाण है, भजि निहकर्म निरास॥१॥
करणी तौ कथनी क्यौं नाहिं, परसा सोचि विचार। भीतरि भिद्यौ न भै मिट्यौ, चालै रतन बिसार॥२॥
कइ तीर्थ व्रत करै, तप साधनां करांहिं। परसराम कै हरि बिनां, और ठौर को नांहि॥३॥
राम भगति करिये सदा, प्रेम सहित ल्यौ लीन। प्रेम भगति बिनु प्रसराम, करणी सो कण हीन॥४॥
कलू काल मैं जीव कौं, हरि सुमरण विश्राम। हरि बिन करणी प्रसराम, करिये सो बेकाम॥५॥

तप तीरथ व्रत जोग जगि, साधनादि सत्कर्म। हरि भजि जाण्यो प्रसराम, साधे सकल सुधर्म॥६॥
कियो करायो जो कछू, हरि सुमरन बिनु वादि। परसा निर्फल आन सुख, भर्म कर्म धर्मादि॥७॥
परसा निर्मल नाम तजि, और न भजिये भाख। कोठी भरी कपूरसौं, डारि न भरिये राख॥८॥
करणी करुणा मैं बिनां, करिये सो कछु नांहि। सोई साफिल प्रसराम, करि रहिये हरि मांहिं॥९॥
जप तप तीरथ वर्त करी, अरू जिग्य जोग विश्राम। सर्व धर्म कौ प्रसराम, तिलक ऐक हरिनाम॥१०॥
मिथ्या करणी कर्म करि, भर्मि मरै जग जीव। प्रेम नेम बिनु प्रसराम, मिलै न मन दै पीव॥११॥

कर्म भर्मादि कौ जोड़ौ-१४५

हरि तजि भर्मै करम वसि, करम भरम कौ जीव। परसा कर्म न आदरै, जो सुमरै हरि पीव॥१॥
करम भरम आधीन पसु, पड़ै काल की पासि। परसा भज्यो न हरि हितू, करै कर्म को नासि॥२॥
परसा संसौ दूरि करि, करम भरम बेकाम। दिष्टक जो कछु देखिये, हरि बिनु सकल हराम॥३॥
परसा उपजै जो जहां, सो समुझत ता मांहिं। कांच करम कौं केलवै, रतन पिछाणै नांहिं॥४॥
फिरि फिरि विणजै बिलगरी, नीच कर्म निरजीव। राम रतन कौं प्रसराम; परखि न जाणैं जीव॥५॥
हरि कण सोधि न संग्रहै, संचै पसू पराल। परसराम ता जीव कौं, अंति गरासै काल॥६॥
कण तजि संचै कूकसी, ते पंडित नहिं अजाण। अति दुखी जन मैं मरै, परसा निर्फल प्राण॥७॥
परसा निर्फल प्राण कै, सुधि बुधि नाहिं सरीर। हरि कंचन कौं डारि करि, राचै कर्म कथीर॥८॥
हरि कंचन तजि काच कौ, संचै जगत अजाण। परसा दास न संचई, सुमरै पद निर्वाण॥९॥
कर्म कष्ट हठ सठ करै, नाम हीण नर होय। परसा दास न भर्मई, प्रगट सुपति कौं खोय॥१०॥
नाभि बसै कस्तूरिका, मृग ढूंढै बनिवास। परसा प्रेरक निकट तजि, दूरि धर्यौं बेसास॥११॥
परसराम हरि हीर कौ, नहिं पारिखूं न पार। जाणै जो जन जौंहरि, जाणै कहां गंवार॥१२॥

मन चढि गिरै कौ जोड़ौ-१४६

सुरगि चढयौं मन प्रसराम, परयौ न सक्यौ सवाय। हरि जल पियो न प्रीति करि, विषै बिलंब्यौ आय॥१॥
कहा चढ्यौ जो गिरि पर्यो, आसा पासी मांहि। नखसिख उरझ्यौ प्रसराम, मूरखि चैत्यौ नांहि॥२॥
जो मन गिर्यौ अकास तैं, महा मेंर सम होय। परसा क्यौं सुख पाइये, उलटि चढ़यौ नहिं सोय॥३॥
जो मन गिरयौ अकास तैं, सो किन थांम्यौ जाय। परसराम ब्रह्मांड तैं, देखत गयो सिराय॥४॥
खंड खंड मन होय गयौ, फूटी पड़ी बिराय। परसा सिमिटि न आवई, आप आपकौं जाय॥५॥
खरी कठिन मन की गढ़ी, मिंटै न मिलै निदान। परसा हाथ न आवई, मारुत मिल्यौ पिसान॥६॥
परसराम परवसि भयो, समिटि न आवै हाथ। हंसि हंसि दाझै हेत सों, मोह अग्नि कै साथ॥७॥
सुरगिचढ्यौ धर गिरि पर्यौ, वसि न भयो मन मैंन। सौं न चढ्यौ फिरि प्रसराम, ऊतरि पायो चैन॥८॥

देहल दुर्लभ देह कौं, मन भरमैं परदेस। परसा मिटै न कल्पना, हरि राखी मन पेस॥९॥
मन मोती फूट्यां पछैं, संधै न सांध्यौ जाय। दीसै परगट प्रसराम, ज्यौं पाथर की राय॥१०॥
सुख जाकौं जामैं बसै, ताकौं सुमरै सोय। परसराम सुखहीण कौं, हित करि भजै न कोय॥११॥

मन मैले कौ जोड़ौ--१४७

परसा तन मंजन कियौ, मैंल रह्यों मन मांहि। वाणि न छाडै गाडरी, मूंडी तउ कछु नांहि॥१॥
परसा मन मूंडयौ नाहिं, मूंड़े सिरि कै बाल। आबत विरम न लावहीं, निज सुमिरन बिनु काल॥२॥
परसा मूडयां का सर्यौं, मन मूडयौं नहिं मांहि। लोग रिझायौ स्वांग धरि, पति सौं रूठा जांहि॥३॥
माला पहरि न विष तज्यौ, विष तजि भज्यो न राम। परसा मन दोजगि चल्यौ, खोटत खात हराम॥४॥
दोजगि जासी दोजगी, जे बरजत विष खांहि। परसा कह्यौ न मानहीं, गुरु अंकुस सिरि नांहिं॥५॥

मन कामना कौ जोड़ौ-१४८

जब लगि मन कै कामना, तब लगि मन थिर नांहि। परसा भरमैं भेद बिनु, भूखै भौजल मांहिं॥१॥
जगत आस आधीन मन, अस्थिर कदै न होय। जो मन हरि कै रंगि रंग्यौ, परसराम थिर सोय॥२॥
परसराम थिर राखिये, मन गज एकै ठांहिं। श्रीगुरु अंकुस सीस धरि, बल करि अनत न जांहिं॥३॥
हरि रस पीवै थिर रहै, लगै कलंक न कोय। परसराम सब सुधरै, हरि भजि मन थिर होय॥४॥

मन चंचल कौ जोड़ौ-१४९

मनहीं चंचल मन चपल, मन राजा मन रंक। परसा मन हरि सौं मिलै, तौ हरि मिलै निसंक॥१॥
मनहीं तारै मन तिरै, अलख निरंजन राय। परसा मनहिं न जाणई, मनहिं काल हो खाय॥२॥
यहि मन यहि जन यहि धणी, समझि सकै जो कोय। परसा मनहिं पिछांणिये, तब सति करि सुख होय॥३॥
यहि सयांन सबकौ सुनूं, मन थिर राखै कोय। मन थिर राखै प्रसराम, आवागमण न होय॥४॥
आवणजाणा तब लगै, जब लग मन थिर नांहिं। मन थिर राखै प्रसराम, रहै सदासुख मांहि ॥५॥
सो मन थिर जो हरि भजै, हरि भजि अनत न जाय। परसराम ता दास कौ, आवागवण विलाय॥६॥
मन थिर काहू प्राण कौ, परसराम सो जाण। जब लग मनुवो थिर नाहिं, काचै सकल सयाण॥७॥
परसा मन परवसि भयो, भर्मत लहै न भेव। धीर न पकड़ि न घर वसै, लग्यो न राम सनेह॥८॥
परसा भोज न राजई, धारा नगरी रांड। करत विलास न संकई, निर्भै मनुवा भांड॥९॥
परसा लहरि समुंद की, जैसी मनकी दौर। घर ही हीरा नीपजै, जो मन राखै ठौर॥१०॥
कहूं कहां लौं परसराम, मन चंचल की दौर। जैसे चक्र कुलाल कौ, भर्मैं वहुत जग ठोर॥११॥
अपणै मन कौ प्रसराम, ज्यौ जाणै त्यौं राखि। पै कै पाणी ऊतरै, पाछै चढ़ै न लाखि ॥१२॥

मन भंवर कौ जोड़ौ-१५०

वास अगोचर कुसुम की, भंवर न पहुंचै कोय। गंजन मरना प्रसराम, सहै सुपावै सोय॥१॥
परसा संकट सैव बिनु, लाभै नाहिं सुवास। मन भवरा भै दूरि करि, करै कमल रस आस॥२॥
परसा भै तजि धीर धरि, कपि न कायर होय।तोहि कवल रस प्यास अलि, तन तैं प्राण बिछोय॥३॥
तन मन सोप्यां प्रसराम, रहै न दूजी आस। तब कबहू जा पाइयै, कमलकोस रस बास॥४॥
भंवर कुसुम क कोस कौ, प्यासो तो तन देहु। परसराम अमृत प्रेम सों, हरि अमृत भरि लेहु॥५॥
पायै प्यासौ मति मरै, जनि तरसावै जीव। परसा प्रेम रसाल रस, प्रेमकलस भरि पीव॥६॥

मन दिस घणी कौ जोड़ौ-१५१

कंता एक रु दिसी घणी, यौ मन रहै न जाय। परसा यहि अंदेस मोहि, पूरी पड़ै न काय॥१॥
मति हींनू मन प्रसराम, बहुत बसावै गांवु। पर्यौ उरानै जगत कै, भूलि गयौ हरि नांवु॥२॥
जहं तहं जातौ जतन करि, घरिराख्यौ नहिं आणि। परसराम देखत गयौ, पाणी बहि मुलताणि॥३॥
मानसरोवर पालि बिनु, दह दिसि फूट्यौ जाय। परसा राख्यौ तौ रहे, जो हो राम सहाय॥४॥
राख्या रहै सुराखियै, चल्यां न दीजै जान। रह्यां न बाहरि काढिये, परसा समुझि सयान॥५॥
जाँण दीजै आपणौं, राखीजै मन ठाम। मन राख्यां तैं प्रसराम, लागी जै हरि नाम॥६॥
परम सयानय प्रसराम, मन मानै तन मांहिं। तन मैं मन मानैं नांहिं, कह्या सुण्यां कछु नांहिं॥७॥
जौ लागै हरि नांव सों, सों मन अनत न जाय। परसा सेवै नेम धरि, मन हरि प्रेम समाय॥८॥
परसा प्रीतम राम है, ताको निसदिन टेरि। माला फेर्या क्यौ नहिं, जो मन फिरैं न फेरि॥९॥
वरज्यौ पणि मानै नाहिं, मनां मूरखि अज्ञान। परसा राम बिसारि करि, हिरदै गौ गुह्यौ गुमान॥१०॥
गये गुमानी धार बहि, भौजल मांहिं अपार। परसा राम जिहाज सों, लगे सुं उतरै पार॥११॥

मन मीन कौ जोड़ौ-१५२

परसराम मन मीन कौं, हरि निर्भै जल जानि। और सकल भव सिंधु जल, जनमि जनमि तनहानि॥१॥
परसा जो रातौ रहै, परम प्रेम कै रंगि। काल जाल कौं सो छलै, मीन रहै जल अंगि॥२॥
काल जाल छल कीर कुल, सकल बसै जा मांहि। परसराम निज मीन गति, वै जाणै कछु नाहिं॥३॥
जब कबहुं लगि मनि बसै, सिंधु सुनि निर्मल नीर। परसा तब लगि थिर रहै, ता मीन कौ सरीर॥४॥
हरिं सुख सिंधु अगाध जल, तासों जो ल्यौं लीन। परसराम हरि छीन तैं, मीन रहै अति छीन॥५॥

छीलर मीन कौ जोड़ौ-१५३

परसा आसा पास तजि, भज्यौ न रामदयाल। ज्यों बगुलो जल माछली, खासी छलि जमकाल॥१॥
जहं पाणी तहां माछलि, जहिं भेला तहं काल। परसा क्यों तन राखियै, ता जलहीं मैं जाल॥२॥

सिंधु विषम जल मीन मन, माया पसर्‌यौ जाल। परसराम हरि बिन सकल, महा मोह छल काल॥३॥
मच्छी जाल न जानियौ, आय पड़ी तिनि घात। परसा तलफल मरि गई, नीर न बुझी बात॥४॥
काल न जाण्यौं जाल संगि, मच्छी पाणी मांहिं। परसा निर्भै खेलति, मीन बिचारी नांहि॥५॥
मच्छी भागि न भै धर्‌यौ, सक्यौ न सिंधु संभाल। परसा कारण कीर कै, कै छीलरि कै जाल॥६॥
फिरि फिरि छीलर घर किया, मच्छी पड़ि गई जालि। परसा पाणी मोहि करि, लीनी कीर सम्भालि॥७॥
परसराम मच्छी मरै, छीलर नीर निजोर। सिंधू मिलि सुणि पाइये, नांहिं कीर को जोर॥८॥
भै भीतरि निर्भै फिरै, भौंतिरि पारि न जाय। परसराम जम कीर घरि, मच्छी सदा बिकाय॥९॥
परसा परवस माछली, सकी न राखि सरीर। गई न ता साइर सरणि, जाल न काल न कीर॥१०॥
जल मैं जाल न परि सकै, कीर मरै धरि संक। परसराम ता सिंधु मिलि, मच्छी जिवै निसंक॥११॥
छीलर नदी निवांण तजि, महासिंधु मिलि जाय। परसराम सो माछली, काल जाल कों खाय॥१२॥
सहवासि मूंये सदा, सो तुम तैं असम्भाल। परसा मच्छी कहत हरि, मम कुल को इह काल॥१३॥

हरि जल मच्छी कौ जोड़ौ-१५४

परसा मच्छी मिलि गई, मिली होय हरि नीर। जल मिलि पड़ी न जाल मैं, पाई नांहि कीर॥१॥
जल मिली निकसी जाल तैं, माछी आयो खोय। परसराम हरि नीर तैं, न्यारी कदै न होय॥२॥
परसा हरि जल जलचरी, सदा सुखी दुख नांहिं। सो न तजै निज नीर कौ, केलि करै मिलि मांहि॥३॥
परसा सरणि सदा रहै, निज नीर कै सुभाय। ता मच्छी कौं भय नाहिं, मिलि अभै जल जाय॥४॥
हरि जल सौं मिलि जलचरी, धरै न दूजी देह। अछल रहै सो प्रसराम, निज नीर कैं सनेह॥५॥
परसा पाणी मिलि गई, मच्छी मोह लगाय। सौं न पड़ै फिरि जाल मैं, काल मुवो पछताय॥६॥

भौ सागर कौ जोड़ौ-१५५

भौ सागर अत्यध भर्‌यौ, उतरण नाहीं पार। परसा तिरै जु हरि भजै, बूडै सब संसार॥१॥
गाफिल बूडै गर्व तैं, भर्मत भव जल मांहिं। परम सनेही प्रसराम, हरि करि लीयो नांहिं॥२॥
भवसागर मैं बूडतां, कौण पसारै हत्थ। परम सनेही प्रसराम, हरि बिन को समरत्थ॥३॥
हरि प्रितम न बिसारिये, जपिये बारूंबार। हरि समरथ बिनु प्रसराम, कौ तारै भव पार॥४॥
सर्व जाप कौ प्रसराम, जाप जगत गुरु नाम। सुमरै सोंई तिरै, पावै निज बिसराम॥५॥

पैरी जात न पैरवी कौ जोड़ौ-१५६

पैरी जात न पैरवी, ऊंडी वहै अथांह। परसा तैरू क्यो तिरैं, जों न गहै हरि बांह॥१॥
परसा बांह न हरि गहै, सुणै प वाणि संदेस। निर्मल मनहिं न व्यापाई, तन मन मैला वेस॥२॥
लोह नाव पाथरि भरी, परसा लंघै न पार। भवसागर हरि कीर बिनु, बूड़ि गई भ्रम धार॥३॥

केते राम जिहाज बिनु, बूडै भवजल मांहि। अंति अतैंरूं प्रसराम, पारि पहूंचै नांहि॥४॥
नाव गरी पाषण की, लोंह भरि भौ मांहिं। हरि खेवट बिनु प्रसराम, पारि करण कौ नांहिं॥५॥

भव जल नाव कौ जोड़ौ-१५७

परसा भवजल बलि बहै, नाव न चढ़ई हाथि। नाव भरोसे बूडिये, जो खेवट नहिं साथि॥१॥
परबसि बूड़ै नाव जलि, परसा पार न लेय। खेवट सेति प्रीति होय, तौ नहिं बूड़ण देय॥२॥
परसा तिरियै कौण परि, भव जल विकल कुडाव। खेवट नाम न मनि बसै, जाय सवरणी नाव॥३॥
परसा नाव समंद मैं, फिरि फिरि झोला खाय। खेवट बिन बूड़ै भलैं, पैली पारि न जाय॥४॥
पार न जाई हरि बिनां, भौ सागर की नाव। परसराम कछु है नहीं, हरि बिन और उपाव॥५॥
और उपाव न हरि बिनां, उबरण कौं थिर ठांवु। भवतारण कौं प्रसराम, है जिहाज हरि नांवु॥६॥
नाव सवरणी कीर बिनु, बूडै भौजल मांहिं। पारि उतारण प्रसराम, दीसै हरि वा ठांहिं॥७॥

विरह बुझावण कौ जोड़ौ-१५८

हरि सज्जन मिलि प्रसराम, अति सुख हृदौ सिराय। मृत जीवन कैं निमत ज्यूं, अमृत बूठौ आय॥१॥
परसा हरि सज्जन मिल्यां, निर्मल सकल सरीर। ग्रीषम ऋति कांदां करां, ऊपरी बूठै नीर॥२॥
जिहिं सायर नग नीपजै, सदा लाभ बिनु हाणि। भगत जगत मंहिं प्रसराम, बैरागर की खाणि॥३॥
मिली रहै नित नीर सों, कछु लैंन कौ न लोभ। दैत सनमुखी प्रसराम, सीप सिंधु कौं सोभ॥४॥
भगत जगत सों मिलत रहै, करै कर्म कौ नास। परसा विधु सकलंक अति, तउ सक्यौ करि प्रकास॥५॥
जगत सुमिल जन प्रसराम, पावन पर्म रसैल। पाणी मैलौ अतिं खरो, तउ धोवण कौं मैल॥६॥
परसा लहर समुन्द की, उपजै तहीं समाहिं। आवत जात न जाणियै, जांकी ताहीं माहिं॥७॥

बेगुनह कौ जोड़ौ-१५९

बालक मारै बिन गुनह, गयो राज सब जाणि। हाहाकार करि परसा, दुरजोधन की बाणि॥१॥
क्यौं कैरूं दल निरदलै, क्यौं पंडु रहै अमान। मनहिं विचारत प्रसराम, दुरजोधन सुं जान॥२॥
बाम स्थल वाणी कह्यो, परसराम सो खोट। लगी भीम का हाथ की, दुरजोधन के चोट॥३॥
ऐ भारथ मैं ऊबरै, क्यौं आयै नहीं हाथि। अति सनेह हरि प्रसराम, राखै अपणै साथि॥४॥

निहचल आतमा कौ जोड़ौ-१६०

निहचल जाकी आतमां, तंहं निहचल हरि नाउं। परसराम पर आतमां, जाइ मिलै बलि जाउं॥१॥
निर्मल जाकी आतमां, तंहं निर्मल हरिनाम। निर्मल निर्मल प्रसराम, मिलि कीनूं विश्राम॥२॥

हरि सरणि कौ जोड़ौ-१६१

निर्मोही निहकांमता, निर्वैरी निर्भार। परसराम हरिनाम सौं, लागि रहै लिवधार ॥१॥

सगौ न कोई जीव कौ, एक बिनां करतार। है राखण कौं प्रसराम, सरणै सिरजनहार॥२॥
हरि हरि कहै सु हरि मिलै, न्यारा कदे न होय। हरि सुख सो सुख प्रसराम, और न सूझै कोय॥३॥
बीरज बाह्यो भूंनि करि, फिर ऊगवै न सोय। परसा मन हरि सों मिलै, न्यारो कदै न होय॥४॥

एक भयां कौ जोड़ौ-१६२

काम दुधा बहु वरण की, दूध कियो इक ठौर। सो मिलि कहै न प्रसराम, हूं औरैं तू और॥१॥
परसा मधु सों मधु मिल्यौ, मीठौ मीठो जाणि। एक भयो मिलि एक सौं, यह सांचिली पिछाणि॥२॥
आयो जाय न जाणई, गयां न आयो जाय। परसराम हरि झीण मैं, लीन रहै ल्यौ लाय॥३॥
ज्यौं सलिता जल सिंधु महिं, मिलि दूसरी न होय। परसा जन हरि सौं मिलै, जनमैं मरैं न सोय॥४।

बाजीइकल कौ जोड़ौ-१६३

बोही जाणै क्यौं करैं, करता की गति काय। परसा अब गतिनाथ की, मोपैं कही न जाय॥१॥
अबगति गति कौं प्रसराम, कौ जाणन कौं और। जाकी है सौ जाणि है, जिहिं सूझै सब ठौर॥२॥
परसा बाजी अकल की, को जाणन समरत्थ। हारि गये निर्फल सबै, पढि गुणि बहुत गरन्थ॥३॥
औसर अकल अनंत कौ, परसा कथ्यौ न जाय। बंदन करि कर जोरि करि, हरखि हरखि हरि गाय॥४॥

पसु आचरण कौ जोड़ौ-१६४

कउवो तजै कपूर कौं, सोधि जगत मल खाय। पैवन होत न प्रसराम, स्वान सुरसरी न्हाय॥१॥
तोलि न मोलि बरावरी, कंहं कंचन कंहं कांच। झूंठ न मानै प्रसराम, दई पियारौ सांच॥२॥
गुर की वदै न प्रसराम, मन की लीयैं जाय। रासिब तजै न राख कौं, चंदन देहु लगाय॥३॥
परसा वदै न बोध की, मन तहं तहं बहि जाय। सूकर सहज न परहरै, जीवै जो मल खाय॥४॥
कूकर काग अछेप नर, जानत वैं यहि लूटि। वै हंस न छूवै प्रसराम, जाणि जगत की झूठि॥५॥

गीरही वैरागी कौ जोड़ौ-१६५

ग्यान उदासी कौ बनै, गिरही कौं कछु पुन्य। ऐसी समुझै प्रसराम, जाकौ मन उनमन्य॥१॥
वैरागी कै ग्यान फल, उपजै जो संतोष। कलपि मरै नहिं प्रसराम, लहै सहज की पोष॥२॥
बैरागी वैसो न रत, मिलि हरि सौं रत होय। सो हरि सुख मैं प्रसराम, रहै सदा भ्रम खोय॥३॥
रहै सदा मन सरदई, तंहं पुन्य कौ प्रवेस। परसा कौंवल दीन मति, गिरही कौं उपदेस॥४॥
कर्म करै हरि कै निमति, आपु रहै निरभार। परसराम तबुं ऊतरै, घरबारी को भार॥५॥
वैर विकार न उरि धरै, सेवै जो हरि जाणि। परसा अपणै धर्म की, भर्मि करै नहिं हाणि॥६॥
घरबारी कौ प्रसराम, भ्रमिवो बड़ी कुवाणि। सदा भरोसे भीख कै, सर्व धर्म की हाणि॥७॥
मांगि तांगि भ्रमि दिन भरै, मिटी न ऊनां रीति। प्रगट न होई प्रसराम, हरि प्रीतम बिनु प्रीति॥८॥

स्वारथ परमारथ कौ जोड़ौ-१६६

अकर्म कर्म कमाय करि, स्वारथ पोष्यो जाणि। परसराम प्रभु राम सौं, करी न कदै पिछाणि॥१॥
परसा भावै जीव कौ, खात जगत की जूठि। स्वारथ सौं सनमुख सदा, परमारथ सौं पूठि॥२॥
लाहै लोटै आतमां, लौटे निकट न जाय। परसा लालच लोभि तजि, मन हरि कौं न पत्याय॥३॥
स्वारथ बंधी आतमां, परमारथ न सुहाइ। ताहि न कबहू प्रसराम, हरि प्रीतम पतियाय॥४॥
परमारथ जब ऊपजै, स्वारथ जाय बिलाय। तब कबहू जन प्रसराम, लेसी हरि अपणाय॥५॥
परमारथ पलटै नाहिं, स्वारथ पलटि बिलाय। सूर सहै सिरि प्रसराम, रिणि कायर मिटि जाय॥६॥
परमारथ कै पग नाहिं, स्वारथ लोचन हीन। वह निहचल वह चपल अति, परसा अमिल अदीन॥७॥
परमारथ फल परहर्‌यौ, करि स्वारथ सौं प्रीति। परसा बेलां अंत की, जीव लिये जम जीति॥८॥
कामण किये सुहाग कौ, लाग्यो मरण भर्तार। स्वारथ पलट्‌यौ प्रसराम, भयो सनेह विकार॥९॥
स्वारथ मीठो प्रसराम, परमारथ सों खार। परमारथ सों पण नाहिं, स्वारथ कौं हुसियार॥१०॥

दरस परस्या कौ जोड़ौ-१६७

कहं दरपण कहं रवि बसै, ब्रह्म जीव कौ भागि। दरसन परस्यां प्रसराम, पावक उठै जागि॥१॥
अग्नि पटौलो परिहरै, चमकत कफ बिस्तार। करै सु मन दै प्रसराम, संबल-कफ सौं प्यार॥२॥

हरि माया कौ जोड़ौ-१६८

हरि की माया हरि जिसी, परसा पर्म रसाल। नचायौ ब्रजवासिन्यां, नाच्यो दीनदयाल॥१॥
हरि की माया मोहनी, मोह्यो सब संसार। भगत न मोहि प्रसराम, हरि सुमरै इकतार॥२॥

भजन अधिकार कौ जोड़ौ-१६९

वेद व्यास विद्या बडौ, हरि सुमरन सुकदेव। तिलक सकल कौ प्रसराम, जाकै सुवसि अभेव॥१॥
विद्या पूरौ प्रसराम, वेद व्यास हरि हीण। भगति धर्म गुरुदेव रिषि, हरि सुमरण लिव लीण॥२॥
पिता पुत्र कौ कछु नाहिं, भर्मि परौ मति कोय। परसराम सुकदेव की, सरिभरि व्यास न होय॥३॥
जदपि सीप खरी भली, स्वाति मिली मन खोलि। बिकै न कबहू प्रसराम, सो मोती कै मोलि॥४॥
सुत बनिता संग प्रसराम, जो मानैं हरि जाण। सनकादिक सुक वामदेव, करिये कहा बखाण॥५॥
सर्व जाण पंडित सुची, हरि सुमरन लिव लीन। सोई नृमल जन प्रसराम, सोइ साध सकुलीन॥६॥
भीख मैं भगति नाहीं, भगति गई जंहं प्रीति। नारदादि लइ प्रसराम, सनकादिक की रीति॥७॥
परसा छीर समुन्द्र सौं, छीलरि रीझै नांहि। बैरागरि की खानि घरि, कौड़ी नांहि बिकाहिं॥८॥
निर्मोही निर्मल सूची, सीलवंत सहि नांण। ताकी महिमा प्रसराम, को कहिबै कौ जांण॥९॥

नर बोध कौ जोड़ौ-१७०

परसा निर्फल नावं बिनु, नर नर बै औतार। राम विमुख सेवै सदा, जनम जनम जमद्वार॥१॥
नर सोइ जिकौ हरि भजै, दूजा पसू गंवार। परसा राम न भावई, भावै विषै विकार॥२॥
परसराम जो हरि भजै, सो नर नांव उदार। हरि सुमरन बिनु बहि मरण, मिथ्या नर औतार॥३॥
नर सोई जो हरि भजै, हरि भजि तजै विकार। सोई तैंरू प्रसराम, भवतरि उतरै पार॥४॥
नर सोई जो हरि भजै, हरि भजि उतरै पार। ताहिं परमपद प्रसराम, देसी हरि दातार॥५॥
परसा जो नर नाम बिनु, बसै सदा उर वारि। हरि सुमरै सोई भौतरै, उतरै पैली पारि॥६॥
परसा पार न पाइये, जब लगि मन उर वारि। जब मन त्यागै वारि कौं, तबहीं पावै पारि॥७॥

नांव परबोध कौ जोड़ौ-१७१

परसराम जग जात है, रहत न दीसै कोय। ता डर तैं हरि सेइये, सरणै राखै सोय॥१॥
सब जग जाता देखिये रहत न दीसै कोय। परसा सो जन कौ कहीं, राम सुमरि थिर होय॥२॥
परसराम जग जात है, बूडौ काली धार। येकैं हरि के नांवु बिनु, पावत नाहीं पार॥३॥
सब जग जाता देखि करि, परसा दीनों रोइ। हरि बिनु हितू न सूझई, राखन हारा कोइ॥४॥
देखि दुखित दुख मान जिय, क्यौं झूरै परसराम। या सूनैं संसार मैं, हितु नाहीं बिन राम॥५॥
परसराम जग सब दुखी, सुखी न सूझै कोय। जाकै जीवनि राम हैं, ताकै आनन्द होय॥६॥
ज्यौं त्यौं जाणि अजाणि कै, लीजै हरि को नांवु। कछु न करिये परसराम, हरि भजिये बलि जांवु॥७॥
आरति करुणा सिंधु की, बसी रहै मन मांहि। ताकौं परहरि प्रसराम, जन जमपुरि क्यौं जांहि॥८॥
परसराम को थिर रहै, तौं हूं ही पछितांवुं। दीसै सोई विणसि है, अविनासी हरि नांवुं॥९॥

दीर्घ नराधि कौ जौड़ौ-१७२

परसराम जो हरि भजैं, नर सो बड़े कहांहिं। और सबै लघु देखिये, परवसि आवैं जांहिं॥१॥
सो बड़ौ जिकौ हरि भजै, बड़ौ न राजा राय। तिलक सकल कौ प्रसराम, हरि भजि प्रेम समाय॥२॥
परसराम नर सो बड़ै, जिकै संभारै राम। ताहू मांहे ते बड़ै, जे सुमरै निहकाम॥३॥
परसराम हरि भजन बिनु, जे नर बड़े कहांहिं। दीसै दीपक ज्यों बड़ै, पसु कहिये नर नांहिं॥४॥
परसराम वो नर बड़ौ, हरि सुमरै ल्यौ लाय। सो उत्तम अरु ऊंच कुल, भजतौ भूलि न जाय॥५॥

संसार हटवाडा कौ जोड़ौ-१७३

देखत ही बिखरी गयो, हटवाड़ौ संसार। झूंठ पसारो प्रसराम, सांचौ सिरजणहार॥१॥
हटवाड़ै ज्यौं प्रसराम, थिर संसार सु नाहिं। आग्या अवगति नाथ की, परवसि आवै जाहिं॥२॥
जग हटवाड़ै आय करि, बणिज न कीया जाणि। परसराम नर रुप कौं, लाभ कौण का हाणि॥३॥

नर देही धरि हरि भजन, बड़ौ लाभ सो जाणि। हरि सुमरन बिनु प्रसराम, करिये सोई हाणि॥४॥
कइ जग जनमैं कइ मरै, कइ आवै कइ जाहिं। पंथ बहै नित प्रसराम, हरि भजि थिर न रहाहिं॥५॥
परसा जामण मरण कौ, मारग मनसा तांहिं। केइ रीता केइ भर्या, कै निर्फल बहि जांहिं॥६॥
आवणजाण प्रसराम, जग मारग दुख मूल। हरि न कहै सोई सहै, जनम मरन जमसूल॥७॥
जनम मरन दूभर भरन, सुख नाहिं दुख जाणि। जिनि ये कीये प्रसराम, सो प्रभु लेइ पिछाणि॥८॥
जामण मरण प्रसराम, हरि विमुखन कै होइ। हरि रस पीवै प्रेम सों, जनमैं मरै न सोइ॥९॥

आसै विचार कौ जोड़ौ-१७४

परसा दुरै न जीव कौ, मन आसै वेसास। हिर्दै होय सु मुख कहै, वाणी प्रगट प्रकास॥१॥
बीज भौमि कौ प्रगट ज्यौं, बरिखा बिना न होय। परसा मन को सबद ज्यौं, निकसै अंतर खोय॥२॥
रहै न छानौ दोष सुख, भाव कुभाव विकार। बाहरि प्रगटै प्रसराम, भीतरि वसै विचार॥३॥
सीतलता संतोष बुधि, परचौ वाद विवाद। परसराम सुणि पाइये, श्रवणि सबद कौ स्वाद॥४॥

गूदड़िया कौ जोड़ौ-१७५

परसा फाटी गूदड़ी, भर्मत जग व्यौहार। बैठि कहूं न सुमिरण करै, अस्थिर बात विचार॥१॥
खोयो पंथ कुपंथिया, कृत कंटक विस्तारि। परसा दुखी उबांहणैं, जो बिचिरै अविचारि॥२॥
भेष पहरि संषौ सदा, मिटै न मन की मार। परसा बांतें वे भले, दुग्ध रूप संसार॥३॥
दुख अजन्म जामण भलो, कर्म कटत तत काम। फाटौ कांजी मन मुखी, परसा सो बेकाम॥४॥
परसा सुखी जु परम गति, कै मूरति उरवार। वार पार बिचि धार मैं, ते बहि गये असार॥५॥
रहौ सु निहचल हौ रहौ, चंचल होइ सुजाउ। परसा फिरि फिरि जगत मैं, रोटी टूका खाउ॥६॥
टोपी कोपिन गूदड़ी, करि करवो मुख राम। परसराम निर्मल दसा, बैरागी निहकाम॥७॥
भली दसा जो गूदड़ी, आसण दिठि वेसास। परसा हरि संतोष धन, सुमिरन पर्म निवास॥८॥
संगि हमारै यहि रहै, बहु आऊं बहु जांउ। गूदड़िया रु गरीबि थिर, परसा प्रभु कौ नांउ॥९॥
परसा आसणि बैसतां, तूटै तम की नाड़ि। बिन साधन कैसैं तिरैं, काग बराबरि आड़ि॥१०॥

देह नस्वर कौ जोड़ौ-१७६

धन जोबन चंचल सदा, चलसी निहचल नांहिं। त्यौंही तन मन प्रसराम, बसि देखौ हरि मांहि॥१॥
परसा अंतक देह कौ, को राखै अपणाय। भजिये सोई सोधि करि, प्रीतम प्रीति लगाय॥२॥
परसा उतिम नर जनम, प्रेरक अबगति नाथ। बहुरि कहौ कब पाइये, यहि औसर यहि साथ॥३॥
प्राण रह्यो चलिवो थक्यौ, बिणसि गई बहु बात। परम हितु बिनु परसराम, को बूझै कुसलात॥४॥
बिगरि गइ विधि परसराम, कहा कहौं बहु भाखि। मनि वैरी कियो नाहीं, मित्र कियो घर राखि॥५॥

गाफिल दीन कौ जोड़ौ-१७७

परसा गाफिल दीन बिन, दोजगि रहै समाय। भिस्ति भर्म तैं दुरि रही, दिष्टि न देखि जाय॥१॥
भिस्ति गमाई गाफिलां, सोधि न लीनी जाय। परसा दोजगि जाण कौं, लीनों सीखि उपाय॥२॥
दोजगि जाय दोजगी, बैठे दीन गमाय। तिनकौं मिलै न प्रसराम, अब तब कदै खुदास॥३॥
आपण मारै हक कहै, करता हती हराम। परसा स्वारथि जीभ कै, बूडि मुये बेकाम॥४॥
बहु स्वारथ संसार गति, मिटै न मेटी जाय। बिण मेट्यां क्यौं पाइये, परसा भिस्ति खुदाय॥५॥
परसा परौ न खोजहीं, ऊलै मूसलमान। मीरां कलमां हक कियां, रच्या जमीं आसमान॥६॥
मूल मता ऐसा कह्या, परसा पूरण राम। हक्क हलांलां भिस्ति है, दोजग कियां हराम॥७॥
अबैं अनाहक हक्क नहीं, कह्या खुदाय ना राम। परसा मारै मन मुखी, जीवत जी बेकाम॥८॥
जीवत जीव न मारिये, यहै भिस्ति उपाय। अरु मुरदार न खाइये, परसा कह्या खुदाय॥९॥
मारै जीवत जीव सौं, हरि मारै सु हलाल। दोऊ त्यागै प्रसराम, भिस्ति लहै दर हाल॥१०॥
कर तैं करदी डारि दै, सबदां करै हलाल। परसा दरगह दीन की, भिस्ति लहै दरहाल॥११॥
जिहि कदै हराम न भाय, भावै सदा हलाल। परसराम सो अवलिया, दरपावै दरहाल॥१२॥
जोर गरीबी प्रसराम, वाणी वरण विछाणि। डरै न सुन्नति ज्यौं दियौ, सांचो भेष प्रमाणि॥१३॥
और जीव कौं प्रसराम, मारि न जो पछिताउ। कुल कुटुम्ब माता पिता, काटि भिस्ति लै जाउ॥१४॥

काजी परबोध कौ जोड़ौ-१७८

काजी सोइ विचारि लैं, कहं मन कहीं मसीति। कहां निमाज गुदारिये, परसा समुझि सुरीति॥१॥
काया नग्र निमाज मन, मनसा मरण मसीति। परसा सीस ताहं नवैं, लागै पति सों प्रीति॥२॥
मन मनसा संजम कियै, परसा प्रेम संभारि। माहैं मीरां महरबा, पायो महल न हारि॥३॥
जोरी जरबनि वारि करि, सांच कहै सो सेख। परसा प्रीतम आपणौ, देखै दिष्टि अदेख॥४॥
देखि अदिष्टि न परहरै, प्रीतम प्राण अधार। परसा रहै अपार घरि, सेख तहीं सिरदार॥५॥
परसा सेख सर्वस, देखैं येक खुदाय। जनमैं मरै न औतरै, भर्मि न आवै जाय॥६॥
बेदरदां दाजगि पड़ै, दरदवंत दरि जाय। दरदवंत तैं प्रसराम, नेड़ौ बसै खुदाय॥७॥
परसराम बेदरद की, करणी बादी बिलाय। दरदवंत बेदरद की, मानैं जिगर खुदाय॥८॥

पाषाण देवल कौ जोड़ौ-१७९

पाथर का देवल रच्या, पाथर ही का देव। परम सनेही प्रसराम, करिवा लागो सेव॥१॥
जिन टांकी देवल घड्या, तिनहीं घड़िया देव। झूंठ किया क्यौं सांच है, परसा लगै न सेव॥२॥
सेवा जो परपंच की, बदै नहीं हरिराय। सांची सेवा प्रसराम, कठिन सु करी न जाय॥३॥

सेवा भूले सांच की, झूठी बिलंबे जीव। हिर्दै न आवै प्रसराम, जो हूतौ निज सींव॥४॥
पाति देव की पूतली, पूजनहारा देव। परसा सेवग सो सही, यहि समझावै भेव॥५॥
परसा सेवग सो सही करि, जाणैं हरि सेव। धर अंबर मुख मैं बसै, किस देवल मैं देव॥६॥
देही भीतरी देहुरा, ता देवल मैं देव। परसा पड़दै हीं मिलै, अवगति अलख अभेव॥७॥

ब्रह्मांड पिंड कौ जोड़ौ-१८०

परसा पिंड पिछाणिये, हरि प्यारो सब मांहि। पिंड पिछाणि न देखिये, तौ ब्रह्मांड कहूं नांहि॥१॥
का खोजै ब्रह्मांड कौं, पिंड खोजि नहिं पूरि। परसा पति अंतरि बसै, रह्यो सकल भरि पूरि॥२॥
परसा पिंड कुंणैं रच्यौ, पिंडै प्राण समाय। प्राण पिंड दोउ बीछुरै, प्राण कवण घरि जाय॥३॥
परसा जो ब्रह्मांड पति, पिंड चलावै सोय। ब्रह्मांड पिंड अंतरि बसै, जाणैगा जन कोय॥४॥
जो प्रेरक ब्रह्मांड कौ, सो पिंड कौ पिछाणि। परसा नेड़ौ आपु मैं, सुहरि सत्य करि जाणि॥५॥
दिल दरिया दीदार मैं, रह्या सकल भरि पूरि। खोज्या नेडौ प्रसराम, विण खोज्यां प्रभु दूरि॥६॥
जो आरति लैवाल कै, दैवाल कै न होय। अंति मिलन दोइ प्रसराम, मैलो कदै न कोय॥७॥

नित्य रूप कौ जोड़ौ-१८१

नित्यरूप थिर प्रसराम, सत्य सदा इकतार। आवण जाण न जाणिये, ज्यौं तरंग जलसार॥१॥
अगणि चरित गुणरूप कौं, हरि अवगति विश्राम। अकल सकल कौ प्रसराम, प्रभु एक बहु नाम॥२॥
वांवैं कहूं कि दांहिणैं, आगैं पाछैं एक। सुर्ग मिर्ति पाताल लौं, परसा रूप अनेक॥३॥
वांवैं कहूं कि दाहिणै, नेडा कहूं कि दूरि। आगैं पाछैं प्रसराम, रह्या सकल भरपूरि॥४॥
साहिब नैड़ा दरि खड़ा, देखौ नैन उघाड़ि। आगैं पाछैं प्रसराम, प्रगट राज की बाड़ि॥५॥
विदित मान हरि देखिये, प्रेरक सबकै साथि। अगनि झाल ज्यौं प्रसराम, गह्या न आवै हाथि॥६॥
जाल्यां जलै न जलि गलै, कटै न सौ कुमिलाय। सुर्ग एक रस प्रसराम, ऋति आवै फिरि जाय॥७॥
जाल्यां जलै न जलि गलै, उड़ै न ज्यौं आकास। यों हरि व्यापक प्रसराम, सबकौ पर्म निवास॥८॥
नखसिख व्यापक सुर्ग ज्यौं, दीसै सदा हजूरि। अंतरजामी प्रसराम, रह्या सकल भरिपूरि॥९॥
अंतरजामी सकल मैं, देखौ करौ संभाल। परसा जीव चरित्र ज्यौं, घस्यां घसै देवाल॥१०॥
भांति विविध विस्तार हरि, परसा लेहु पिछांणि। चिह्न करद लै काटिए, अरु करिए हरि हांणि॥११॥

प्रेरक अमिल कौ जोड़ौ-१८२

डोलै तरुवर पात ज्यौं, हिडोलै तर छांह। यौं हरि प्रेरक सकल कौं, परसा मिलै न मांह॥१॥
परसा समुझि प्रकास तैं, रूप निकट रवि दूरि। यौं हरि न्यारो तेज तैं, तेज रह्यौ भरि पूरि॥२॥
तरुवर न्यारो छांह तैं, छांह बिनां तर नांहिं। यौं हरि न्यारो प्रसराम, है दिष्टक हरि मांहिं॥३॥

ब्रह्म जीव हो बिस्तर्‌यौ, इच्छा चरित अनेक। परसा तरवर छांह दो, अंति एक कौ एक॥४॥
आभूषण ज्यौं कनक कै, काटि कीये अनंत। फेरि मिल्यावत प्रसराम, कण कौं कण नग अंत॥५॥
विमल अडोल अथाघ हरि, पर्म सिंधु सम सींव। परसा उपजै तहं बसै, बहु रंग बहू जीव॥६॥
परसा तरि फल ऊपजैं, फलि उपजै अंकूर। फिरि तरुवर अंकूर तै, ब्रह्म जीव निधि नूर॥७॥
वापी कूप तडाग मैं, सिंधु नीर मिलि एक। परसा दुगधहिं दुगध निज, भाजन भांति अनेक॥८॥
ज्यौं पृथ्वी पट नांवु तैं, ठांव अनंत कहाय। परसा प्रेरक येक हरि, नानारूप दिखाय॥९॥

कारणभूत कौ जोड़ौ-१८३

ज्यौं पृथ्वी गुन प्रसराम, सो दास कौ प्रसंग। सबकौ मेलैं आप गूणि, आप अमिल भुव अंग॥१॥
पाणी सब सौं एकरस, चालै अपनी ढाल। समदिष्टी कै प्रसराम, हरि पतिवर्त निराल॥२॥
पतिवर्ता गुण प्रसराम, चालै पीव सुभाय। मिलिसी सकल कुटुंब सौं, हाथ जौरि सिरनाय॥३॥
तेज सकल सूं सारिखौ, तातौं सीलौ नांहिं। निरवैरी जन प्रसराम, अमल रहै मल मांहिं॥४॥
दास पवन ज्यौं प्रसराम, वरतैं एक सुभाय। हर लै जाइ दुर्बास कौं, विमल रहै ज्यौं वाय॥५॥
परसा सुर्ग सधीर सौं, हरि सुमरै सोइ जांणि। व्यापक सकल विवोम ज्यौं, अंति अमिल सो वांणि॥६॥
परसा व्यापक ब्रह्म ज्यौं, सुजन सदा निरदोष। सो न लिपैं जग मोह सौं, जौ पावै हरि पोष॥७॥

परमेस्वर पण कौ जोड़ौ-१८४

परमेस्वर पण प्रसराम, करि जाणै जो कोय। परमेस्वर के पण बिनां, सुख संतोष न होय॥१॥
आस विडाणी दूरि करि, सुमिर सदा नंदनंद। परसा सबकौ सत्य करि, पूरक परमानंद॥२॥
परसराम जो चाहिये, चिन्ता हर को चैंन। भरत सत्रगुन अरु लछमन, सुनि श्री गुरु के बैंन॥३॥
हारि नांहिं हरि सेवतां, होसी अंति समाधि। साखि सुणीजै प्रसराम, प्रगट कही प्रहलादि॥४॥
हरि सुमिरन तैं सत्य करि, पारि भयो प्रहलाद। सो हरि सुमिरन प्रसराम, भव विरंचि को स्वाद॥५॥
हरि सुमिरन तैं सत्य करि, परसा हृदौ सिराय। सो निर्मल निर्दोष निति, जो सुमरै ल्यौ लाय॥६॥

सबै सयानप कौ जोड़ौ-१८५

सबै सयानौ देखिये, नाहिं अयांनां कोय। कहत सुणत सुख प्रसराम, करत कठिन सु न होय॥१॥
चतुराई सीखी सबै, प्रभु सों प्रीति न प्रेम। यहि पछितावो प्रसराम, हरि न भज्यो धरि नेम॥२॥
सबै सयानप सूद्धरै, हरि भजिये करि हेत। हरि न भजै जो प्रसराम, चेतन तऊ अचेत॥३॥
जाणपणू निर्फल सबै, जो हरि नाम न जान। हरि भजि जाणैं प्रसराम, सोई परम सुजान॥४॥
सोइ जाण सुचि सूर प्रिय, हरि रत सुमति अनूप। परसा पंडित कवि गुणी, प्रगट प्रेम कौ रूप॥५॥
प्रेम सहित हरि कौं भजै, सो नर पर्म पुनीत। सोइ सूर जग प्रसराम, प्रभु मिलि रहै अजीति॥६॥

सन्यास विचार कौ जोड़ौ-१८६

सुख न लहै संसौ सदा, संन्यासी सो नांहि। परसा झूठौ भेष धरि, भर्मै भव जल मांहिं॥१॥
परसा जहां न सर दई, तहां न हरि कौ वास। डिंभ बडाई लोभ रत, सो न कछू संन्यास॥२॥
संन्यासी सूधे चले, जाणि बूझि जम लोकि। भगति विमुख पसु प्रसराम, सकै न काहू रोकि॥३॥
हरि सुमरै संसौ तजै, मेटि अवुर की आस। संन्यासी कै प्रसराम, सकल क्रिया को नास॥४॥
तन मन डारै खेह करि, सुभ न अशुभ संभार। मृतक कहावै प्रसराम, जीवत जो निर्भार॥५॥
परसा जो नर सरदई, सब सौं रहै कृपाल। तहीं सदा हरि थिर रहै, निकट न आवै काल॥६॥
अंबर जाकै दिग दिसा, हरि सुमरन संतोष। संन्यासी सो प्रसराम, जाकौ मन निरदोष॥७॥
संन्यासी सुख मैं सदा, निरवैरी निरदोष। परसा खेलैं हरि मिल्यौ, व्यापै हरखि न सोष॥८॥
षट दरसन संसार सब, भाव भगति कौ नास। सबतैं निरमल देखिये, परसराम हरि दास॥६॥
संन्यासी गीता पढ़ै, बांभण वेद पुराण। हरिजन हरि सुमरन पढ़ै, परसा सबै सुजाण॥१०॥

अतीत विस्वा कौ जोड़ौ-१८७

थापणि रहै अतीत की, काहू कै घर नेक। परसा सौ मण दूध मैं, कांजी टपकौ येक॥१॥
बिसवों अंत अतीत को, राख्यो करै विकार। उलटौ काढै प्रसराम, माखी जर्‍यौ अहार॥२॥
परसा परधन जो हरै, दालद्री अवसेखि। प्रगट कहै सव संत मुखि, साखि सुदामा देखि॥३॥
घात पराई प्रसराम, करै सु नरकि समाय। कियो करायो आपकौ, भुगतै जमपुरि जाय॥४॥
अंस परायो प्रसराम, सकल धर्म कौ नास। टपको कांजी कौ करै, सौ मण दूध विणास॥५॥

भगत वंस कौ जोड़ौ-१८८

भगत वंस जन प्रसराम, श्री गुरु श्री हरिव्यास। जाति वरणकुलकरणहार, साखि सदा निजदास॥१॥
जाति भगत गुरु गोत जन, परसा वंस कहाय। खेड़ौ श्री वैकुंठ पुर, देव सदा हरि राय॥२॥
जिनि हम कीने राम जन, सोइ हमारा वंस। यहि बात विचारै परसराम, जाकैं उरि गुर अंस॥३॥
गुरु अंकुस सिरि प्रसराम, ताके सो निजदास। गुरु अंकुस जाके नाहिं, ताहि न हरि की आस॥४॥
गुरु आज्ञा मानै नहीं, ता नर कौं जग कूप। गुरु की आज्ञा प्रसराम, मानैं सो गुरुरुप॥५॥
हरिजन जाति जहीं लगैं, परसराम को वंस। मानैं सोई सत्य करि, जाकै गुरु कौ अंस॥६॥
गुरु जु श्री हरि व्यास देव, पर्म सनेही जाणि। और भगत की प्रसराम, प्रीति न कछू पिछाणि॥७॥
जिनकी संगति सुखभयो, प्रभु सों भई पिछाणी। परम सनेही सत्य करि, परसराम जन जाणि॥८॥
हरि सुमरन माला तिलक, श्री गुरु कौ उपकार। उज्जल बानूं प्रसराम, दीसै अधिक उदार॥६॥
हरि व्यासी हरि सारिखै, हृदै बसै थिर स्वाति। गुरु भगतां जन प्रसराम, कहियत गुरु की जाति॥१०॥

परसराम कहं पाइये, जन हरि की उनहारि। अनिल पंख घर पारि है, पंखी सब वुरवारि॥११॥
अति हित सौं हरिनाम कौ, गावै सबै गिरन्थ। जगत उजागर सब कहै, परसराम को पंथ॥१२॥

वस्तु निआदर कौ जोड़ौ-१८९

परसा आदर वस्तु कौं, दियां सु आदर होय। जाकै वस्त निआदरी, अंति निआदर सोय॥१॥
वस्त अगोचर ग्यान तैं, जोरि न जाणि जाय। सोई जाणै प्रसराम, मिलै वस्त कै भाय॥२॥
वस्त भाव बिनु प्रसराम, रही लाभ कौं राखि। सुर्ग न सरवै नीर कौं, बिनु बादल यहि साखि॥३॥
बादलि बादलि बीजुली, बूंद बूंद जल होय। यों सब मैं हरि प्रसराम, हरि बिन और न कोय॥४॥
नख सिख व्यापक प्रसराम, बसत सकल सामानि। परचै परगट पाइये, कही सुणी सो ग्यानि॥५॥
कियो कुवणिज सुवणिज तजि, हारि गए हरि लाभ। राखि न जाण्यौ प्रसराम, ज्यौं पृथ्वी पण आभ॥६॥

जन जग उलट कौ जोड़ौ-१९०

जल तैं पच्छिम प्रसराम, मीन अपूठौ जाय। उलटो चालै जगत तैं, जन आपणैं सुभाय॥१॥
परसराम संसार कै, पंथि न चालै दास। उलटै पाणी मीन ज्यौं, चढ़ै सुवदि वेसास॥२॥
उलटौ चालै नीर तैं, यहि मीन को सुभाव। भगत जगत तैं प्रसराम, फेरि धरै तो न्याव॥३॥
ज्यौं दीपक कौं देखि करि, तजै पतंग अंधार। त्यौं हरि सों रत प्रसराम, सो त्यागै संसार॥४॥
सो त्यागै संसार कौं, जो हरि सों रत होइ। परसा जो हरि सौं न रत, जग कौं तजै न सोइ॥५॥
नाद लीन मृग प्रसराम, ज्यौं बीसरै सरीर। त्यौं आतम दिष्टि देह दिसि, भूलि मिलै मति धीर॥६॥
सोवै जागणि जगत की, जग सोवणि जन जाग। भगत मतै तह प्रसराम, करै जगत को त्याग॥७॥

निवैर जन कौ जोड़ौ-१९१

जो अपतन की प्रसराम, को जाणैं परबांणि। मन सों मन मानै नहीं, जीव न ब्रह्म पिछांणि॥१॥
करद सुकर की करि बहै, फेरि न वाहै सोय। निरवैरी जन प्रसराम, व्यापक देख्या होय॥२॥
जो अपतन की प्रसराम, का जाणै परपाणि। जाणै सुकर सरीर कौ, दुखसुख लाभ क हांणि॥३॥
हरि सुमरन बिनु प्रसराम, जो करिये सो हांणि। होय नहीं विडहौज तैं, ब्रह्म न जीव पिछांणि॥४॥
वैरि जीभ कै प्रसराम, दांत न खंड्यो जाय। यौं सबतैं निरदोष हो, हरि वरिये अपणाय॥५॥
लगी नैन सों करकली, सा काटणी न जाय। यौं हरि सब मैं प्रसराम, जाण्यौ करै सहाय॥६॥
हरि अपणूं करि जाणिये, लीजै क्यौं न पिछांणि। परसा प्रेरक येक है, तू न और करि जाणि॥७॥
सकल जीवण करणहार, सब मैं रह्यौ समाय। सो हरि हतिये प्रसराम, सेईजै किहिं भाय॥८॥
सकल जीव की प्रसराम, पीड़ एक करि जांणि। करिये जो कछु और कों, सो आपकौं पिछांणी॥९॥
विचरै संगति साध की, भूलि जाय परदोष। विरक्त माया मोह तैं, परसा जन निरदोष॥१०॥

तायो बहु बाज्यौ अधिक, बख्यौ परसा मेह। भू रवि पाणी पवन सौं, करै न वैर सनेह॥११॥
नर तबही निरवैरता, व्यापक देखैं मांहिं। परसा व्यापक दिष्टि बिनु, दोष न कदै दुरांहि॥१२॥
मुकति व्रिकत जो प्रसराम, हरि सेवा सूं दीन। निर्वैरी निहकामता, समदिष्टि ल्यौ लीन॥१३॥
निर्वैरी कै प्रसराम, हरि बिन और न कोय। जा काहु कै वैरता, दूजो देखै सोय॥१४॥

ग्यान प्रकास कौ जोड़ौ-१६२

ग्यान प्रकास्यौ जाणिये, हृदै उजारो होय। हृदै अंधारो प्रसराम, ग्यास प्रकास न कोय॥१॥
ग्यान प्रकास्यै प्रसराम, तहीं ऊजारौ जानि। ग्यान प्रकास जहं नाहीं, तहं समझां की हानि॥२॥
पर्म सुमंगल दुख हरन, बस्यो न हृदै आय। भानु किरन बिनु प्रसराम, निसि अंधकार न जाय॥३॥
जहं हरि प्रगटै प्रसराम, तहं तहं करै प्रकास। सूझै सकल दुरै न कछु, अंधकार कौ नास॥४॥
साखि सीख ज्यौं ऊपजै, परसा ज्ञान प्रकास। औधैं कंवलि कहां फिरै, सदा जगत की आस॥५॥

सबद असह कौ जोड़ौ-१६३

परसा लागी सैल की, नीसरि जाय दुसार। चोट सबद की उरि बसै, सालै सदा प्रहार॥१॥
चोट सबद की प्रसराम, कौन सहै बिन दास। श्रवण सुनत ही जीव कौ, निकसि जाय सुख सास॥२॥
माणस मार्‌यो सबद कौ, जीवै नाहीं कोय। सोइ जीवै प्रसराम, जाकै सिर गुरु होय॥३॥
परसा मार्‌यो सबद कौ, मरै सकल संसार। जीवै कोई हरि भगुत, जो सब तैं निरभार॥४॥

हरि धन कौ जोड़ौ-१६४

दीन्हों लाभैं प्रसराम, वाह्यो लुणिये जाणि। विलै न जाई जीव कौ, जीवे अंति प्रवाणि॥१॥
जितौ जाय दातार कौ, तितौ सूंब को जाय। सूंब अफल जन प्रसराम, दाता सुफल कहाय॥२॥
जो धन आगै पाइये, सो संचिएत लाभ। आगैं फुरै न प्रसराम, सो धन अधन अलाभ॥३॥
परसराम धन कृपण कौ, कीयो वादि विलाय। कीड़ी संचै जतन करि, खणि तीतर चुणि खाय॥४॥
जो धन खातां खरचतां, कबहूं तूटि न जाय। सो धन पायो प्रसराम, बिलसतां न बिहाय॥५॥
जाकै हरिधन प्रसराम, ताकै थोटो नांहि। खरचत खात न खूटई, रहै सदा सुख मांहि॥६॥
जाकौं हरि सिखवैं मतौ, क्यौं सूणै पर सीख। रतन खानि घर प्रसराम, क्यौं मांगै भ्रमि भीख॥७॥
टोटो पापी जीव कै, नहिं हरि कौ वेसास। हरि अटूट धन प्रसराम, पुरवै सबकी आस॥८॥
परसा चिंताहरन हरि, निकट न दूरि विचारि। भूलै क्यौं हरिभगत कौं, सबकौं देत संभारि॥९॥
बुरो भलो कछु प्रसराम, करि लै जिकौ उपाय। तेरो कीयो तोय सूं, करि हैं कैसोराय॥१०॥

हरि निर्वैर कौ जोड़ौ-१६५

मच्छ गलागलि जीव कै, जल कै प्रीति न वैर। निर्वैरी जन प्रसराम, जीव सदा सरवैर॥१॥

परसा रंग सनेह सों, दोष जहां असनेहु। राग रोष बिनु हरि हितू, यहि समझौ सुनि लेहु॥२॥
परसराम निर्भार हरि, जीव सदा सरभार। जीव जलधि उपजै खपै, जल व्यापै न विकार॥३॥
जीव जनम भरि प्रसराम, जिवै सींव की पोष। सींव रहै निरदोष नित, जीव सदा सरदोष॥४॥
परसा माया जीव कौं, सींव भयो विश्राम। सींव निति निहकांमता, जीव सदा सहकाम॥५॥
हरि निर्मल निकलंक जल, जीव सदा सकलंक। परसा पीवै प्रीति करि, लीपै न तहिं कलंक॥६॥
परसा निर्मल साध मैं, मल कछुवै न समाय। बांटी मिश्री छार मिलि, स्वाद मोल सब जाय॥७॥

साध महिमां कौ जोड़ौ-१९६

परसा दरसन साध कै, कियां बहुत उपकार। सर्व धर्म मंजन जु विधि, सर्व धर्म फलसार॥१॥
कलप कोटि केदार वसि, द्वारावति षटमास। परसा कासी कलप भरि, भगत दरस फल तास॥२॥
सोमलिंग सहस्र पूजा, विविध विधि मइ करेउ। सिलासप्त कोटि परसा, तत्फलमेक वैष्णवु॥३॥
परसा दरसण साध कै, करि तीरथ तिरि जांहिं। पावन भुवमंडल सकल, पद विचरत जामांहिं॥४॥
निर्वैरी निरदोष नित, निर्मोहि निहकलंक। ताकै दरसन प्रसराम, कियां कटेहि कलंक॥५॥
जनत सकल सो प्रसराम, जहं कीजै सतसंग। जहं सतसंग न कीजई, तहं लगै न हरि रंग॥६॥
और कर्म भर्मादि को, प्ररसराम निर्धार। करिये सतसंगति भजन, ता मुनि कौ नहिं पार॥७॥
परसा दरसन साध कौ, कीजै जाणि अजाणि। सब तीरथ मंजनहु तैं, अधिक पुन्य फल जाणि॥८॥
एक घड़ी आधी घड़ी, आधी को अधभाग। साध समागम प्रसराम, करिये सो बड़भाग॥९॥
नर देही धरि प्रसराम, हरि भजिये सो लाभ। जबहि बसाय नाहीं कछु, स्वास तजै घर नाभ॥१०॥
पृथ्वी को मल ऊतरै, जो तीरथ जल न्हाय। तीरथ को मल प्रसराम, साध दरसि दुरि जाय॥११॥

हरि वेसास कौ जोड़ौ-१९७

परसा कर्म न आदरै, हरि सुमिरन को दास। भर्मि मरै नहिं आन दिसि, इह हरि कौ वेसास॥१॥
को भर्मै कहुं देस कौं, परसराम बिन आस। हरि मूरति हिर्दै बसै, भजिये हरि बेसास॥२॥
हरि हिरदै थिर प्रसराम, बस्यो रहै अभिराम। सो तजि निर्फल आन दिसि, को भरमैं बेकाम॥३॥
परसराम जो जाणिये, हरि सुमरण सो जाण। सो तजि रसनां आन कौ, कछु करिये न बखाण॥४॥
परसराम रसना सदा, बस्यो रहै हरि नांवु। सो हरि निर्मल नेम धरि, सुमिरौं भूलि न जांवु॥५॥
हरि सुमरन तजि आन दिसि, कौ भर्मै बेकाम। परसा भजिये नेम धरि, प्रेम सहित हरि नाम॥६॥
औखद मूली हरि भजन, सुमिरि सांख हरिनाम। हरन करन हरि प्रसराम, दुख सुख बिथा विराम॥७॥
कहिये जो कहि जाणिये प्रेम, सहित हरि नांवु। भजै अवीसर प्रसराम, ता जन की बलि जांवु॥८॥
कांटै कांटौ प्रसराम, निकसै होई समाधि। मिटै कुबुद्धि सुबुद्धि तैं, हरि निर्मल आराधि॥९॥

आप सुखी तब सब सुखी, दुखी न दीसै कोय। दुख ही मैं सुख प्रसराम, जो हिरदै हरि होय॥१०॥

सुफल भजन कौ जोड़ौ-१९८

परसराम नितिनेम धरि, तू हरि नांव संभारि। अफल वरत तजि आन कौ, सुफल भजन व्रत धारि॥१॥
आन धरम की प्रसराम, कौण करै मनुहारि। हरि अमृतरस प्रेम सों, पीजै किन व्रत धारि॥२॥
हाणि सहै हरि भजन की, जपै आन को जाप। भगति विमुख नर प्रसराम, ताकौं यहै सरांप॥३॥
हरि सुरिरन कौ पण नाहिं, करम करै मन लाय। नरकि पड़ण कौ प्रसराम, यहि जीव कौं उपाय॥४॥
काम नाहिं कछु कर्म सों, हरि सुमिरन सौं काम। जु धर्मनि पौरिस प्रसराम, नाम विमुख वेकाम॥५॥
या मन मैं जो मन बसै, सो याको विश्राम। ताकों तजै न प्रसराम, तहीं राम सौं काम॥६॥
साध समागम प्रसराम, करिये तजि अभिमान। हरि सेवा सुमरन सुफल, जप तप तीरथ दान॥७॥

परम सनेही कौ जोड़ौ-१९९

प्रीतम परम सनेह सौं, बंध्यौ प्रेम कैं ताग। परसराम मिलि बीछुडै, क्यौं न करै अनुराग॥१॥
परसराम जिन मन दिया, मन दे रह्या समाय। सो प्रीतम जो बिछुरे, क्यौं न मरै पछिताय॥२॥
निबह्यो पाणी मीन तन, प्रेम नेम सो नाह। भयो सकल कौ प्रसराम, येक संगि निर्वाह॥३॥
निबह्यो नेम सनेह कौ, परसा भयो न भंग। नीर मीन तन प्रेम रस, गयो एक ही संग॥४॥
ज्यौं पानी बिनु प्रसराम, मीन तलफि मरि जाय। हरि पिव तैं मिलि बीछुरै, जीवै कौण उपाय॥५॥
हरि प्रीतम बिनु प्रसराम, जिवै न हरि लिव लीन। तलफि मरै पलयेक मैं, ज्यौं पाणी बिनु मीन॥६॥

सुर्ग महल कौ जोड़ौ-२००

महल चिणावै सुर्ग लौं, मनि तारा सौं बात। परसा जीव न जाणई, प्रगट काल की घात॥१॥
जीव चलै धर ऊपरै, करै सुर्ग दिस हाथ। परसराम पहुंचै न सो, श्री गुरु संग न साथ॥२॥
परसा थोड़ी जीवणू, मांड्यो बहु मंडाण। हरि बिनु सब निर्फल गये, मीर मिलक सुलतान॥३॥
हाथि न आयो प्रसराम, अब कै जो हरि थोक। हारि गये इहि लोक कूं, अरु खोयो परलोक॥४॥
जीव जतन बहुतैं करैं, तहीं न पहुंचै हाथ। परसराम राखण मतै, राखै अवगति नाथ॥५॥

मन घडयां कौ जोड़ौ-२०१

घटै बधै मन प्रसराम, निसि निसि ज्यौं राकेस। रहै न पूनिम कौ सदा, उभयो एक न वेस॥१॥
परसराम जो पाइये, मन कौ प्रेरक पाखि। ताकौ ताही सौंपिये, मुकत करौ ल्यौ राखि॥२॥
जहं संकलप विकलन बसै, तहीं प्रकास मलीन। परसराम मन चन्द्र ज्यौं, वृद्ध तरुन तन खीन॥३॥
परसा जो निहकलप मन, सो कबहू न मलीन। संतोषी सुख मैं सदा, हरि सुमरै ल्यौ लीन॥४॥
जिनि तनु दीनूं प्रसराम, ताही कौं मन देहु। जो हरि प्रेरक प्रान कौ, सो प्रीतम करि लेहु॥५॥

एकादसी कौ जोड़ौ-२०२

परसा जाकै हरि भजन, ताकै वरत न और। हरि वासर एकादसी, रहै सदा तिहिं ठौर॥१॥
हरि सेवा सुमिरन जहां, तहां न और प्रसंग। परसा एक भलां रहै, एकादसी अभंग॥२॥
बडो वर्त एकादसी, करि जाणै जो कोय। परसा द्वैज न द्वादशी, ताकै कदै न होय॥३॥
एकादसी अपार हरि, परसा पालै संत। ग्यारसि मारी मौठ की, भागी जाय अनंत॥४॥
गिरही कौं ग्यारसी कही, वैरागी कै नांहि। परसा व्रतधर हरि भजै, प्रेम सरोवर मांहि॥५॥
सर्व धर्म कौ तिलक हरि, हिरदै बसै जु आय। पाप हरण कौं प्रसराम, है हरि सों न उपाय॥६॥
परसराम हरि भजन की, प्रगट सुणीजै साखि। अजामेल गनिका गयंद, बूडत लीये राखि॥७॥
सब तजि करिये प्रसराम, हरि नांव कौ बखाण। सो तारै भवसिन्धु तैं, जु जलतारै पषाण॥८॥
परसराम एकादसी, कोटि करै जो कोय। यक प्रसाद के सीत की, सर भरि तऊ न होय॥९॥
पावन व्रत एकादसी, होत सुण्यां हरि नावुं। सो व्रत उरि धरि प्रसराम, करौ सदा बलि जावुं॥१०॥

कुल सार पुजि कौ जोड़ौ-२०३

कस्तूरी कुल प्रसराम, मृगमद परौ विचारि। वह लै तन लेपन कियो, बह वनि दिये विडारि॥१॥
परसा परौ विचारिये, पीपल कौ कुल काग। पीपल पूज्यां फल न कछु, कछु काग सों विभाग॥२॥
लीयो कछु यक प्रसराम, कीयो कछुयक त्याग। दूध दही घृत विलसिये, गउ गात सौं न भाग॥३॥
जो फल जामैं ऊपजै, सो ताको कुल जोय। मथि काठ्या तैं प्रसराम, पावक काठ न होय॥४॥
मधु कुल माखी प्रसराम, डारि दई जहं तोल। माखी सौं कारिज नाहिं, मधु लीनों दै मोल॥५॥
माखी तै मधु ऊपजै, सो दीजै नहि डारि। भगत जनम भवसिंधु तैं, परसा लेहु विचारि॥६॥
साधु सरूप सिला सुफल, सैल सकल बेकाम। परसा देवल देखि सुख, हरि मूरति सौं काम॥७॥
जिहि पानी तैं ऊपज्यो, ताकों देखि घिनात। पलटि भयो नर प्रसराम, सो हरि मांहि समात॥८॥
कुल कारण यौं प्रसराम, हरि कुल सबै अपूजि। जादूं जाति न पूजिये, कृष्ण सबनि कै पूजि॥९॥
पावक उपजै काठ तैं, तजि दीनूं संजोग। परसा पावक पूजिये, काठ न पूजन जोग॥१०॥
परसा तामस साध कौ, ज्यूं दूध कौ उफाण। जलि छांड्यो सीतल भयो, वो गुरु सबदि सिराण॥११॥

जैनी प्रति वुपदेस कौ जोड़ौ-२०४

नव करबाली का जपै, जपिलै हरि कौ जाप। परसा करि मणका बिनां, सुमरि नांव निहपाप॥१॥
निसि वासुर आनन्द मैं, लगी रहै लिवधार। परसा सुमिरन सो सही, जो करिये इकतार॥२॥
अजपा जाप अपार सुख, परसा निज विश्राम। अस्थिर घर आनन्द पद, तहं प्रगटै सो राम॥३॥
सबद अनाहद प्रसराम, सुणिये सहज सुभाय। सोई अजपा जाप है, नख सिख रह्यो समाय॥४॥

भेद रहत निरभेद हरि, छेद रहित निरछेद। परसराम निरवेद हरि, खेद रहित निरखेद॥५॥
दया धर्म तहं हरि बसै, हरि तहं सतु संतोष। सतु तहीं तपु प्रसराम, सुचि सो पावन पोख॥६॥

दासभाव कौ जोड़ौ-२०५

परसा सेवक सो सही, सेवै अंतर खोय। सहै अंगीठी सीस पर, दाझि न दूसर होय॥१॥
दूजो होय न पलटि करि, हरि गुरु धर्म पिछाणि। परसा सेवै नेम धरि, सो निज सेवक जाणि॥२॥
तन मन हरि कै वसि कर्‌यौ, हरि व्रत हरि आराध। औगुण कौ गुण प्रसराम, करि जाण सो साध॥३॥
जाकै पति को वर्त मखि, सेवै धरि वेसास। परसा निवहै येक रस, सो कहिये निजदास॥४॥
सदा एक रस निरवहै, परसराम हरि पीव। परमेसर पलटै नहीं, जब पलटै जब जीव॥५॥
सदा एक रस निरवहै, पलटि न होय दुराज। परसा चढ़ै न ऊतरै, अविचल हरि को राज॥६॥
सेवन कौं हरि सारिखौं, साहिब और न कोय। ताकी छाया प्रसराम, रह्यां बहुत सुख होय॥७॥
परसा प्रभु बिनु और तैं, नर निरवाह न होय। निरबाहन कौं एक हरि, और न दूजा कोय॥८॥
वर्तनि हरि की वर्तिये, रहिये हरि बेसासि। परसा पर हरि और कौं, बसिये हरि कै वासि॥९॥

हरि आकास कौ जोड़ौ-२०६

परसराम आकास कौ, हरि कहिये आकास। सब बाहरि भीतरि बसै, सुहरि सास कौ सास॥१॥
आवै जाय न दूरि रहै, दीसै उग्र अनंत। परसा औसर आस बिनु, अस्थिर आदि न अंत॥२॥
डोलै डिगै न प्रसराम, अस्थिर हरि कौ वास। आवै जाय न वपु धरै, हरि जैसे आकास॥३॥
जाल्यां जलै न जलि गलै, कटै न सो कुमिलाय। सुर्ग एक रस प्रसराम, ऋति आवै फिरि जाय॥४॥
परस। हरि आकास ज्यौं, थिर देखौ किन जागि। लागै लोह न लाकड़ी, पाणी पवन न आगि॥५॥
जामण मरण न औतरण, आवण जाणा नाहिं। परसा पंथ न पंथियां, जन अस्थिर हरि मांहि॥६॥

बाहस बह तै कौ जोड़ौ-२०७

परसा वाहस बहि गयो, कछु करन कौ नाहिं। करणो हो सो लेहु करि, बाहस बहतै मांहि॥१॥
बाहस बहतै हरि भजन, करि लीजै सो लाभ। परसा बाहस वहि गयो, कहं बरिखा बिन आभ॥२॥
बाहस बहि तै हरि भजन, करि लीजै मन लाय। परसा वाहस वह गयो, तब कछुवै न वसाय॥३॥
करि जाण्यां तिन करि लिया, हरि सुमरन सुख माहिं। कंठ गह्यां दुख प्रसराम, कहन सुनन कछु नाहिं॥४॥
कहि जाण्यां तिहिं कहि लिया, हूं ताकी बलि जाउं। परसा अंति न आवई, धरणि धर्‌यां हरि नाउं॥५॥

आप भरोसे कौ जोड़ौ-२०८

परसा पालक सकल कौ, प्रभु सम्रथ सरनाम। उपजावन आलम दुनी, आप भरोसे राम॥१॥
परसा सारै आपकै, सिरजै सिरजनहार। मानस मार्‌यो ममित कौ, मरत वादि ही भार॥२॥

सारो सिरजनहार को, मेरो तेरो नांहिं। परसराम सिर भार लैं, भूंदू बहि बहि जांहिं॥३॥
सीरी सिरजनहार सों, करि जाणैं जो कोय। ताकौ कारिज प्रसराम, सुफल सत्य करि होय॥४॥

गुरु सेवा कौ जोड़ौ-२०९

गुरु गोविंद निवास है, गुरु देवन कौ देव। गुरु अपणै की प्रसराम, मन दै करिये सेव॥१॥
बलिहारी गुरुदेव की, जिन दीनों हरि नांवु। ताकी सरभरि प्रसराम, और नहीं वलि जांवु॥२॥
परसा मानै सत्य करि, गुरु पूज्यां गोविन्द। साखी है या बात कौ, वृंदावन को चन्द॥३॥
सेय सिला द्वादस बरस, गुरु सेवा पल एक। ताहि बराबर प्रसराम, होत न धर्म अनेक॥४॥
जग्य जोग जप कीयो, नहिं तप तीरथ व्रत दान। प्रभु सेयो गुरु प्रसराम, तजि मन कौ अभिमान॥५॥
परसा श्री गुरु समरिये, जिनु दीनो हरि नांवु। जिनि जड़ तैं चेतन कर्‌यो, ता गुरु की बलि जांवु॥६॥
कहां प्रेम वेसास फल, कह बरिखा जल पोष। कहं हरि श्री गुरु प्रसराम, दहण देह के दोष॥७॥
मानैं गुरु को कह्यो तौ, विरम न करि हरि गाय। हरि गायां बिनु प्रसराम, तन मन निर्फल जाय॥८॥
परसा गुरु हरि सारिखौं, जिन दीनू हरि नांवु। ताकी सरभरि दैन कौ, और नहीं वलि जांवु॥९॥
गुरु गंगा जल कलप तरु, निर्मल ज्यौं हरि नांवु। परसा श्री गुरु दरस परि, वार वार बलि जांवु॥१०॥

कलियुग कौ जोड़ौ-२१०

परसा कलियुग दोष निधि, तामैं सुख हरि नांवु। सुमर्‌यां कटै कलंक सब, ता हरि की वलि जांवु॥१॥
कलियुग घोरंधार मैं, सकल धर्म कौ नास। तामैं सुकृत प्रसराम, है हरि को वेसास॥२॥
कलियुग केवल प्रसराम, पर्म पाप कौ निवास। तामैं सुजस महान गुण, बंधकरण मुकतास॥३॥
जुग मांहे जुग प्रसराम, कलु पाप को उपाय। जो वरखै जलसिंधु मैं, सोइ खार ह्वै जाय॥४॥
परसा आगर भगति कौ, भयों भगति अस्थूल। और कलेवर कलु भयो, कलू पाप कौ मूल॥५॥
कलियुग करणामैं कियो, प्रगट पाप कौ ठांव। तामैं पावन प्रसराम, धर्म येक हरि नांव॥६॥
सतजग मैं तप आचरण, त्रेता जुग उपकार। द्वापर पूजा प्रसराम, कलू कीरतन सार॥७॥
धन्य कलू धनि अस्त्रियां, धनि सुद्रा साराध। विस्नु भगति जिन आदरी, परसराम सो साध॥८॥
परसा सतजुग विप्र वदि, त्रेता खत्री जानि। द्वापर तहां वईस गुण, कलियुग सूद्र समानि॥९॥

सखी संवाद कौ जोड़ौ-२११

प्रीतम नैनां निरखिये, तब लग तेरो नाहिं। दूर गयां तैं प्रसराम, बस्यो रहै उरमांहिं॥१॥
प्रीतम नैनां निरखिये, जनम सुफल सो जाणि। प्रगट न दीसै प्रसराम, प्रभु तबही बड़ हाणि॥२॥
प्रीतम देखि न दीसई, दुख तबही सुख नांहिं। सोई अंतर प्रसराम, नैणां मिलि अमिलांहिं॥३॥
नैना जो दीसै नहीं, सो बसै मन मांहि। पिय नैणा थिर प्रसराम, सुख सोई दुख नांहि॥४॥

प्रीतम मिलि बिछुरै नहीं, सोई प्रीति सनेहु। तहां वियोग न प्रसराम, प्रेम सदा सुख लेहु॥५॥
नैणां बस्यौ त का भयो, मन मैं बस्यो न आय। परसा पिय मन मैं बसै, छांडि न कबहुं जाय॥६॥
का जो हरि हिरदै बस्यो, रह्यो सकल भरि पूरि। बिन देख्या दुख प्रसराम, जो नैणां न हजूरि॥७॥
नैनां सों नेड़ौ नहीं, नेडौ जो मन मांहिं। मन की मानैं प्रसराम, प्रभु नैणां की नांहि॥८॥
मन मैं बस्यो त का भयो, दिष्टि न देख्यो जाय। बिन देख्या पिय प्रसराम, मिलै न कबहुं आय॥९॥
जहं तह मिलिबौ दरसिबौ, परचै प्रगट विचारि। बिन परचै पिय प्रसराम, मिलै न बांह पसारि॥१०॥
नैनां मिलै सुमन मिलै, समुझि सखी सो ग्यान। मन मैं बस्यो न प्रसराम, बिनु दरसन सो ध्यान ॥११॥
हरि हरिदै भीतरि बस्यौ, रहै सदा सो प्रेम। देखि न दीसै प्रसराम, प्रगट विरह कौ नेम॥१२॥
नैनां बसै न मनि वसै, परसा कहूं अभागी। हरि दरसन बिन हे सखी, क्यौं जीवैं कहं लागि॥१३॥
जिनि चाख्यो सौ जानि है, प्रेम विरह को स्वाद। प्रगट कहै सुनि प्रसराम, समझि सखी संवाद ॥१४॥
विरह प्रेम अंतर न कछु, दउं कौ येकै नेम। परसा बिछुरि विरह कियो, मिलि कीनो हरि प्रेम॥१५॥
विरह बेलि कै प्रेम फल, विरह भयो तहं लागि। साखि उजागर प्रसराम, हं धुआं तहं आगि ॥१६॥
लग्यौ प्रेम कै भगतिफल, विरहि लग्यो वैरागि। परसराम प्रभु कै निमति, दोऊ देखौ जागि॥१७॥
बिलख बदन हरि विरह तैं, हरो होत हरि प्रेम। परसा जिमि सूकी हरी, किरषि नीर कै नेम॥१८॥
परसा न्यारो एक पल, पिय नैंना वैं नांहिं। जदपि नैनां तैं दुरै, आय बसै मन मांहिं॥१९॥
प्रीतम दीसै प्रसराम, नैनां जब निज नाह। होसी तबही हे सखी, मनि आनन्द उछाह॥२०॥
श्रवनि सुने जलि प्रसराम, प्यास न कदे दुराय। पीयां तैं सुख ऊपजै, बिनु पीयां मरि जाय॥२१॥
देख्या सुण्यां न सुख लहै, कलपि मरै दुखमांहि। जो पीयां सुख प्रसराम, सो प्यासै कौं नांहि॥२२॥
देख्यां प्यास मिटै नहीं, बिनु पानी की पोष। पीयां जीवै प्रसराम, उपजै मनि संतोष॥२३॥
बिन देख्यां तै अधिक दुख, देख्यां तै सुखनांहिं। परसा सरक सनेह की, सालै माहे मांहि॥२४॥
विधु वासी आकास कौ, मुकुद वसै जल मांहिं। परसा परम सनेह तैं, उभै सुमिल दरसाहिं॥२५॥
हरि दरसन सुख प्रसराम, तन मन रह्यौ समाय। मूंक स्वाद मिष्ठांन कौ, पायौ कह्यौ समाय॥२६॥
बैंन मिलै हरि वैंन सों, नैणां सौं हरि नैण। परसा अंतर मिटि गयो, आय मिलै हरि सैण॥२७॥

गरुवा तन कौ जोड़ौ-२१२

खारी मीठी प्रसराम, सलिता सब जा मांहिं। गरुवा तन बदि सिंधु कौ, जामैं सबै समांहि॥१॥
दिष्टक दीसै प्रसराम, उपजि बसै जा मांहिं। गरुवो अति गंभीर हरि, जामै सबै समांहि॥२॥
गुन औगुन मानै नहीं, दुख सुख सोच सरीर। सब काहू तैं प्रसराम, भोमि बड़ी गंभीर॥३॥
सीत उष्ण बरिखा बिहंग, भै भू सदा निवास। तरुवर गरुवा प्रसराम, सहै सकल की भास॥४॥

गरुवा तन गंभीरता, परसा गहै सुजान। जन जन कौं अंतर दियां, अंति विगूचे प्रान॥५॥
काठ लोह कौं प्रसराम, सोई लियै तिरै कहिकाज। हरि अपणैं उपकार कौं, तुमहिं हमारी लाज॥६॥
पाणी तारै काठ कौं, बूडि न लेत बराज। परसा अपणैं किये कियों, बड़ै निबाहैं लाज॥७॥
तेरैं हमसे बहुत हैं, मेरे तुम हरि एक। परसा प्रभु या बात कै, साखी संत अनेक॥८॥

अज्ञानता कौ जोड़ौ-१२३

ग्यान कथ्यो तौ का सर्‌यौ, जो न गयौ अग्यान। पाणी मांहे प्रसराम, ज्यौं बगु मांडै ध्यान॥१॥
बगुलै उज्जल तनु धर्‌यौ, मिलि सेयो जल संग। रहै न करतौ प्रसराम, मन पापी बहुरंग॥२॥
विसहर त्यागैं कांचली, विष कौं त्यागै नांहि। दारुणि दोष असाध कै, परसा थिर मन मांहि॥३॥
सर्प सिंघ की वैरता, परसा निघटै नांहिं। मूंवा मिटै न जीवतां, वसी रहै ता मांहिं॥४॥
निरमोही अहि सारिखौ, और न सूझै कोय। परसा विषै विकार कौं, पल भरि तजै न सोय॥५॥
बोध वंस की नालि मैं, परसा राख्या पोय। मन कूकर के पूंछ ज्यौं, सूधौ कदै न होय॥६॥
परसा कडई तूंबडी, तीरथ कीए सोधि। तज्यो न कडवापन तऊ, मिलि पेठै परमोधि॥७॥
एक सिंध मनु प्रसराम, रहै बहुत बघबाल। जाकूं दीजै सो मरै, मिटै न कबहूं काल॥८॥
परसा तीरथ तूंबड़ी, न्हाई रही सरवार। मीठी होय सकी नहीं, तजि मन कौ ब्यौहार॥९॥
मुकताहल पायनि मलै, यहि जीव को सुभाव। वुगलो वीणै मच्छिका, परसराम सो न्याव॥१०॥
अति सुन्दर पंखी सवै, मिले सरोवर जोय। परसा मोती हंस बिनु, चुगि जाणै नहिं कोय॥११॥
भूंड भंवर यक सारिखा, उड़त न दोय दिखांहि। परसा भंवर सुवास रत, भूंड मिलै मल मांहिं॥१२॥
परसा निति प्रकास है, रवि दीपक ज्यौं ग्यान। कहै सुणै तब लगि सुखी, बहुरि उदै अग्यान॥१३॥

गाफिल सीख कौ जोड़ौ-२१४

साईं सिर ऊपरि बसे, करि तांकी कछु काणि। परसा तजि गाफिल पणो, हरि भजि भै उर आणि॥१॥
भै धरि उरि भगवंत कौं, भजि सोई निरभार। परसा गाफिल भै विनां, सो खासी सिरभार॥२॥
स्वामि धर्म थिर राखि धरि, दूजा देह बहाइ। जिनि तू कीया प्रसराम, सो उर आणि बसाइ॥३॥
कै बांटै केबू बंटै, मिटै न खेंचांताणि। अंति समझि बिनु प्रसराम, घरि होसी हरि हाणि॥४॥

सतसंग बेसास कौ जोड़ौ-१२५

मथुरा बद्री द्वारिका, जावै श्री जगनाथि। सतसंगति बिनु प्रसराम, भगति न आवै हाथि॥१॥
कासी जाह वणारसी, गंगा गया पिरागि। संतसंगति बिनु प्रसराम, मिटै न आसा आगि॥२॥
कइ तीरथ कइ व्रत करै, तप साधन करांहिं। परसराम कै हरि बिनां, और ठौर को नांहि॥३॥
मेरे मन मैं और कों, हरि बिनु ठाहर नांहिं। परसा राम न बीसरू, घर बाहरि बन मांहिं॥४॥

तप तीरथ व्रत जोग जगि, साधनादि सतकर्म। हरि भजि जाण्यो प्रसराम, तिन साधे सब धर्म ॥५॥
हरि तीरथ बड़ प्रसराम, सब तीरथ जामांहिं। पीवै नित पावन रहै, हरि जलि मलि मलि न्हाहिं ॥६॥
तीर्थ कौ तीर्थ हरि भजन, जाणै संत सुजाण। परसा और न जाणई, मन मलीण अणजाण ॥७॥
हरि पद पावन प्रसराम, को जन जानै स्वाद। जग पावन गंगा करै, हरि पद कौ परसाद ॥८॥
पदरज पावन सब कहैं, रघुपति द्वार अपार। तिरी अहल्या प्रसराम, साखी सब संसार ॥९॥

जनरक्षा कौ जोड़ौ-२१६

जन की रछ्या करण कौं, है समरथ गोपाल। जहं जिनि सुमर्‍यौ प्रसराम, सु भयो तहिं रछिपाल ॥१॥
दुष्टकर्म दुरजन किये, कैरूं सभा तहींर। प्रगट भये तहं प्रसराम, प्रभु पूरन कौं चीर ॥२॥
परसराम प्रभु पूरिये, चीर अमोध असंध। तऊ सुनृप चेत्यो नहीं, रह्यौ अंध कौ अंध ॥३॥
परसा प्रभु बिन दास की, को राखन कौं लाज। रूप धर्‍यो प्रभु चीर कौ, पंडवधू कै काज ॥४॥
अंबरीष की प्रसराम, हरि कीनी रखवार। चक्र सुदर्शन लै भयो, दुर्वासा की लार ॥५॥
हरि आये वैकुंठ तैं, आतुर गज की वार। सो हरि अब है प्रसराम, हमकूं राखणहार ॥६॥
परसराम अर्जुन करण, रिण बाजै बल वीर। हरि भारथ मैं चित करे, पांडु वधू के चीर ॥७॥
दीनबंधु दुख हरन हरि, असरन सरन सहाय। ऐसें प्रभु कौं प्रसराम, भजै सु क्यौं पछिताय ॥८॥
परसा आयों करण कै, जांचन आप अनंत। द्रोवे चीर गह्यां हस्यौ, तौ तोड़े हरि दंत ॥९॥
दोषी दुसासन हयौ, परसा अवगति नाथ। भुजा उपाड़ी मूल तैं, चीर छुयो जिहिं हाथ ॥१०॥
अरु भारथ मैं ऊबरे, क्यौं आये नहिं हाथि। परसा अति सनेह करि, हरि राखै अपणैं साथि ॥११॥
क्यौं कैरूं दल निर्दलै, अरु पंडु रहै अमार। मनहिं बिचारत प्रसराम, दुरजोधन से जार ॥१२॥

अकल ब्रह्म कौ जोड़ौ-२१७

वाथ भरै को स्वर्ग कौं, जो जाणै भुव भार। परसा प्रभु की को लखै, जा गति वार न पार ॥१॥
मुख बोलै पायन चलै, प्रगट्यौ दुर्‍यौ दिखाय। परसा मारग मीन कौ, जल मैं लख्यो न जाय ॥२॥
नखसिख व्यापक प्रसराम, हरि कहिये अगमंथ। सोध्या सुर्ग न पाइये, ज्यौं पंखी कौ पंथ ॥३॥
निर्मल हू तैं नृमलो, हरि झीणैं तैं झीण। सूक्ष्मि तैं सूक्ष्मि सु हरि, परसा जन तालीण ॥४॥
हरि ऊचो आकास तैं, परसा चढ़ि पद पद। जगत कर्मधर धूरि ज्यौं लिपै न कबहूं इंद ॥५॥
ताकि न संका स्वान की, जो चढ़ि गयो गयंद। परसा जन भवदोष तैं, राखि लिये गोविंद ॥६॥
सांई सब मैं सारिखौ, रह्यौ सकल भरि पूरि। परसा प्रभु देखै सुणै, है हाजिर पैं दूरि ॥७॥
पाप हरण हरि प्रसराम, निर्मल करण सरीर। मलसोखन माहीं बसै, ज्यौं भुव भीतर नीर ॥८॥
परसराम बन भोमि कै, पात पवनि मिलि जाहिं। पाप सकल हरि भजन तैं, सुमिरत सुणत विलाहिं ॥९॥

साखि प्रगट सुणि प्रसराम, कहत निगम निजसंत। कहै सुणै कौ अंत है, हरि कौं आदि नअंत॥१०॥
पार ब्रह्म की प्रसराम, को जाणै गति काय। क्यौं ही करतौ क्यौं करै, सो गति लखी न जाय॥११॥

प्राण अस्थिर कौ जौड़ौ-१२८

आवै जाइ न प्रसराम, उपजै सहजि समांहि। प्रगट मरण को रूप है, जो दीसै सो नांहि॥१॥
रूप रूप तैं ऊपज्यौ, लाग्यो रूप कौं धाय। दुख ही मैं दुख प्रसराम, रूप रूप कौं खाय॥२॥
माटी सौं माटी मिली, मिल्यौ पवण सों पौन। जोति समानी जोति मैं, परसा मरै सु कौन॥३॥
रूप अरुपहिं मिलि गयो, मिल्यो सबद मैं नांव। सबद स्वास मैं प्रसराम, स्वास नाभ सों ठांव॥४॥
हरि तन मैं तन मिलि रह्यौ, मनु बाहरि मन मांहिं। ज्योति मिली हरि जोति मैं, परसा जन जस मांहिं॥५॥
केई जनमैं कइ मरै, परसा जीव अनेक। येक मुवां तैं सब सरै, तौ जाणिये जु येक॥६॥
प्रगट मरण कौं रूप है, जीवन कौं जगदीस। परसा जामण मरण दोइ, जीव एक जम वीस॥७॥
कहं तैं आवै जाय कहं, ताहि त जाणै कोय। परसा आवै जाइ को, सो कहिं प्रगट न होय॥८॥
परसा जामण मरण है, आवागवण न होय। बात वहां की जाय कैं, आय कहै नहिं कोय॥९॥
आवत जात न जाणिये, उपजै खपै विलाय। बात वहां की प्रसराम, इहां कहै नहिं आय॥१०॥
जामैं उपजै तहीं बसै, जल तरंग जल मांहि। परसा आवण जाण की, समुझि परै कछु नांहि॥११॥

बैर सनेह कौ जोड़ौ-२१९

वकी पयोधर प्रसराम, जहर दियो अरि हेत। हरि परसत पावन भई, पहुंची परम सुखेत॥१॥
प्रीति वैरि हरि मनि वसै, दुहुं बात निस्तार। परसा प्रीति सनेह तैं, वैर सनेह सिंगार॥२॥
वैरि भाइ हरि घरि मिलै, पठवै प्रीति विवांन। क्रिया क्रोध पर प्रसराम, प्रभु कौ येक समान॥३॥
हरि सनेह तैं गज तिर्‌यौ, गज सनेह तैं ग्राह। हरि कै वैर सनेह तैं, परसाराम निर्वाह॥४॥
परसा वैर सनेह दोय, हरि एकै फल येह। हरिनाकुस प्रह्लाद की, साखि प्रगट सुनि लेह॥५॥
भज्यो जसोदा देवकी, वकी लियो उरि लाय। परसा सबकौं येक हरि, भाव भिन्न दरसाय॥६॥
परसराम बहु सासनां, जाहि दई बेकाज। सर्‌यौ तहीं सत संग तैं, हिरणाकुस कौ काज॥७॥
वकी जसोदा देवकी, जिनि सुमर्‌यौ जिहि टेक। हरि तिन तिनकौ प्रसराम, करि दीन्हीं गति एक॥८॥

मन मेलू कौ जोड़ौ-२२०

मन मेलू मन सारिखौ, मिलै न होय समाधि। परसा भजिये एक हरि, तजि दूसरी उपाधि॥१॥
परसराम चित सारिखौ, चेलौ मिलै न कोय। जासूं मिलि सुख पाइये, फिरि दूसरो न होय॥२॥
भाई मिलै न भाव सौं, मिलि रहिये जा जंग। बहु अमिल रहै प्रसराम, मिलै तऊ चित भंग॥३॥

आसै कौ जोड़ौ-२२१

आसै जहं कहं जीव कौ, तहं जीव को निवास। होसी जब तब प्रसराम, जाणि तहीं तहिं वास॥१॥
परसा वीरज रज मिलै, सौ जनमैं तहं ठौर। वीरज रज परसैं नही, ताकी गति कछु और॥२॥
परसा जामण मरण कौं, घर दिल मैं दरसाय। जहीं कलपना जीव की, रहसी तहीं समाय॥३॥

उज्जल मैल विचार कौ जोड़ौ-२२२

परसा बाजै सारिखौ, वाणी गुण व्यौहार। यक दर्पण दो दीसई, उज्जल मैल विचार॥१॥
परसा सबद विचारिये, सुनिये सुकृत सांच। येकैं आधि न विणजिये, समुझि कनक अरु कांच॥२॥
परसा घड़े कुलाल कै, गांठि न बांधै कोय। फिरि आवैं सौ कोस तैं, भूयां विणज न होय॥३॥
काम न आवै प्रसराम, खोटा मांहिं कथीर। हाथि न लेई पारखू, बणिज न चलै अधीर॥४॥
कै वांया कै दाहिणां, बोलै बारूंवार। परसा हरि न विसारिये, सब कौ सिरजन हार॥५॥

हरि सुहाग कौ जोड़ौ-२२३

सुखी सुहागी आतमां, जाकै वसि हरि पीव। परसा जे हरि पीव बिनु, दुखी कुहागी जीव॥१॥
सदा कुहागणि दुख सहै, सोहागणि सुख देखि। परसा पिव वसि प्रिया कै, सो लाड़िली बिसेखि॥२॥
दुखी दुहागी जीव जड़, सहै न सांच सुहाग। परसा सांच सुहाग बिनु, सुबतहु नष्ट निरभाग॥३॥
वैर करै संसार सब, साधैं सहै न कोय। परसा साधैं सो सहै, जग परहरि जन होय॥४॥
कहा सरै काहु और तैं, सिरि ऊपरि बड़राज। परसराम प्रभुदास कै, हरि सारन सबकाज॥५॥
जा काहू कौं हरिथपै, तहिं ऊथपै न और। परसा थापी और की, हरि मेटण सा ठौर॥६॥
जाकों हरि आपण थपै, ताहि अथपै न और। परसराम प्रल्हाद की, साखि सकल सिरमौर॥७॥

चात्रिग चिंता उदास कौ जोड़ौ-२२४

घण घोरै दामणि खिवै, चात्रिग चिन्ता उदास। सर भरिये सलिता बहै, परसा मिटै न प्यास॥१॥
घण घोरै दामणि घिवै, बोलै चात्रिग मोर। परसराम प्रभु कब मिलै, नागर नन्द किसोर॥२॥
बोलै चात्रिग मोर बन, घण गरजत ऋतु राज। बरखत पावस प्रसराम, हरि सुनि सहित अवाज॥३॥
परसा ऋति पिव पिव करै, पिक चात्रक निसकाल। कैसें करि सहिये सखी, हरि सनेह सौं साल॥४॥
कछु दोस न मोरां दादुरां, इसौ हमारौ भागि। परसा दामनि सिखर गुनि, हम न रही हरि लागि॥५॥

पावक मथि काढ्यां कौ जोड़ौ-२२५

पावक मथि कढ्यौ करै, तहं काठ को विणास। यौं हरि प्रगट्यौ प्रसराम, करै कर्म को नास॥१॥
जल कसरायल काठ मैं, पावक प्रगट न होय। परसा कर्म सु मिलत नर, गये नांव निधि खोय॥२॥
कर्म करौ को प्रसराम, को सुमिरौ हरि नांव। मारग जाकै चालियै, सोई आवै गांव॥३॥

आडो आवै प्रसराम, कीयो विलै न जाय। जो तरवर सेवै जिसौ, सौ तिस्यौ फल खाय॥४॥

संसार विवचार कौ जोड़ौ-२२६

जलज न मानैं प्रसराम, जल जीवन उपकार। रवि देख्यां विकसै कमल, यहै बहुत विवचार॥१॥
जिनि हरि सिरजे प्रसराम, ता हरि सौं न सनेहु। प्रीति करै संसार सौं, विभचारी सुण लेहु॥२॥
नेम गह्यो जग जार सौं, परहरि हरि भरतार। ता कलंक कौ प्रसराम, सूझै वार न पार॥३॥
अंतर खोलै जार सौं, कहै गूढ की बात। परसा पति सौं रूसणों, काहै की कुसलात॥४॥
परसा त्रिय पतिवरत बिनु, विवचारणी कहाय। नाक विहूणा जीवणूं, मरसी कुलहिं लजाय॥५॥
जन विचरत भवसिंधु मैं, परहरि खारो नीर। परसा सींगी मछ ज्यौं, पीवत मीठी सीर॥६॥

पंखी परलोक कौ जोड़ौ-२२७

हम पंखी परलोक कै, जहं अस्थिर घर विश्राम। तहां वसै हरि प्रसराम, अविनासी अभिराम॥१॥
कदै न व्यापै काल झल, जे मिलिये हरिमांहि। पंखी सुरग मिलि प्रसराम, सदा सुखी दुख नाहिं॥२॥
परसा उपजै अधर मैं, भोमि वसै नहिं आय। पाचै फूटै पर लहै, उलटि बसै तहं जाय॥३॥
सोच पोच संसार गुण, इत उत आवंण जाण। परसा मिटसी हरि मिल्यां, दुख सुख पंथ पयाण॥४॥
हरि अस्थिर आकास तैं, ऊंचो अति असमान। सोई पहुंचै प्रसराम, पावै प्रेम विवांन॥५॥
वपु धरि धरि बहु उडि गये, ब्रह्म विरख के पात। परसा प्रभु निहचल सदा, हरि नाथन कै नाथ॥६॥

पहू पराग कौ जोड़ौ-२२८

परसा पहुप पराग बिनु, फूले तउ कछु नांहिं। नर वै हरि भगति बिनु, तन धरि वादि विलांहिं॥१॥
परसराम जो हरि भजै, सो नर नांव अनूप। हरि बिन नर सोभै यसो, जिसौ भोमि बिनु भूप॥२॥
प्रिया न सोभै पीव बिनु, अबल नांव जग मांहि। हरि सुमरन बिनु प्रसराम, नर कौं सोभा नांहि॥३॥
परसराम सोभै नहीं, सूंढि बिनां दंतूस। नर नारी हरि भगति बिनु, निर्फल ज्यौं जल ऊस॥४॥
नाक बिहूंणी नायका, करि खोयो सिंगार। हरि सुमरन बिनु प्रसराम, मिथ्या नर औतार॥५॥
नर कौं सोभा प्रसराम, हरि सुमिरै इकतार। हरि बिनु नर सोभै इसौ, जु नाक बिना सिंगार॥६॥
हरि भजि जाणै प्रसराम, नर ऊंचौ तैं ऊंच। जो न भजै हरिनाम कौं, सो नीचा तैं नीच॥७॥
जीव जूणि मैं प्रसराम, अति आदर अधिकार। नर सोभै हरि भगति बिनु, नाक बिना सिंगार॥८॥

ब्रह्म औतार कौ जोड़ौ-२२९

ब्रह्म न जाहूं प्रसराम, जाहूं कृष्ण कहांहिं। जग मंडलि रवि किरण ज्यौं, उपजि बसै जामाहिं॥१॥
उपजै रूप अरूप तैं, फिर ताहीं मद्धि समाय। भोमि नीर ज्यौं प्रसराम, खणि काढ्यौ तहं जाय॥२॥
हरि अदिष्ट महिं प्रसराम, दिष्टक सबै समांहिं। दीसै अगनि पतंग ज्यौं, ताकी ताहीं मांहिं॥३॥

परसराम हरि येक तैं, और न कदै कहाय। हंस पुरुष तन त्रिय तजि, हंसनि कही न जाय॥४॥
निराकार आकार कौ, मूल सुनु मन लाय। ता अबगति गति प्रसराम, पढ़ि गुणि लखी न जाय॥५॥
वाथ भरै को स्वर्ग कौं, को जाणै भुवभार। परसा प्रभु की को लखै, जा गति वार न पार॥६॥
हारे बहुत गिरंथ गुणि, सेस न पावहिं पार। आदि अंत बिनु प्रसराम, हरि सुख सिंधु अपार॥७॥
परसा जाकै सहस मुख, रसना दोय सहंस। सुमरै नांव नवै नवै, सौ न भयो निरसंस॥८॥
आदि न जाणैं अंत कौ, अंतक भूलौ आदि। हरि अलेख कौ प्रसराम, लेखौ करै सुवादि॥९॥
निराकार आकार कौ, मूल सबै सुनि लेहु। परसा दामनि सिखर मंहि, उपजि वसै सो गेहु॥१०॥
सदा निरंजन थिर रहै, अजंन आवै जाय। परसा नीर तरंग ज्यौं, उपजै तहीं समाय॥११॥
हरि अदिष्ट तैं प्रसराम, दिष्टक न्यारो नाहिं। जैसें को तैसों दरस, दीसै दरपन माँहि॥१२॥
आदि पुरख बिनु को नहीं, न को अंति उनहार। हरि अपार कौ प्रसराम, को पावन कौं पार॥१३॥
अगम अगोचर निगम तैं, गावत बहुत बनाय। ता अविगत गति प्रसराम, पढि गुणि लखी न जाय॥१४॥
परसा झालरि ताल सुर, उपजै तहीं समाय। ठाहर आंवण जाण कौं, दुती न कहुं दरसाय॥१५॥
सिंधु एक हरि प्रसराम, बहु तरंग अवतार। भिन्न भाव जल कैं लौं नही, हरि कौ इहै विचार॥१६॥
सुर्ग सिखर लौं निरबहै, ब्रह्म कर्म आधीन। ज्यों विवोमघर प्रसराम, यौं व्यापक वपु लीन॥१७॥
तरुवर दीसै दूर तै, छाया दीसै नाहिं। निकट गयां तैं प्रसराम, बसिवो छाया मांहिं॥१८॥
तरवर छाया नाम दो, पैं सुमिलत दरसाय। परसा तरवर फल सकति, न्यारी कही न जाय॥१९॥
लरड़ि येक दो लोवड़ी, परसा परौ सभारि। आगै पाछै दुहुन मैं, घर कवण कौ विचारि॥२०॥
हरि दरिया थिर प्रसराम, पूरण ब्रह्म अभंग। ताही मैं ऊपजै खपै, आवै जाहि तरंग॥२१॥
जाकौं दरसै प्रसराम, हरि सुख सिंधु हजूरि। दास कहूं यक पाइये, राम रह्यो भरपूरि॥२२॥
फल मैं वीरज प्रसराम, वीरज मैं अंकूर। विस्तार सवै अंकूर मैं, सब मैं हरि को नूर॥२३॥
परसराम हरि पाइये, जो भजिये भै जागि। प्रगटे रवि सनमुख भयां, ज्यौं आरी सौं आगि॥२४॥

सतसंग गुण कौ जोड़ौ-२३०

सतसंगति ज्यौं सुरसरि, कलि मल डारै धोय। जहं तहूं कौ परसराम, जलमिलि पावन होय॥१॥
जहां तहां की पंथरज, साध चरन लपटाय। सोइ पावन परसराम, लीजै सीस चढाय॥२॥
सब सुख तैं सत संग सुख, करत कर्म को नास। परसा पाणी पै मिल्यौ, पलटि गयो लगि पास॥३॥
भगति प्रगट सतसंग तैं, उपजै हरि अंकूर। परसा संगति केलि की, जल तैं भयो कपूर॥४॥
सतसंगति मिलि प्रसराम, तन मन प्राण प्रचंड। भीमसैनि भ्यो गरल तैं, परसत ही श्रीखंड॥५॥
परसराम सतसंग मिलि, मनि पाई माहीति। दुख सुख जामण मरण गुण, आवण जाण सुरीति॥६॥

पावन भुव मंडल नयर, नांव ग्राम तन सेण। तीरथ पावन प्रसराम, हरिजन की पदरेण॥७॥
भगति प्रगट सतसंग तैं, मथन कियां तैं आगि। और जतन तैं प्रसराम, जोति न ऊठै जागि॥८॥
मंदिर मैं दीपक धर्‌यौ, करै तिमिर को नास। यौं घट मैं हरि प्रसराम, प्रगट्‌यौ करै प्रकास॥९॥

ग्यान कर्म हर कौ जोड़ौ-२३१

हरि आगम सुनि प्रसराम, चालै कर्म रिसाय। आये चूरि अनारि के, गये दूध सु खिसाय॥१॥
कर्म करत गुरु कृपा तैं, उपज्यौं ग्यान प्रकास। परसा ग्यान प्रकास तैं, भयो कर्म को नास॥२॥
परसराम हरि गुरु कृपा, मान लई मन जोरि। उपजी भगति अपार की, डारै कर्म कडोरि॥३॥
परसा ग्यान प्रकास तैं, परिग्यौ कर्म मलीन। उपज्यौ मंगल भगति फल, ग्यान पहुप बलहीन॥४॥
परसा फूलै फल निमति, द्रुम बेली वन बाग। फल उपज्यां तैं सहज ही, भयो पहुप को त्याग॥५॥
परसराम जो हरि भजै, निंदै कर्म निसंक। बैठो कुंभ गयंद पै, तही न स्वान की संक॥६॥
जो परसा करनी तजै, हरि करनी आधीन। आवै जाय न प्रसराम, रहै ब्रह्म सों लीन॥७॥
ग्यान कर्म दो प्रसराम, झूंठ सांच हरि नांवु। हरि सुमरन सबको तिलक, निरवाहूं वलि जांवुं॥८॥
परसराम जो हरि भजै, सो हरि मांहि समाय। हरि तजि भर्मै आन दिस, सो निर्फल बहि जाय॥९॥
परसा परसत पवन कैं, ज्यौं पादिप मरि जाय। हरि सुमिरन सुनि ग्यान ल्यौ, अंति मलीन मुरझाय॥१०॥

हरिनाम नेम कौ जोड़ौ-२३२

हम लागै हरि नांव सौं, सोइ हमारौ नेम। हरि अमृत रस प्रसराम, मन पीवत सौं प्रेम॥१॥
जो हम सों लागो रहै, हम लागे तहिं नाथि। सो हरि अबु तो प्रसराम, सदा हमारै साथि ॥२॥
जो हरि जाणै प्रसराम, जन जाणिये जु होइ। रहै न छानूं जगत मैं, भगत कहै सब कोइ ॥३॥
गिल्यो कपूर दुराय कैं, अथवा ह्लसण ह्लकोय। परसराम उदयार मिलि, छानूं रहै न सोय॥४॥
हरि जाणै सो जाणिये, जो हरि जाण्या जाय। हरि गावै सो गाइये, परसा समुझि सुगाय॥५॥
परसराम जो हरि भजै, हरि ताहि निरवाहि। जो हरि कौं न बिसारई, हरि न विसरै ताहि॥६॥
हरि अमृत रस प्रसराम, वरि वारिनी अविकार। पीयो दुरै नाहि कदै, जब आवै उदगार॥७॥

निर्फल अहं कौ जोड़ौ-२३३

विमुख भयो बलिराम तैं, सूत बिना सतकार। अंह मेव तैं प्रसराम, उपज्यौं अंति विकार॥१॥
बात उजागर प्रसराम, जाणैं सब संसार। एक अहं तै सब गयो, ग्यान विवेक विचार॥२॥
विणसि गयो अभिमान तैं, रावण राज विसेखि। अंति अहं तैं प्रसराम, कारज सरयौ न देखि ॥३॥
प्रगट सकति रघुनाथ की, रावण मानी नांहिं। हरि दोषी नर परसराम, हरि जन कौं न पत्यांहिं॥४॥
परसा पापी प्राण कौं, सूझै लाभ न हाणि। हरि परचौ प्रल्हाद फल, दैत न सक्यौ पिछाणि॥५॥

लाख रूप मोहनि करै, दुरीयोधन कै द्वारि। पतित न पिछाण्यो प्रसराम, इहै दुष्ट उनहारि॥६॥
परसा पूरै को करै, होउ हीण मन मांहिं। तोल बरावरि घूंघची, मोल बराबर नांहिं॥७॥
पूरो लोचन हीन कौं, परसा पंकै नांहि। अंजन दै सरभर कियो, सूझै कछु न मांहिं॥८॥

अंतरि कुबुधि कौ जोड़ौ-२३४

परसा वोछी और की, कहै सु वोछौ होय। पूरौ पूरी ही कहै, यहि समझौ सब कोय॥१॥
जाकै जैसो होय कछु, तन मन भीतरि भाव। ताहि तिसौ फल प्रसराम, देसी त्रिभुवन राव॥२॥
जैसा कोई करै कछु, तैसा दूरि न होइ। अपना किया प्रसराम, पावैगा सब कोइ॥३॥
बात पराई प्रसराम, मेरी कहै बलाय। घर ही की भारी पड़ी, सो न संबारी जाय॥४॥
कहिये झूठ बनाय बहु, परसा सांच ल्हकोय। फलसी अंतहकरन की, जाकै जैसी होय॥५॥

दिल खोज्यां कौ जोड़ौ-२३५

खरौ पुकारो सुर्ग चढि, साहिब सूझै नांहि। सूझै जाकौं प्रसराम, खोजै जे दिल मांहि॥१॥
अपणा दिल मैं प्रसराम, सूझ्यो नाहीं सींव। बंदी खाने पड़िगये, ग्यान सहित पसु जीव॥२॥
दिल दरिया दीदार मैं, रह्या सकल भरिपूरि। परसा खोज्यां निकट है, बिन खोज्यां तैं दूरि॥३॥
जिन पर कृपा कृपाल की, सो उवरे दुइ चारि। बहुत गये बहि प्रसराम, भगति धर्म कौं हारि॥४॥
दूरि कहै सो दूर है, ताकौं नेरो नांहिं। नेरौ ताकौं प्रसराम, जो देखै दिल मांहिं॥५॥
मुख बोलै पांयनि चलै, देखै सुणै हजूरि। नखसिख व्यापक प्रसराम, हरि कहिये क्यौं दूरि॥६॥
नैड़ौ दूरि न देखिये, समुझि सुणौं यहि सीख। तन मन खोज्यां पाइये, परसा राम नजीक॥७॥
परमातम गुण प्रसराम, आतम तैं नहिं दूरि। आतम खोज्यां पाइये, परमातमा हजूरि॥८॥

मनसा मिसि मिलि कौ जोड़ौ-२३६

अपणैं मन कूं प्रसराम, राखैं रहै हजूरि। मनसा कूं बिसि मिलि करै, भिस्ति निकट नहिं दूरि॥१॥
मन की मनसा प्रसराम, जान न देई दूरि। मन साहिब कौं सौंपिये, साहिब सदा हजूरि॥२॥
कलमां खोजै अकल मैं, पाक रहै दिल मांहिं। परसा भिस्ति नजीक है, दोजग नैड़ा नांहिं॥३॥
खाय न मारै जीव कौं, तजै हराम हलाल। परसा दोजगि परहरै, भिस्ति लहै दर हाल॥४॥
खायो जो मुरदार करि सो हलाल क्यौं होय। परसा कर्म हराम करि, गयै भिस्ति कौं खोय॥५॥
करणी कथनी देह मिलि, देह गयां सब जाय। परसा फेरि न पाइये, हरि बिनु सूनि समाय॥६॥

हरि मुसकनि कौ जोड़ौ-२३७

प्रीति न मानैं प्रसराम, काहु और की काणि। जाइ मिलै तब सुख लहै, हरि प्रीतम की जाणि॥१॥
जो रातौं हरि पीव सों, ना कबहूं विरमाय। राख्यौ रहै न प्रसराम, मनमोहन मैं जाय॥२॥

तन मन अंतः करन की, बात कहन कूं बैन। परसा सरक सनेह की, प्रगट करन कौ नैन॥३॥
रहै न छानूं प्रसराम, परम सनेह विसेखि। उड़ि उड़ि मिलै पतंग ज्यौं, हरि दीपक कौं देखि॥४॥
परसराम प्रभु कौं दरसि, मन फिरि आयौ नांहिं। गयो बिकाय ताहिं अली, मुख की मुसकनि मांहिं॥५॥
हरि मुख मुसकनि मन मुस्यौ, हूं मन बिन कहं जांउ। निरखि विवस भइ प्रसराम, प्रभु परसत न अघांउ॥६॥
हरि सनेह कौ प्रसराम, वदिए सो अनुराग। कुंती कृष्ण वियोग तैं, कियो प्रान कौ त्याग॥७॥
मेरे मन कौं हरि गये, अपनों दियो न मोहि। परसा प्रभु क्यौं दीन की, दया न व्यापै तोहि॥८॥
दया न व्यापै दीन की, दीना नाथ दयाल। फेरि परायो देउ किन, परसा पति गोपाल॥९॥
प्रीति न मानैं और की, कौणमिलन की आस। पीयां जीवै प्रसराम, जिंहि पानी प्यास॥१०॥

मल संगति कौ जोड़ौ-२३८

क्यारौ करै कपूर कौ, दै किस्तुरी भू पास। परसा सींचैं गंग जल,, लसण तजै नहिं वास॥१॥
जिनि जो मान्यों प्रसराम, चालैं ताहिं सुभाय। माखी चन्दन तैं विमुख, मल संगति मिलि जाय॥२॥
ज्यौं पनंग पण प्रसराम, जहं चन्दन तहं जाय। चन्दन कौं त्रसकार करि, माखी मलहि पत्याय॥३॥
भंवर च चालै प्रसराम, मिष्ट भूंड कै सुभाय। दुर्वासनां उलंघि कैं, जहं सुवास तहं जाय॥४॥

हरिनाम भजन कौ जोड़ौ-२३९

सो तन मन पावन प्रसराम, जिहिं भजिये हरि नांवु। और अपावन भजन बिनु, तन मन बहि बहि जांवु॥१॥
जनम सफल सो प्रसराम, जिहि करि रमिये राम। राम सुमरि जाणै नाहिं, जीवन जनम हराम॥२॥
जिंहिं हरि भजिये प्रसराम, सुफल सदा सो देह। नहिं तौ निर्फल देह नित, जौ हरि सों न सनेह॥३॥
जनम सफल सो प्रसराम, जिहिं भजिये हरि नाम। हरि सेवा सुमिरन बिनां, जीवन जनम हराम॥४॥
जनम गयो बहि प्रसराम, हरि सुमरन बिन वादि। चेत न सक्यो अचेत मति, लागि जगत कै स्वादि॥५॥
कारिज सर्‌यौ न येकही, धृग जीवन जग आदि। हरि सुमरन बिनु प्रसराम, कियो करायो वादि॥६॥

पुहणि चढ़ण कौ जोड़ौ-२४०

परसराम का पंथ कौ, पुहणि चढ़ै नहिं कोय। पावां चालै पाधरौ, परम सनेही सोय॥१॥
परसा पूंहणि जो चढ़ै, मारै जीव अपार। पसुं कौं सुमरै प्रीति सों, बिसरै सिरजनहार॥२॥
परसा पूहणि जो चढ़ै, सोई मूढ़ गंवार। बदलौ देणो पार को, द्यावै नंदकुंवार॥३॥
परसा पूंहणि जो चढ़ै, सो संसारी होय। व्यापक ब्रह्म न सूझई, दया धर्म नहिं कोय॥४॥
परसराम कापंथ मैं, आइ मिलै जो कोइ। भव बन मैं भूलैं नहीं, पारि पहुंचै सोइ॥५॥
परसराम का पंथ मैं, जीव दया विस्तार। पर की पीडा जाणई, जाणै पर उपकार॥६॥
परसराम का दरस की, हूं वलिहारी जाउं। पुरुष बडो परसिद्ध पद, नारायण सौं नाउं॥७॥

राजस तामस कौ जोड़ौ-२४१

राजस तामस प्रसराम, सातिक गुण की रासि। इनकौं तजै न हरि भजै, जीव पड़्यौ भव पासि॥१॥
साच हीण नर प्रसराम, लागो झूठै स्वादि। व्यापक संग न सूझई, कर्म करै सोइ वादि॥२॥
निहकामी निर्मल सदा, निहकर्मी मति सींव। याही पारिख प्रसराम, कर्म करै सोइ जीव॥३॥
पांचौ इन्द्री बसि करै, मन अपणूं लै हाथि। तब कबहूं जन प्रसराम, व्यापक सूझै साथि॥४॥

हरि प्रेरक कौ जोड़ौ-२२४

वदै न मन की प्रसराम, प्रभु समरथ सरदार। सिंघारूढ़ गयंद सिरि, प्रेरक सो करतार॥१॥
हरि राखै रहिये तहीं, प्रान पराये हाथि। जहं खांचै तहं जाइये, परसा प्रेरक साथि॥२॥
हरि गिरतैं राई करै, राई मेंर समान। सर तैं ऊसर प्रसराम, ऊसर तैं सर जान॥३॥
भर्‌यां रितावै पलक महिं, रीता भरत न वार। छत्र रंक सिर प्रसराम, हरि दीनूं नृप छार॥४॥
हरि जाणै करि प्रसराम, जग बाजी बहु भेख। वज्र करै तिण सारिखौ, तिण तैं वज्र विसेख॥५॥
निसदिन मन परवसि रहै, छिन छिण दाजै देह। परसा आस मनोज की, निर्फल सोइ सनेह॥६॥

राज वैद कौ जोड़ौ-२४३

राज वैद भेषज निपुण, परसा हरि जु कहात। सोइ धनंतरि मरि गयो, और सुकितियक बात॥१॥
सब वैदनि कौ गुरु हुतौ, परसा जाण प्रवीण। सोई खायो सरप कौ, मूवौं ऊखधी हीण॥२॥
खणि खणि मूली ऊखधी, हाय मुवौं संसार। परसा रोगी वैद बहु, मुये सु अंत नहिं पार॥३॥
हरि आसति बिनुं उखधि, रोगी जीवै न कोय। सोइ जीवै परसराम, हरि ऊखधि वसि होय॥४॥
परसा हरि आसति बिनां, ऊखधि वोत न होय। वैद धनंतरि क्यौं मरै, ओषधि आसति होय॥५॥
परसा हरि जीवन जड़ी, भूले पर उपकार। मूये धनंतरि जगत की, आसा लागि अपार॥६॥
हरि उषोधि साध्यो नाहिं, वैद मुये मिलि रोगि। जगत रोग निधि प्रसराम, हरि सु सदा आरोगि॥७॥

जोग जल विरह कौ जोड़ौ-२४४

सूकि गई हरि नीर बिन, परसा परवणहारि। हरी न हौंही जोग जलि, ऊधौ यहै विचारि॥१॥
ऊधौ जोग जहर भयो, हृदै बस्यौ हरि नेम। विरह जरी क्यौं पांघुरै, परसराम बिनु प्रेम॥२॥
जारी जो हरि विरह की, सुहरि करै कहं जोग। परसा जोग रूचै नाहिं, जिहि भावै हरि भोग॥३॥
कूंपल बधै न जोग बलि, बरखत सूकी जाहिं। हरि जल पीयो प्रसराम, सुहरि मिल्यां पत्याहिं॥४॥
जारत बिरह सरीर कौं, जोग भयो जम पास। हरि प्रीतम बिनु प्रसराम, हम जीवै किहि आस॥५॥
पहली चाख्यौ चंचुभरि, परसा प्रेम रसाल। हरि अमृत तजि क्यौं पिवै, जोग जहर की झाल॥६॥
विरह जोग संग प्रसराम, दुहुं मिलि ऊठी झाल। बरखि बुझावै पलक मैं, आवै दीन दयाल॥७॥

परसा विरह विवसि भई, अबला स्याम विहूण। ऊधौ ल्याये देन कौं, दाझे ऊपरि लूण॥८॥
दुख ही मैं दुख प्रसराम, इसौ दई कौ खेल। ऊधो डार्‌यौ आनि तुम, जरती माहीं तेल॥९॥
दरद हमारे जो कछू, दरद तुमारे नाहिं। खरौ पखीडो प्रसराम, अलि हम तैं मनमाहिं॥१०॥
देखो अचिरज बात कौ, भयो हरख तैं सोग। परसा प्रेम सनेह फल, हरि पठयौ घरि जोग॥११॥

गत अभिमान कौ जोड़ौ-२४५

रहै सदा ल्यौ लीन मन, तजि आयौ अभिमान। परसा ताकी बंदगी, मानै स्याम सुजान॥१॥
तजि आपौ अहंकार जो, हरि सुमरै इक तार। परसराम ता दास तैं, नेडौ सिरजन हार॥२॥
परसा साहिब दास कौ, मेलौ सोई सुख जानि। साहिब जन मेलौ नहीं, सकल सुखां की हानि॥३॥
सेवक सुमिरै स्वामि कौं, परसा सोई बड़भाग। साहिब सेवग सौं खुसी, सोई सुफल सुहाग॥४॥
तरवर पडदौ सुर्ग दिस, पृथ्वी मूल मिलाप। परसा पाणी जड तहीं, यौं हरि जन हरि आप॥५॥
प्रीति घटै क्यौं परसराम, जो कीनी मन लाय। मनु दै अपणे दास की, मानि लई हरि राय॥६॥
परसराम जो हरि भजै, तजि आपौ अहंकार। तौ दूर नहीं ता दास तैं, नेडौ सिरजनहार॥७॥

प्रीति वसि कौ जोड़ौ-२४६

परसा पाणी ऊंच कौ, ढुलि आवै जहिं ढाल। यौं हरि प्रीतम प्रीति बसि, आवै दीन दयाल॥१॥
परसा जामैं मन बसै, सोई बसै मन मांहिं। जामैं अपणों मन नाहिं, सो नाहीं मन मांहिं॥२॥
निर्मोही हरि प्रसराम, अमिल रहै मो मांहिं। मोरै आरति मिलन की, उनकै आरति नांहि॥३॥
कदै न बाजै इक हथी, सुद्ध साखि सुनि लेहु। दुहथी बाजै प्रसराम, बिन दूसर न सनेहु॥४॥
निपट न जीकी साखि धर, तारण तरण मुरारि। परसा पड़दौ दूरि करि, मिलै न बांह पसारि॥५॥
तन मन प्रेरक प्रसराम, साथी सदा हजूरि। श्रवणा सुनिये बोलतौ, पड़दौ करै न दूरि॥६॥
परसा सुख संसार कौ, सो संसारहिं खाइ। बस्यौ नहिं हिर्दै हरि हितु, जु रख्या करण सहाइ॥७॥
निस दिन जारत जगत कौं, आस अग्नि की झाल। भजि न सक्यौ करि प्रसराम, पर्म हितू गोपाल॥८॥

हरि करता कौ जोड़ौ-२४७

हरि बिन करिये जो कछू, होसी अंति असांच। परसराम यौं सब कहैं, हरि करिहै सो सांच॥१॥
परसा तूटी आब कौं, कौं साधणको और। हरि साधै तो ही सधै, और न दूजी दौर॥२॥
आब गई घटि प्रसराम, दिन ही दिन हरि हीण। जीव चल्यो जमलोक कौं, निर्फल मनहिं मलीण॥३॥
अंतक आयौ जीव कौं, को राखै गहि हाथ। कियौ न पहली प्रसराम, हरि प्रीतम कौ साथ॥४॥
बहू जियौ तौ का भयो, ज्यौ पन्नग पातालि। हरि अमृत तजि प्रसराम, विष संचियो संभालि॥५॥
परसा जीवन दूरि है, मरणां निपट नजीक। तू ताकों भै मानि करि, नाम सुमिर सुणि सीख॥६॥

काल न संकै प्रसराम, राजा हो वा रंक। घात पड्या तैं जीव कौं, जम ले जाय निसंक॥७॥
कीयां सरै न और तैं, प्रीति न बैर सनेह। परसराम हरि सुमरिये, जिनि दीनी नर देह॥८॥
परसा आवण जाण की, ठौर न सूझै काय। जीव ज्योति दीप की, उपजै तहीं समाय॥९॥

हरि कलप तरौवर कौ जोड़ौ-२४८

हरि कलपतर परसराम, प्रभु निबहण इकतार। और न कोई जाणिये, हरि सारिख दातार॥१॥
जो हरि पुरवै खलक कौं, जन कौं भूलि न जाय। ताकी आसा प्रसराम, रहै सु क्यौं पछिताय॥२॥
जो सेवै चिंताहरण कौं, ताकौं कैसी चिंत। प्रभु की छाया प्रसराम, रहिबौ करै नचिंत॥३॥
हरण करण जानैं सबै, छानी रहै न काय। ऐसे प्रभु कौं प्रसराम, भजै न क्यौं पछिताय॥४॥
जो सुमिरै सीखै सुणै, हूं ताकी बलि जाउं। पाप हरण मंगल करण, है परसा हरि नाउं॥५॥
जाकौं अपणैं विड़द की, लै निबहण की लाज। सोई भजिये प्रसराम, हरि सारण सब काज॥६॥
सर्व जीव की प्रसराम, चिंता हरि कौं जाणि। सकल भरण पोषण करैं, लाहो गिणै न हाणि॥७॥

हरि कृपा कौ जोड़ौ-२४९

दाता सूर तन सुघड रु, नर रूप गुणी धनादि। हरि सुमिरण बिनु प्रसराम, बिनां बासु पहुपादि॥१॥
आभूषण सारिख सखी, रूप नैण कहा वैण। कृपा बिनां क्यौं पाइये, परसराम हरि सैण॥२॥
तन मन धन जीवण मरण, प्राण सदा जा साथि। प्रेम नेम नित निरबाहुं, परसराम हरि साथि॥३॥
सीख्या सुण्या न लागई, हरि प्रीतम सों प्रीति। कृपा हेत बिनु प्रसराम, नाम न आवै चीति॥४॥
सोभा लहै न प्रसराम, हरि सुमरन बिनु जीव। निस दिन चिंता रत रहै, प्रिया बिनु ज्यौं पीव॥५॥

दास सुभाव कौ जोड़ौ-२५०

निंदौ कोइ वंदन करौ, कहौ कछू संसार। परसराम निजदास गुण, हरखि सोग तैं न्यार॥१॥
दुख सुख गुण औगण अरति, लिपैं न माया मानि। परसराम ता दास कै, हरखि सोग सामानि॥२॥

(इति श्री साख्यां का जौड़ा संपूर्ण॥)

फुटकर - संग्रह

राजा जोगी अगन जल, यांकी उलटी रीत। डरता रीज्यौं प्रसराम, थोड़ी पालौ प्रीत॥१॥
छोरा कुत्ता बांदरा, यांकी ओछी रीत। दूरा रीज्यौ प्रसराम, करदै कदै फजीत॥२॥
परसा कीड़ौ नींव को, चाख्यौ चावै खांड। मन राखै बैराग मैं, घर मैं राखै राड॥३॥
परसराम तहं चालियै, जह न अपणौ कोय। माटी खाय जिनावरां, सहज भंडारो होय॥४॥
परसा झूल गयन्द की, दीनी भेड़ उढ़ाय। सुख सोभा तो कहूं रहि, उलझ पुलझ मरि जाय॥५॥

कहं कासि कहं कासमीर, खुरांसान गुजरात। दाणां पाणी प्रसराम, हाथ पकड़ि लै जात।।६।।
परसा पारस परस के, मिटिग्यौ लौह विकार। तीनूं बातां ना मिटी, मार धार आकार।।७।।

---

१. परशुरामदेव के ये दोहे यद्यपि परशुरामसागर में संग्रहीत नहीं हुये हैं तथापि क्षेत्र में इन्हें आज भी साधारण लोग बोला करते हैं।

परशुराम - चरितावलियाँ

(अथ श्रीपरशुरामदेव जू कृत कवित्त ग्रन्थ)

||१|| अथ छन्द कवित्त ||

(छप्पय)--करि कला मोर उपगार हेति, नाच नैननि जल झारत॥
सोई उद्धरेता सुवसि करि, त्रिकुटि तापस ज्यौं धारत॥
जपत साध हरिनाम, सुनत दुखिया सुख पावत॥
भाजि जात त्रय ताप, पाप फिरि ताहिं न आवत॥
सुनत मोर की रोर भै ज्यौं, चील चंदन तैं उड़ि गयो॥
यौं साध साध कहि प्रसराम, हरि मोर पिछ माथ दयो॥१॥

(छप्पय)--तक न दखिन वांम दिस, मिलि मधि मूलहि मन धरै॥
सेव सदा स्नेह करि, फिरि जनमैं कदै न सो मरै॥
भज् नेम पह्चौ कियाँ, भै गीयाँ भूलै नाहिं।
सोई साध सिरोमण सकल, कौ जु पति पूठि दै नाहिं॥
निसि वासुर आठौं पहर, हरि सौं ल्यौ लागी रहै॥
तो ताकी सम दैण कुँ कोउ, औरु नाहि परसा कहै॥२॥

(छप्पय)--अपमारग अपकर्म, सेई दोष जु कबहुँ तजै।
तो मनसा वाचा कर्मना, मन सुध होई हरि कुँ भजै॥
काम क्रोध मद लोभ, सो वैरि हरि सुमर्याँ मरै॥
सहै न विषै विकार, जु हरि सुमरण हिर्दै धरैं॥
जो हरि सुमिरण सुख चित करै, औरु सबै सुख परहरै॥
तो ताकी रिक्षा परसराम, हरि हित करि आपण करै॥३॥

(छप्पय)--हूँ प्रथम अपावन हुतौ, हरि मिलि पावन करि लियो॥
क्रपासिंधु कि क्रपा तैं, हरि भगत भयो जगि ह जियो॥

अपणै जन कौं आप, हरि पदइ दै प्रगट कियौ।
अब इसौ प्रभु क्यौं भूलिय, जु भजिय तन मन दै हियौ।।
अति (उदार) दातार हरि जिनि, भगति दान हित करि दियौ।।
अब ऐसौ कौ है प्रसराम, जो मेटै हरि को कियौ।।४।।

(छप्पय)--का मित्राइ सठ सुँ करि, का दुष्ट घरणी घरिवासी।।
कहा नीच सौं संग, कियाँ सोभा सबु जासी।।
कहा भ्रतु बकत उतर वचन, स्वामी सनमुख ज्यौं ग्रासा।।
तौ सुख न कछु ता संग तैं, अंति दुख होही विनासा।
कहा उतिम नर जनम जो, भगति न हरि की सौ लहै।।
अरु कहा भुवन सुख प्रसराम, जु असुर अहि अरि जामैं रहै।।५।।

(छप्पय)-- कहा विद्या वकवाद, जु स्वाद सुम्रिन सुख नाहीं।।
का ग्यान विग्यान बिनु, हरि न दरसै मनमाहीं।।
का बहु ग्रंथ सीखैं सुणैं, जो निसि न कदै उरतैं टरी।।
जाणपणूं निर्फल सबै जो, हरि की भगति न आदरी।।
जदपि वगु उज्जल अधिकु तऊ, हंस की सोभ नाहिं लहै।।
नीर खीर निरवार करै, सो हंस है परसा कहै।।६।।

(छप्पय)--का निगमागम पढै, अरु कहा अगम अगोचर की कही।।
सब वादि गयो पंडित पणुं, जु हरि संगी सूझ नाहीं।।
का दीपक कर अंध क, ताको सुख पायो नाहिं।।
का सर्‌यौ नर जनम तैं, जु हिर्दै हरि आयो नाहिं।।
जो करि सनेह सुमर्‌यो नाहिं, हरि प्रीतम परभाति कौ।।
तौ तजि न सकै मनि प्रसराम, बारहमासी राति कौ।।७।।

(छप्पय)--जगत आस फासि परि सु ज्युँ मन मृगा डोर्यो फिरै।।
लोभ मोह अधिन अति, सु हरि की भगति न आदरै।।
काम क्रोध कि अगनि मैं, निस बासुर सारिख जरै।।
सेवा सुम्रिन हीन नर, सु भु सागर कैसें तिरै।
ज्युँ अरि सुरसरि सुवन सौं मम, कारिज का हरि तैं सरै।।

यु̐ परसा अंध अलूक नर सुर, विप्र तास कौं कहा करै ।।८।।

(छप्पय)--हरि तरवर विसराम बिनु प्राण पंखी बहु भर्मैं ।।
सुख न लहै बिनु सरनि, दुखित अति बिनु आश्रमैं ।।
अति पर्‌यौ जम जालि म, कालि वसि करि लिनूँ ताहिं ।।
यहि कठिन जीव कुँ अति, परि जु निकसण कुँ सेरि नाहिं ।।
जिन गिल्यौ हलाहल हेत करि, रिक्षाकरण कुँ आदर्‌यौ ।।
सौ न मरै क्यौं प्रसराम जिनि, हरि अमृत रस परहर्‌यौ ।।६।।

(छप्पय)--सुख न लहै सो जीव, जिनि हरि अमृत रस पर हर्‌यौ ।।
कीयो कुविण्ज अजाण नर जिनि, विष संग्रह करि घर भर्‌यौ ।।
भूलि गयौ हरि हेत बिण, जग सनेह करि आदर्‌यौ ।।
उडि पर्‌यो धंध मैं अंध, ज्युँ पतंग दीपकि जर्‌यो ।।
करि जोर जीव जमपुरि गयौ, सु अबु कैसिं आवत फिर्‌यौ ।।
कर चिराक लइ प्रसराम नर, नांव हीण नर्कैं पर्‌यौ ।।१०।।

।।२।। **प्रथम छंद** ।।

(छप्पय)--जदिन मकर अहम कर, तदनि मंजन तीरथ पति ।।
जदिन कुंभ प्रति कुंभ, तदिन कीज केदार मति ।।
जदनि सिंघ प्रति सिंघ, तदनि गोदावरि चलहीं ।।
दोउ मिले रवि राह, देत कुर खेत न डुलहीं ।।
सोम खान अनुदिन करै, गया समरपै पित्ररिण ।।
सोई अंति करत बंधन सबै, परसराम प्रभु राम विण ।।१।।

(छप्पय)--विधि निषेध व्रतदान, सिंधु सलिता जल खारै ।।
मन वंछै सुख सुरग, आस निरभै वल वोरै ।।
करहिं जोग भूव जग्य, सीस लै ईस चहोरै ।।
कासी तप अनुसरै, करै साधन तन तोरै ।।
कोउ सुख न लहै संसो सदा, जु परहरि हरि संचै कुधन ।।
सोइ अति दुखी जन्मैं मरै, परसराम प्रभु राम बिन ।।२।।

(छप्पय)--गिरि कंदर आसन पवन, मौन धरि ध्यान संभारै ।।

जा हिमंचल गलि मरै, वेणि करवत सिरि सारै ।।
पंचाग्नि तप उग्र करि, हठ कष्ट संकट मन मारै ।।
कासि तजै सरिर निज, राम निरभै पद हारै ।।
चरण गवण नव खंड फिरि, परिकर्मा पूरी करै ।।
कहि परसराम निरफल अनर, भगति हीण भरमत फिरै ।।३ ।।

(छप्पय)--कपिल धेनु जल तारि, कोटि जो गंगा नहावै ।।
विप्राचरण परवारि, पोखि जो भलो मनावै ।।
दै गज गैंवर दान, भोमि डोहली मिणावैं ।।
करहि जग्य अश्वमेघ, कोटि कन्या परणावै ।।
कनक पात्र सो वर्न, चीर चोखा पहिरावै ।।
तुरी आणि सुपलाणि, कंध दै आप चढावै ।।*
तउ कियौ न मेटै केसवो, कह प्रसराम गोविंद जन ।।
अनेकु दान कोउ करौ तउ, मुकति नाहिं हरिनाम बिन ।।४ ।।

(छप्पय)--चौबीसूं तिथिवार, वरत चंद्रायन कीजै ।।
तुला तीर्थ मैं बैठि, त्रिया दै फेरि न लीजै ।।
गंगोदक अस्नान निति, कीजै रु सोई पीजै ।।
सुरही सुबछी सुरनि, स्वस्ति सकलपित दीजै ।।
हरिभगति विमुख निर्फल करम, जहीं तहीं जो जो करै ।।
दान सहित नर प्रसराम सो, नृग नृप ज्यौं कूवै परै ।।५ ।।

(छप्पय)--निज गंगा नांव नीर, सौ जो कोऊ नहावै ।।
नित तीरथ निजरूप, आय जो हिर्दै समावै ।।
सब जाहि पाप त्रैताप, पर्म पावन होइ आवै ।।
परम निरमल निर्दोष, होइ हरि भगत कहावै ।।
धारि हिरदै हरिनाम प्रेम, नित अमृत रसहि पीवै ।।
सो परसराम प्रभु की सरण, लहै जुगि जुगि जन जीवै ।।६ ।।

(छप्पय)--ग्रसै गायत्री बहुरु, बहु गीता गुणी खावै ।।

---

* एक रोला अधिक।

गिले गंगा बहु जीव, हरि न हिरदै धरि गावै॥
बहु जिग्य जोग जप तप, छल बहु सिद्ध साधन अपणाय॥
सक्यौ न सांच संभारि, नर काल कुलि कर्मि बहाय॥
बहु कर धरम करतूति करि, भगति विमख परवसि भये॥
यौ भर्मि बहु नर प्रसराम हरि, नांव हीण निरफल गये॥७॥

(छप्पय)--गुप्त प्रगट बहू दान, पुन्नि कोउ करै सुपावै॥
ग्राम सिंघ मृगराज बाजि, गज कि यौं दिखावै॥
सबि आन धर्म व्यवारि करि, पारि पहुँचै नाहिं कोइ॥
जात हारि हरि धरम बिनु अंति जीव कुँ भलौ न होइ॥
कियै कर्म नर देह धरि सुतौ, होइ पसू भुगतत भयो॥
हरि विमुख जोर करि प्रसराम, यो नर पापी निरफल गयो॥८॥

(छप्पय)--भजि राम राम राम, हरि जु राम दालिद्र विहमण॥
सोई सुमिर राम श्रीराम, रस पाप काया तँ खमण॥
छूवत नांव सिलसिंधु, परिवार तजि पार तिरि गइ॥
इसौ राम रघुनाथ, पद परसत भु पावन भइ॥
सोइ राम अहल्या उद्धरण, कीर नांव पारहि करण॥
सोइ रामचन्द्र भजि प्रसराम, सुखदायक प्रभु दुखहरण॥९॥

(छप्पय)--सीतानाथ सुजाण, अति सिंधु जल सिला तिरावत॥
लिखि लिखि अपणौ नांव, आप करतैं छिटकावत॥
तिरै जात पाषाण, बनै वनचर ता ऊपर॥
करत केलि किलकार, अधिक सोभित आपौपर॥
औरु औरु कौं छेकि छलि कपि, उडि उडि आसण करत॥
श्रीरामचन्द्र वलि परसराम, यौ पाणी परमारथ रतिरत॥१०॥

(छप्पय)--यक समै कहुँ पंथ सिरि, चुणत कण राट सुइच्छया॥
तहि अवसरि नृपयेक, आय कहत दलिद्र वझ इछ्या॥
मोहि तोहि यंक समान, उदर दालिद्र न दूजा॥
मन दालिद्र अपार ह, तिलक ताकौं यहि पूजा॥
मन दालिद्र सुभाव सुख जो, भुगतै सोई दुख सहै॥

पेट पूरे प्रसराम जिकौ, हरि सुमरै सो सुख लहै ।।११।।

(छप्पय)--का मित्राइ सठ सुँ करि, का दुष्ट घरणि घरवासी ।।
कहा नीच सौं संग, कियाँ सोभा सबि जासी ।।
कहा भृतु बकत उतर वचन, स्वामि सनमुख दुखदाता ।।
भाव भगति गत ग्रास, गुणि हितु बिनु निर्फल नाता ।।
कहा उतिम नर जनम जो, भगति न हरि की सो लहै ।।
अरु कहा भुवन प्रसराम, असुर अही जामैं रहै ।।१२।।

(छप्पय)--दियै श्रवण हरि सुनन, कुँ नैन निर्खन कौं दीने ।।
पाणि पूजा हरि जानि, चरण चलिवै कौं कीने ।।
अधर दंत मुख दियै, कंठ रसना रसवाणी ।।
दये नासिका स्वास, सीस संधान विनाणी ।।
यौं जीवन दान मन बुद्धि दै, नखशिख हरि व्यापक भयो ।।
तुहू सुमरि सदा परसराम, जिनि रतन तोकूं दयो ।।१३।।

(छप्पय)--औरु आस सबु छोडि, आस यक स्याम ग्रहौ बल ।।
जिन सेयां सुख होय, सेय हरि सिंधु सुमंगल ।।
वेगि वंगि हरि नीर, सौं भगति भरि लेऊ कमंडल ।।
अब न करि विरंब विचारि सुख, स्वाद करि अचय अमी जल ।।
यौं जनम सुधारि संभारि हरि, ज्यौं जाय मिटि सर्म सबै डुल ।।
तोहि यहि नेम नित प्रसराम, जु सेय हरि सिंधु सुमंगल ।।१४।।

(छप्पय)--भवतारण हरिनाम, लेहु जपि जाकौं भावै ।।
सुखदायक दुखहरण, आय जो हृदै समावै ।।
मनवंछित फल सकल, प्रेम सुमिरै सोइ पावै ।।
वसै कलपतर सरणि, सोइ न कबहुँ पछितावै ।।
सदासुखी रहै परसराम, जो हरि हिर्दै धरि गावइ ।।
तौ जुरा मरण जमकाल छल, ताहि कबहुँ ना सतावइ ।।१५।।

(छप्पय)--जो न भजै हरि नाम, सोई जीव पापी अपराधी ।
सोई जन्मत ही मरि जाऊ, जेणि हरि भगति न साधी ।।

सोधि सीख्यो चित भर्म, नांव निधि गांठि न बांधी।।
हरि कपूर कौं डारि, करम कूँ राष लिखाधी।।
परम अम्रत हरि नांव मुखि जो, रसना रस चाख्यो नाहिं ।।
तौ जगत जोनि मैं प्रसराम हरि फिरि जीव पठ्यौ ताहिं।।१६।।

(छप्पय)--भव समुन्दर कै जीव, कहा गोविंद जानहिं।।
भूलै फिरै गंवार, अंधहि अपणै अग्यानहिं।।
उठि संवार जांहि वनि, सांझ चरि फिरि घर आवहिं।।
हरि तैं विमुख सदाहिं सु नाम नर पसु कहावहिं।।
भ्रमहि भूत भुव मांहि वे, भाव भगति वेसास विन।।
प्रसराम जमलोकि वै जाहिं, जीव सु हरि भज्यौ न जिन।।१७।।

(छप्पय)--का कियौ इहाँ आय, उहाँ जाय कै का कमायो।।
करि न सक्यौ हरि विणज, वादि भ्रमि जनम गमायो।।
तज्यौ सकल सिरताज, अरु जह तहहिं सिरनायो ।।
डारि अम्रत हरि नांव, मांगि विचि पडि विष खायो।।
अघमोचन दुखहरण सौं जो, पलक प्रेम लाग्यौ नाहिं ।।
क्यौं न जाणि जम प्रसराम यौ, जीव जूंनि डार्‌यौ जाहिं।।१८।।

(छप्पय)--भगत रूप ही वैकुंठ, परम मंगल पद जामहिं।।
तहँ न पाप त्रै ताप, सदा मंजन हरिनामहि।।
भगत सकल सुखमूल, डाल वाणी फल नरहरि।।
हरि नाम अम्रत सुख रासि, औरु सुख हरि सुखतरहरि।।
भगतहिं नांव निरवाण वाण, वल दल दहै न दुख सहै।।
सकल लोक कौ तिलक जन, परसराम प्रभु हरि कहै।।१६।।

(छप्पय)--भगत भगवंत अंतर न, कछु निजभजन बिस्वास बल।।
मुख हिरदै हरि नांव, वसै अस्थिर निति निरमल।।
हरिजन हरि कौ रूप, प्रेमी पीवत जु हरि जल।।
निसि वासुर इकतार, रटत रसना रस प्रघल।।
तिनकौ दरसन दुखहरन पद, परसन तीरथ न्हाइये।।

तहिं सेवत सोभा प्रसराम, सुमरि मंगल पद पाइये ॥२०॥

(छप्पय)--नितनेम धरि प्रेमसुँ, जु जींवहिर्दै हरि धारै॥
सो पावन पर्म पवित्र, और पतितन कौं तारै॥
नारि नर बड़भाग जु, हेति हरि नांव संभारै॥
सोइ बड कुलीन घण, जाण सूर सो संसारै॥
नित निरमल मति धीर, जो भर्मि हरि धर्म न हारै॥२१॥*

(छप्पय)--जिनि वदि बूंदि सीकरि, गयो तहिं चले जु अगरौ॥
दिल्ली फिरी गुजरात, जोधपुर गह्यो जुदगरौ॥
बीजापुर मलताणि, जांगलू सरसै हियो॥
संभरि करि आंबरै, लालपुरो घर घर कियो॥
अंमरसर अजमेरु पुर, रामसरै असुख रह्यो॥
प्रसराम प्रभुराम कूं, सोरू वसि करि सुख भयो॥२२॥

(छप्पय)--झीणँ नैन बिनु जोति, बहत जल पंथ न सूझै॥
सुणत न श्रवण निज सुवात, कहत बलि बैण न बूझै॥
खास खहर कफ वायु, बोलि नहिं सकत विवैकै॥
चलत डगमगत पाय, उठत कर लकुटी टेकै॥
भयो हीन तन खीन गह्यौ, जोवन जु रासु सब चर्‌यौ॥
हरि सुमीरन तव परसराम, विसरत नहिं आवत कर्‌यौ॥२३॥

(छप्पय)--सोइ हरि पिछाणि उरि, आणि होसी निसतारा॥
दुरत पाप त्रै ताप, भजत हरि यहै विचारा॥
जूंनि संकट मिटि जात, कटै भव बंधन पासा॥
इस्यौ हरि सुम्रिन सुख सकल, होत हरिपुर मैं वासा॥
सोई हरि परहरि करि जोर, जीव जम लोकि न जाइये॥
रहिय हरि की सरनि परि, प्रेम परसा हरि गाइय ॥२४॥

(छप्पय)--परम नृमल हरिनाम, नर तारि भु पारि उतारै॥
खरौ नृमल नर जनम तबु, नांव हरि कौण विसारै॥

---

* उल्लाला की दो पंक्तियाँ अनुपलब्ध।

निर्विकार हरि संत निति, विषै सुमिलत संसारा।।
गंगोदक अति मिष्ट, औरु सोइ रस ह खारा।।
जन चंदन श्री खण्ड नाम हरि, अपणै कारणि सुकरयौ।।
भारु अठारह प्रसराम जम, पावक सबै जग चरयौ।।२५।।

(दोहा)--भार अठारह अष्टकुल, नवकुल सायर सात।।
नदी जु न वसै जीव जग, जनमत जमी समात।।१।।२६।।
अरहट क्यार कुल कुल जल, वापी कूप अनेक।।
नग्र गाँव घर भुमि ज्यौं, नाव अगिण हरि एक।।२।।२७।।
ज्यौं तरंग जल की जलहिं, छाँडि न आवै जाँहिं।।
अकल सिंधु मैं परसराम, उपजै सकल समाहिं।।३।।२८।।

(छप्पय)--ब्रम्ह व्यापक सब माहिं, अरु सुर्ग पर सुर्ग दिखावहिं।।
सुरग नीर धर तेज, बाय जामांहिं समावहिं।।
नेत नेत निजवाणि, कहै सो पार न पावहिं।।
जीव ग्यान उनमान की कहि जो जाणै तैसी कहै।।
अगम बोध तैं प्रसराम प्रभु, नाँद ब्यंद आगैं रहै।।२९।।*

(छप्पय)--जहँ नहिं धरणि अकास, पवन पाणी रुति नाहीं।।
तहँ नाहिं चंद न सूर, धूप निसि धौस न छांही।।
तहँ नहिं पिंड ब्रम्हांड, रूप तप तेज न सबद रुख।।
तहँ न पंथ पयाण जाण, अरु आवण न भै दुख सुख।।
तहँ नाहिं काल की झाल वल, जामण मरण न औतरण।।
प्रसराम इकतार प्रभू तहँ, येक अकल अनचिंत रहण।।३०।।

(छप्पय)--हरि अवर्ण वर्ण न आरकत, हरि सेत न पीत न स्याह।।
निर्गुण सर्गण हरि नाहिं, सुहरि आदि न अंत अथाह।।
झीण हुँत झीण सुहरि हरि दिष्टि करि मुष्टि न आवै।।
भारि हलका हरि नहिं हरि, सो है तेसौ दर्सावै।।
दरसै सुरति सुपरस्पर तहीं, नाहिं मुख रसना कथहीं।।

---

* एक पंक्ति कम है।

परसराम प्रभु रूप गति सुतौ, अति अनूप जात न कहीं ॥३१॥

(छप्पय)--वपु व्यापक वपुता अतित, धारि वपु लीला कीनी ॥
हरि निर्गुण सगुण अतित, रासि गुण की करि लीनी ॥
सबद अतीत सुभाव, सबद सु मिलत हरि बोलै ॥
भाव अतीत अभाव, भाव लागौं संगि डोलै ॥
सर्व आत्मा अतीत हरि, व्यापक सर्वंस मिलत रहै ॥
सुर्ग नीर ज्यौं परसराम, मिल्यौ अलपित निर्वहै ॥३२॥

(छप्पय)--भजिये श्री हरिव्यास जिनि, भगति भूपरि विस्तारी ॥
दुति देव रीषि दुरसि, देवलोकनि अधिकारी ॥
नरकी कितियक बात, सुर्ग सुरसेवा आवै ॥
भगत हूंण की हूंस, आय आगै सिर नावै ॥
देवी बनचड थावड़ विचै, थान अस्थिर तामैं रहै ॥
तिन दख्या लई परसराम, साखि प्रगट सब जग कहै ॥३३॥

(छप्पय)--भरि पंडु मति मूल यहि, कहत तैसी चलि चालहिं ॥
मिलि कहत गुरु कि बात, वै सु हरै जु उरि सालहिं ॥
यहि पंडु पण लियै रहि, हमरी निति पौंणी कहै ॥
ताकुँ तुमि मानुँ सबैं मोहि यहै धोखो दहै ॥
अरि कहत सुरसरी सुवन सौ, जु मम कारज का पन तैं सरैं ॥
परसा अंधम उलूक नर सुर, प्रिय तासकौं कहा करै ॥३४॥

(छप्पय)--असुर मंत्री मिलि न मंत्र कीय, सोधि सुर मूल उखालौ ॥
द्वेष हीन करि देखि, व्रध अथवा होय बालौ ॥
अरि खैं रोग न प्रीत भाल, घटै जो पोष न पावै ॥
बढ़यौ करै विस्तार, बहुरि सो हाथि न आवै ॥
व्रत जप तप पूजा दान मख, दयाधर्म खंड करि सेवै ॥
यों कहत कंस मति परसराम, सुर मूल सोधि मथि तवै ॥३५॥

(छप्पय)--सर्व धर्म कौ नास जबि, साधु पीड़ा मन मानै ॥
उपजै उर अग्यान, ग्यान गुण अंध न जानै ॥
काम क्रोध अरि लोभ, मोह माया सौं लागै ॥

जाय सील संतोष, दोष दावानल जागै ।।
घटै सबै संपति सुख सजस, परसा पति पलटै तबहिं ।।
अंतकाल विप्रित बुधि घटै, बलहि काल आवै जबहिं ।।३६ ।।

(छप्पय)--घटत अंस परकास, बढत निसि घोरंधारा ।।
गिरत नाव सुखसिंधु म, न कोऊ तारनहारा ।।
घटत दीप की जोति, बढत पल पल कलछाया ।।
बढत सुभी साकार, घटत मनसा मन माया ।।
यौं घटत घटि जाय घट, समझि न कछु ताकी परै ।।
सोइ जाणै परसराम जा, देखत जम जग कौं चरै ।।३७ ।।

(छप्पय)--भूलि गयै हरि नाम कौं, औरि जाण्यौ सु बखाण्यो ।।
तन मन धन दातार, (हरि) तास गुण हिर्दै न आण्यो ।।
स्वामि सुँ किया हराम, आन सौं मिलि मन मान्यो ।।
स्वामि धर्म बिनु जीव, जात हरि लोक न जान्यो ।।
घर तैं भले नीच नर, हरि सुमरन की सुधि गई ।।
प्रसराम प्रभु बिनु अंति ठौर, जमपुर मैं लै जमि दई ।।३८ ।।

(छप्पय)--कहा छत्र की छांह, चलत भै निर्भै नाहीं ।।
कहा सूर दल साहि, भये भै मांहि समांहीं ।।
कहा रतन घरि खानि, खांति तिश्राँ तनि जागि ।।
सकल विस्व कौ राज, दियौ पैं भूख न भागी ।।
परी सुलैण की वाणि दैण, मैं कछू नाहिं जाणई ।।
कवि सोई परसराम जु तहिं, कहि कहि विरद बखाणई ।।३९ ।।

(छप्पय)--विहौ प्रिया बिण पीव, पहूप विण पर्मल गोभै ।।
अंधरैनि विधु हीण, जोति बिनु नैन न सोभै ।।
कहा नीर बिन प्यास, कहा भोजन बिन भूखै ।।
कहा सर्यो नर जनम, जो मरत हरि हीण अहूखै ।।
नाक हीण दंतूस ज्यौं अरु, भुमि बिन भूप न बोपई ।।
जथा जीवू जड परसराम, हेत हरि महिं न रोपई ।।४० ।।

(छप्पय)--दुष्ट सभा कैं मद्धि बात दुरजनि दुरि भाखी।।
अरु चिन्ता जरत वटराट, राखि लीनूं हरि नीकैं।।
अरु राखैं जरत रहै पंड सुत, साखि सबतैं यहि टीकै।।
रु ग्राह कष्ट गजराज कौं हरि, भेटि पैंज पूरी करन।।
सोई हरि भजिय परसराम, सुखदाय प्रभु दुख हरन।।४१।।*

(छप्पय)--तज्यौ राज वैकुंठ, तजि श्रिया सिंघासन तज्यौ।।
गरुड मन वेगि तास, आगै भै त्राषन भज्यौ।।
अति आतुर हरि आपु, सोखि दुख सुखहि समाखै।।
दियो दरस हरि परस, ग्राहगज दोउ राखै।।
हरि प्रगट पैज पुरवन सदा, साखि सुणिय सुख पाइये।।
भगत कष्ट सुणि परसराम प्रभु, आवण की निरवाहिये।।४२।।

(छप्पय)--कहूँ चराई गाय, कहूँ गिरवर कर धारे।।
कहूँ पूरये चीर, कहूँ गज ग्राह उवारे।।
कहूँ कहूँ बहु भेष, हेति भगतनि कै धारैं।।
कहूँ कहूँ सुरकाज, सारि बहु असुर संघारै।।
करी सकल की टहल हरि जहि, जहि जिनि जिनि हरि हरि कही।।
परसा प्रभू हमरो कह्यो, करत नाहिं धीरौ रही।।४३।।

(छप्पय)--का करणी का कर्म, जो सरम सोखण सुख नाहीं।।
का सर्यो बहु भर्म जो, वस्यौ भै हरण न मांही।।
कहा साधन सिधि जो, सोधि मन जात न साध्यौ।।
कहा विद्या वकवाद, सुमरि हरि स्वाद न लाध्यो।।
अरु कहौ सुणु कोउ कोटियक, वात न काहू काम की।।
जगत उजागर प्रसराम यक, साखि प्रगट हरिनाम की।।४४।।

(छप्पय)--कछु करि सो हरि करै, औरका कियाँ ना होइ।।
औरका कियाँ असत्य है, सत्य हरि करिहै सोइ।।

---

* छप्पय में एक पंक्ति कम।

तन मन धन दातार, हरि जीव कौ अंतर्जामी।।
हरण करण सुसमरथ, भरण पोषण सुख नामी।।
औरु साखि विहुणी बात कौ, मानै काहू की कही।।
भैंसि मूई गुण परसराम, दूझै तो कहिवो सही।।४५।।

(छप्पय)--यक सुमिर सांच नांव, हरि झूठ परहरि प्राणी।।
चलत न चलि है संगि, विलसि दिन चार विडानी।।
कहा देस धन धाम, कहँ घोड़ा कहा हाथी।।
पुत्र कलित्र नाहिं देह, अंत कोउ संग ना साथी।।
कहा चंवर कहा छत्र रु कहा, राज पांट सुपनौ सबै।।
जनम सुफल परसराम सबी, तजि करि हरि भजिये तबै।।४६।।

(छप्पय)--मुख विहुण कहिय कहा, का श्रवनाँ विनि सुणिये।।
कहादिष्टि बिन देखिये, नाक बिनु गंध न गुणिये।।
कर विहुण करिबो का, कहा चरणां बिन चलिबो।।
कहा आस हरि हीण, कहा मनसा जगि मिलबो।।
भाव विहूण न भगति फल विण, वादल वरीखा ना कहिं।।
भजन प्रेम बिनु परसराम, नर हरि बिनु सोभै नाहिं।।४७।।

(छप्पय)--ज्यौं बीज पलटि भू तैं भयो नर, कह्यो नीर तैं विनाणी।।
कह्यो काम दुधा कै, जो खात खड पीवत पाणी।।
भयो स्वाति रति सीप, पलटि पाणी तैं मोती।।
कर्यो केलि कुँ कपूर, स्वाति सों मिलत जु होती।।
ज्यौं कीट पलटि भयो भ्रंग यौं, तन मन हरि लिव लीण कौ।।
हरि सुमरत भयो परसराम, जनम पलट कुल हीण कौ।।४८।।

(छप्पय)--पावन हरि को नाउं, जिकै सुमरै सो पावन।।
पावन हरि कौ ध्यान, करि न को रहत अपावन।।
पावन हरि को दरस, प्रगट सबकौं सुखरासी।।
पर्म पावन हरि परस, करण पावन कुँबजासी।।
पावन हरि गुणगान हसि, हरि गावत गनिका तिरी।

हरिपद पावन परसराम, रज पावन सिल सुद्धरी ।।४६।।

(छप्पय)--सुमरि सुमरि हरिनाम, होत पतितन तैं पावन।।
भव संकट पुनरेपि, बहुरि नांहिन फिरि आवन।।
रहिवो हरि की सरण, सदा सुख मैं सुख आसै।।
चर्ण कंवल विश्राम, काल जातैं सुणि नासै।।
औरु जीव जंत्र हरि विमुख कौं, सौधि जल वग ज्युँजम चरै।।
हरि समथ् की प्रसराम जिकौ, सरणि जाइ सोइ उबरै।।५०।।

(छप्पय)--रवि कौ उदौ प्रकास, दरसि निसि जात न जाणी।।
युँ हरि सुम्रिन सुणि रोर, जात फिरि पीव न पाणी।।
जात भोजन सुँ भूख, नीर तैं तृषा न होई।।
युँ जहँ बसै हरिनाम, देह तैं दोख न कोई।।
हरि सुमरत अघदाग युँ जात, नाहिन कौ का कहि सकै।।
अग्नि आंच तैं परसराम ज्यौं, चीर म नीर न रहि सकै।।५१।।

(छप्पय)--हरि तारण गज ग्राह, सु हरि गनिका द्विज तारण।।
गीध वन वधिक, हरि सुतखर निसतारण।।
वकी वकासुर असुर, होत पतितन तैं पावन।।
हरि सनेह भरि भाव, भजत सु न रहत अपावन।।
हरि हैं तारण सिल सिंधु पारि, पद रज तैं द्विज घरणि कौं।।
जु कृपा सिंधु गुण परसराम, अभै दयानिधि सरणि कौ।।५२।।

(छप्पय)--तिमर हरण हरि नाम, सति सुमरै जोइ प्राणी।।
भाण किरनि भै रैंनि, जात दुरि कहूँ न जाणी।।
हरि पावक अघदवण, जु आय अंतर गति जागै।।
जात भागि ग्रह त्यागि, ज्युँ कीट कंगारि न लागै।।
सह न सकत घन गर्ज कौं ज्यौं, सारदूल सुनि सुनि मरै।।
यौं हरि सुमरत अघ प्रसराम, जात भागि परतैं परै।।५३।।

(छप्पय)--श्रवण सुनत हरिनाम, रोर तन रहत न लागै।।
सुनत सिंघ की गरज, जात जंबुक ज्यौं भागै।।

हरि उचरत त्रय ताप, पाप सू न रहत निमंखी।।
सुनि बंदुक की अवाजि, मनु उडत तरवर सुँ पंखी।।
सहि न सकत हरि असह कौ, नांव सुनत अघ थरहरे।।
ईसौ प्रभु कौं प्रसराम यौं, नर पापी क्यौं पर हरै।।५४।।

(छप्पय)--कहियै मुखि हरि नांउ, श्रवण हरिनाम सुणीजै।।
हरि चर्ण कंवल अघ्राण, नेम नासा सुर पीजै।।
नैण निरखि हरि रूप, मोह मनसा मन लावै।।
हस्त करि हरि सेव हरि, घरि सु पायनि चलि आवै।।
करियै नर दंडौत नित, हरि सनमुख सिर नाइयै।।
यौं करियै पावन जनम नर, प्रेम परसा हरि गाइयै।।५५।।

(छप्पय)--अपणूँ काज सुधारि, लेहु वेगि (यहि) सोंज पराइ।।
मिलि हैं तेजहिं तेज, पवन पवनैं सुनि प्रानी।।
अंधकार व्है जात, सुन्यु मैं सुन्नि समानी।।
जावसि इहां तैं परसराम, जो हरि अमृत पियो नाहिं।।
तो जनमि जनमि जमलोक मैं, मरै जाय जीवै नाहिं।।५६।।*

(छप्पय)--नर उपकार हरि सौं, न कौ सम्रथ असर्ण सर्ण कौं।।
हरि कलप तरवर सकल, कौ सुखदायक दुख हरन कौ।।
सकल विस्ववर पाणि सुँ, पाय पनहीं पहिरावत।।
लीय चंवर कर आपु, आप आगैं सिर नावत।।
सिंघासन बैठारि कैं कियो, तिलक छत्र माथै धर्यो।।
भगति हेति हरि प्रसराम लै, उग्रसेन राजा कर्यो।।५७।।

(छप्पय)--भूप भामिनी कि फौज, सुँ भिडत सोभा न बडाइ।।
हीन लोक हँसि करत, बैठि जहीं होत हथाइ।।
छत्र धारि तहिं तकै, सोइ सुफल वल विडद बखाणउँ।।
मारि बाँधि गरिब नर, सुतौ वात वोछो जग जाणउँ।।

---

* एक पंक्ति कम हैं।

सिंघ बैठे गज कुंभि ताहि, बिडद दीजै सोइ वर्णै ।।
सोई मारि उदरि खणि खात, तौ जात जुवा परसा भणैं ।।५८।।

(छप्पय)--चुगत हंस नग नांव, तहि क्रमी कीट न भावत ।।
नीर खीर निरंवार, करै सोइ हंस कहावत ।।
जलि मछी चुणि खायै, वग न मोती चुणि जाणत ।।
करै हंस कि होड गति, अपणी नाहिं पहिचानत ।।
मान सरोवर हंस घर, वगु छीलर सेवत मरै ।।
परसराम जन हंस कि, कहँ बुगलौ सरभर करै ।।५९।।

(छप्पय)--कहा घूर घर मांहिं, रहत मल सु मिलि अपावन ।।
कहा भोमि घर सुकत परम पावन तैं पावन ।।
कहा डूंडा लहिहत, घर वनहि विदोषै ।।
कहा नीर निर्वाहू परखि सबकौं सुख पोखै ।।
कहा नीच निर्जीव नर मोह, माया सोइ मिलत रहै ।।
कहा साधु संतोष सुख, सुरग ऊंच परसा कहै ।।६०।।

।।३।। सवइया।। दस अवतार चरित ।।

(दुर्मिल) -- प्रथमैं मछ धर्यो जल सायक सोधत नीर सु ध्यान भयै ।।
सोधत सोधि लियो हि संखासुर सोवत जाय पतालि ग्रहै ।।
करसूं उर फारि विहार कियौ उर भीतरि वेदपि काढ़ लियै ।।
प्रसराम कहै प्रभु त्यागि भलौ दुसरैं ब्रह्म कुँ जु दानि दियै ।।१।।

(दुर्मिल) -- जिन कौं रंभ रूप मथ्यौ महाणां रंभ जेणि सु पर्वत पीठ ठये ।।
मेर रई मटुकी करि सागर वासिग कौ कर नेत गहे ।।
बल सूं जु मथ्यौ जलसिंधु महाप्रभु जाणि सवै तत काठि लए ।।
प्रसराम कहै लछमी घरि राखि रु संकर कौ विष चन्द दयै ।।२।।

(दुर्मिल) -- बलि वराह धरै घर ठाढि जु सुन्दर रूप विराजत है ।।
उसना जु गहै प्रथिमा सचु पावत ज्यौं भुवि कैं उपराइ रहै ।।
जाकै अंग वनै ब्रम्हा सिव सोभित रोम रोम सनकादिक है ।।
सबि लोकि रच्यौ मुख भीतरि लै प्रभु तोहि जपौं प्रसराम कहै ।।३।।

(दुर्मिल) -- जय जै नरसिंघ महाबल सौं प्रगटै खंभ तैं जु उदार भयै।।
जिनि मीचु लई हिरणाकुस की तव जाणि समै अर्ध बिंब गहै।।
कर सौं उर फार विहारि कियो असुरादिक तैं जन राखि लयै।।
प्रसराम कहै उर्ध केस धरै नरसिंहहि नृहरि तोहि जयै ।।४।।

(दुर्मिल) -- नरसिंघ सरूप न जायि सह्यौ सु भयो कहा करि हूँ।।
जइकै मरनै हिं अकास डर्यो अबि फटि पर्यो त कहा गिरि हूँ।।
सेस धुहैं धर धूजत है सुर ही उगमंगि भरी ढरि हूँ।।
प्रसराम कहै तव तैं असुरादिक देखि सही अबकैं मरि हूँ।।५।।

(दुर्मिल) -- राज दुवारि गयै द्विज हो मुख वाणि सुवेद सुणावण कूं।।
सुनतैं सुख मानि चलै बलिराय हितू सौं हरि कौ द्रस पावन कूं।।
द्रसत प्रसत भूलि रहै जबि सुक्र गयै समझावन कूं ।।
प्रसराम कहै प्रभु वामन रूप धर्यो बलि को जु डिगावन कूं।।६।।

(दुर्मिल) -- सु डिगै कइसैं जिनि टेक गही सति सेवग जो व्रतधारि कहै।।
जिनि दान दई पृथवी पति कूं तिनि पूठिम पावत भार सहै।।
छलनैं कुँ गयौ सुँइ आप छल्यौ सु बिना जनकौ इसिटेक गहै।।
प्रसराम कहै व तँतीस लियै बलि कै चत्रमास दुवारि रहै।।७।।

(दुर्मिल)-- असुरां सिर जोध महादल कौ पति सीहश्रवाह संग्राम हये।।
सबही जु खित्रीवल हीण मिटै हुइ निस्सत कच्छनि कच्छ रहे।।
तबतैं भुवदानि दई विप्रासु महा प्रभु दीन दयाल भये।।
प्रसराभ संभारि पिता पति राखन नाथ अनाथ सुनाथ किये।।८।।

(मन्दिरा) -- सो भजराम क्रपाल क्रपानिधि जाहि भज्यां सुख पाइये जू।।
जो जगदीस अजोध्या क नायक ताहि क दास क़हाइय जू।।
जद्यपि राजहि आन बड़े बड़ तार्हिं न सीस नवाइय जू।।
प्रस राम कहै प्रभु रामधणी रसंनां रचि राघहि गाइय जू।।६।।

(किरीट) -- ठाकुर दीन दयाल क्रपा निधि राम सितापति है सुखदायक।।
रघु नाथ नरेस सवै दुख टारण जो जगदीस अजोध्या नायक।।
जाँक प्रताप तिरैं सिलसागर सिंधु अगाहि महा जल सायक।।
प्रसराम कह सोइ दास डिगै कित जाक वहै प्रभुराम सहायक ।।१०।।

(दुर्मिल) -- तजियो वकुंठ भजी मथुरा उग्रसेन क राजि कि चिंतधनी।।
औतरे मनमोहन आय तही तबि तैं सुख मानि जु सेस सुनी।।
काम सुरा असुरादि संघारन ऊध्व अक्रूर कि बात बनी।।
प्रसराम कहै वसुदेव पिता देवकी सुत सुन्दर स्याम धनी।।११।।

(सुन्दरी)--जगनाथ जगदीस सकलू पति भोग पुरंदर बैठहि आई।।
जुह पूर्ण ब्रम्ह सकल सुख की निधि प्रगट दीसह हरिराई।।
जाकै हीरा नाभहि जोग विधि सुन्दर चंदन देह पर्म सुखदाई।।
प्रसराम कहै प्रभु कौ द्रस पावत गावत सुणत सबै सुखदाई।।१२।।

(दुर्मिल)--कलि केवल सार विकार निवार न तारन येक कहाइय रे।।
तजि सक निसंक भजौ भगवंत अनत कुँ अंत न पाइय रे।।
जहि भेद न छेद निषेध निरूपण नांव सही जग गाइये रे।।
प्रसराम इसे प्रभु कूं दुतिया निकलंकि कलंक न लाइय रे।।१३।।

।।४।। रघुनाथ चरित ।।

(घनाक्षरी)--ऊतरै सागर तीर पाथरि बंधायो नीर,
रथ आयौ राम जी कौ देखि ध्वजा फरकी।।
जाकै संगि आई सैणि, आवरी गइ है रेणि,
देखि कैं भयाण तैणि, उर लंका धरकी।।
राम कहि हौ रावना, जु पतित कौ पावना,
यौं कहत मंदोदरी, नारि तैरे घर की।।
प्रसराम प्रभु राम, आयै हैं सारण काम,
सुनत ही यहि नाम, सुर बंदि हरखी।।१।।

(मुक्त-छन्द घनाक्षरी लयाधार)--
राम स्याम सुंदर सरीर, तारन सेना सुनीर,
उदित उदधि तीर, सबही नवाइ सीस, जाय डेरा दियै।।
अति ही सुकपिदल, देखियत महाबल, माचि रह्यो
खल भल, आई न गई कौ छेह, घासै हिये हियै।।
वाजै वांदर वूंकार, कूदै करै किलकार,

पदम अठारह जानि, अपणी समीप मांनि, मेलि राघौ लियै॥
सारण सुराँ कै काम, ऐसै प्रभु परसराम, भजै
जै सुनैं सुनाम, जेते केते द्रसपाय, जीव जंत्र जियै॥२॥

(घनाक्षरी)-रायां राय रघुवीर, कपी इन्द्र सूर धीर
प्रगट भयै भौ हरि, जु असुरेस हेरै॥
आयै हैं सीया कैं कीयै, वीरा रिण मन दियै,
कपि कौ समूह लियै, सु लंकागढ़ घेरैं॥
कनक कवच साजि, आपण पैं राम राजि,
आतुर जुद्ध कै काजि, लागो सु लेहू टेरैं॥
सांरग सार्‌यो सुकरि, ऐंच्यौं वली वाणि भरि,
परसा प्रभु पकरि ॥३॥

(दुर्मिल सवैया)--होड करै श्री सिंघ कि जंबुक
सीस तुरावणहीं कि तथा॥
अरु स्यार सिंघासण सिंघ कुँ
ताकत स्या भयो कछु सिंघ जथा॥
स्यार कुँ स्यार सिंघ कौ सिंघ-
रावण राम विचार कथा॥
परसा श्री नाथ सजीवनि सौं-
सु अनाथ करै अधिकी अनिथा॥४॥

(दुर्मिल सवैया)-पति सौं व सनेह राखि सक्यो-
रति यौं जु खिसी दस माथनि तैं॥
अरु जंबुक जोरि जमाति करी
तौ का सिंघ डर्यो इन्ह घातनि तैं।
कछुबै न सर्यो तिन तैं परसा-
सु अकेल भलो वैसे साथनि तैं॥५॥[1]

---

१. एक पंक्ति कम।

(मुक्त छन्द) (घनाक्षरी लयाधार)--

भलैं रघुवीर जाणै जन पीर, आये सती भीर-
ल्यायै सोई पाण पदम अठारहइ गइ, अंत न पाइये जू।।
जु मिली दल मेलि, आवै क्रत केलि, वन चर
भीर गयै दधि तीर कहै राम, सिंधु बधाइये जू।।
जु उतारिये पारि, जु लंक दुवारि, सती मुख देखि कहै,
राम राम समाधि सुणाय सबै, दुख जाय तवै जीयरै सुख पाइये जु।।
जु लिख्यो हरि नांउ, सिला कियै नाँव, बंधाइये-
पाज पखाण जिहाज ऐसैं कपि सेन उतारिये जू।।
प्रसराम कहै जब भीर परै, बिनु राम न कोय सम्हारिये जू ।।६।।[1]

(घनाक्षरी)-लीयौ कर बाण, न दैय जु जाण, ठाढौ गढ
छूटि छूटि सु रावण बोल सम्हारियै जू।।
महाबली सूर, जो पड्यौ रिण चूर, भयो पूर चैं पूर-
सु जोध सौं जोध पछारियै जू।।
गिरै भुज बीस, टरै दस सीस, धसै धर कौं
सु तो असुराँपति रावण मारियै जू।।
प्रसराम कहै प्रभु राम लरै तबै, धरा पै
कौ असु तेज सम्हारियै जु ।।७।।

(दुर्मिल सवैया)--

इस्य राम प्रतापु लरै अपु आपु सदा रथ वेध विचारिय जू।।
गज सौं गज चूरि हयो असु सौं असु कौट सुँ कौट ढहाइय जू।।
पौलि पगार रु ढहै सिरदार बितो धुंधकार। सुलंक त्रिकोट प्रजारिय जू।।
प्रसराम कहै प्रभुराम क्रपा करि भीखन राज बठारिय जू।।८।।

(दुर्मिल सवैया)--

रघुनाथ कहै अब कैं न मिटै मुख तैं निकरी तब तैं जु सही।।
मिल्यौ जबि आय पर्यो निज पाय तही हित तां कि वदै न कही।।

---

१. एक पंक्ति अधिक ।

सब ही दुख टारि जु बात विचारि निर्भै करि लंक निसंक दई॥
प्रसराम कहै, प्रभुराम सही जँकि त्याग कि टेक सदा निबही॥९॥

(दुर्मिल सवैया)--

भजिये रघुनाथ अनाथ-निवाजन जाहि भजै दुख दोष टरै॥
परताप यसौ कपि कैं कर तैं रम राम लिखै सिलसिंधु तरै॥
सखा मिग्र बाग विधूं स करै असुरां सबि भाजि रु राछि डरै॥
परसा प्रभु सेवत हानि न कौं सुनि लंक बभीषण राज करै ॥१०॥

(दुर्लिम सवैया)--

सिव सीस चढाय चढाय भज्यौ सोइ रावन अंति सुरंक भयौ॥
अजहूँ जु बभीषन राजकरै थिर लंक दई नैक सीस नयो॥
हरिणाकुस कौ विधि सिद्धि दई मरि है नहिं सो हरि अंति हयो॥
परसा प्रभु लै प्रहलाद थप्यो निरभै करि इन्द्र कुँ राज दयो॥११॥

(सुमुखी सवैया)--

कली सिर धारि धरे वलि कैं तर तारि सिलावहु वारि मही।
अरु मछ मार मलाह गयो तरि नांव लियें हरि लोक सही॥
जाणि है सिव सेस विरंचि सवै जिनि साखि सुणी॥
परसा हरि नाँव उधारन तैं पद की रज पै अजगा वरही॥१२॥
चढैं वनचर तिरै जात जड जलधि मैं करत किलकार वूंकार गारै॥
चलै जात सोभित मांनू सुर्गि बादल वणै बांण वरिखा करण फौज धारै॥
यौं तिरत है मनु नांच डूबी न पाषाण की नांव बलिराम सिल सिंधु तारै॥
प्रगट दल मूल परसा प्रभु लंक उपरि गयौ चढि राम संग्राम सारै॥१३॥

(किरीट सवैया)--

ल्याव र ल्याव बुलावत कीरहिं जात भग्यौ फेरि न आँनहिं॥
नांव नदी तिरबै कइ कारन है रघुनाथ कह्यौ किन मानहिं॥
जाकउ नांव सुन्यां तिरी जात अपावन पारि सबै भव सिंधु भयानहिं॥
ताहि भई परसा गति सानिज लोक चल्यौ मनु बैठि विमानहिं॥१४॥

(सुन्दरी सवैया)--

हरि आपकुँ नाँव पखाण लिखावत जाहि न भावत ताहि दिखावै।।
पिय देखि धुमाँ महिं सिंधु बंधावत आवत है सिल सैल तिरावै।।
सोइ संगि लियैं कपि सैनि षिलावत धावत फूलि सु अंग न मावै।।
परसा प्रभु दानि उदार कहावत पावत मौज जिकौ सिर नावै।।१५।।

(देव घनाक्षरी)--

येक अचिरज बडौ देखि पियहिं जलधि,
माहि तिरत मृग बैठि पाषाण की नांव पर।।
जपत रघुनाथ रघुनाथ बानी विमल,
करत जैकार किलकार कपि कारज कर।।
राम लछिमन हनुमान सुग्रीव वीर सूँ अधिक
सोभित वनैं चढै जलपाज पर।।
लैन पुर भेद नलनील जामवंत कुल,
प्रगट भयैउ आय परसा प्रभू राम चर।।१६।।
राम दलमलू बलि आइ डेरा दये फेर सौं हेरि गढ़ लंक घेरी।।
लई चढ़ि धाय कपि सूर सांचै मतै दसूं दिस किलक सूझै न सेरी।।
पौरि घर वोट बड कोट मंदिर महल, कीए छिन ऐक महि ढाहि ढेरी।।
परसा प्रभुराम सूं वैर कर यूं सर्यो करी घर ठौर मानूं हथेरी।।१७।।

।।५।। श्रीकृष्ण चरित।।

(मदिरा सवैया)--

प्रात समैं मुख देखिय मोहन जागि कहै जसुधा जननी।।
भोर भयौ सविता समि है देखि चंद भ मंद मिटी रजनी।।
जो न पत्याहु सुनूं दधि घूमत नेत गहै ब्रज की रवनी।।
प्रसराम कह जननी जग जीवन द्रस देऊ त्रिय लोक धनी।।१।।

(मदिरा सवैया)--

जागि गुपाल घटि रजनी सुनि गावत है जन गीत नयै।।
देखि उदौ रवि तैं सकुचै उडनाँ उड्डुनाथ लजाय रहै।।

ब्रजकि ब्रजनारि सबि सीमिटिं बेंचन कूँ दधि माट लयै।।
प्रसराम कह प्रभु सौ ब सखा सुनि स्याम सबै पहिलै न गये।।२।।

(दुर्मिल सवैया)--

(उठि) प्रात समैं निकसी दधि बैंचन ग्वालनि बेख बल्यांवन कौं।।
इततैं मन मोहन धेन सखा ब्रिद्रावन जात चरावन कौं।।
वन मांहि गई तबि रोकि लई नदनंदन दान उगाहन कौं।।
प्रसराम कहै प्रभु लेत सवै दधि संग सखा तिन खावन कौं।।३।।

(दुर्मिल सवैया)--

तुमि ग्वाल बुलाय लगाय दयै सब घेरि लई उतपात अई।।
सुधकाधकि देत गिरावत गोरस चीर छिनावत देखि दई।।
अबलूँ हम्ह ऐसि सि नांहि सुनी कबहूँ किनहूँ न देखी न कही।।
परसा प्रभु या ब्रज मैं अब तैं तुमि तैं ब्हिचली कछु रीति नई।।४।।

(दुर्मिल सवैया)--

हम्हू गूजरि ग्वालि अहीरि गंवारि अबुद्धि न बुद्धि विधाता दई।।
तिन सौं तुमि हाँसि गही मटुकी सिर तैं हठि बाँह मरोरि लई।।
दइया चतुराई पढैं धुं कहां किंधु नद कह्यौ तुम्ह सीख लई।।
परसा प्रभु भेट बडाइ हमैं हम्ह सौं अब हीण तुमारि भई।।५।।

(दुर्मिल सवैया)--

प्रगटै नंदनंदन ग्वाल लिय जित ही तित प्रीत सुधाय गहीं।।
बनमाहिं रूकी न बसाय कछू अति संकट औघट घाट जहीं।।
करियै कहा और उपाय न कौ हरि ठाडै हुतै सबि आइ तहीं।।
परसा सुखसिंधु समागम होइ सलिता सखी संग छाँडि वही।।६।।

(दुर्मिल सवैया)--

निरखै सुख सिंधु सुमंगल मैं तहिं ठौर ठगी सबि ठाढि रही।।
अति नेह बढ्यौ यत ऊत्तवितैं मन सूं मन जोरि न जान दई।।
अपनी करि आपण आरति सौं मन दै मन मोहन मोहि लई।।
चित दै चित अंतर दूरि कह्यो परसा प्रभु आय मिलाई लई।।७।।

(दुर्मिल सवैया)--

सुनि री सजनी तुमि सौं जु कहूँ कछु पत्य हमारि न आजु रही॥
अपणैं रंगि मारग जात दुती उन्ह कान्ह अजान गिराई दई॥
मटकी पटकी झट चीर गह्यौ चित्त चोरि लयो कछु बात कही॥
मुख तैं मुसकी उर लाइ लई तबि जाउ कहूँ वन बीच गही॥
परसा प्रभु स्याम सखा बिन हे संगि मोहि चलावत हूँ न गई॥८॥
कूनैं कह्यौ दधि दान भयौ कबु रीति नई जु चलावत चोर॥
काकै तुम्ह हौ जु कहावत को जु वरवट उठावत सोर॥
जवै लग नाहिं न कंस कहै चलि हैं न तुमारो तबै लग जोर॥
परसा प्रभु स्याम कहा पति रहि है जगि रहपट चारि लगाय हूँ ओर॥९॥
कौंण हो री तुम्ह नेक ठाढी रहौ अरु वै ह कहा जु लियैं तुम्ह जात॥
आई कहूँ तैं रु जैहो कहूँ अरु कौन की हौ जु कहौ नाहि बात॥
अरु कौनैं कह्यो तुम्ह जाहू नृभै भई दान न दोऊ चली इतरात॥
प्रसराम कहे प्रभु रोकि रह्यो निज आय वणी अब कैं अतिघात॥१०॥

(दुर्मिल सवैया)--

निडरी निरभै न डरै उर तैं डरपाय भलै नंद कै नंदना॥
देखियौ अति कंस कुमाण सहै तुम्ह बौलत हौ अरुसी रसनां॥
छाँडि छाँडि र चीर गिरै मटुकी हठि तोरत हार कंचू कसना॥
प्रसराम कहै प्रभु जानन देहुं सु लै हुँ सबै इततैं इतनां॥११॥

(मालिनी सवैया)--

आँखि दिखाय डरावत हौ धिठ रौकत हौ तुम्ह कौण गुमानी॥
ग्वालिन जात सुधी कछु जाणिय काहि कुँ माँगत हौ तुम्ह दानी॥
जाहु घरैं पांय लागति हूँ कछु नाहि गिनू हुँ जु कान्ह कुँ मानी॥
प्रसराम कहै प्रभु सूं ग्वालनी कछु है व कहा हमरो सुलतानी॥१२॥

(सुन्दरी सवैया)--

देवकी वसु आनि दयौ असु कै डरि नद प्रताप त्रिभै न डरातू॥
तुम्ह हीं जु भयै दधि रोकन कौं अरु दान उगाहन कौं इतरातू॥
इतनी न सहूँ सबि कंस कहूँ हुँ रु देखि जु तोहि लगाय हुँ हाथू॥

प्रसराम कहै प्रभु सौं व सखा सम बोलत बौलन नैंक लजातू॥१३॥

(दुर्मिल सवैया)--

सुनुँरी हुँ सखी समझाय कहूं कति वादि वकौ झोर करौ।
इतनी कहुँ कांनि न मानित हौ कत स्यामहि सन्मुख होय लरौ॥
देखिये नंद भूप खरे मटुकी किन भेट उतारि धरौ॥
बडभाग तुम्हारहिं आजु मिलै परसा प्रभु कै सबि पायँ परौ॥१४॥

(दुर्मिल सवैया)--

स्याम सुजान सुनौ किन हौ दधि दान कि काननि बात भई॥
डगरैं नित आवत जात सदा सु इसी हम्ह सौं किनहूं न कही॥
वाट छाँडि कहौं जिनि रोकि रहै कछु राज द्विराजिहि नाहिं भई॥
परसा प्रभु राखति हूँ तुम्हरी पति कंस कहूं नहिं जात सही॥१५॥

(दुर्मिल सवैया)--

तबि ग्वालनि जाय क नंदपुरी जसुदा सुँ बरावरि राड करी॥
अरु बोल कुँ बोल निसंक कहै मटुकी ढरकाय दुवारि धरी॥
अबि आवन जान रह्यो दधि बेचन रीति नई तुम्ह तैं जु परी॥
प्रसराम कहै प्रभु मोहन कैं दुख ग्वालि पुकारति रीस भरी॥१६॥
ब्रजहूं किन लाल जु मोहन गवाल सु मांगत दान सुजान कन्हाई॥
चरावत धेन बजावत बेन ठाढो द्रुम छांहि वृंदावन मांहि सुरोकि रहाई॥
जमना कैंब तीर गही बलवीर मही कौ माठ लिये जाउं वाट सुजान न पाई॥
फार्यो मेरो चीर मानई हीर सु नंदराय कहूं कंस जाय न रहत भलाई॥
प्रसराम कहै बरजी न रहै अति आतुर ग्वाल पुकार न आई॥१७॥[1]

(दुर्मिल सवैया)--

जननी जसुदा जुरि जाय कहै म्हरु कान्ह अनार भयो कदि कौ॥
तुम्ह काह कुँ कोसति हौ दुखिहां इहँ दूध दही हमरै हदि कौ॥
लजहूं सबि माटुकि भरी दहूं जु म्हरे ह मनोहर कौसति कौ॥
प्रसराम कहै प्रभु प्यारो खरो मनमोहन जू जसुदा नंद कौ॥१८॥

---

१. एक पंक्ति अधिक है।

(दुर्मिल सवैया)--

डलिया ज्युँ व पेट झुक्यौं कटि तैं निकसै दल बाहरि कूँ छटि कै।।
सीस बन्यौ मनुँ सूप अजीरन पाव पटा करहूँ छनि कै।।
यक देखिरि औरत मा सुँ सखी मुख गूंछलि ग्वाल कि गूंछनि कै।।
कहियै व कहां जु वणैं परसा अहिनाम अजा किसि पूंछनि कै।।१६।।

(सुन्दरी सवैया)--

यक वासिब से हम्ह तुम्ह जु सदा यक ठौर बढे सब जाणु तिहारी।।
दान कहूँ त व सीखि लियो तुम्ह बापि सिखाय किधूं महतारी।।
दान कुँनाम सुन्या रिस आवत जान द ढीढ कि देतहुँ गारी।।
अणहोति परसा प्रभू परहारि हुती सुधि बात कहौ बलिहारी।।२०।।
जैहो जबै जबि दैहो सबै री दान निबेरि हमारौ हमैं।।
री मान कह्यो अभिमान भरी सतराय रही कत ग्वालिन मैं।।
नैक मोहि चखाय धौं स्वाद किसोयक धौं हाथि तिहारे जमैं।।
परसा प्रभु कहत न राखि रहूं सब देहूं री फेरि तुमारो तुमैं।।२१।।
दान मही मटुकी महीयारी कौं तैं काहै कौं दान कह्यौ सु कहारी।।
सव दान की रासि सिंगार सजै क्यौं जैहोरी मेटि जगाति हमारी।।
हांसल गले हरी दुलरी दुल दीसत है सुन्दरि अति भाल तुमारी।।
चिबुका नक बैसरि काजर कर परसा प्रभु कौं किन देत गंवारी।।२२।।

(मालिनी सवैया)--

मान सहैं तुम्ह देखत हौ नित जात मह्यौ बेचनी ब्रज ग्रांवैं।।
ठाढि राखी कहि लैह तुमै अरु रोकि हमैं न कछू सुख पावैं।।
वाप कि रीति चलौ जु बले नित आपकि रीति तजौ समझावैं।।
छाडि अनीति यसी परसा प्रभु मानि कह्यो सबि ही सिर नावैं।।२३।।
कंसहि मिली न मानत हम कूं तुम्ह झूठी कहां सांच संग लरिहौं।।
हमरी बिन संगति या ब्रज में कंस मिलि रही कैसें निसतरिहौं।।
धीठ भई बोलति हौ तुम्ह.सज्जन लोकन मैं लाजनि मरिहौं।।
अबु छाडौ झौर कहै प्रीत परसा दान दियां बिनु पारि न परिहौं।।२४।।

काहे कौं तरावत बात सुनि हूँ तौ तोहि कहत मन दीयें॥
तेरी कहा चलत तू कौ है जैहौ घरहि बिनु दान कैं दीयें॥
तेरे पावन माहिं सयानी रुचि उपजत अति गोरस पीयें॥
परसा प्रभु कहत सखी सुणि खासौ सुख पावत जल पीयें॥२५॥
अभिमान भरी बोलत कित सरभरि झौरत जौ समझायें॥
मुकता सुनहीं बिन दान दिये जैहो व घरहिं हरि कौ सिरनायें॥
हम्ह अपनै मनकी न दुरावत ए सुनत सवै हम्ह कहत सुनायें॥
परसा प्रभु मांगत देत न ये सोई दैहैं जाय घरहि पहुँचायें॥२६॥

॥६॥ सिंगार कौ जोडौ॥

(दुर्मिल सवैया)--

हरि तोहि मनावत मान तजै तहिं मानु गह्यौं किहि कारज कौं॥
भगवंत भयेउ अधीन तिहारि रि मानि सखी मनुहारि जकौं॥
उठि वेगि मिलौ परसा प्रभु सौं अपणी तन सौं जस वारिज कौं॥१॥[1]

(देव घनाक्षरी)--

धात प्रवाह दयें सुख की रसरंग सुचंग, सुजाणि गढी राधिका जु रची मन मोहन कौं॥
विचखिण नारि विधाता विचारि इसी, भेटी जु करी हरि कै घरि सुंदरि सोहन कौं॥
संग सोभि रहै रुचि राज कुंवारि मुरारि, वणै मानूं हंस ठये सर डोहन कौं॥
परसराम कहै नंदनंदन , की जोरि बनी जग मोहन कौं॥२॥

(देव घनाक्षरी)--

जाकै कुंडल कुटिल खुंभी नक वेसरि केसरि, तिलक लिलाट रचे
व्रखभां सुता जु विराज रही
जु रची सिरमंग वेणी जु भुजंग रु गुहे विचि फूलि रहै मानूँ अलि भूलि सुवास भई॥
जाकै)कज्जल नैन वदन ससि सुंदर कठ, कपोतनि हार हीयें कंचुकि तन सु उरि लाग रई।
कर कंकण चूरिका अंगुरी मुद्रिका विचि, लाल पुंची रुचि राज कुंवारिजु विचारि ठई॥
परसराम कहै हरि नारि बनीता सम, रतिपति नाहिं जात कही॥३॥

---

१. एक पंक्ति कम है।

(मुक्त-छन्द) (घनाक्षरी लयाधार)--

राधिका जु सिंगार ठये, रचि कैं सिर सोभित चीर बन्यो, लहंगा नारी कुंजर पहरन, प्रीति नई॥
जाकै पाय बनैं घुघरा, बिछिया नेवरी टोडर, चलतैं घन की छबि लागि रही॥
जु चली गज रीति, गहैं रस प्रीति, मिली हरि जाय गये दुखदाय निहाल भई॥
परसराम कहै, मोहे स्याम धनी, राधिका सम सुन्दरि आई न मही॥४॥

जाकौ अबु ध्यान धरैं मुनि खोज, सोई खोसि लीयो व्रखभान कुमारी॥
हाथि वैकंठ की सौंज चढी तबतैं न वदे काहू महिया री॥
अंग समाय लये नंदनंदन देखन देत नाहिं पिय प्यारी॥
प्रसराम कहै प्रभु है राधिका वसि सौरै सहस सवै पचिहारी॥५॥

॥ ७ ॥ सुदामा चरित ॥

(घनाक्षरी)--

तंदुल बनाय बांधि, गयै द्वारिका कूँ द्विज, न्हाय धोय टीकै काढि, पैसे पोरि हरि की॥
बोलि बूझै द्वारपाल, भेद लै पठाये माँहि, भइया गुपाल मैरे, मानै जो तौ परि की॥
राम राम कहौ मैरो, द्वारिका कै नाथ सेती आदरौ तौ आऊँ आगैं, कहूँ साची सरि की॥
प्रसराम प्रभु आयै, सनमुख पांव धारि, लियै बोलि आलिझालि, दूरि डारी फरि की॥१॥

(घनाक्षरी)--

वंदै नाथ पाद पाणि, आपणौ सनेही जाणि, बैठारे सिंघासनांनि, राखि नीकैं लजहूँ॥
धोय धाय उरि लाय, छिरकै भुवन जाय पीये हैं पखारि पाय, डारि नाहीं रज हूँ॥
बूझी कुसरात बा, घर की समालिनाथ, द्विजहूँ भयै सुनाथ, डारि काढि कजहूँ॥
प्रसराम सखा भाई, खेलौ प्रभु हासि माहिं, ल्यायै हौ सुदेत नाहिं, राख्यो कहा अजहूँ॥२॥

(रूप घनाक्षरी)--

घर की पठाये तिया, किधौं आपु आयै इहाँ, एतै द्यौस लायै कहां, दरसहुँ न आए हौ॥
हरि के भैया कहायै, स्वागुं सौ बनाय आयै, हम्ह कौं तो अति भायै, दीसत घर धायै हौ॥
गंथ कै पहरि आये, दूसरै कहां दुराये, कंवला पीय रिझाये, भेट कौं काह ल्याये हौ॥
कछु हौ सु आगै देऊ, दरस पा लाभ लेहूँ, प्रसराम फल देऊ, लेउ करि जो आए हौ॥३॥

(मुक्त - छन्द)

(घनाक्षरी लयाधार)--

हरि दीनबंधु दीन कौ दयाल, क्रपाल सौं न कोई क्रपन पाल,

कीनी द्विज की संभाल, संका सब खोई॥
हरि मेटि दीनोहै फूस कौ घर, फेरि कीनूहै सुदामा पुर, ऐसौ दातार अपरंपर, सेवत सुख होई॥
मेटि डारी मठैया की ठौर, कीनें बनाय धाम धौलहर, करि जानैं सर ऊसर, असरन सरन सोई॥
मानि लीनू सुदामा कौ भाव, जिनि करि लीनू सुरंक तैं राव,
प्रसराम प्रभु कौ सुभावु, जानैं सब कोई॥४॥

(देव घनाक्षरी)--

मिलै भेटै नाथ साथि द्वारिका तैं बिदा भये, घरकौ सिधारे हैं पैं मन माहि तौ मलीन से॥
कछु लेजु देजु देख्यौ नांहि चिंता छाये चलै, जात अति ही उदास लागै दीसै भारी छीन से॥
कौ मेटै आपदा दै आपणै घर की संपदा, बोलत द्विज दीन भये लागत लिवलीन से॥
कहैं कहा प्रसराम जात न सुधारी बात, दीनानाथ हमहिं कीनेहैं दीनहू तैं दीन से॥५॥

(घनाक्षरी)--

ऊँचे धाम धौरहर, दूर ही तैं देखियत, कनक कलस जहीं, पौरि कौन कीनई॥
नगरी कै आसवास, ढूंढि आयो प्रसराम, द्वार ही पुकारि कह्यौ, नारिहूं कहूं गई॥
इतनूं वचन सुनि, त्रियाहू तौ दौरि आई, आगैं क्यों न आवौं अबि, डरत कहा दई॥
तू तौ काहू भोरई री, सांची सी कहौ धौं मोंहि, तुटी सी मढैया मोरी, इहां तैं कहूँ गई॥६॥

(घनाक्षरी)--

ए कौंन कै हैं धाम धौलहर भामहूं तोहि, बूझूं मोहि कहौ तुम्ह नीकै समझाय कैं॥
यै ऊंची पौरि पगारि कोट कांगुरे कलस, कौणे कियै हैं इहाँ कनक कै बनाय कैं॥
टटियांनिकी टापरी मांहि परयौ रहतौ, दुखी सुखी मांगि तांगि लूखी सूखी खाय कैं॥
कछु औरु जसे कियौ सु देख्यो नाहिं प्रसराम, आयै हैं मढैया थिति गांठि कह गंवाय कैं॥७॥
टपि गयी टापरी फूस की तैं कहूं बीजैं मंदिर सुदेखत फिरानूं॥
देखि जो लाभ कछु दरस परस्यां भयो सु तौ द्वारिकानाथ पैं अब न जानूं॥
पर्यो रहतौ कहुँ मांगि खातौ सदा सु तौ या त्रिया कौ कह्यो सुणि कैं भुलानूं॥
देयौ न लियौं कछू मोहि परसा प्रभु सुतौ वादिही जात आवत डुलानूं॥८॥

(मुक्त- छन्द) (घनाक्षरी लयाधार)--

मंढइया मंढइया, लै रहे मंढइया, जा मैं कहा खाबूँ, खानकूं न पीवन कौं,
तहा कछू लैन कौं न दैन कौं॥

परम मन्दिर विश्राम धाम, जिनि रचै ताकौं आसीस देऊ संत,
तुम्ह क्यौं न जिनकैं सौ कंत, सांवल तन सैन कौं ।।
जिन दीनूं है विभौं विस्तार, भरि दीये हैं भुवन भंडार, जहूँ-
गयौ हौ ल्यौ लाए जापैं कछू लैन कौं ।।
प्रसराम प्रभु हैं कृपाल, तुम्ह तैं भयै कृपन पाल, अबु छाँडौ
मठैया कौ मोह, आदरौ सुंदर ऐंन कौं ।।६ ।।

(घनाक्षरी)--

पीव कै कारणै पौरि आई हौं आतुरी दौरि, इहां आवौ मैरे नाथ मोही तैं लजात हौ।।
हूँ इहाँ तैं आऊं तेहि चलै उलटे पछाहूँ, नैक तौ सिराय पीवो तातो काहे खात हौ।।
लीनै हैं बुलाय कंत कह्यो तौ सुनूँ हौ संत, आपनै भुवन त्यागैं भूलै कहा जात हौ।।
परसराम पाई बात हूँ जाने हौ खिसात, सूधै किन आवौ घर आयै हू फिरात हौ।।१०।।

(मुक्त - छन्द) (घनाक्षरी लयाधार)--

पीय बैठारे आसन बनाय, प्रीया प्रीति करि पखारे हैं-
पाय, आरती उतारि नारि, वार वार डारती है राई लूंण कौ।।
तुम्ह कहौ किन मोहि भाम, येहि कौंन केहैं धौरे धाम, ऐसै-
कियेहैं न काहू कूं काहू, अरु दीयै हैं न कौघ कौण कौं।।
जाकौ पावन कौं गये हौं दरस, तोकौ नैंकहुँ न लाग्यो परस,
वार वार ऐसी कहत हौ, सु मांनू किन ताही सौं न कौं।।
हरि सौ न दाता कोई, देख्यों न सुन्यो है सोई, परसराम-
कै प्रभु बिना कंत कौ दैहै करि ऐसै भूंन कौ ।।११ ।।

।। ८ ।। परबोध कौ जोडौ ।।

(रूप घनाक्षरी)--

मानिख औतार पाइ सक्यो न गोविंद गाइ, जनम कौं चल्यौ ठगाइ, हरि विनु वादि ही।।
बंध्यौ अंध माया मोह, धंधमैं निधान खोय, रह्यौ भूलि फूलि सोय, काम केलि खादि ही।।
मेरी मेरी करि-करि, मुयो बूडि कूप परि, गायो नाहिं हरि हरि हारयौ निधि आदि ही।।
जाण्यो नाहिं राम नाम दीनूं तोहि पिंड प्राण तौ परसा आगै सुहाणि, जीव कुं न दादि ही।।१।।

(मुक्त - छन्द) (घनाक्षरी - लयाधार)--

मानिखा औतार सार, पायवौ न वार वार,
डारि कैं सु कूप खार, रतन जनम ऐसौ वादि ही न हारियै॥
ऐसी घात जात हारि, पायबो न फेरी सारि, सोचि देखि-
ध्यान धारि, सांच है कि झूंठ धौ सु, आपहि विचारियै॥
हरि निधि उरि धरि, प्रेम सूं सुबुधि भरि,
नेम धरि ध्याय हरि, हरि हरि हरि हरि, हरि व्रत धारियै॥
सुहरि कृपानिधान, जीव की जीवनि प्रान,
परसा न हारि मान, हाय हाय हाय हाय, हरि न बिसारियै॥२॥

(रूप घनाक्षरी)--

तैं जानी अंत की पार, वीत गयौ अंधकार, चीन्हयौ नाहिं रछिपाल आपणै गुमानि हीं॥
उठ्यौ काल मारि मारि मुदगर दुरि धारि, लग्यौ न कोऊ गुहारि लियौ जीति सु जानि हीं॥
लै जु गयै जमद्वारि सक्यौ न कोवू उवारि, नरक मांहि दीन्हू डारि मानी नाहीं कांनि हीं॥
बहू फिर्यो जूनी खार अधोमुख वारूं वार, तऊ नाहिं मानी हारि परसा सुनि प्राणि हीं॥३॥

(घनाक्षरी)--

हरि कै भजन बिनां, का जनम सु जीवनां, जीवनां जु अजीवनां, हरि निधि हारियें॥
जैसे रंक आथिहीण, भ्रमत भयां न छीन, अति ही उदास दीन, दूरि दुरकारियें॥
जम की जमाति साथि, लीयै जमिलोकि जाति, मुगदर छुरि हाथि, त्रास दै दै मारियें॥
मानै न काहू की संक, रकारा सुनत रंक, परसा समझि डंक, हरि न विसारियें॥४॥

(घनाक्षरी)--

जीव कौं जंजाल जाल, खाय जाय है सुकाल, है न कोई रछिपाल, वादि ही विलाय हैं॥
इन्द्री कैं स्वारथि स्वादि, योंही वस्यो जात वादि, आदर न अंत आदि, दादि हूँ न पाय हैं॥
धाय गह्यो जम धारि, लीयो है पछारि मारि, डारि कैं कठोर खार, धार मैं वहाइ हैं॥
प्रान परवसि पर्यो, जम कैं जंजीर जर्यो, परसा सो मांहि गर्यो, कूंण धौं छुडाय हैं॥५॥

(घनाक्षरी)--

निज नाम नेम जाकै पद है नृवाण ताकै, तास समतूल वीयो सुऔरु कोऊ नाहिं॥
उतिम उदार वानि, नीपजै हीरा की खानि, रतन अमोल तोल सुऔर कोऊ नाहिं॥
नाहिंन घटत लेत, देत खरचत खात, हैत भरे भंडार वार पार कोऊ नाहिं॥

जाणिये परसा दास, जाकै ऐसौ सुविसास, रहत नृभार और कु भार कोऊ नाहिं ।।६ ।।

(घनाक्षरी)--

हरि सौ उदार नाम, सो न भूलियै वे काम, भजिये सु रामनाम, राम सौं ल्यौ लाइये ।।
जाइये न ताहि त्यागि, रहियै ताहि सौं लागि, जीतिये जनम जागि, भागि हरि गाइये ।।
सेई हरि कौं संभारि, प्रेम सौं सुनेम धारि, डारिये न सो विसारि, सु न हरि जाइये ।।
सरन कौं प्रसराम, है सु जीव कौं विश्राम, सीखिये सुनियै नाम, औरु कौं सुनाइये ।।७ ।।

(उल्लाला)--परसा प्रभु की माया बडी, जिनि कीनों जेर जिहान ।
केई त्रीया केई राज, मद केई छल करि मान ।।१ ।।८ ।।

।। ६ ।। नृफल विभै कौ जोडौ ।।

(सुन्दरी सवैया)--धन जोरि जुराइ सकेलि सकालि कुँ छाँडि चल्यौ सब सौंज पसारौ ।।
सिरछत्र धरै रु भुपाल लियैं दल जात सुअंत अकेलि विचारौ ।।
पहिरैं तन चीर सिंगार सबैं तजि जादिन कैं दिन जात उघारौ ।।
परसा सुख भोग विलास करै मरि जाइ लियौ छलि भोमि उतारौ ।।१ ।।

(मालिनी सवैया)--का भय मेर सुमेर वरावरि माया विमूढ सकेलिर साची ।।
का भय छत्र सिंघासन है बडराज भये दरि पातुरि नाची ।।
का भय वेद पुराण अरुझणि पाठ बहु विध्या सुवांची ।।
का भय देस वदेस फिरै परसा हरि भग्ति विनूँ सबि काची ।।२ ।।

(मालिनी सवैया)--का गढ कोट कुटी मठ मंदिर भोपति भोम भये बड राजैं ।।
का भय पोलि पगार ढिगार निसान निसंक रु नौपति बाजैं ।।
का गज वाज मनोरथ सो रथ खोहनि कोटि महादल साजैं ।।
का परसा ध्रग भोग विलास विषै हरि भग्ति बिनूँ सु निकाजैं ।।३ ।।

(दुर्मिल सवैया)--अरु वेद पुराण पढै असकैं वसि अमृत छांडि विकार वधैं ।।
नत्रनी नचियें नट भेष धरैं कछनी क्रम कैं वसि जान सधैं ।।
भजिये रघुनाथ निरंतर होय वही कित भौ जलि भेद लधैं ।।
प्रसराम मिल्या रहियै प्रभु सौं करणी कथनी तुछ कौं न वदैं ।।४ ।।

(दुर्मिल सवैया)--न कछु जग जोगि कथा कवि गायन दाननि पून्य भुलाइय जू ।।
न कछू तप तीरथ वर्त विनां हरि ग्यान न ध्यान लगाइय जू ।।
न कछू दल साहि भये छत्रपति विनां प्रभु दोजगि जाइय जू ।।

परसा प्रभु ठाकुर राम बिना सुमर्यां सुख नाहिं न पाइय जू॥५॥

(मदिरा सवैया)--स्वारथ स्वादि विवादि भरी बुद्धि का कवि चोज बनाय कही॥
का सिधि साधन साधि सह्यौ अरु कर्म अकर्म करे सु सही॥
भर्महुँ आस विसास विनां जमलोक चले जिय जांणि सही॥
कै परसा प्रभु नांव बिना सुख नाहिं कहूँ दुख देहु दही॥६॥

(दुर्मिल सवैया)--बिसासि विनां सुख नांहिं क़हूँ दुख निर्फल देह दही॥
परमारथ स्वारथ सोधि लयो लज्या संगि लालच लागि बही॥
सव वादि गयौ कहिवो करिवो सुनि वै सुं संतोष न प्रीति रही॥
निसि धौस भजै परमेस्वर कौं परसा तिन कौं गुण ग्यान सही॥७॥

(सुन्दरी सवैया)--बकिवौ बकवाद न स्वाद विनां सुख नाहिं कहूँ हरि नांव न आवै॥
रसना रस हीन घसै अलवी झखिवौ रु जंजाल गुपाल न भावै॥
बसिवौ ग्रभ मैं नर नांव बिनूँ खर सूकर स्वानसि जूंनि कहावै॥
परसा ध्रग रूप सु कूप परौ भगवंत भज्यौ नहिं जाहि सुहावै॥८॥

(सुन्दरी सवैया)--तजि स्वारथ स्वाद विवाद विषै रस रामहि राम रम्यो जहि भावै॥
विसरै नहिं नाम निमेष भर्यो भगता भगवंत निरंतर गावै॥
निरभै जन भाव भगति लिये अपनौ नित नेम मन म दुरावै॥
परसा जन जीवनि जांणि सही अपनौं मन राम विनां भर मावै॥९॥

(दुर्मिल सवैया)--नर वै नर सौंज सिरोमनि है जु मिल्यौ वितु वादि न हारिय जु॥
मनसा मन ठौर किये़ँ अपणौं उर अंतर प्रेम पखारिय जू॥
भजिये हित सौं पति पैज धरैं नित नेम इसौव्रत धारिय जू॥
परसा हरि आस विसास धरैं प्रभु दीनदयाल सम्हारिय जू॥१०॥

(सुन्दरी सवैया)--भजि नाथ कुँनाथ अनाथ कुँ बन्धु नूबन्ध सुबन्धन काटि छुडावै॥
मुकता होय राम रमैं निहकाम सुकाम कलप्प न ताहि सतावै॥
गिर कोटिक भार भये अघ जो कनिका यक आगि सु जागि जरावै॥
परसा गुर गोविंद नांव इसौ पतितां पद दैण बिडीद बुलावै॥११॥

(दुर्मिल सवैया)-विप्र काहि सुदाम कुँ भोजन का अरु धूव कहा कछु वैज बढ्यौ॥
अरु व्याध अचार विचार अजामिल कूंण कूंण वकी गुण चित्त चढ्यौ॥

गनिका गज ग्राह गयै सरणैं सुनि साखि तिन कछु वेद पढ्यौ।।
अधिकार यहै जु हिर्दै धरि कैं परसा हित सौं हरिनाम रट्यौ।।१२।।

(दुर्मिल सवैया)--हरि की सरणागति जाइ परै कबु काहि कहौ नहिं काढि दयै।।
सुख दै सबकी प्रतिपाल करी अपणैं करि कैं जन राखि लयै।।
तिन कै सबि ही दुख दोष टरै जमकाल परै पायँ दीन भयै।।
परसा प्रभु कौ जस गावत ही निरभै तिरि कैं भुवपार गयै।।१३।।

(दुर्मिल सवैया)--कहि कौ न तिरै अरु बूडि मरै हरि की सरणागति आय परैं।।
गनिका गज व्याध वकी द्विज सूँ दुखिया पावत पैज बरैं।।
भय भाजि गयै निरभै भजतां अभ राज दियौ ध्रुव ध्यान धरैं।।
परसा प्रभु की सम सूर न कौ अरु दांनि भज्यौ जिनि भीर परैं।।१४।।

(दुर्मिल सवैया)-भजियै भगवंत अनंत सदा सुख ही सुख सेवत सर्णि सही।।
दुख दोष न दीन दयाल भजै गनिकां द्विज पूतना सर्णि रही।।
रछिपाल न कौ हरि नाम जिसौ गज ग्राह तिरै तिनि साखि कही।।
परसा अधमोचन पैज खरी हरि की हरि सेवग सौं निवही।।१५।।

(दुर्मिल सवैया)--भजियै जगदीस अदीस धरैं तजियैं भव संकट सूक बिनां।।
रहियै सरनागत संतन की जिवयै जग जो लगि चार दिनां।।
कलि औरु उपाय कियां सुख नां दुख ही दुख जो लगि जीव तिनां।।
मन कै मल जात न कर्म करैं परसा हरि नृमल नाम बिनां।।१६।।

(दुर्मिल सवैया)--कहि कौं अरु ध्यान धरौं र मरौं पचि वारत पार न पाइय जू।।
जु अगाहि अथाहि भर्यो दरिया सु तिरै सुइ तेरू कहाइय जू।।
जुइ जाइ तिरै सुइ मांहि रहै डरतैं निधि नीर न जाइय जू।।
प्रसराम कहै दरिया दुख है फिरि कैं जन जीवन गाइय जू।।१७।।

(दुर्मिल सवैया)--मनि राम कहाइ जु राम जपै नहिं जो जन दै सुख पावन कूं।।
कित आल जंजाल विषै रस गावत भूलहि जन्म गवावन कूं।।
नहिं देखत नीकट हीं जमदानि जु ठाढहि दान उगाहन कूं।।
प्रसराम कहै प्रभुराम बिना कउ नाहिंन आन छुडावन कूं।।१८।।

(दुर्मिल सवैया)--दुख देखत हैं भगवंत भजै बिनु राति न द्यौस असार भये।।

कछु खाइय ना कछु पाइय ना जु लियौ न दियौ भुव हारि गये॥
कछु नाहिं इतै न कछु व तही ग्रभ जूंनि भ्रम्यौ भृमि वीचि मुये॥
प्रसराम कहै प्रभुराम विना नर जात जन्मपुरि वादि बहे॥१९॥

(दुर्मिल सवैया)--मनि कीर कथा सुणि जू परिक्षीत सुतौ हिरदैं सुख पाय रह्यो॥
सुनतैं जु अहूख परी सुख की रस गोविंद के रंगि राचि रह्यो॥
कहि रे मन राम जु गोविंद जू कह भूलहिं औरहिं गाय रह्यो॥
प्रसराम कहै प्रभुराम कहै बिनु देखि सबै जग जात बह्यो॥२०॥

(सुन्दरी सवैया)-बैठि कहा करही नहि सुम्रण आव घटै दिन नैरूहिं आवै॥
नहिं जाण मुग्ध नर जू हरि कौं विणं सो सुमर्यां जमलोक पठावै॥
आवत जात सदा ग्रभ संकट नांव हरी हिरदै न समावै॥
कछु हेत नहीं परसा प्रभु सौं सब जीवनि कौं जम कौ ग्रह भावै॥२१॥

(मालिनी सवैया)-आज कुं आज कछु करि कारिज काल्हि कुँ काल्हि सुधारिह सोई॥
आज कुँ काज सुधारि न जाणत काल्हि कुँ काज कहा सुख होई॥
आज कुँ काज सर्यां सुख पाइय काल्हि कुँ काज सुँ काज न कोई॥
काल्हि कि आस कसी परसा जन आज कुँ राज कहै सब कोई॥२२॥

(मालिनी सवैया)-हारि चलै हरि सी निधि ही अब तौं आग्हैं जाय कहा सुख पावो॥
हरि न भज्यो पापि अपराधि जंमपुरि जाय कहा सिर नावो॥
पाय जनंम वृथा कित खोव सुफली करी गुविंद गुन गावो॥
का परसा प्रभु राम कहै बिनु काहि अमीलु जनंम गवावो॥२३॥

(घनाक्षरी)--

ऋलू कै ये ग्वाल बाल पाप पूरे पसुपाल, नांव हीन आल जाल, भाखिते असतिही॥
मनमुखी चाऊ चोर, ग्यान हीन अध घोर, ढोर हूं तैं महा ढोर, पसु हूँ तैं अति ही॥
भगति न प्रीति रीति, चालिवो सदा अनीति, लियो जमि कालि जीति, जाइगौ अगति ही॥
हरि सौ हार्यो नजीक, जूंनि पूरी मांगि भीख, परसा न मानी सीख, साध की अपति ही॥२४॥

॥ १० ॥ **भगति साखि कौ जोडौ** ॥

जाकौ भजन करत ब्रम्हा सिव सेस आदि सनकादि कहावत॥
नारदादि निगमादि सुकादिक वै मधु वेण मृदंग बजावत॥
अमरीख ध्रुव तालग है कर ऊधौ विप्र अक्रूर मिलिगावत॥

परसराम प्रभुराम सिंघासन आगैं जु पद प्रहलाद दिखावत ।।१ ।।
जिन अंबरीष द्विज तैं प्रभु राख्यो निर्भै ध्रुव अमरा पद पावै ।।
लंकेसुरी विभीषण लंका तव रुख मांगह इन्द्रापुरि आवै ।।
व्याध गीध विस्वाध जीव बध अधम सकल नीसाण बजावै ।।
परसराम प्रभुराम कृपा तैं देखौ वे वैकुंठ वसावै ।।२ ।।

(दुर्मिल सवैया)-जिन दीन्हु जु मान महाप्रभु पूरन चीर गहै द्रुपदी जन कौं ।।
जिनि कैरव सेन संघार करी करि चक्र लियौ हरि भीषम कौं ।।
जिनि ढाहि जु लंक हयो असुरापति दीनहु है राज भीषन कौं ।।
प्रसराम कहै प्रभुराम सही जिनि राखि लियो जन टीकन कौं ।।३ ।।

(दुर्मिल सवैया)-भव कौ दुख दूरि किया नहिं तौ सुमर्यो जु कहा सुख पावन कौं ।।
अरु दर्सन दैतहिं ना कबहूँ कित ठाकुर भये लजावन कौं ।।
जांचु कहा तव जाचिग मैं बलि कैं जु गयो भुव ल्यावन कौं ।।
प्रसराम कहै प्रभु देहुँ कहा अरु दैवहु तौ जस गावन कौं ।।४ ।।

(दुर्मिल सवैया)-सब ही माहिं मौविन औरु नहीं करता विसु पूरन व्रिद वहूं ।।
अधरैं जू धरी औरु भयो जन तैं प्रगटौं सब माहिं रहूं ।।
दुबध्या तजि भीतरि भेदि भजै तहिकै अघ पावक मांहि दहूँ ।।
भजुं तौ न तजौं चित तैं कबहुं परसा सुणि तौंसुं हुं सांच कहूं ।।५ ।।

(दुर्मिल सवैया)-मनां रमि राम रमापति राघु जु राय समाय रह्यो सबहूं ।।
रज मैं गज मांहि अगाहि पर्यो दरिया दिस वार न पार लहूं ।।
पूरौ हरि सम्रथ सेय सदा बिसरै जिनि जीवन तोहि कहूं ।।
परसा प्रभु सौं दिठ राखि मतौ हरि हौ हरि तेरि सर्णिहि रहूं ।।६ ।।

(दुर्मिल सवैया)-जहि लेख लिख्यो विधनां विधि सौं सु गिटै कित मोहन जान दई ।।
कबहूँ सुख पौढिय सेज सिंघासन आसन तेज तुरंग नई ।।
कबहूँ तिन साँथल ठौर बिनां दुख भोजन भीख भ्रमैं न लही ।।
कबहूँ यक खीर खांड घ्रत भोजन पान कपूर न सौं नूवही ।।
प्रसराम कहै करता करुना मय साँचि रु सांच करै सु सही ।।७ ।।[1]

---

१. एक पंक्ति अधिक है।

(दुर्मिल सवैया)-गनिका गज व्याध वकी द्विज पावन पार गये हरि नाम भणी।।
तरै तुरिया रंगरेज बला हरि नाइ लियें यहि साखि सुणी।।
तारै बहू तब नाम सदा वुणियेक उभै दिस मांचि वुणी।।
परसा जु यहै विधि संकर सेस कहै रु गावै गुण वेद गुणी।।८।।

।। १ ।। **कर्म निंदि कौ जोडौ** ।।
का कर्यो जिगि जो जिगि भुगतान घरि दिष्टि व्यापीक देखे न जांही।।
का कर्यो जोग जो जोगवर पर्यो तप जो तपति भाजी नहीं रही हरि नांव विनि फैलि मांही।।
अंति हरि भजन बिन समझ परसा सकल कर्म करि सर्म भर्में सुमांहिं।।१।।[1]
(घनाक्षरी)-
मानि लियो किनि हरि नहिं मान्यो हिरदै कष्ट आरुभ कीन्हे दुराराधि।।
करम आस न पवन मंत्र जंत्रादि भरम दूरि करि येक हरिनाम आराधि।।
धर गडत बूडंत जलि उडत आकास मैं जु जुडत वै दंत विन अंति उपाधि।।
औरु सिधि साधन सकल डारि परसा कहै साधि जाणै तो हरिनाम कौं साधि।।२।।
(घनाक्षरी)--
कहा मंत्र औरु मति हीण हरि मंत्र बिनु जात जमलोक हरि लोक कूं नांहिं।।
कहा औरु जो कर्म करत हरि कर्म विन जोर करि बरजंता नरकि नर जाहि।।
असुर हरि परहरै आन पूजा करै यौं जात पापी वहै भरमि भव मांहि।।
परहरै पाक परसाद परसा पसू प्रीति करि जगत की जूठि कूं खांहि।।३।।
(घनाक्षरी)--
जनम खोयो भलो भरमत भवसिंधु मांहि वादि आयो बहै वादि जांहि।।
सीख्यो न श्रवनां सुण्यो दिष्टि देख्यो न फिरि हिरदै मुख मांहि हरि नाम नाहीं।।
मति अंध अग्यान सठ फिरत वहिरे भये जनम जड़ जगत की धार मांही।।
इसी करतूती परसराम मुदगरनि की जाय जमद्वार सिरमार खाहीं।।४।।
(घनाक्षरी)--
हंस की गति कौं न पहुंचे कदै काग बहु खात करम कीट भरमि जनम खोयो।।

---

१. एक पंक्ति कम है।

परसराम प्रभुराम सिंघासन आगैं जु पद प्रहलाद दिखावत ॥१॥
जिन अंबरीष द्विज तैं प्रभु राख्यो निर्भै ध्रुव अमरा पद पावै॥
लंकेसुरी विभीषण लंका तव रुख मांगह इन्द्रापुरि आवै॥
व्याध गीध विस्वाध जीव बध अधम सकल नीसाण बजावै॥
परसराम प्रभुराम कृपा तैं देखौ वे वैकुंठ वसावै ॥२॥

(दुर्मिल सवैया)-जिन दीन्हु जु मान महाप्रभु पूरन चीर गहै द्रुपदी जन कौं॥
जिनि कैरव सेन संघार करी करि चक्र लियौ हरि भीषम कौं॥
जिनि ढाहि जु लंक हयो असुरापति दीनहु है राज भीषन कौं॥
प्रसराम कहै प्रभुराम सही जिनि राखि लियो जन टीकन कौं॥३॥

(दुर्मिल सवैया)-भव कौ दुख दूरि किया नहिं तौ सुमर्यो जु कहा सुख पावन कौं॥
अरु दर्सन दैतहिं ना कबहूँ कित ठाकुर भये लजावन कौं॥
जांचु कहा तव जाचिग मैं बलि कैं जु गयो भुव ल्यावन कौं॥
प्रसराम कहै प्रभु दैहुँ कहा अरु दैवहु तौ जस गावन कौं॥४॥

(दुर्मिल सवैया)-सब ही माहिं मौविन औरु नहीं करता विसु पूरन व्रिद वहूं॥
अधरैं जू धरी औरु भयो जन तैं प्रगटौं सब माहिं रहूं॥
दुबध्या तजि भीतरि भेदि भजै तहिकै अघ पावक मांहि दहूँ॥
भजुँ तौ न तजौं चित तैं कबहुँ परसा सुणि तौंसुँ हुँ सांच कहूं॥५॥

(दुर्मिल सवैया)-मनां रमि राम रमापति राघु जु राय समाय रह्यो सबहूं॥
रज मैं गज मांहि अगाहि पर्यो दरिया दिस वार न पार लहूं॥
पूरौ हरि सम्रथ सेय सदा बिसरै जिनि जीवन तोहि कहूं॥
परसा प्रभु सौं दिठ राखि मतौ हरि हौ हरि तेरि सर्णिहि रहूं॥६॥

(दुर्मिल सवैया)-जहि लेख लिख्यो विधनां विधि सौं सु गिटै कित मोहन जान दई॥
कबहूँ सुख पौढिय सेज सिंघासन आसन तेज तुरंग नई॥
कबहूँ तिन साँथल ठौर बिनां दुख भोजन भीख भ्रमैं न लही॥
कबहूँ यक खीर खांड घ्रत भोजन पान कपूर न सौं नूवही॥
प्रसराम कहै करता करुना मय साँचि रु सांच करै सु सही॥७॥[1]

---

१. एक पंक्ति अधिक है।

(दुर्मिल सवैया)-गनिका गज व्याध वकी द्विज पावन पार गये हरि नाम भणी।।
तरै तुरिया रंगरेज बला हरि नाइ लियें यहि साखि सुणी।।
तारै बहू तब नाम सदा वुणियेक उभै दिस मांचि वुणी।।
परसा जु यहै विधि संकर सेस कहै रु गावै गुण वेद गुणी।।८।।

।। १ ।। **कर्म निंदि कौ जोडौ** ।।
का कर्यो जिगि जो जिगि भुगतान घरि दिष्टि व्यापीक देखे न जांही।।
का कर्यो जोग जो जोगवर पर्यो तप जो तपति भाजी नहीं रही हरि नांव विनि फैलि मांही।।
अंति हरि भजन बिन समझ परसा सकल कर्म करि सर्म भर्मै सुमांहिं।।१।।[1]
(घनाक्षरी)-
मानि लियो किनि हरि नहिं मान्यो हिरदै कष्ट आरुभ कीन्हे दुराराधि।।
करम आस न पवन मंत्र जंत्रादि भरम दूरि करि येक हरिनाम आराधि।।
धर गडत बूडंत जलि उडत आकास मैं जु जुडत वै दंत विन अंति उपाधि।।
औरु सिधि साधन सकल डारि परसा कहै साधि जाणै तो हरिनाम कौं साधि।।२।।
(घनाक्षरी)--
कहा मंत्र औरु मति हीण हरि मंत्र बिनु जात जमलोक हरि लोक कूं नांहिं।।
कहा औरु जो कर्म करत हरि कर्म विन जोर करि बरजंता नरकि नर जांहि।।
असुर हरि परहरै आन पूजा करै यौं जात पापी वहै भरमि भव मांहि।।
परहरै पाक परसाद परसा पसू प्रीति करि जगत की जूठि कूं खांहि।।३।।
(घनाक्षरी)--
जनम खोयो भलो भरमत भवसिंधु मांहि वादि आयो बहै वादि जांहि।।
सीख्यो न श्रवनां सुण्यो दिष्टि देख्यो न फिरि हिरदै मुख मांहि हरि नाम नाहीं।।
मति अंध अग्यान सठ फिरत वहिरे भये जनम जड़ जगत की धार मांही।।
इसी करतूती परसराम मुदगरनि की जाय जमद्वार सिरमार खाहीं।।४।।
(घनाक्षरी)--
हंस की गति कौं न पहुंचै कदै काग बहु खात करम कीट भरमि जनम खोयो।।

---

१. एक पंक्ति कम है।

सिंघ चालि चलि जाणै कहा वापुरो सुवान मंजार ममिता (मोहिं) विगोयो ।।
मत्त गजहि कौ मतौ खर न सूकर लहै सोधि घर घूर मलि मुख डबोयो ।।
यौं भगति विसराम परसा न पावै जगत जेणि संसारि सुख मन समोयो ।।५ ।।

(घनाक्षरी)--

कहा धरम औरु जो धरम हरि नाम सौं कहा और ध्यान जो ध्यान हरिनाम ।।
कहा औरु वरत जो वरत हरि सौ हिरदै कहा और जाप जो जप्यौ हरिनाम ।।
कहा औरु प्रेम जो प्रेम हरिनाम सौं कहा और नेम जो नेम निजनाम ।।
कहा औरु नाम जो नाम हरि कौ हिरदै सुमरि परसा सदा सति हरि नाम ।।६ ।।
करौ सतसंग सेवा करौ स्वामि की सुर्ति लै निरति संतोष पावो ।।
सति सुखरूप कौं सुमरि साचै मतै समझि संसार कौं करि अभावो ।।
छाडि दै सोच सव सूल संसौ सकल सार हरिनाम हिर्दे वसावो ।।
सदा सुख मूल सारंग धर संगि परसा सनेह करौ ताहि गावौ ।।७ ।।

।। १२ ।। देह देवल कौ जोडौ ।।

(घनाक्षरी)--

देखिय जल बूंद तैं नर देह देवल रच्यौ आप ता मद्धि आनंदकारी ।।
उभै खंभ करतार करि कल बणाई ईसी चाल तौ महल चिणियो मुरारी ।।
कह्यौ मुँसतेज नख सिख संवारियो सिखर सिर कलस केस धुज वण्यौ भारी ।।
टये दोय दीप परकास परसा करण ताण गुण मानि रहियौ सरणि वारी ।।१ ।।

(घनाक्षरी)--

अस्ति आमिष रकत नाड़ी तुचा रोम करि धात सपताल रजवीज रासा ।।
गुदा गुण गुह्य मनोवेग कौं भिन्न सोई करण कर चरण मुख नैन नासा ।।
(अरु) श्रवण सिर संधि बंधान बंध्यौ सुजनि येक उनहारि तन सूल सुवासा ।।
ऊंच नीचादि सोई रुप नृप नर करियौ ताहि परसा सुमिर होय (चरण) दासा ।।२ ।।

(घनाक्षरी)--

जिनि कियो जल बूंद तैं नारायण नर इसौ ताहि जिनि परहरै सुमरि सोई ।।
लीयो जठरा अगनि तैं जरत राखि जिनि मास दस गरभ तहीं तेरो वास होई ।।
दीयो तहीं पोष हरि पूरि संपूटि सिला ताहि वरि धीर धरि नर न वृथा रोई ।।

कछू लैण की चाहि तौ सुमरि परसा प्रभु दैनकौं औरू हरि सौ न कोई॥३॥

(घनाक्षरी)--

दैंण कौं येक दातार हरि देखिए अरु लैन कौं औरहीं सकल संसार सूरा॥
सदा पर आस पर जीव परधन तकैं चाहि जाके सबै कछू सोई अधूरा॥
सेइये सांई सामर्थ सर्व कूं पूरवण आदि मधि अंति इकतार पूरा॥
परम गुर प्रगट परतीति परसा कहै भरण पोषण निकटि हरि हजूरा॥४॥

॥ १३ ॥ द्रौपदी कौ जोडौ ॥

(घनाक्षरी)--

आतुरी पुकारी भाम, बीसरे पंड सुधांम, कृष्ण कृष्ण लेत नाम, नाम की नृवाहिये॥
दीनबंधु जान राय, तो बिनां न को सहाय, कृपासिंधुब्रिद पाय, सौ व क्यौं दुराइये॥
औरु सौं न कामकाज, मेरौ तूही कूंवराज, राजि ही कौ मैरी लाज, राखिबै कौ आइये॥
आपकि प्रतीति रीति, राखिये चितारि चिति, प्रसराम स्वामि जीति, हारि सौ न जाइये॥१॥

(घनाक्षरी)--

बोली नाथ त्राहि त्राहि त्राहि, मैरी पीड औरु काहि, सरण कौं औरू आहि, अंति जो बखानिये।
दुष राज कौ कुसाथ, सीस कौं पयार्यों हाथ, ऐकली अनाथि नाथ, चीर कूं छुडानिये॥
द्रौपदी कूं चीर दीये, पल मांहि पूरि दीये, जु है हजूरि, दूरि सो न जानिये॥
चीर कौ औतार धारि, आतुरे आये मुरारि, प्रसराम पैज पारि कीनी चक्र पाणिये॥२॥

॥ १४ ॥ गज ग्राह कौ जोडौ ॥

(छप्पय)--(हरि) भगति हेति आधीन, श्रीया वैकुंठ विसारे॥
उठे उमगि अकुलाय, सुनत हरिनाम उचारे॥
अति आतुर मन गरुड, तैं सुहरि पुरुतैं आये॥
चक्रपाणि हयो ग्राह ग्राह तैं गज मुकताये॥
जिनि जहीं संकट सुमिरयों हरि, तहीं तहीं आये सही॥
यहि कृपासिंधु परसराम, प्रगट पैंज भगत निर्वही॥१॥

(छप्पय)--हौं कुटुंब गज जुथ मैं, गयो तजि रह्यो न कोई॥
साथ न भयो अनाथ, नाथ बिन सगौ न सोई॥
मति गयंद मद अंध, देइ वलि वदत न काहू॥

मन गुमान अभिमान गरि, गयो, गर्व ग्रास्यो जबि ग्राहू।।
कंवल नाल सुंडाल लै, परसा हरि सन्मुख कर्यो।।
भयो दीन लिवलीन मन तव, गैंवरहीं हरि आदर्यो।।२।।

(छप्पय)--गर्व न किजै देह धरि, अति गर्व तैं ही विनासा।।
साखि रावण कि समझि, जु अंध कीनौ कुलनासा।।
यक लाख सवा लाख, मैं पुत्र नाति कोउ नाहिं।।
कनक कोट लंक नगर, छार कीनौं छिनहिं माहिं।।
तहा रह्यौ न पानी दैंन कुँ, तास कुल मैं कोउ कहूँ।।
हरि भगति हीन नर प्रसराम, बोलो न गर्वगरे केते कहूँ।।३।।

।। १५ ।। प्रल्हाद चरित्र ।।

(पयार)--

श्री सत्य गुरु हरि व्यास श्री भट्ट पद, कौं भजौ भगवंत कौं सीस नांउं।।
महा उग्र नरसिंग कौं ध्यान हिरदै, धरौं हर्खि प्रहलाद कौ चरित गांऊ।।
सर्व औतार मैं यक सार हरि सिद्ध, गुण ताहि सुमरूं सदा मन लगाँऊ ।।
परम परकास फल देहू परसा, कहै पर्म गुर पर्म परसाद पाऊं।।१।।

(घनाक्षरी)--

हिरणकस्याप कह्यो बोलाइ घरि विप्र, सौं घरनि सुनि पुत्र पढनैं पठावो।।
पढै प्रहलाद कुल मूल अरु विद्या सबै, देहू दिन मान वल सोधि पावो।।
लेहू नृवापु धोती गऊ आज तैं औंरु, दरवि दैहुँ बहु धरणी आगैं पठावो।।
यौं समझि दिन कह्यो परसा सु-प्रहलाद, मनु डारिये मेट मन तैं हठावो।।२।।

(घनाक्षरी)--

सुक्र आतमज द्विजहिं वोलि वाणी कह्यो, दिन सुदिन भलौ दिन मोहि सोधि दैहूँ।।
बुद्ध गुरवार रवि सोम रु मंगल बिना अति मुहूर्त कुंवरहिं काजि लै हूँ।।
सुचित होय सोचि रु निरसँक संका विनां, मेटि कल्याण की काल्हि कहि हूँ।।
सुक्र सनि सिध करण सुभकरण जय, करण जोग निर्विघन परसा वतैं हूँ।।३।।

(पयार)--

का भ्रदा करै जो भद्रपद उरि धरै, विषयन टारन सकल सोकहारी।।

राह अरु केत रवि सोम रु मंगल, जिकै सिधि दैहि सूल सबकी निवारी।।
बुध गुरु सुक्र सनि कौ विधाता जिकौ, समझि सुखमूल विषापक विहारी।।
यौं नवों ग्रह होत निर्दोष परसा प्रस्न, तुहू सुमरि हरि नांउ मंगलकारी।।४।।

(पयार)--

आव प्रल्हाद कछु तोहि भावै सोई, पढि सोई सोई सत्य मन दै पढाऊं।।
होय परकास गुर ग्यान दीपक, दियें जाय दुरि तिमिर तैसी दिठाऊं।।
ज्यौं कि रखि तरवर सुफल वख जल पोष, तैं यसौ उग्र आराध दे बल बढाऊं।।
औरु परसा बहोत मंत्र जंत्रादि लौं, अगन गुन जानि रसनाहिं रटांऊं।।५।।

(पयार)--

गयौ प्रहलाद चटसाल मैं पढन, कौं कह्यौ संडौहि सुमरकै सिखायो।।
तुम्ह पढौं प्रहलाद जो पढत बहू, बाल य कुल तुमरो पढ्यो हूँ पढायो।।
पढ्यो हिरणाछि यहै हरनकसिप, पढ्यौ अबैं भागि तेरो सु तू पढन आयौ।।
प्रथम प्रल्हाद परसा समझि राज, की रीति याही जु यौही पाठ पायौ।।६।।

(पयार)--

घरै राखि विद्याधरी पढौ पांडे हरि, हरि पढत हरिनाम भौ पारि तारै।।
हरि भजत हारि नांहिन कदै हम्ह, सुणी जात जम लोक तैं हरि उवारै।।
सोई हरि भजौ हरि भजौ हरि हेत, सौई सत्य हरिनाम सबकौं उधारै।।
यौं पढत प्रह्लाद मन सुद्ध परसा, सुणौं कष्ट वडविघ्न हरिनाम टारै।।७।।

(घनाक्षरी)--

लिखि दई लाभ कौं वोंकार ऊं नमो सिद्धई, तुम्ह पढौ प्रहलाद याहि सुद्ध वाणी।।
औरई आल जंजाल कौं भूलि ही जिनि कहौ, कछू हम्ह जु तोहि कह्यौ सौई सत्य जाणी।।
कर जोरहिं वंदे चरण सीस नायो तहीं, कहयौ सोई सुणयौ संका न आणी।।
यौं कहत प्रहलाद परसा वचन विप्र, सौं हरि भज्याँ बहोत सुख लहत प्राणी।।८।।

(पयार)--

पढो कुल रीति ज्यौं पढत आयै बडे, मांनि गुर कौ कहयौ याहि बडाई।।
छांडि रे छांडि हरि नांव कौ जिन कहै, हम्ह कहै सत्य करिकैं सुनहुँ सोई।।
कह्यौ सोई सु हम्हकौं, कियो चाहि पिता तेरै तिसौ ताहि भाई।।

मारिहैं मोहिकुँ कै तोहिकुँ साची, कहौं समझि प्रह्लाद परसा सुकाई ।।६ ।।

(पयार)--

पढत ही पढत बहि गये संसार, मैं कहत हीं कहत जु अनेक आगैं ।।
कहनहारे जहिं सुननहारे तहीं, सोई संसै रहै कोई नहिं जागैं ।।
असुर अहंकार की आस लागै सबै, अंध भये चेतै नांही अतिहि अभागैं ।।
यौं कहत प्रल्हाद परसा प्रभू भजन, बिनु जात जमलोक जरती जरागै ।।१० ।।

(पयार)--

जाय द्विज देत कै दुवारि ठाडो भयो, देत ताहि सु आसीस कल्याण कारी ।।
सुनौ तौ कहूँ येक सुणन की जुगती, भई अरज याहि राजि सौं है हम्हरी ।।
कहि नाहिन सकत डरत आधीन, हम्ह है सदा राजघर कै भिखारी ।।
कछु और नाहीं पढत प्रल्हाद हरि नांव, बिनु दोस परसा हम्हीं लागत भारी ।।११ ।।

(पयार)--

बोलि लियौ निकट हेत करि अधिक, हिरणकस्यप कह्यौ पुत्र आवौ ।।
कछू विप्र जो जो कहै तुम्ह सुनुँ सोई, सोई झखौ कित आन दूखौ दुखावौ ।।
तुम्ह लेहु प्रहलाद कूं जाऊ जु पांडे, घरि याहि मनलाय सुख दै पढावौ ।।
कह्यौ पढि है नाहीं तौ कीयो पाय है, परसा वेगि दै आय हम्हकूं सुणावौ ।।१२ ।।

(पयार)--

हाथ गहि विप्र प्रहलाद कौ लै, चल्यौ हेत हरिनाम उर तैं न टारै ।।
कही बहू बात घर घात होती, जिकै राज सभा कै मद्धि सारै वुसारै ।।
यसौ भक्त धुर धीर बलवीर वीहै, नाहीं मतौ मन सुद्ध उरतैं न टारै ।।
यौ कहत प्रह्लाद तजि वाद ब्राह्मण, बडेहू जपौ परसा जाकै सवै सारै ।।१३ ।।

(घनाक्षरी)--

रे राजकौ पाट प्रहलाद तौहिं तैं मिट्यौ, कहा दुख दोष कूँ दूजो उपायो ।।
हठी हठ करि साधि लियौ हरि नांव टीकै, धर्यो पिता कौ पण सो लजायो ।।
यसौ महावीर बलवंत अकली पाटकूं, पर वरयो जाप वैकुंठ नीसान वायो ।।
सुतौ तजो हिरनाछि अरु हरणिकसिप तज्यौ, यसौ प्रेम परसा सु तैं न दूजो उपायो ।।१४ ।।

(पयार)--

कहा विद्या पढी रु कियो बहु वाद जो, ऊपजै सील संतोष कबहू न आवै ।।

आल जंजाल भ्रम काल काया वसै, तपति तृष्णा अगनि उर जरावै।।
छूट नाहीं काम अरू क्रोध अरि लोभ, सौई हितू हरि नाम लियो नहिं भावै।।
यौ कहत प्रहलाद जु छूटै न हरि, भक्ति बिन जीव परसा यौं वेद गावै।।१५।।

(घनाक्षरी)--

पढ़ात ही छाडि करि विप्र कहूँ पुरि गयो, तुम्ह पढौ रु प्रहलाद यनकूँ पढावो।।
तेरो कह्यौ सत्य करि सुनतहैं ए सवै, तुम्ह दीठौ जोई यहै यनकूं दिठावो।।
हिरणकसिप देत महाराज राजा बडो, तू पुत्र ताको हम्हहिं का राजसुँ कढावो।।
समजि प्रहलाद परसा जूई कछू हम्ह, कहैं तुम्ह दिठयौ इहै यनकूं दिठावौ।।१६।।

(घनाक्षरी)--

वेद विधि करम त्रिकाल साधन सकल, खटक गुन जुत कहा जो हरि न गावै।।
जरन न जाय न तनप नेम जप सबि, करै पैं ब्रम्ह निजरूप घर सौं न पावै।।
औरू करतूति कौं सीखै सुनै सबि करै पैं, आपकौ भलौ करणी न आवै।।
यौं कहत प्रहलाद परसा विप्रसुँ कछू, सुपच हरि नांव रट मोहि भावै।।१७।।

(रूप घनाक्षरी)--

दैत्य बालक सबै मिलि आयै प्रहलाद कै, पाय परि कहन लागे प्रसन होऊ देवा।।
तुम्हू रटौ सत्य करि कह्यो सोई हम्ह, पढैं सुमरि मन सुख होय करहिं सेवा।।
देऊँ सबहि सोई मंत्र मति आय हिरदै, वसैं होय हरि भजन निरभै निरसेवा।।
सुद्ध विण कहौ परसा सु हरि सुभ, भगति गति अंध समझि लहै भेवा।।१८।।

(घनाक्षरी)--

कहा लघु वेस अरु मति उच्च राजा जन, अभै पद कौऊ मिली जाय आसा।।
तुम्ह भूप बड़ भूप नृप रूप रछाकर्ण, हो हम्ह जीवहीं सदा सरणै लेत वासा।।
तुम्ह कलप तरवर भये सकल सुर, असुर के होत मिथ्या न कछु तोर स्वासा।।
सील संतोष गुन जान परसा प्रगटहिं, होय प्रहलाद भजि करम नासा ।।१९।।

(पयार)--

कहौ परतीति जिहिं रीति हम्ह हरि, भजैं साखि प्रहलाद जोई भई आगैं।।
सींख सुणि समझि तहीं आसहिं लागै, रहैं गहिं वेसासहि हरि संग जागैं।।
नांव हरि नाम प्रहलाद खेवट तुहि, तारि कुल बाल भुव पारि लागैं।।
परसा चवहिं वच्छ निरवाण पद, कौं द्रवो करौ नखाऊ यौं दान मांगैं।।२०।।

(पयार)--
पढण सीखौ सदा सर्व सुख दैण कौं, दुखहरण औरई हरि सौ न कोई॥
जग्य करि जोग करि जप तीरथ, करि दान करि पुन्य पावन न होई॥
भजन हरि कौं तजैं आन उरि धरि, भजैं अंति जामण मरण सहैं सोई॥
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभू भजन, बिन जात नाहींन जीव कौ पंकधोई॥२१॥

(पयार)--
उतरै भार सिर तैं सु सुख पाइये, दुख तबहिं जबहिं सिर बांधि लीजै॥
भजौ भगवंतहिं कौं तबि लगैं, जबि लगैं प्राणीयो मोह माया न झीजै॥
जबही बेडी पडी पाय ग्रह कूप की, तबहिं तुम्हकौं नहिं हरि हितू धीजै॥
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभू कौं भजि, होइ आतुरत कितहिं विरंब कीजै॥२२॥

(पयार)--
हारि नाहीं कदै नाम भजत हरि कौ, भजै तजै तिही जैति जोइ भज्यौ भावैं॥
हरिनाम कौं सुमरि अनेकहिं पाप्णी, तिरे साखि विन अंत कहतां न आवै॥
औरु परतीति जोइ देखि जाणू नाहीं, तौ तुम्ह मोहि जो न हिरदै आवै॥
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभु कैं, भजन की साखि औरु नित वेद गावै॥२३॥

(पयार)--
हरि भजै आस धरि काम निकामनां, मुकति चार्यो चवै भगति भावै॥
ग्यान वैराग पद जोग जौइ चावहिं, सिद्धि फल साध सेवा हरि भज्यां पावै॥
राज बड राज कौं सुनांव भज्याँ तैं, पाई सकल सुखमूल सादिष्टि आवै॥
यौ कहत प्रहलाद साखि हरि भजन, की भजै परसा सुहरि पुर बसावै॥२४॥

(घनाक्षरी)--
हरि सरण पाय कैं मोहि बहू सुख भयौ, मानूं मरत बहू प्यास बहू नीर पीयौ॥
मानू पाय कैं बहू भूख बहू भोजन मिल्यौ, भाग्यौ कालतैं निकसि बड रंक जीयौ॥
मांनू कलपत खांणि कुल काणि बल जाणि, करि जीव ज्वाला जरत सरणि लीयौ॥
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभू भज्यां तैं, सर्व सुख मोहि महाराज दीयौ॥२५॥

(पयार)--
वेलां न कुवेलां सुद्ध न अनसुद्धता, विधि न अवधि भजत संका न आणी॥
सोवतां वैसतां चालतां सुमरि, सत्य हरि नाम मिथ्या सोइ नाहिं जाणी॥

प्रगट्या साखि कौं तुम्हहिं जाणू सबै, हरि भजत विपति मोरी (जु) नसाणी॥
यौं कहै प्रहलाद परसा प्रभु भजन, गुण भज्यां तैं होवहिं निरदोष प्राणी॥२६॥

(पयार)--

ज्यौं व जननी करै हेत लघु जाम सौं, हरि करै त्योहिं कृपा रु हेत मोसौं॥
ज्यौं भजै पुत्र माता पिता नवत मिलि, यौं हरि भज सुनहुँ कहूं सत्य तोसौं॥
ज्यौं धेन लघु वछ कैं मोह लागी रहै, यौं व हरि हम्हारैं हम्ह हरि हि जो सौं॥
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभु कौ सदा सत्य करि मोहि आवैह भरोसौ॥२७॥

(घनाक्षरी)--

मानै नाहीं हरि जु सोच सुचि ऊंच नीचादि कछु पीवै जोइ नीर तिस जायइ ताकी॥
जिकौ भूख भोजन भखै त्रपति पावै नर, सु यौं साच हरि भजन औरु झूठ बाकी॥
पाक रु नापाक पावन (अपावन) सबैहीं, भजन तैं कणरसी कामि काचि रु पाकी॥
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभू भजन, कौ सत्य धरम निंदै सोइ असुर आकी॥२८॥

(पयार)--

सुनत सो बात सबि असुर गरबे, धारि गरब उर क्रोध कीनों अपारा॥
घर न बाहरि विबिध वाल हरि हरि, कहै सुनत प्रहलाद की सीख सारा॥
(महाराज) मोरी न तोरी कही रही ज्यौं, अंध की सुनैं न बहिरां मैं को पुकारा॥
रहत नाहिंन दुरी या बात परसा, प्रबल अरज या राज कीजै गुहारा॥२९॥

(पयार)--

बोलि बूझयौ विप्रहिं हिरणकसिप, निकट लै का प्रहलाद कौं तैं पढायौ॥
कौंण विद्या पढी द्यौस केते, भये तोहि कहौ धौं मोहि जो याहि आयौ॥
देत नाहिंन पढन औरु लरिकान, कौं मोहिं तुम्ह और कहि कहि सुणायौ॥
मारिहूं तोहि कै याहि साची कहूँ जोयो, परम परसा सुमैं जाणि पायौ॥३०॥

(पयार)--

हम्ह हारि मानी महाराज कही सुनि, सवै रटै याहि न हिरदै औरु आनैं॥
हम्ह रहै परमोधि रु परमोधि कैं, वैठि सक्यौन हम्हरो कह्यो नैक मानैं॥
तुम्ह याहि कछू वै कहौ भावै हम्हहि दैऊ, सासनां यो न तुम्हकौं हम्हकौं पिछानैं॥
यौं करत प्रहलाद परसा प्रभु कौ, भजन औरु गिनत तिनूका समानैं॥३१॥

(पयार)--

दुष्ट यौही विप्र आधीन आसामुखी, मिल्यौ वो इनसौं रहैं हम्हहिं वामहै ।।
देत है ए कछू याहि लाग्यो, तहां महामति हीन सुर कौं सराहै ।।
याहि मार्यां कछू पाप मोही लागै नाहीं, सांई द्रोहौ सदा सौंक चाहै ।।
पुत्र परमोधि कैं जाहि परसा दयौ, सोई चिणियौ घर बामणू आणि ढाहै ।।३२।।

५३-(घनाक्षरी)--

हम्ह कहैं कछु औरई यों पढै कछु औरु, यो योहीं द्योस निसि झौर करतां विहावै ।।
याहि आपुही पढत औरु पढण पावत, ना हम्हहिं दुख देत हरि हरि मनावै ।।
कह्यौ काहू औरई कौ योही ना मानैं कदे, राजि तुम्ह कहौ जु न याहि कहत आवै ।।
मांनिहै यौ भलो येक हरि नांवही कौ, जु कंवर प्रहलाद परसा सुकहावै ।।३३ ।।

(पयार)--

हिरणकसिप कहै वाण विद्या पढौ, जुद्ध की जुगति बूझौ अरु जु विचारौ ।।
सुरग प्रिथी पाताल मिलि जाहू पाणी, पवन, आसुरी पाठ बल कौ न हारौ ।।
बाल होऊ ब्रद्ध नव तरण रु नाना, गती याहि पढौ औरई दूजी निवारौ ।।
पुत्र प्रहलाद परसा समझि साच, मैं कह्यो जु मन सुद्ध मानूं हम्हारौ ।।३४।।

(पयार)--

कृष्ण हरि राम कृष्ण केसौ ऋषिकेस, हरि विसणु वाराह वामन बिहारी ।।
मूल हरि मंत्र महाराज महि उद्धरण, मदसूदन मुकंद हरि माधौ मुरारी ।।
भूधरण भय हरण भार टारन, हरि भगत वछल बडौं विडद भारी ।।
श्री गोविंद गोपाल गोनाथ परसा सु, मैं पढ्यौ हरिनाम मंगल सुकारी ।।३५ ।।

(पयार)--

हिरणकस्य कहै भगति तैं आदरी, मोहि यहै साल अति सह्यो न जाई ।।
याही कहा तैं उपजी तोहि कौणैं दई, पाई तैं कहा अरु क्यौं हिरदै आई ।।
मास कुलहि कौ करण देत काल सौ, देखियत तूहू तौ मोहि कैसी बडाई ।।
यौं बकत प्रहलाद सौं कोपि परसा, असुर याहि मार्यां मिटैं बहू बुराई ।।३६।।

(घनाक्षरी)

ज्यौं भयो अगनि मैं सुदाम दामनि दरसि, परसि जु पावक कनक जोति सु फैरी ।।
ज्यौं पारस कूं परसि कैं लौह कंचन भयो, यौं साधुहिं संगति सु मिलि सुमति मैरी ।।

यौं आतमां ब्रम्ह परमातमां कौ परसि, कैं कीट तैं भृंग भये याहि साखि नैरी॥
यौहीं हम्ह हूतैं पतित (पामर) पापी पसू, परसा पाप पावन भये सुरति सेरी॥३७॥

(पयार)--

अरे संग विनि रंग कदे लागै नाहिं, भगति कौ कौण आसरै ईसी भगति पाई॥
कौण विसवास बुधि कौंण बल कौण, कौ बालमति उलटि तैं जु अंगि लाई॥
तज्यौ रज राजग्रह काज कौण कुला, सवल होइ कैं अवल कौं सीस नाई॥
कौण जप तेज तोहि दिष्टि नीकैं पर्यो, कहौ प्रहलाद परसा सुभाई॥३८॥

(घनाक्षरी)--

सूर जाहि क्रांति रु रवि जोग वाहनी जथा यौ साधि साध की सरणि मैं भगति पाई॥
बदरिका आसरम वसै जननी उदर, तहीं वरष सत मोहि नारद सुनाई॥
लई मैं सीखि भगति आधीन आतुरत, होई अब नाहिं भूलौ काहू की भुलाई॥
यौं वदत प्रहलाद जु परसा असुर सौं, ईसी मैं पढी यहै अरु औरनि पढाई॥३९॥

(घनाक्षरी)--

यहै पढ्यौ ब्रम्ह महादेव जु नारद पढ्यौ, यहै सेस सनकादि हरि पढै सुवासा॥
यहै पाठ आगौलगैं पढतहिं आयै सवै, यहै पाठ पढि हैं अबहिं औरनि दासा॥
यहै मैंही पढ्यौ परम आनन्द जु परसा, सुहरि मेटि कुल कर्म सबै आस पासा॥
यहै तुम्हु पढौ होवइ ज्यौं श्रेय किल्याण, फल जावइ दुरि ज्यौं दोष दुख रे वासा॥४०॥

(घनाक्षरी)--

सरप सौं बाँधि कैं भुज दैत त्रास दीन्ही, अधिकी कीयो मजबूति जुवाला जरायौ॥
दई बहु बहु सासनां समझि विणि अंध, तबै च्यारि जोरि जन सु गिरतैं गिरायौ॥
जलमाँहि थल मांहि डार्यो यौ अधिकी, दुख दयो सुख ही तौही जुहरि नांव पायौ॥
मार्यो नाहींन मरत कहूँकि घात परसा, असुर चवै सुत यहै जमकाल आयौ॥४१॥

(पयार)--

डाकिणी साकिणी मंत्र (अरु) जंत्रादिक, भ्रम भूत दैत्यादिक कछु वै ना लागै॥
सस्त्र-प्रहार गिर अगनि पाणी, प्रलै सर्वभय सांत कोऊ नाहि जागै॥
भयेउ बलहीन धनहीन साधन, सकल हारि मानी कहत याहि आगै॥
ईसौ रछ्या करण है जु कोइ प्रभु, बडो ताहि प्रहलाद परसा ना त्यागै॥४२॥

(पयार)--
रे पवन पावक प्रलैकाल तैं क्यौइ, वच्यौंहै किण मोहि तुम्ह कहि सुनावौ।।
वो गिरि गज कल भुजंग की त्रास तैं, ऊबर्यो कौण वलकाणि काकै कहावौ।।
कौण रछया करण है जु समरथ, इसौ सत्य करिहै मोहि सोई बतावौ।।
कोण आराध कौ जपै मंत्र हृदै वसै, काहि प्रहलाद परसा मनावो।।४३।।
(पयार)--
जलि वसै थलि वसै वृक्ष महीतल, वसै प्रिथि सुर्ग पाताल मैं विष्णु सोई।।
सकल कुल विष्णु बलकीट पाषाण, मैं जत्र दीसैं तोहि तत्रइ विष्णु होई।।
विष्णु मैं सकल सामानि है सम, देखियै विष्णु बिनु और दूजा ना कोई।।
विष्णु वैकुंठपति भयो व्यापक, सकल लहै परसा सु निजदास कोई।।४४।।
(पयार)--
कहन कौं सुनन कौं आदिक अंतक, सबै जो मारिहूं तोहि निहचै न रांखू।।
प्रगट करि वेगि दै तोहि राखै जिकौ, जात नाहीं सह्यौं दुख सत्य भाखू।।
पूजिहूँ खडग लै तोहि ताकौं अवैं, होय जोइ इहांहूँ साच दाखूं।।
हूँ मरूं या दरद कौं लियै परसा कि, सिलडारि उरफारि कैं रूधिर चांखूं।।४५।।

(पयार)--
खंभ माहिं खडग सकल मैं पूरि, सारिखो भरपूरि करि रह्यौ सोई।।
मोमही तोमही सबै जीव जंत्रादिक, महि येक जु हरि जानि दूजौ न कोई।।
पिंड मैं ब्रम्हांड महिं ब्रम्ह व्यापीकि सौ, रहै मोनिकट न्यारो नहिं होई।।
नयण महिं बयण मैं प्राण कौ प्राण, हरि कहै प्रहलाद परसा सुजोई।।४६।।
(पयार)--
खंभहि कै खडग की घोद दीनी अरु, असुर बोल उठ्यो जहीं जीनी बुलायो।।
करी न विरबं कछू अधिक आतुर, भयो भगत हित प्रगट दरसन दिखायो।।
दीनबंधू दयासिंधु दातार जु हरि, मरत जीव कौं दान दै जन जिवायो।।
कियो प्रहलाद कौ वचन परसा, सुफल सिंघ सो खंभ तैं निकसि आयो।।४७।।
(पयार)--
सिंघ महिं सिंघ सोइ जहीं देखै तहीं, प्रगट सोइरूप सनमुख समाहीं।।
भये चकित सबै सुर असुर, अधिक भै सिंघ सादिष्ट देख्योन जांही।।

चरनि नूपुर रुद्र सु सीस द्वादस, अर्क सिंघ सोभा ईसी जु औरइ नाहीं॥
असह कौ साल सुख सिंधु जु परसा, प्रभू द्रस प्रहलाद बलिहारि जाहीं॥४८॥

(पयार)--

नारी कि नर कछू वै समझिहि नाहीं, परत ब्रम्ह सोई सिंघ अद्भुत रूपा॥
कटकटै दंत अतिकाल विकराल, मुख डरै सबै सुरासुर भूप भूपा॥
इसौ खंभ अऊतार निज सिंघ जाकौ, असह सोई परौ जमडोरि कौ बंध्यौ कूपा॥
हेत प्रहलाद कैं रूप परसा धर्यो, सो भगत वछल प्रभु अति अनूपा॥४९॥

(घनाक्षरी)--

महा उग्र नरसिंघ तन क्रांति विच खंभ, कै डरयो रवि दरस पुर तैं भुलाणूं॥
गयै दुरि दैत सबि देखि भय जहँ तहँ, अरु असुर नारी श्रवै गरभ हांणू॥
को सहै तेज जु महाकाल मुख डहडहै, जाजुलीमान जगजु जगांणू॥
जाकौ पार पावै न कोसेस महेस परसा, ताहिहूँ येक रसनां कहा कहि बखांणू॥५०॥

(घनाक्षरी)--

देखौ योही उदय आदिष्ट भयो जोई मेरौ, जु करि पुत्र सौं बैरि अरि घरि बुलायो॥
प्रथम येक हुतौ अबहि उभै भेलाहू, वाम तौ मन सुद्धि करि जु मरम पायो॥
ब्रम्हा कौ चरम सीस जाई बांधै वणै देखि, जिनि सु वर दियो मोहि सोई मारि खायो॥
असौ असुर नृहरि रूप दरसि परसा, कह्यौ अबु न जीवन निकट काल आयो॥५१॥

(पयार)--

जुद्ध कै काज निजरूप तद्रूप तासिरि, राज सिंघ धरणि परि चरन धारै॥
धूजै धरा सुर्ग नर लोक असुरादि, सुर कौण जाणै पहूँचिहिं काहि मारै॥
अरि मेर ताहि उपरैं काल आरुढ, मुख सुरग सँकै जो मोहि फारि डारै॥
सिरी सिंघ हाथल सीस छत्र परसा, बण्यौ पूंछ की डंड मानूं चामर ढारै॥५२॥

(घनाक्षरी)--

श्रीनरसिंघ बडसिंघ झूझांर अतिकाल, मैं दैति बड सूर सनमुख संभारै॥
गदा मुदगर रु छूरी खडग धारा बहै, वज्र वपु असुर मानौ पुहपडारै॥
महावीर बलवंत अति सु जुद्ध आतुर, करै असुर नरसिंघ दोउ नांहि हारै॥
जुडै जोर सौं जोध करि क्रोध परसा, सु अरि आदि नरसिंघ निज बैर सारै॥५३॥

(घनाक्षरी)--

श्री सिंघ नरसिंघ अतिरूप अद्भुत, धर्यो सुर असुर असह कौं को सहारै।।
थरहरै सेस सिर सुर्ग धूजै, धरा गर्ज गुंजार सु ब्रम्हांड फारै।।
हिरणकसिप भय भागि नभ मैं दुरयो, सु पूंछ पटकै अधिकी झूंझ मारै।।
पावै नाहिं जुद्ध कौ करन हारौ कहूँ, गयो परसा प्रभु नृसिंघ किहि संघारै।।५४।।

(घनाक्षरी)--

सुर सकल जुद्ध देखै सुर्ग विवाननि, चढे करत जैकार भै धरत सोई।।
कहा धौंकरै क्यौं मरैं आकी असुर, लरत दोऊ निरसंक सबि संक खोई।।
जुद्ध लीला करत सु वरष सहश्र भये, नरसिंघ रुचि अधिक पूरी नाहिं होई।।
उभै लाख जोजन धरी सुदेह परसा, असुरि सिंघतन वार नाहिं पार कोई।।५५।।

(रूप घनाक्षरी)--

तबि उठियो दैंति विसतार करि काल कैं, काल सौं आसुरी चरित करि असुर आयो।।
गयो सिंघ सनमुख तप्यौ क्रोध आतुर, भयो फेरि भुजहिं सुर्ग तैं सिरनवायो।।
जुटै मल्ल दोऊ मानू महा परवत भिडै, चल अचल रस हिं लूधर सजुद्ध पायो।।
करै कोउ कहूं डकार वूंकार परसा, प्रभु सिंघ खिजि नाक कानि मुख तोडि खायो।।५६।।

(घनाक्षरी)--

कियों सुजुद्ध गयो जोर उर मसक लागी, धुक्यौ देत परचंड नरहरि प्रहार्यो।।
लीयो जीति असुरेस हरि आपकै सु वसि, कियो खैंचि नख अग्र तैं अरि उद्र फार्यो।।
कियो अंत्रांनि कौ टेर धर ऊपरैं सु मनौं, मैल पट चीर सिल ऊपर सौं पछार्यो।।
इस्यौ देखि आनंद सुख सर्व, परसा भयो वचन कौ भंग ब्रम्हा विचार्यो।।५७।।

(पयार)--

दए गज दंत उरि उल टि मुख मैं, गहै सीस ज निसंक सूंड डालि मानी।।
पाणि धारैं वज्र देखि गिरधर, हरैं कंधि तिनसौं लागी मैं नहिं जानी।।
मिंट्यौ इंद्र भय मानि वल जानि मेरौ, महा सुतौ दई गति सिंघ सा आनिवानी।।
देव बर जुद्ध मैं कोऊ न सनमुख, रह्यौ नखन परसा सुइ मृति आनी।।५८।।

(पयार)--

सिरि सिंघ जू सुकचि नीचे नवे आपि, तैं इतौ हम्ह क्रोध करि कहा लीनहूं।।

दसनि मिलि यैक मारयौ सु पौरिस, कहा भयो विडद कछुवै न कीनहूं।।
वादही वल कर्यो ना काज कछु सर्यो, सुतौ वडौ वपुधारि सिरभार लीन्हूं।।
यौं सोचि नख मंडली कहत परसा, प्रभू सिंघ बल कहा असुरेस हीन्हूं।।५९।।

(पयार)--

सिरी सिंघ संझ्या समैं हिरनकसिप, हयो भयो आचरज सबै लोक भारी।।
सोक मैं असुर सुर भये आनंद मैं, घुरत नीसान अति कल्याणकारी।।
विधि जु मंगल सकल सुणत उमगै, अमर करत जै जै अजै व्याधि टारी।।
भयो उछाह सुरपुरनि परसा, प्रगट देत आसीस मिलि देव नारी।।६०।।

(पयार)--

जीत्यौ सिरिसिंघ करि जुद्ध आनंद मैं, हिरणकसिप वडौ दैति मार्यो।।
मारि उर फारि करि पेट सोध्यो सवै, हाथ सौं सकल संसौ निरवार्यो।।
कर भर्यो उर भर्यो मुख नाक भर्यो, रुधिरसौं चूरि बैठ्यो सौंगूं ज्यौ गूं जार्यो।।
करै सकल सुर सु जैकार परसा, प्रभू प्रगट प्रहलाद कौ काज सार्यो।।६१।।

(पयार)--

रुधिर की बूंद वपु सौंवणी देखियै, छींट पट ऊंच मांनू चोल झारा।।
बणीदंत विचि अंत्र कर कंठतांई, अधिक मनुईस उर सीसतैं गंगधारा।।
धर हरै सिंघ धूंनि मेघहूँ तैं, अधिकी दिष्टि दामिनि दुरै अंधकारा।।
कौ धरै धीर परसा प्रभु कालमय, थरहरै देखि नृसिंह ब्रम्हांड सारा।।६२।।

(घनाक्षरी)--

जाकी लंब रसनां डसण कराल काल रु, मुख आरकत गर्ज वाणी क्रोध झाझै।।
अति भयानक विकट रूप धार्यो अजर, इसौ दरसि घर घरणि जातैंब लाजै।।
अगनि रविचंद ज्यौं नयन सोभै, अधिकी तेज की तपति ब्रम्हांड दाझै।।
ज्वाला जलै असुर सुर संत सीतल सदा, परसा दरसि प्रगट नर्हरि विराजै।।६३।।

(पयार)--

जाकी नासिका स्वासतैं सिंधु जल खल, भलै निकट आवै उलटि दूर जाई।।
सिंभु स्वयंभू सु सक्रसुर आदि दैव, तिहि सुमय निकटि कमला न आई।।
भागी चाली सुभय रूप दूजौ, दरसति तैसो न याहि जिनि डराई।।

पाटि बैठो महासिंघ परसा, प्रभू करण कौं येक आपणी दुहाई ।।६४।।

(पयार)--

दो भुज धारि हरि असुर धार्यो अधर, दो भुज धारि अरि उदर फारा।।
येक भुज धारि, असुर कटारा।।
दोय भुज धारि हरि सुर्ग सनमुख, करे फाटि परि हेत भू होत जु भारा।।
अष्ट भुज रूप हरि सिंघ कौं परसा, धर्यो हेत प्रहलाद कैं अति उदारा।।६५।।

(घनाक्षरी)--

ब्रम्हादिक सनकादि सिव सेस सक्रादि, सुर सबै मिलि येक होय मत उपायौ।।
लीयौ बोलि तबै प्रहलाद ब्रम्हा कह्यौ पुत्र, सुनि जाहू हरि पासि मेरो पढायो।।
धन्य धन्य तुही प्रहलाद बडौ भाग, तेरौ यसौ रूप आरधि करि तैं बुलायो।।
बडो अजर आकार परसा सु प्रहलाद, तवकाजि नरहरि इसौ काछि जु आयो।।६६।।

(घनाक्षरी)--

श्री देव नारद मुनी दिष्टि देख्यो दुरधर, इसौ सु तेज काहू कै न हिरदै समावै।।
इसौ सरूप देख्यां डरै जीव जंत्रादि सबै, निकट कौ जाइ जानी कोउन आवै।।
तुम्ह सुनुं प्रहलाद याहि सत्य करि सबै, कहै जु (श्री) देव नरसिंघ तुम्हकौ पत्यावै।।
तुम्ह करौ जाइ परसंस परसा प्रभूसौं कछू, ज्यौं य सौंज सबै संग मिलि द्रस पावै।।६७।।

(घनाक्षरी)--

गयौ प्रहलाद हरि निकटि वंदे प्रभु कौं, चरण दरस परस्यौ बड लाभ लीयो।।
परम मंगल महाराज आनंद सु पद, पाय करि नर जनम सुफल कीयौ।।
मिटी सूल संदेह संसौ सकल सु भयौ, परम अमृत अमी पियास पीयौ।।
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभू पोष तैं, पतित पावन भयौ अरु मरत जीयौ।।६८।।

(घनाक्षरी)--

श्री सिंघ सुखराज सुखकरण दुखहरण, औरहिं कौण तुम्ह बिनु मेटण दुराजौ।।
धन्य यहि लोक सुभयो परलोक सादिष्टि, सुख सत्य सोई ठौर जहीं कहूं विराजौ।।
धन्य याहि रूप जु याहि दैत्य जन सुद्धार्यो, गयो हरि लोक हरि तैंह राजौ।।
यौं कहत बड भगत प्रहलाद परसा, प्रभू कहा उर ताहि जाहि तुम्ह निवाजौ।।६९।।

(पयार)--

तुम्ह अंजन निरजंन निराकार आकार, हरि रूप निज रूप ताहि वेद गायो।।

नाहीं कहुँ सकल व्यापीक सुख मूल, तुम्ह जीव जंत्रादिक सबि मैं समायो।।
तुम्ह दिष्टि आदिष्टि सारूप, तुम्ह सुभागि मेरौ जु मैं दरस पायो।।
मोर निसतारण कारणि कृपासिंधु, तुही प्रगट परसा प्रभु आप आयो।।७०।।

(पयार)--
सर्व करणहारौ तुही तुमारे सारै, सवै सु काहू औरकौं दोस दीजैं न लागै।।
तुम्ह खिजत हौ कौंण परिकूंण ईसौ, वली तुम्ह न कीयौ न कौ औरइ जागै।।
तुम्ह सर्व कारण करण वृक्ष विसतार, ज्यौं पंच भूतादिक मिलि तुम्हहिं लागैं।।
यौं कहत प्रहलाद परसा प्रभू सूं, सत्यहू दास तेरोहि सदा तेरै आगै।।७१।।

(पयार)--
पृथ्वी अप जुही तेज सोई वाय आकास, तुही करण कौ सर्व तुही जीव सीवैं।।
माता पिता मेरो अरु सर्व काहू कौहि, तुही सर्व पोष तेरी सर्ण जीव जीवैं।।
सरण तोरी गयांही दोष दुख सवै, दुरै पाप जमकाल ताकूं नाहिं छीवैं।।
यसौ निरभै भजन तोरही परसा, प्रभु येक साखी सुंणूंहु जे औरु पीवैं।।७२।।

(पयार)--
करौ क्रोध कौंउ दूरि संतोष हिरदै, धरौ होउ अव सांत सुख मैं विराजौ।।
सोई मछ कछादिक वाराह वामन, तुही अबहिं नरसिंघ सादिष्टि गाजौ।।
सौंई राम श्री राम हरि कृष्ण कैसौ, तुही बुद्ध निकलंक औतारहु साजौ।।
भगत कैं हेति वपु धरत परसा, प्रभु यौं पतित पावन सदाहिं वाजौ।।७३।।

(पयार)--
श्री सिंघ सनमुख सबै आय ठाढे, भै देवगण सक्र सिव विधि अपारा।।
आपु थापी सत्य रु पापकौ वपु प्रभु, विघन बहु करण बड साल टारा।।
सर्व कौ दुख दोष दाता, हुतौ भली कीनी जुही याहि दैत मारा।।
ऐंन जानैं पर्म सूल परसा, प्रभू पारखद पारि करिये विचारा।।७४।।

(घनाक्षरी)--
श्री सिंघ कौ दरस प्रसण निमति आतुरत, सुर सकल समिटि हरि निकट आयै।।
प्रहलाद विसवास भय सकल उर तैं, गयौ रु आय श्री सिंघ कौं सिर नवायै।।
करौ लोचन सुफल जनम पावन करौ, जो तुम्ह प्रगट परसा प्रभु यसै पायै।।

यौं कहत प्रहलाद हरि दरस परसौ सबैं, अबहिं जिनि डरौ अप भै डरायै।।७५।।

(पयार)--

आरती करै सुर घरणि श्री सिंघ की, सुर सकल पहुप वरिखै जुहारै।।
बंदै चरण तिलक चंदन करै, खोरि कंठमाला विविध चंवर ढारै।।
करि दंडौत प्रणाम कर जोरि करि, चवहिं गुणगान असतुति उचारै।।
सीस नावै सकल देवगण परसा, या करै नवछावरी प्राण वारैं।।७६।।

(पयार)--

मांगि प्रहलाद कछु तोहि जो चावही, हूँ दान द्यौं वुचित कछू वै न राखूं।।
सेस सिव सक्र ब्रम्हा रु मृत लोक लौं, परम पुर आदिक द्यौ सत्यही भाखूं।।
संसार सबै दुखी सुख देहु संसार, कौं जु दियौ वर मोहि सोई देऊ दाखूं।।
करौ परसा प्रभु सत्य करि जो कह्यौ, देहू सुख रु भजन दुख दूरि नाखूं।।७७।।

(पयार)--

ल्याव रे प्रहलाद तू जो दुखित जानैं, जिकैहूँ सकल संसौ करौं हेत कीयें।।
यसौ तेरो कह्यो करौं हूं सत्ति करिकैं, जिकैहूँ रहूं तिनकौ सदा संग लीयें।।
बोलि बूझ्यौ सबै मतौ तिनकौ, सुनौ जो कहाधौं कहै वल कौ न हीयें।।
श्री मुख वचन करौ परसा प्रभु सत्ति, करि जो (तुम्ह) कह्यौ मोहि मन अति सुदीयें।।७८।।

(घनाक्षरी)--

बोलि बूझै निकट प्रगट प्रहलाद सबै, भउबुत दुर्वचन सनमुख सभागा।।
जारियत मारियत सासना सहत नित, कबहूँ न सुवास्तिक लहत त्रास आगा।।
दुखी संसार मैं येक तू, देखिमत सुखी सबै औरु आरंभ लागा।।
रह्यौ सुनि सवद प्रहलाद परसा इसै, असाध मनहिं मानैं नांहि साध समागा।।७९।।

(पयार)--

जु रखि सुवल भोमि नृपवैद विद्या, गुणी विणज व्यापार कुल कर्म लागा।।
बडौ ऐसुर्य याहि संसार मैं सूर, हम्ह पुत्र परिवार पूरोई सभागा।।
विभौ विसतार घर मोह माया भर्या, तैं क्यौंहिं दुखी कह्या रे हम्हहिं सु नागा।।
कहियै कहा बहु प्रहलाद परसा, समझि प्रगट पावन कियो तुँ भागा।।८०।।

(घनाक्षरी)--

करै हरि भगति मनि तजि आस फलहिं, औरु सुतौ रामधन वेचि व्यौपार कीजै।।

वो भगत पणहीन प्रभु की न प्रभुताई, कछू अमिल रस जावै पै कोऊ न धीजै॥
श्री नरसिंघ कौ दरस तजि औरई, जो चावहीं यहै बड पाप मोकूं न दीजै॥
यहै कृपा कौ दान तुम्ह देऊ परसा, प्रभू भजन के काजि करि भगत लीजै॥८१॥

(पयार)--

श्री सिंघ की सरण तजि आन कौउं, जो भजै स्वान कौं जाय मानौं सीस नावै॥
गज कुंभ तैं उतरि कैं दौडि रासिभ, चढै मूढ मति हीण सोई जु कहावै॥
परहरै सुरसरी नीर निरमल, जिकौ पीवै पसु अंध रुचि ऊस भावै॥
भेड कै पूंछि लागै तजै गाय कौं, तिरै न परसा सो भव पार न पावै॥८२॥

(घनाक्षरी)--

हंस की गति कौ न पहुँचै कदे काग वग, जिन खात क्रम कीट भृमि जनम खोयौ॥
सिंघ की चालिचाल जाणै कहा वापूरौ, सियार सुवान मंजार ममता विगोयौ॥
मत गज कौ सुमतौ खर न सूकर लहै, जिन सोधि घर घूर मल मुख डबोयौ॥
यौं सुभगति विसराम परसा नाहि पावै, जगत जेण संसार सुख मन समोयौ॥८३॥

(घनाक्षरी)--

करी अधिकी परसंस मुख नयण चूँवे, मिल्यौ हेत करि हरि सु उरिलाय लीयो॥
धर्यो सीस पर कर कृपानाथ सबै दुख हर्यो, मरत जीव जलहीण मिलि सिंघ जीयौ॥
अबु नेक नाहीं टरत टार्यो सुकाहू औरु, कौ भगत महाराज महाइद्रर कीयौ॥
श्री देव नरसिंघ भये प्रस्न प्रहलाद, सौं आपहीं परसा प्रभु जु तिलक दीयौ॥८४॥

(घनाक्षरी)--

श्री सिंघ अस्तुति करत प्रगट प्रहलाद, की मम नांव तारक भगत मोहि भावै॥
ब्रम्हा न सिव सक्र कंवला न वैकुंठ परि, भगत सरभरि न कोऊ औरई आवै॥
अधिकूँ पियारौ खरौ लगत सवै सौंज तैं, हरि चरण वंदन करै सु सीस नावै॥
प्राण धन धाम विश्राम परसा सदा यसौ, भगत सुख नर सिंघ मुख आपि गावै॥८५॥

(पयार)--

भगत वैकुंठ तैं लगत प्यारौ मोहि, खरौ लियैं मोकौं रहै हिरदा जु मांही॥
रहै निरदोष निरवैर सब सोहीं, सदा भजै मोकौ कछू औरु नाहीं॥
हिरणकसीप मिल्यो मोहि प्रहलाद, सुनि दरषि तोकौं सबै दोष जाही॥
जहँ भगति सुपण परसा वसूँ ताँ, भगत मैं मैंरो सु वो म्हैं वामैं समाही॥८६॥

(पवार)--
भगत कै सुख सुखी होतहुँ सत्यहि, भगत दुख दुखी होतहूँ जन जान।।
विसपाल मैं करुं प्रगट परदैं, धरौं भगत पाऊं जहँ प्रान कौ प्रान।।
जलधि लहरि ज्यौं कनक नग से, कही भू भुवन तिरन येक सामान।।
भगत कौ दोष परसा नाहि हूँ सहि, सकौं मोर दोष सहूँ भगत की आन।।८७।।

(पयार)--
असुर गैंवर साल सहस्रादिक से, अधिकी वसै उर मैं रहै सहूं कैसी।।
पवन पावक जलनि त्रास गिर तैं, गिरणि जुलगि मोरैं दई तोहि तैसी।।
सासनां तोकूं दई सु मोकौं दैत दई, सही नाही जात सोई निजदास यैसी।।
बैर मोसौं हूतौ तोहि मार्यो पापी पसू, लागत जु प्रहलाद परसा अजैसी।।८८।।

(पयार)--
मारि कौ सकै हरि विमुख हरि भग्त, कौं प्रगट हरि सिंघ रछिपाल जाकै।।
भजै निरभै भयो भै न ताकौ, कछू लहै जोई पोष प्रभु की समाषै।।
सिंघ रसवीर मति सूर सुमिरण, करै श्रवण सुनै रु मुख चाखि राखै।।
रहै सुख मैं सदा सरणि हरि सिंघ, की यौं सत्य प्रहलाद परसा सु भाखै।।८९।।

(घनाक्षरी)--
सदा सुमंगल सदा सुभद्र पद सुखद, हरि नाम सुनीसान सबै सुलोक बाजै।।
प्रगट हरि सिंघ आनंद मय देखियत, दुरित दुख टारण दुरध वपु विराजै।।
यैसे प्रभु कौं परहरैं आन कौं उर धरै, सोई नीच निरजीव हरि भजत लाजै।।
श्री नरसिंघ रछाकरण कौं सदा सोइ, परसा अभै भयो भगत प्रहलाद गाजै।।९०।।

(घनाक्षरी)--
श्रीनरसिंघ कौ सुजस नरनारि सीखै, सुणै नेम धरै समरै जिकै प्रेम गावै।।
परम पावन सदा परमपुर मैं वसै, रहै नितहुँ निकट हरि दरस पावै।।
छाडै ना हरि चरण सुखरूप उर तैं, कदै सोई भूलहिं पुनि भौ मांही न आवै।।
रहै सदा छत्र छांहि मांहि आनंद परसा, नीसाण वैकुंठ परि चढि बजावै।।९१।।

(घनाक्षरी)--
श्री नरसिंघ असतूति हिरदै धारिकैं, जो भजै रहै निर्मल सदामल न लागै।।

रहै सदा आरोगि न तन मन रोग वियापै, ना औरई छल छिदर रहे भै दूरि भागै॥
सदा रछियाकरण श्री नर सिंघ हिरदै, वसै जहीं आराधिये तहीं जागै॥
यौं कहत है प्रहलाद परसा सुनौं साखि, नृसिंघ की सदा ठाडौ रहै भगत आगैं॥६२॥

(पयार)--

सुद्ध सोई आतमा रु सूर संसार मैं, सुनाम हरि नर सिंघ कौ जाहि भावै॥
सर्व सो जाण हरि सुमरि जाणै जिकौ, परम पंडित अरु सुची सोई कहावै॥
ग्यान करि धियान आराध कोऊ करौ, सोई सदा हरि सिंघ कौ दरस पावै॥
या साखि लै सबै सीखौ सुणू हरि भजौ, इसौ धर्म प्रहलाद परसा बतावै॥६३॥

(पयार)--

भगत सौं वैर कीयो सुहरि सौं कीयो, इसौ होइ ताकूं महादोष लागै॥
सहि सकत नाहींन भगत बछल, आतुरत गज निमत वैकुंठ त्यागै॥
राट राख्यौ चिता जरत जग उध्रण, चीर औतार धरि सीस द्रुपदा जागै॥
वैरि प्रहलाद कै हिरनकसयप, हयो देव नर सिंघ परसा सु आगैं॥६४॥

(पयार)--

मछ कौ रूप जु धरि सिंघ कूं डोहण, कर्ण सर्व सुख सोच संका नहि आनी॥
संख सुर सोधि लीनूं गहर नीर मैं, दुर्यो सोई ठौर हरि तैंहि नहिं छानी॥
सुवेद वाहर कर्ण कृपा लीला धर्ण, प्रगट है सोइ साखि संतनि बखानी॥
बडो दातार हरि सूर परसा, प्रभु यो रटत ब्रम्हा सदा सुद्ध वानी॥६५॥

(घनाक्षरी)--

करण वपु कमठ पिष्ट मंदराचल, धरण नेत वासिग बिष्णु जलधि डौहे॥
मथ्यो जलसिंधु कीये रतन चवदह, प्रगट ग्रहि लछि राखी औरु देत सोहे॥
सुधा विषपान दै सकल कौ वसिकरण, सुर असुर कौ मोहनी रूप धारि मोहे॥
राज दातार परसा प्रभू सुरनि कौं, सुर असुर सबै मारे असे सांई दोहे॥६६॥

(घनाक्षरी)--

जयो नरसिंघ वाराह श्रीराज बड वपु, धरियौ नासिका सुवास ब्रम्हा निवासी॥
सेस सनकादिक सिव ब्रम्हादि संगि सोभै, सदा कृष्ण मथुरापुरी तहँ प्रकासी॥
जाय जल मूल पावन करियौ धुर धरा, धर्यो हयौ हरणाछि हरि धरम नासी॥

दसनि पै धरणी वणी परसा प्रभु, अधिकी सोभित बणी मानूं तिलप रासी।।९७।।

(पयार)--

गयौ बलि कौं छलन उलटि आपण, छल्यौ रहन लागौ सदा पौरि ठाढौ।।
अबु टरत नाहीं येक पल जो वसि, भयो यसौ बलि वचन सुबंध्यौ गाढौ।।
भगत वछल सदा भगत कैं वस्य, ता सर्वसुख दैने कौं हरि ईस वाढौ।।
हौंस परसा हुती सक्र पुर, लैंन की राज पाताल दैइ कियौ ठाढौ।।९८।।

(घनाक्षरी)--

परस राम छतरी दवण आदि सहस्र, अर्जन करी निछत्री द्विजन राज दीनूं।।
जमदगनि सुवन दातार फरसधर, हरिजु करत आयौ सोई विडद कीनूं।।
काट्यौ रेणकासीस राखण कौं पितापण, करण सुनत बानी वचन मांनि लीनूं।।
यिसौ अमर औतार थिर कंधकाया सदा, सोई सुमरि परसा प्रभु हरि नगीनूं।।९९।।

(पयार)--

जयो दसरथ सुवन अवधि राजा, हरि सूर दातार इसौ औरु ना कौ है।।
धर्म की सींव श्रीराम सुख दैन कौं, विडद दुखहरण हरि कैं वासो है।।
मतै धीर रघुवीर रावण हरण, कर्ण थिर भीषण अजहुँ लंक डोहै।।
इसौ परसा प्रभू सेइये सुमिरियै, आदि अरु अंत राम जु उद्दार जोहै।।१००।।

(घनाक्षरी)--

श्रीकृष्ण वसुदेव देवकी निमति वपु, धरियौ अमित लीला रची चरित कीयो।।
कंसकुल काल सो ब्रम्ह गोप बालक भयो, भगत हित अवतार लीयो।।
सौई उग्रसेन कौं राजदै पाट दैई राजा, कीयो छत्र महाराज लै सीस दीयो।।
इसौ देख्यौ न कौ सुण्यौ सुखदैन दुख, हरण कौं औरु परसा प्रभु सौं न वीयो।।१०१।।

(पयार)--

जिग्य निंदा करण जीव हिंसा, निमति ब्रम्ह व्यापीक उपकार काजैं।।
धरम गुरग्यान गुर जोग बैराग, गुर द्वार बड निगम नीसाण बाजै।।
बुद्ध वपु सुद्ध रु आनंदकारी सदा, निरखि निजरूप लोचन सिराजै।।
नीलगिर सिखर पर परसा प्रभु, अति वनें महाराजानिराजा विराजै।।१०२।।

(घनाक्षरी)--

कलनिकल कैं विध न कलप तरवर, हरी सकल कुल मूल निकलंक रायां।।
अगिन औतार धारि लीला चरित करि कौ, गनैं, प्रबल जाकी ईसी जोग माया।।
काल कौ काल महाकाल कालेसुरी, दैत असुर कालिक दलन काजि आया।।
भगत रछाकरण भगत वछल, सदा प्रगट परसा प्रभू वेद जु गाया।।१०३।।

(घनाक्षरी)--

कवि सुकौ गणि सकै अगिन जाकै चरित, मसक उडि करत महा सुरग नेरौ।।
पियासौ पंखी पिवै येक चँचभरि नीर कौं, अरु करत कौ सिंधु सबकौ निखेरौ।।
आपणै विडद की लाज राखण सदा, भगत हेति साखि साची कर्ण प्रभू मेरौ।।
सदा थिर रहै सुणि जो जीव परसा प्रभु, यहै पतित पावन सदा विडद तेरौ।।१०४।।

(पयार)--

भोमिका कण गिणत अंत पावैं कदै, पैं हरि चरित वार नाँही पार नेरौ।।
सहस मुखमांहि रषनां उभै सेस, कै होत तिन तैं नहिं कछुवै नवैरौ।।
येक मुख येक रसनां सो अटपटी, तिहीं सु मैं भज्यौ सु उनमान मेरौ।।
जगत मंडन सुजस पाप खंडन, (सदा) सो सुमरि परसा जु बडभाग तेरौ।।१०५।।

।। इति श्रीप्रहलाद चत्रि संपूर्ण ।।

परशुराम - लीलाएँ

(श्रीकृष्णाय वासुदेवाय गोविंदाय नमोनमः ।। श्रीसर्वेश्वर देवो जयति ।। श्रीभट देवो जयति ।
श्रीहरिव्यासदेवो जयति ।। श्रीस्वामी जी श्री १०८ परसरामदेवजी कै १३ लीला ग्रंथ लिख्यते ।।

अथ श्री अमर बोध लीला

दोहा

श्री गुरु सबद हिर्दे धरै, परसा प्रेम समाय। मनसा वाचा कर्मणा, जो वांछै सो होय ।।१।
श्री गुरु सब्द समान कोइ, सुकृत सूझै नाँहिं। हरि मंगल पद परसराम, प्रगट भयो जामाँहिं ।।२।
श्रीगुरु सब्द समान औरु, नाहिंन कौ उपगार। परसराम गुरु क्रिपा तैं, हरि पाइये अपार ।।३।

चौपाई

श्री गुरु सबद सदा उरि धारौ।। गुरु प्रसाद हरि नांव संभारौं ।।४।।
अनादि सबद गुरु ऊँकारा।। जाहिं भजत हरि मिलै अपारा ।।५।।
हरि अपार कौ वार न पारा।। जन खोजत हरि मिलै अपारा ।।६।।
हरि अपार कौ पार न कोई।। कृपा होय तौ गाऊँ सोई ।।७।।
आसा सुख हरि कौं जू गावै।। हरि ताही कौ भलो मनावै ।।८।।
जा गायां गुण होय प्रकासा।। सूझै सकल सुखी हो दासा ।।६।।
अंजन कूं मंजन करि पीवै।। प्रगट करै पल मैं सब जीवै ।।१०।।
अविगत नाथ निरजंन राया।। अंजन जामैं रहै समाया ।।११।।
दिष्टि न दीसै मुष्टि न आवै।। अगहि गही सबसो न गहावै ।।१२।।
दीसै प्रगट सकल सचराचर।। आवागवण न करै सदा थिर ।।१३।।
सीत उष्ण आकास न व्यापै।। सो उडि जाय न भीजै आपै ।।१४।।

दोहा

जाल्याँ जलै न जलि गलै, कटै न सो कुमिलाय। सुर्ग येक रस परसराम, रुति आवै फिरि जाय ।।१५।।

(विश्राम - १)

चौपाई

अंजन मांहि निरंजन जाणां॥ ज्यौं पावक काष्ट पाषाणा॥१॥
कीजै मंथन प्रगट हो आवै॥ मथन हीण हो तिसौ दिखावै॥२॥
पहुप मांहि ज्यौं बसै सुवासा॥ यौं सब मांहि ब्रम्ह का वासा॥३॥
ज्यौं व तेल तिल मैं दरसावै॥ पीड्यां तैं प्रगट हो आवै॥४॥
ज्यौं दुग्ध माहि घ्रत रहै समाया॥ मथन कियां तै बाहरि आया॥५॥
यौं प्रगट हरि अराध्यौ होई॥ जे सुमरै तिनकौं सुख सोई॥६॥
हरि अचिंत अंछया अवतारी॥ नाना रूप देह जिनधारी॥७॥
प्रगट होय कछु बिरँब न लागै॥ तनधर ज्यौं सोवै सुनि जागै॥८॥
हरि कौ सुख जिन किनहूं जाना॥ सोई नीकैं करि करत वखानां॥९॥
हरि निजरूप रूप जाहि सारै॥ जलधि तिरण जिहाज कै सारै॥१०॥
हरि कौ सुभाव जू भौ तारै॥ सुख दायक दुख दूरि निवारै॥११॥

दोहा

दूरि निवारै दोष कौं, सुम्रयौं रहै हजूरि॥ सो हरि व्यापक प्रसराम, सब मैं है भरिपूरि॥१२।

(विश्राम - २)

चौपाई

ज्यौं दरिया उठि मिलै तरंगा॥ जल कौ जल दूजौ नहिं अंगा॥१॥
ज्यौं भाजन नाना परकारा॥ प्रभु मैं मिलै सकल निरभारा॥२॥
ज्यौं कनक अभुखन बहु कहावा॥ फेरि मिल्यां नग नाँव दुरावा॥३॥
नीर हि नीर मिल्यो सुख पावै। दुग्धहिं दुग्ध ना दोषज दिखावै॥४॥
अवगति अकल अनंत अनेकैं॥ अंतर जामी अच्युत एकैं॥५॥
अवगति अवरण वरण कहावा। स्वाद विविध थिर सदा सुभावा॥६॥
अचिंत पुरुष अमात्रा सोई॥ निराकारर आकार न होई॥७॥
परम आत्मा पुरुष नृसंसा॥ सारभूत साखी ता अंसा॥८॥
ता इछा आतमां अंकूरा॥ निहचै जीव सकल भरपूरा॥९॥

दोहा

जीव देहधर आतमां, व्यापक ब्रम्ह कहाय। हंस प्राणीयों प्रसराम, दिष्टिक मिलि दरसाय॥१०।

(विश्राम - ३)

चौपाई

हरि अखै बीज अस्थिर विस्तारा।। इछया अंकुर प्रकृति ब्यौहारा।।१।।
प्रकृति तैं महतत्त्व निकारा।। महत जतैं उपज्यौ अहँकारा।।२।।
अहँकार ऊपजै गुण तीनौं।। राजस तामस सातिग तीनौं।।३।।
करिये भूत रुद्र तनमाता।। एकादस कै तामस ताता।।४।।
पृथ्वी अप तेज वाय अकासा।। पंच महाभूत करण निवासा।।५।।
अरु सबद परस रुप रस गंधा।। पंच तनमात्रा ग्यान सन्बंधा।।६।।
ए दस रुद्र ग्यारहुँ कहाई।। तामस तैं लीनू उपजाई।।७।।
ग्यानेंद्री करमेंद्री ब्रम्हा।। राजस तैं एकादस जन्नमा।।८।।
श्रवण नैन नासा मुख तोचा।। पंच ग्यानेन्द्री करि सुख पोचा।।९।।
वाणी गुह्य गुदा कर चरणां।। कर्मेंद्री पांचौ कृत करणां।।१०।।

दोहा

कर्मेंद्री कृत परसराम, करिये सोइ पिछांणि। भलौ करै तो सुख लहै, बुरो करै तौ हाणि।।११।

(विश्राम - ४)

चौपाई

नेत्रां कौ अधिष्ठाता सूर्य।। तिमिर हरन परकासहिं पूर्य।।१।।
श्रवणै सुर दिग दिस रखवारा।। नासेस्वर अस्वनी जु कुमारा।।२।।
जिव्है सुर कही वरुण बुलावै।। वाणी वर अगनेस कहावै।।३।।
भुजेस इन्द्र तोष सुरवायौ।। चरणेसुर श्री विष्णु कहायो।।४।।
कामदेव गुह्येसुर कहीये।। गुदेस श्रत्यावर्ण कहि रहीये।।५।।
मना कौ अधिष्ठाता इंदा।। नाना रूप करै मन चंदा।।६।।
बहु बुद्धि कौ अधिष्ठाता ब्रम्हा।। करि जाणै सब कर्म अक्रमा।।७।।
खेत्रगिचर चित्त कौ अधिष्ठाता।। जाणैं सकल सूंज की वाता।।८।।
अहंकार कौ हर अधिष्ठाता।। तामस गुण सव कौं छलिखाता।।९।।
मन बुधि चित अहंकारहि बूझै।। अंतःकरण आदि घर सूझै।।१०।।
ए देवता दसौं मन राजा।। सातिग तैं सुखपति उपराजा ।।११।।

दोहा

एक विष्णु दस देवता, मन बुद्धि चित अहँकार। ए सातिग तैं ऊपज्या, परसा सुणूं विचार॥१२।

(विश्राम - ५)

चौपाई

मन बुद्धि चित अंतर अहंकारा॥ तिन खोज्यां मिलैं वस्तु विचारा॥१॥
प्रकृति जीव आतमां सारा॥ परम पुरुष कौ इहि ज्यौहारा॥२॥
अंतह करण नांव सोइ स्वामी॥ जो बसै निरंतर अंतरजामी॥३॥
धिरज घर तामैं भयो वासा॥ अकल द्वार निज नांव निकासा॥४॥
अमृत रस जाको आहारा। अबाध रहै सोइ व्यौहारा॥५॥
भूत भविषीत वरतति जाणै॥ आगम निगम सुगम पहिचाणैं॥६॥
यहि परचै पहुँचि सोइ देखै॥ मिलि आत्मा परमात्मा ऐकै॥७॥
ऐसे प्रभु देखै सो जीवै॥ परसा प्रेम सुमिलि रस पीवै॥८॥
ए अठारह सूत्र आकारा॥ परसा तत नृमल निराकारा॥९॥

दोहा

निराकार आकार ज्यौं, तोय तरंग दिखाइ। अकल सिंधु मैं प्रसराम, उपजै सकल समाइ॥१०॥

(विश्राम - ६)

चौपाई

स्याम वर्ण भयो नाम अकासा॥ कड़वो स्वाद स्वभाव खटासा॥१॥
दसम द्वारि हिर्दै भयो वासा॥ दाहिण प्रवेस वांव निकासा॥२॥
सबद आहार अहं व्यौहारा॥ जातैं उपजै करम अपारा॥३॥
लज्या माया मोह सरीर रति॥ हरष सोक आकास की प्रकृति॥४॥
जो न तजै इनिकौ व्यौहारा॥ स्वेदज खानि धरै औतारा॥५॥
बायो नाम वर्ण भयो नीला॥ खाटो स्वाद स्वभाव सलीला॥६॥
नाभि कमल भितरि भयो वासा॥ इला प्रवेस पिंगला निकासा॥७॥
गंध आहीर क्रोध व्योहारा॥ हरि अस्थिर तजि भ्रमैं निसारा॥८॥
गांवन धांवन ग्यान अगोचर॥ जन्मै प्रकृति पवन छलोवर॥९॥
इनकैं स्वादि जीव जो भ्रमैं॥ अंडज खानि जाय सोइ जन्मैं॥१०॥

दोहा

इहि विध अंडज खानि मैं, भरमैं जीव असार। हरि भज्यौं ना परसराम, सरणै राखणहार॥११।

(विश्राम - ७)

चौपाई

तेज सुभाव वर्ण भयो राता॥ तीखो स्वाद सुभाव सुताता॥१॥
त्रिकुटि घर तामैं भयो वासा॥ दाहिणैं वांव नैत्र निकासा॥२॥
रूप अहार मोह व्यौहारा॥ मुकत न कदै सदा सिरभारा॥३॥
तृषा भूख आलस निद्रांच॥ क्रोध प्रकृति तेज की पांच॥४॥
इनाकैं रंगि जीकौ अनुसरइ॥ सुजराय खांनि जोनि औतरइ॥५॥
पानी नांव वर्ण भयो सेती॥ मौलौ स्वाद स्वभाव सिलेती॥६॥
घर लिलाट जिमैं भयो वासा॥ जिव्हा प्रवेस अरु गुह्य निकासा॥७॥
त्रिया अहार काम व्यौहारा॥ निहकांमता पुरस फल न्यारा॥८॥
अमरी पीक प्रसेद सुने वच ॥ य आपतैं प्रकृति सुकले वच॥९॥
जो मतियन सुबरतै दुख भरण॥ तौ उद्भिज खानि जनम इहिं करण॥१०॥

दोहा

भरमैं उद्भिज खान मैं, यहि काची करतूति। भगति न भावै प्रसराम, भावै सदा विभूति॥११॥

(विश्राम - ८)

चौपाई

प्रथमी नांव वरण पीलावा॥ स्वाद मधुर सुबैठी सुभावा॥१॥
नाभि तल सुचक्र मंडल वासा॥ मुख पैसार रु गुदा निकासा॥२॥
खाय अहार लोभ व्यौहारा॥ याही गुण सुमिले सिरभारा॥३॥
रोम तुचा रग मांस अस्तिइय॥ भू की प्रकृति जू याहि कहिय॥४॥
निज परहरि इनसौं रुचि मानी॥ प्रेत खानि भ्रमैं सोइ प्रानी॥५॥
कर्म इंद्री पांचौ ये खांनी॥ मुरझउ ग्रभासर सरस वानी॥६॥
पृथ्वी आप तेज अरु वायो॥ सुरग सुन्य तजि आवै जायो॥७॥
पांचौ ग्यान इंद्री जो सरमल॥ खोज्यां तैं पावै पद निरमल॥८॥
निरमल मिलै सु निरमल होई॥ निरमल विमुख रहै मल सोई॥९॥

दोहा

निरमल मिलि निरमल सदा, मल मिलि सदा मलीन। मलहिं न संकै परसराम, सो प्राणी मतिहीन॥१०।

(विश्राम -९)

चौपाई

मति अचेत बालक ज्यौं जीवै॥ मंद अगनि रुचि रसहिं न पीवै॥१॥
मांहि मनोरथ मन संकल्पा॥ चितकै चेतन तासु विकल्पा॥२॥
ज्यौं आयो त्यौंही तहँ जैहै॥ अपनि उपाधि लियो निरवैहै॥३॥
निरविकार आतमा निज वंदन॥ निरमल कला सदा सोइ कुंदन॥४॥
ज्यौं मल बस्त्र धोबी कौं दीजै॥ दे सासनां निर्मल करि लीजै॥५॥
पानी मथ्यां न माखन आवै॥ पुरुष न दूजौ देखि पत्यावै॥६॥
जांवण दीन्हू दूध समावै॥ दही मथ्यां सूं माखन आवै॥७॥
राज पाय फूल्यौ नृप जैसैं॥ बोलि लियो सुकच्यो फिर तैसैं॥८॥
पूठि दई सोई सिरभारा॥ सनमुख गयो भयो निरभारा॥९॥
सो अभार जो भार न लेई॥ पति सनमुख रहि पूठि न देई॥१०॥
पूठि दई सोई विभचारी ॥ ज्युँ नाक हीण भर्मत भौ नारी॥११॥

दोहा

पूठि न देई पीव कौ, सनमुख रहै सुजाण। सोई निर्मल परसराम, पावै पद निरवाण॥१२।

(विश्राम - १०)

चौपाई

वरण रहित मन नांव कहावा॥ सूछिम स्वादी अथिर सुभावा॥१॥
हृदै कँवल भीतरिँ जिहिं वासा॥ सहजहिं सार समाधि निकासा॥२॥
अमी अहार अथै व्यौहारा॥ अकलप भोगी नित निरभारा॥३॥
जागत सोवत सुख मनि बूझै॥ सुरति निरति निरभै पद सूझै॥४॥
जहँ हरि अहंकार सुपथ होई॥ सालोक मुकति पावै सोई॥५॥
नाम सुबुद्धिवर्ण निरमल होता। अमित स्वाद स्वभाव समझौता॥६॥
घर विचार मैं बुधि कौ वासा॥ अणहद द्वार बेहद्द निकासा॥७॥
सुरस अहार अगम व्यौहारा॥ तिमिर हरण विग्यान उजारा॥८॥

सीतलता संतोष सबूरी।। निहचौ नेम तहां मति पूरी।।९।।
जो चित अचिंत चिंता तजि धावै।। सारुप मुकतिता वसि आवै।।१०।।

दोहा

जाय मिलै सारूप सौं, या रूप कौं विसारि। परसा सलिता सिंधू मुख, मिल्यौ रहै ज्यौं वारि।।११।

(विश्राम - ११)

चौपाई

चित्त सुनाऊं वरण उज्जल तन।। स्वाद सुभाव सुगंध सुचेतन ।।१।।
घर विवेक तामैं रहि वासा।। अजपा द्वार तहँ जपि निकासा।।२।।
त्रिपति अहार अगम व्यौहारा।। निराधार जाकौ आधारा।।३।।
जप तप संजम सील उदासा।। अगम ग्यान अवगति विस्वासा।।४।।
यौ साधन चित कौं जो आवै।। सामीप मुकति प्राणी पावै।।५।।
अहंकार वादि वरण अदावा।। सवीर्ज स्वाद सम दिष्टि सुभावा।।६।।
खिमां घर तामैं भयो वासा।। निखासी निज नांव निरवासी।।७।।
अहार अजर अस्थिर व्यौहारा।। हरि कलप तरु वर उरि उदारा।।८।।
भाव भगतिं कौ फल वेसासा।। प्रेम प्रीति आरति हरि आसा।।९।।
सबतैं समझि रहै निहकांमा।। सायोजि मुकति मिलै विश्रामा।।१०।।

दोहा

सहजि वसै साजोजि महि, मनहुँ आगि महि आगि। परसा जलै न सो बुझै, जाग्या उठै जागि।।११।

(विश्राम - १२)

चौपाई

झीणै तैं झीणा हरि होई।। निरमल तैं निरमल हरि सोई।।१ ।।
सूखिम तैं सूखिम हरि समरथ।। हरि आगैं इषांत असमरथ।।२।।
हलका तैं हलका वनवारी।। भारे तैं अति ही हरि भारी।।३।।
सीतल तैं सीतल सुखदाता।। तातै तैं अति ही हरि ताता।।४।।
मीठाति मीठा हरि कहीये।। खारे तैं खारै जु कहीये।।५।।
नीरे तैं नीरा भरपूरा।। दूरा तैं अति ही हरि दूरा।।६।।
ज्यौं जल मीन पंथ कौ जानैं।। सो प्राणी पति कौं पहिचानैं।।७।।
पंखि पंथ कौं लखै अकासा।। सो पावै घर ब्रम्ह निवासा।।८।।

प्रभु कौं देखै सोई जीवै ।। परसा प्रेम सुमिलि रस पीवै ।।९ ।।

दोहा

हरि अमृत रस परसराम, पीवै प्रेम अघाय। जनमैं मरै न औतरै, ताकौं काल न खाय।।१०।

(विश्राम - १३)

चौपाई

अगम अगोचर जाहिं कहीये।। ग्यान अतीत ग्यान सु लहीये।।१ ।।
वपु अतीत वपु मद्धि समाया।। गुण अतीत गुण साजि चलाया।।२।।
सबद अतीत सब्द जाहि गावै।। भाव अतीत भाव वसि आवै।।३।।
परम समाधि सुमंगल नांमा।। लीन घर मैं अस्थिर विश्रामा।।४।।
अजपाजाप निरंतर करेईं।। अमर होय तन धरि न मरेईं।।५।।
अमर ग्यान आतमा उजियारा।। अंधकार दुख हरण विकारा।।६।।
अवगति नाथ सदा व्यौहारा ।। जोग जुगति जोगेसुर सारा।।७।।
सारा होय भजै जो कोई।। तासौं मिलि ताही सौ होई।।८।।
परम पवीत्र परम घर पूरा।। इत उत रहित रहै भरपूरा।।९ ।।
परम तत्त्व चेतन चित सोई।। परसा पलटि न दूसर होई।।१०।।

दोहा

दूजा होय न दुख सहै, सुख मैं रहै समाय। परसराम जन कीट ज्यौं, भजत भृंग हो जाय।।११।।
अमर बोध आनंद पद, परसा पूरौ जोय। वोछो कहै अपार सौ, वोछी मति कौ होय।।१२।।
अमर बोध जो नां मरै, अमरनि कौं उपदेस। परसराम सीखैं सुणै, हरिपुर कर प्रवेस ।।१३।।

(विश्राम - १४)

इति श्री अमर बोध लीला सम्पूर्ण ।।१ ।।

(१५९ पद / दोहा १९ / चौपाई १४०)

अथ श्री नामनिधि लीला लिख्यते

नोट–छन्द–विधान के अनुसार ग्रंथ को शुद्ध करने हेतु कतिपय स्थलों पर हेर–फेर किया गया है।

दोहा

ऊंकार हरि अपार उरि, उतरे अंतर खोय। अंतरजामी परसराम, व्यापक सबमैं सोय॥१।
इत वुत कह्यां न वोत उरि, अंतर प्रीति न होइ। अंतर जामी परसराम, लखै जो अंतर होइ॥२।
वै तारक वै तत्त्व सब, वै पालक प्रतिपाल। उंकार विण पार विसासु, सोई इत वुत आल॥३॥
वुतिम सुवोप वुपरि उदै, अरु वैसा ना होइ। उचाणउच्च उडाणउडि, उभै पाइ नहिं कोइ॥४॥
वोर विणा वोतउ तबै, समीप वैसे वैस। वोसर यक उपमां पार, वोप वुपति अप जैस॥५॥
उपमां अधिक उजास अति, उदै उग्र उजियार। उरवसी सुर्ग उत्राण उर, करम अद्भुत उदार॥६॥
उग्रेस उपइंद्र उषापति, इष्टोरिषी उदीर्णो। यक बेरउ वारि ईंसान, इंद्रकर्मा उजीर्णो॥७॥
एक अकेला एक रस, एक भाय इकतार। एकाएकी एकही, एक सकल इकसार॥८॥
इंद्रीई स्वर एकसा, इत उत एक समान। एकांग एकांत उत, एक आप इक आन॥६॥
इत उत अंतरि एकही, कदै न दूजा होइ। उतपति मद्धि ना उपजै, वै अस्थिर थिर सोइ॥१०॥
इत खोज्यां रु उत खोज्यां, इत उत अंतरि नाँहिं। अंतर खोजै प्रसराम, वै न कदै पछताँहिं॥११॥
इत उत खोजि न भेद करि, पाए पींजर मांहिं। अंतरजामी परसराम, कहूं न आवै जाहिं॥१२॥

(विश्राम - १)

उंकार अपार अति सार, सोइ है हरि पार। आदि अंत इक तार मद्धि, सोई है विसतार॥१॥
अवगति नाथ अति अनंत, अकह आनंद स्वरूप। अविनासी अघहरण अर्थ, अण विचार अनूप॥२॥
अति अगम अगोचर अगह, निगमागम तैं न्यार। अजन्मा अजोनी अजर, अमर अनभै अकार॥३॥
अणघड़ अति अणड़ अजोड़, असणि अकास असार। अटल अढिग जो अणडोल, आप आपै अधार॥४॥
अजपाजाप रूप अनूप, अवनि वुंचौ असमान। अधर अलिपत अंतरीक्ष, असलि आसण असान॥५॥
अचल अमल आतम अतित, अस अनयास अभार। अकह उग्र उत्तिम सुउंच, अवसि आलम उदार॥६॥
आदि रुप असुरेस अखिल, अगिणत अति औतार। अरु आदम अदेस उदै, आदर सब उजियार॥७॥
अगई अंगज अनमान, अगम अगैं अगिवाणि। अगण वौगण अग्यान अगि, अहंकार अणिमानि॥८॥
अविहड़ अघड़ अथग थाघ, थोघत नाहीं लाध। आराध हरण अपराध, अबँधनि जात न बांध॥६॥

अति आतमा जो अघदवण, करणी अपणी आण। अजड़ अखंडित अधर आघ, पैं जात न जाण्यौ जाण॥१०।
अँगि रंजन अजानबाहू, अन्हद अंबर धरधारि। असरणसरण अनाथ बंधु, अधम उधर अधिकारी॥११।
अमी सिंधु अनमान अमृत, अमोलिक अतिव आछ, अति पावन निरमल सदा, अतिव सुवछ जिमि काछ॥१२।

(विश्राम - २)

दोहा

पाछौ होत न पिवत मन, अचवत आरति वंत। परसराम आनंद पद, सेवत मिलि सब संत॥१॥
आरुढ अढ़र अनहद था, हद विणि एक अचंभ। अगण असण असमार अर्थ, अस्थिर अण आरंभ॥२।
अपरंपर अपरुप आप, रछित तैं अप रच्छन। अभै आचिरज अणसंखि, अकर अलंब सुरच्छन॥३।
अखैराज उदिवंत अंस, उज्जल अति उणियार। अहिर अगण अमूल अरुण, भै हरण अंधियार॥४।
अलह अलख अलेख अगलि, अखिर अथिर अनकार। अवधि आइस अभिरामा, असम अंबुज करितार॥५॥
अमर नाथ अमरापि अन, एको अति इंद्रीवो। अखेत्रगि अग्रज अमल अघ, अहो आदिऽदेवो॥६॥
अनिरुद्ध अनर्देसौ आदि, निधि नो आद्दि कीव। आदि श्रेष्ठो आदि मूल, आदि कर्ता आदि सींव॥७॥
अनंत विद्या अनंत मंत्रेसु, आदि रंभ अंब्रीक्रितौ। आत्माधार अचिंत अनंत, अक्षरौ आदि भूतौ॥८॥
अमोघां सुयाग्र अनादि, राज असाध साधिक। अरिष्ट अरिमंथन अमर पति, अघदवण असुराधिक॥९॥
अप्रमयो अग्राजि अनुकूल, अनंत मंत्र अभिप्रीया। अनंत सोचरण अप्राजित, अमानी रु अमीया॥१०॥
अनंत सोभा अनंत सुखो, अनंत सुकृत राज रज। अनंत आरंभी अनंत रत, अनंत औसर अचिरज॥११॥
अनंत आनंद अनंत पदा, अनंत मंगल हरिख वर। अनंत मूर्ति अनंत लोचन, प्रकास अनंत अंधार हर॥१२॥
आदि न जाणै अंतकु अंतु, आदि कौं ना जाणैं। परसराम प्रभु अगम की, जाणि कूण बखाणैं॥१३॥

(विश्राम -३)

दोहा

कहण कहावण कर्म करण, कर्म कारिक कहत हर। करसणि किसाण कसु करण, कसण कसौटि कसकर॥१॥
कला अकलित कला नृमल, कलेवरो कलंक हर। कर्म करणी करतूति करि, करावण ना कछु कर॥२॥
क्रत उतपति क्रत आतमा, कृतार्थो विलोपिकह। करण कारणो केलि क्रत, आगम क्रत अनंत कह॥३॥
काकुस्तोपि कुले ईसुर, कपि इन्द्रो कलेसकर। काम पालग कामदेव, काम कांत काम हर॥४॥
कुसम कवीसुर कामहर कांमापति कांमहा। काम कूटस्तो काम कर, काल कूट नेमिहा॥५॥
काल निर्विंतो काल करण, कालकूट करण छिणं। कालातीत काल अंतक, काल ग्रह कालभखिणं॥६॥
कृष्ण दीपाइन कसिवाज, कालेसुरो क्रत हर। कोटि वज्रनख काल-सूल, रु कालाधिकाल वर॥७॥
कृपा केतु कुलीन कपिल, कहियत कलानिधान। कंधोधर करुणा निधान, कूरंभ कछप कहान॥८॥

कान्हवो कृष्ण करुणामैं, कृष्णो कल्याणकारी। कामिनी किरनि कामहर, कारण केलि सारी ॥६।
कनक कुंडलो करनि कीट, कुसम कंबल चलावण। कदम तलि लकुटि टेकि कृष्ण, कठ काकिल गवावण ॥१०।
कालिंद्री कैं कूल काछि, क्रीला किलका करन। कांण न काहु करण, बिहरि वन क्रीला किसोरन ॥११।
कमल नैण कमलासुपद, कमल पद कलेसहर। काली विषहर कमल दल, कलि काल करन पतर ॥१२।
केसीदवन कराल वल, कंस कुल काल उदंगल। कलह रुपकला अरु करण, काल कौ काल मंगल ॥१३।
कमठ कठिण कूं करि करण, अंकूर करता करण। निकलंकी कलि मल उद्धरण कालिंग सुक्कदल करण ॥१४।
परसराम कौ कलि कसै, अकल सकल आकार। कर्म ना करनी जाति कुल, केवलो एकांकार ॥१५।

(विश्राम - १४)

दोहा

खेत्रगि खड वंसि कौ षिता, पिता षरा रुद्र रारि। खेमो निति खरा अरोग, खेमि कर खडग धारि ॥१।
खालिक खेलै खलक मैं, खिरि खालिक भुलाणा। खसम खेम करि धरे सख, राखे वट मसांणा ॥२।
गुणग्यान मूर्ति ग्यान गमि, ग्यान सिंधुरो खंडधी। ग्यान विज्ञान गुणे महा, गवेसो गोवउधी ॥३।
गजाधर गदा पाणि गंज, गजा गुंजित आतमा। गुरु वागीस गोचर गुर, गंगो गुरो ऊतमा ॥४।
गुर सेवग गुरु रुप ग्यान, गोरखो गोसाई। गोतारण गोविंद गगन, गर्जन घन बल घांई ॥५।
गुपतांगो गुपत गहणो, गुणेसो कंदर्याही। गुणातीत गुणातगुणा, सुमृत गुहा सुर्जाही ॥६॥
गौरी भीखम सोभागि, ग्रस्त गोपि ग्रभ सास्त्रो। गुपत चक्रो गोपदेवो, गोप गोपी पालो ॥७॥
गऊचर गोपाल गोप, गोवर्धन गुणधारी। गोपवर गिरराज ग्वाल, सुविलासो विहारी ॥८॥
गोकुल नाथ गयंद गति रु, गोधन संगि धावनो। गहि गहि ल्यावत गो अगह, घरि बान कहावनो ॥६॥
गोपीनाथो गुण जाण, गो गुणि गर्व प्रहारी। गरुडासन गंभीर गहिर, ग्राह गजन विचारी ॥१०॥
घन बंधन घणां कूं घडण, घण घण पण कर जाण। घणां नांमी घण उधरण, घण पालन घण प्राण ॥११॥
घरवो घर औघट घाट, माहिं रहै दुराणूं। घट घट मैं कहू न घाटि, घाट घाट घडानूं ॥१२॥
घाटि ना बधै अघट्ट हरि, घटै न पूरो होइ। हरि जैसा तैसा रहै, परसा सम्रथू सोइ ॥१३॥

(विश्राम - ५)

दोहा

नारायण निर्वाणनांव, निर्मल अति निरभारा। निर्मोलिक निजरूप निगम, निहकल निजूसारा ॥१॥
निति निति निरंजन निर्विकार, नरिंद निहचल नैरी। निराकार निर्लेप नगन, निरभै रु निरवैरी ॥२॥
निराधार निरालंब नित, नराश्री निसप्रेही। निरसंसै निरमूल निकुल, निर्गुणो बिनू देही ॥३॥
निर्दावो निर्दोष निर्काम, निरस्वाद निरकाला। निजनाइक नित निरति वर, नांव रहै निराला ॥४॥

नागरिहर निडर निर्घोष, अर्धनारी नरेस्वर। निगमा निति निकर निर्षेध, नराधिक नारिक नर॥५।
नरसिंघ नरहरि नरेसो, नादिव नरकि सतांवन। नाटेस्वर नटरुप नटसु नाटक नट नचांवन॥६।
नागरी निर्ति निति नवरंग, निति निर्तत निर्तकारी। नव निकुंज नव नेह देह, नवल तन निजधारी॥७।
निकटे नेम तैं न दूरि, नेह नेह निसि पर्म स्नेही। नवल नागरी नंदनंदन, नैन भरि किनु लेही॥८।
नर रतन नरिंद नराकृत, नर्केसुर नराश्रयो। नित्यौ नीहोनो निति नर्क, निबारण निरामयो॥९।
नित्यानंद निर्विकल्प निर्मोहि, निर्प्राधी निरविग्रहो। निति नित्रिपतो निर्मोखिलो, नित्यो च नाम निप्रहो॥१०।
नासिको मधि निति वकस्थल, निराघ निजमोजमह। नीलोधर निधरो नैकु, निखत्र नेमी खेमह॥११।
निरकर्म निररुप निरातम, निकर्म निर्पित निर्मेवो। नैनंद जोति निनार पद, निर्वर्ति नरादि देवो॥१२।
निरधुंदी निखर्तिनि सूनि, नित रहता निऊतर। निहकंटक निरपंथा नेटि, निरदोसो निऊतर॥१३।
निरूतर निर्दोस नितदोस, तैं जोहै निराला। परसराम निरभै तभै, उनतैं नाहिं ताला॥१४।

(विश्राम - ६)

दोहा

चतुराइ चतु आरतीक, छत्रवर छत्र छलिलसो। छत्रधारी छत्रघण छत्रन, छत्र छैल छबीलसो॥१॥
छह छकबिनु छरद छत्रपति, छाय छेहन छानैं। छलै अछल सबकौं छलै, छलन छेदन सानैं॥२॥
चतुमूर्ति चतुर आत्मो, चतुर्वेद परवर्ति कह। चतुरात्म चतुर्वर्ण चतुर्जित, चतुर्जुग विचाई कह॥३॥
चतुहू कोटि प्रिथी क्रितह, चतुर्वेद विसु आत्मा। चित्रकूटा पति चित्र छीण, मूर्खो चक्रो ऊर्मा॥४॥
चक्र झिली राख्यो सहश्र, चत्रो दसो घणो इक। चक्री चिंतामनि चतुर्बाहु, छलूकाग्र छूचयक॥५॥
चतुरवेता चतुरगुणा चतुर्बेधि चतुरांगो। चाणूर मर्दन चरित्र पति, चारु चरित्र पदांगो॥६॥
चापधरण चक्रवाण चक्र, कौं चक्रधारि धांवण। चित्री चित बंध्यौ चक्रछोरि, चक्रीफेरि चलावण॥७॥
चक्री चकबंधण चकवेस, चक्रपाणी चलि चक्रति। चतुरारन चाव चतुर्भुज, चिंतामनि चतुरांगति॥८॥
चित चंचल चितचोर चाहि, चहू दिस चलि आवण। चक्रकर चंद चकोर चारु, करि चरितू दिखावण॥९॥
चरण चिन्ह कर करण चैन, सचराचरा चारण। चित चेतन चित चतुर चिंत, करिउ सकल चितारण॥१०॥
चखि चीख चोखो चित्राम, चित्रण चित्र चितारौ। चीर पुरवण चिंताहरण, चितकरि तहि चितारौ॥११॥
चिंता ना करि चिंतारि हरि, चितकरि चित मैं राखि। चिंता दै चिंता हरणकौं, परसा चंचभरि चाखि॥१२॥

(विश्राम - ७)

दोहा

जगन्नाथ जगदीस जगति, पति जग जीवनी आपी। जगिपुरुष जकनाथ जगत, गुरु बंधु जगत जापी॥१॥
जुगति जोग जन जपति जस, सबनिन कौं उबारिक। जयति जयति जयरुप जीव, जंत्रनानि निसतारक॥२॥

जुरा रहित जाग्रित जोति, जलथली कुल छायो। जोनि जड जन जनमि जाम, जगत पति जग जायो ॥३।
जगत व्यापक जगंस जाण, जोतिग सवी जाणै। जगतेसु जग भरण जुगति, जैसी जूजमानैं ॥४॥
जटा जुट जुग चारि जतनि, जोडे जिनी जागर। जगत्र जोगवणी सुजोग, निजी जोग उजागर ॥५॥
जगजंत्री जाकेस जगत, जनम भू जगत्राता। जगत श्रेष्ठ जग निधि, जगत कृपाल सुजग ध्राता ॥६।
जगपति जग उद्धरण जमुन, पति जमलार्जुन अंजन। जगत जटाधरो जटाखि, जसोनिधि जनांरदन ॥७।
जलधि जामैं जगंस जिहिणि, जागणू रु जगांवण। जहर जारण जस जंजाल, जमकालो बचांवण ॥८।
जरा व्याधि रोगज मारि, जनम म्रिति जुरातीत। जोग स्वामी जोग प्रियो, जोग उतपति वतीत ॥६॥
जगि देहक वरद वीर्जो, जगनि मैं जगिजुगता। जगि भावन जगि फल सार, जगेसु जगि भुगता ॥१०॥
जगि आंगो जगनिधि जगि, वाहन जगि आश्रितो। जगि नेष्टगि जगि आधीस, जगि गुह्येस जगि क्रियो ॥११॥
जरासंधक जैति पंडवी, कृत जयत गिरि वृजेस। जोगेसुरो देही कृत, जोगिन ग्रिसित ग्रिजेस ॥१२॥
जग पद भिषिक अजुध्या कृत, जमदग्नि कूलादितो। जिता मति जीव जीवस, जन्यो जन्म जलाजितो ॥१३॥
जग जगि जोग जुग जामैं, उपजै उलटि विलाय। सो जल जीवनि प्रसराम, पीजै प्रेम अघाय ॥१४॥

(विश्राम - ८)

दोहा

हरि अटूट टूटै न टिकि, रह्यो टेक न छिटकी। टरै न टार्यो जाइ हरि, टेक टेकनि घर्टाके ॥१॥
हरि ठाकुर ठिक बंध ठौर, ठाहर ना ठिकाणूं। डावौ हरि सबकौं ठगै, होय ठग रु ठगाणूं ॥२॥
डोलै डिगै न डर करै, डाहो रु डाइल डिंभ। धर सबि डोरै डोरि वसि, डोरै डाहर उरंभ ॥३॥
तीह कारण तिरण तात, त्रिभूवन तनि आरा। त्रिगुण रहित सातग राजस, तामसू त्रिपुरारा ॥४॥
तरुणि तार तरत न त्रिगुण, ताकौहि विसतारा। तपति इकतार तरंग तेज, त्रैलोकहिं उजारा ॥५॥
तुरित तेरथ तद्रुप तिलक, त्रिभूवण तिलक विक्रम। तुवं तीर्थ तुवं तपोतपा, त्रिविध ताप हरत तुवं ॥६॥
त्रिकालदर्सी त्रिकाल घण, जित कंद्रपत्रिकालवल। त्रिकाल उतपति त्रिकालो, जल प्रवर्ति त्रिकाल छल ॥७॥
तैंतीस सुरेस त्रिभुवन, त्रिगोपकाम दर्पहा। त्रिगुणी कांतो त्रिभुवणो, पतं पति अतिर अथहा ॥८॥
त्रिरुप त्रिमूर्ति त्रिदसोदर, त्रिभंगि तुलसी वल्लभो। त्रिगुणां अतीत त्रिगुणेस, त्रात भै रु त्रिजग भो ॥६॥
तकित भगन जरासिंध त्रित, साध तत्त्व तुरितार्थो। तरण तारणिक त्रैलोक्य, मंत्रेषु तीर्थोरथो ॥१०॥
त्रैलोक्य व्यापि त्रैलोक, भर ध्रिक त्रैलोक कर। त्रैलोक तारण पारक, त्रैलोक सचराचर ॥११॥
त्रैलोक आत्मा रु तात, त्रैलोकपाल प्राण। त्रैलोक नाइक रु नाथ, त्रैलोक मंडण आण ॥१२॥
त्रैलोक तृत्पिक त्रैलोक, पावनो रु तापहार। त्रैलोक विश्राम त्रिलोक, ब्रम्हांड त्रैलोक वर ॥१३॥
त्रैलोक सुकृत त्रैलोक, सोभा त्रिलोक जाण। त्रैलोक तत्त्व त्रिलोक स्वर, मंगल त्रैलोक भाण ॥१४॥

तप त्रिपद तीर्थकर तपो, रु प्रकासितो गियांन। तपोसिंध तपो आश्रमै, तपोसिधि तप महान ॥१५।
तप तपोवलि तपोतात, तपो इंद्र तपो परह। तप तपो श्रेष्ठ तपोनिधि, तपो अर्थ तमोहरह ॥१६।
तत्वमूर्ति तत्वो आतमा, तत्ववेता तत्व जाण। तत्वो तत्व प्राणी तत्व पद, तत्वो रत तत्व विग्यान ॥१७।
तत्व मंत्र तत्व ध्यान तत्वलिव, निवास तत्व तैं रूख। तत्व तैं फल तत्व रसो तत्व, सार तमाल तत्व सुख ॥१८।
तरवरि ऊपजै तत्व सूँ, रु तत्व सु तरवरि मांहि। परसा कहै ता तत्व सौ, अऊर तत्व को नांहि ॥१९।

(विश्राम - ९)

दोहा

थरहरि न थंभ अथिरक थिर, रहै सकल कौ थंभण। थोघ्यौ जात न थाघ थकि, थाहर्यो अरु निथंभण ॥१।
थोभ थापिणी थलोथल, थोघ पै नाहिं थोर। जाकौं थापैं थिर करै, तांहि उथपै न और ॥२।
दित्यौ दुर्गो दूरासदो, दया मूर्ति द्विजक दो। दीनानाथ क द्विज प्रियो, दुजादेव ब्रम्हण दो ॥३।
अद्भुत रूपो अद्भुत बलो, अद्भुत विस्तार अंतकह। देव दानव दूरादस, दाता काल अंतकह ॥४।
दुष्ट सकति सहस्र भुक दुसह, दैति गर्भश्रमो नाम। द्रोणाचारिज दतसानिधि, द्वादसार्क सिरोदाम ॥५।
दुष्ट भुक दुखिणा घणो दिति, नंदनो दितिषु दुष्षहा। देवकि देवेस द्वारिका, सुर देवेन्द्र द्रुपहा ॥६।
देह दिन दुर्यो नाहिं दुरि, द्रवण दिपक दसोदर। दुर्यो देखि धूं दुहाई, दुसध दानि दामोदर ॥७।
दाता श्रेष्ठ दुर्लभो दुर, दुर्वसो दुरारिहा। दृढ संकर्षन देवभृत गुर, देव ऋषी दुकृतहा ॥८।
दुसहा अंतक दैराट्ट, मुख दंड करण पावन। दुंदभिस्ति महाचैनो दुष्ट, दैतराज बभीषण ॥९।
दयासिंधु दीन दातार, दीनबंधु दुख टारन। दीनबंधु दासानुदास, दुख दुर्वास निवारण ॥१०।
दयासिन्धु दीनदयाला, दुसह दुरि दावानल। दहण द्ररिद्र, दावादलन, दल दूतो महादल ॥११।
दुरित दुख देवेस दुरिस, दीरघ दीवाण दर। दीनबंधु दरी दरवान, द्ररिद्र दवण दोष हर ॥१२।
दीन दिवाकर दीनबंधु, दुष्ट उद्धरण दयासुर। दीन दरदवंद दरवेस, दवागिर दावासुर ॥१३।
दिल दरिया मैं दीदार, दिष्टिवर दिष्टि न दीसै। दिवि दर्पण दिस देह मांहि, दिष्टकैं सबै दीसै ॥१४।
देव देवल देवालो, दूरि न दुर्यो अदेखि। जिहि करदीसै प्रसराम, ताहि दीन हो देखि ॥१५।

(विश्राम - १०)

दोहा

धरणी धरणधर उद्धरण, धर राखण धरपाल। धरा धारा हर धर भरण, धराबंधन धरवाल ॥१।
धरणी वर धन राजधन, धर नाइक धर नीर। धर उतपति धर प्रगट कर, धरा अंतक धर पीर ॥२।
धरणी मंडलो धरोविसु, धनेसुर धरो अंतरि। धाता धर्म धराकृति धृति, धरो धारा धनंतरि ॥३।
धोक धंधक धंधयो सबै, धनुक धर धूतारा। धर्यो धनक नांव धनाधि, धरिक देत उधारा ॥४।

धीठ धोटक धुनि धेनु, धौरि धुंमरि बुलावन। धूरि धूसर धर धाता, धाइ धन संगि धांवन॥५।
धूर्य धू उधरण ध्वनि धर, धूरवसी धुरधीर। धुराधि धुरख धोखै बिमु, धीर तैं धरत धीर॥६।
धर्मराजा धर्मात्मा धर्म, वरिखैं इंद्रो धर्माखि। धर्म पारकर धर्मपद धर्म, पराक्रमो धरम धखि॥७।
धर्माधर्म कर धर्म निवास, धर्म रूपो धर्मारथ। धर्मइधर्म उत्तमाधर्म धर्म, कर्मा निधर्मा धारथ॥८।
धर्माधर्म पवित्र धर्मसार, धर्मपालक धर्मानंद। धरधर्म स्नेहीं धर्म सेणि, धर्मनाथ धर्म धर्मांद॥९।
धर धर्म धुरंधर धर्म सेत, धर्माधिक धर्म धारा। धर्माधर्म धुजा ध्रम धाम, धन्नि तु बारूंबारा॥१०।
धूरा धर्म पुरुष पुरधर्म, धर्म आदि धर्मो अंतह। धरा धर्म पिता पति धर्मा, धर्म धीरज धर्म संतह॥११।
धरा धर्म गुर धर्म समाधि, धू धर्म मंत्र धनेसुर। धरा धर्म वाणी धर्म धन्नि, प्रसराम परमेसुर॥१२।

(विश्राम - ११)

दोहा

परब्रम्ह परमेसुर सर्व, पूरिक ना अधूरा। परम सनेही परम गुर, परम पीतम पूरा॥१।
परम गति पावन सूरत, परकासि प्रवाणी। परम पवित्र सुपर्म पद, पूर्ण ब्रम्ह पिछाणी॥२।
परम पुरुष परतीति तउं, पैज पुखण सुपारथ। प्राण कौ सुप्राण अपलट, पलटै नाहिं पारथ॥३।
पतिगहर पारस पुंडरिख, प्रगट पतितन पावन। प्रस्न परचै प्रतीति, करि सु पाहिं बुझावन॥४।
पीवण प्यावण परम रस, प्रेम पतित उतारक। प्रमारथ प्रतपाल पार, पारावार तारक॥५।
प्रान सनेहो प्राणपति, पद सु प्रिथि निधि प्रिथइक। प्रसोतम पाहण रोपण, जप राम प्रताप इक॥६।
प्राणेसुर कारण प्राण, जगत पंथि चलावण। प्राणनाथ प्रवीण पारि, पैलै पहूँचावण॥७।
पराचीन्ह सुपतिवरत, पर्म तंत प्रताप उत। पुनह पुनह पुनह पुनरपि, परब्रम्ह पुरवंस मत॥८।
पुर नायक पुर परमपुर, पुरमंडण पुरराज। परम सुपोत पदारविंद, परमरूप परकाज॥९।
पसरि पर्जारिक पानकर, पवन पावक पर्जरिक। प्रिक्ष्म पाधुरिक पारधी, पाप प्रचंड प्रहारिक ॥१०।
पहिलहुँ प्रथम पुराण कर, पूरि प्रपंच उठावण। पैरि पसु पंखी पुरवण, पाणि पल्लव गहि धवण॥११।
पिष्टि परि पूंछ की रहणि, पहुमि धरण पधारण। पंचाइण पताल पहुँचि, प्रहलाद उरधारण ॥१२।
प्रहलाद उधारण प्रगट, नेरो नांहिन दूरि। जल थल सबकुल प्रसराम, रह्यौ सकल भरि पूरि॥१३।

(विश्राम - १२)

दोहा

पेरक परपिंड पेरवण, पंच पचीस पसारा। परम पवित्र पुनीत पाक, पढि परवर्ति सिंगारा॥१।
पिव पिहर परिवार पूर, पूरण पर पूरीक। परखै न परिख पारखू, परिघर सिध हजुरीक॥२।
प्रगटण पुत्र होई प्यारो, परदेसी पर्म सुख। पर्म मंगल पर्म अनंद, पेखि रूप पर्म मुख॥३।

पर्म कल्याण सुपर्म धन, निधि वार ना पारा। पर्म पुजबण सुपर्मपति, पर्म पूजि पुजारा॥४॥
पर्म पुरनाथ पुराणा, पर्म घर विश्रामा। परम पुखता परपक्कि पर्म, प्रतिबिंब परसरामा॥५॥
पर्म धर्मा सु परम तप, पर्म ध्यान पराइणं। पर्म पंडित पल पहूँचि, पर्म स्थान परोपणं॥६॥
पर्म पुरातन पद करण, पर्म प्रबंध विदार्थ। पदमनाभ जनार्दनं, पर्म प्रसाद पदार्थ॥७॥
पदमासन पताल पनंग, पद पदम पुराणकर। पहूप पउनाल पराग, पद्मपाणी पद्माकर॥८॥
परबली पराक्रम सेणि, पदम पौरिस पालण। पाज पाखाण पाइदल, पर्ज पाणि परितारण॥६॥
पंथ पंथी पंथाण ग, प्रिथुक परिदवण प्रिअषि। पर्म प्रेम प्रमल पीयूष, पोष पोषवण प्रतषि॥१०॥
प्रिथि प्रिथीपति प्रिथईस, प्रिथपाल ग्यारासुर। परम प्रेम गुरपते पति, पर्म मंत्र सारासुर॥११॥
प्राण प्रिथीकर पंचततु, पोइप सूत्राधरा। पर्ममूल अस्थूल पर्म तर, पर्म पल्लव पतझारा॥१२॥
पतझार वार पारब्रम्ह, कौ पार ना कोई। प्रसराम विस्तर तरु प्रगट, व्यापक भजिय सोई॥१३॥

(विश्राम - १३)

दोहा

पर्म विवोम सो पर्म अस्थिर, परम राजस्थल ऐन। पर्म मंदिर विश्राम पर्म, परम निरंतर चैन॥१॥
पर्म तीरथ पर्म आस्तीक, पर्म निर्मल निर्दोसिक। पर्म परवत पर्म प्रतिपल, पर्म सिव पर्म प्रसोसिक॥२॥
परातपर पर्म धीम पर्म, पाधरा परोकया। पर्म सिद्धि पर्म रिद्धि प्रियोहं, सो परम परोदया॥३॥
प्रजापति पदंबु पर्म कीर्ति, पापात्रसि पितबंरो। प्रागस्ती परिपूरिता, पर्म सकति परंधरो॥४॥
परम पद चक्र प्रलंबाहा, पात्रगि पापाश्रियो। पूतना घन खंड ईस, पार्थार्थ पूर क्रियो॥५॥
प्रभ्रित पराश्रिज प्रलैजित, पूत नित्य आत्माँ। प्रभूरीसुर पुरुष ईस, पर्म साखि परमात्माँ॥६॥
पंकहीण पंकज नैण, प्रतिभाव पर्म श्रेष्ठ। पर्म पुष्टि पर्म समाधि पर्म, सुखराज पर्म व्रेष्ठ॥७॥
पर्जाकर प्राण दो प्राण, चौ प्राणा प्राण भ्रित। पाप नासन पुनि आश्रण, पर्म इष्ट परकीर्ति रत॥८॥
परम परचै पर्मजित पर्म, आस्तीक परम आस। पर्म सील पर्म संतोष पर्म, सायंत पद वैसास॥६॥
पर्म विवेकी पर्म गुर पर्म, साधन परम बांधण। परम समझि प्रबोध उपरि, पर्म ज्येष्ठे पर्म जाण॥१०॥
पर्म पदराज पर्म आचिर्ज, परम सुख रुप पर्म विधि। पर्म सुभावपरम हंस पर्म, कारण नित्य परम निधि॥११॥
पर्म परतीति पर्म दिस पर्म, सहज आपराध घण। पर्म जोति पर्म प्रकास, पर्म सून्नि परमारथ पण॥१२॥
प्रभु पर्म सुन्नियर वाण विण, को खोजै मिलि मांहि। परसा परम निरास पद, आसा पहुँचै नाहिं॥१३॥

(विश्राम - १४)

दोहा

वराह वांमन वलि छलन, वनवारी वारिचर। विष्णु वेसास वासुदेव, वसीकरण विठ्ठल वर॥१॥

वैकुंठ वासि वैकुंठ गुर, वैकुंठहिं वैकुंठपति। वैकुठ नाथ वैकुंठपति, व्योम पर विराटवति ॥२॥
वैकुंठ अति वैकुंठ परम, आलै वैकुंठहिं पर। वैकुठ विश्राम वैकुंठ, वैकुंठहिं वैकुंठ तर ॥३॥
ब्रम्ह ब्रम्ह ब्रम्हादि ब्रम्हाकुल, ब्रम्हरूप ब्रम्हांड कर। विस्वकरता ब्रम्हा विस्वंभर, विस्वपूरनो विस्वधर ॥४॥
बुद्धि बली बुद्धिवंता वोध, वाणि बंधाण दाता। बहु बाहु वपु धरन वेद, वेदांतहिं विधाता ॥५॥
बृजमंगल राइ बृजराज, व्रजभूषण ब्रजवासि। ब्रज नाइक जो ब्रज नाथ, ब्रजसुन्दर रु ब्रजरासि ॥६॥
वृंद वृंदनाइक वृंदारण्य, वृंद चंद विराजमान। वृन्दावन नाथ बड अंसा, बडकुलीन बड ग्यान ॥७॥
व्रजसोभा अति ब्रज तिलक, व्रज जीवनि ब्रज आस। बहुरूपी बहूरंग कर, व्रज मंडन रु ब्रजदास ॥८॥
विसू पालक विस्वेस वर, विसू भुगता विसुंधर। विसूतारक विसूराट, विस्व मायो विसूचर ॥९॥
विस्वकर्मा विसु आत्मा विस्व, जोनि व्रधिनो विराम। ब्रिधिमान बलिष्ट वर सींघ, वरवीर व्रिधि आत्म ॥१०॥
विसु मूर्ति विस्वाधार विसु, वेसास विसु मोचन। विस्व विश्राम प्रकासितो, विस्व जान विसुंलोचन ॥११॥
विसु मूल विसाल फल विसु, छाया वृक्ष विसु विधि। विस्व व्यापक विसूगति विसु, सलाध्यौ विसूनिधि ॥१२॥
विथा विस्र वैद रु भेषज, निसतार भव जिहाज। विरंब वाणि तजि प्रसराम, भजिय बेगि बडराज ॥१३॥

(विश्राम - १५)

दोहा

विस्व वोहिथ विसू उद्धरण, विसू तारण विसुंधर। विस्व वीर्ज विसू धारण, विस्व विसतार विसुंभर ॥१॥
विभू व्रधिषै, विवर्जित विसु, विश्राम विसु विसुनाथ। बहु बाहो बाह बहिनो, विस्व व्यापिक विस्वसाथ ॥२॥
व्रधिनो विरामो बहुवंस, वेदस्वर विघ्नाघहर। विहिनो नैन विजितात्मा, विद्यापति विचार वर ॥३॥
विसु बंधू विजै धुज विषै, विष्यादि वही मानो। विमुक्तात्मा वैकुंठ पुरुष, विरासन विधि जानो ॥४॥
वीर वीरादि वृकोदर, महवीर विनोद पद। विजै व्रिक्ष्यां पहूप विप्र, गुरू बलि सुराज पद ॥५॥
विसु दखिण विप्राण दोवपु, वामनो दित्य दुखहा। विस्वकसेनो विसुवेता, विगियान पद सुखहा ॥६॥
व्रषभो विराट व्योम पद, विसु त्रिपतीक पदांबु। ब्रम्हचर्य बंधु बिसुजल हृदे, विप्र गुर वहिनि वरांबु ॥७॥
ब्रम्हनि देवो प्रकासिनो, विसुमंत्र ब्रम्हचरिखिण। ब्रम्हादिको बुद्धि ब्रम्हण्डकर, ब्रम्हसानिधी विचखिण ॥८॥
बहुकर्मी लोकपति राज, चतुर्चांडालादि कह। प्रियादि नामांधिन वेद, वेदारथ गोपिकह ॥९॥
विदि ब्रम्ह ईस वेदांगो, वेद धर्म पारायण। ब्रह्म मुरारि भगति सांभू, ब्रम्ह आनंद ब्रम्हायण ॥१०॥
ब्रम्ह ज्येष्ठ विसु सुराट सक, मानि दो ब्रम्हनिप्रयो। ब्रम्ह विविर्द्धनोपि ब्रम्हसार, ब्रम्हसभूपराधयो ॥११॥
वित्र मनसा विसुध मन थिर, सुवागी सुवर जाम। विजत वैराग विमल सुख, परसा बड विसराम ॥१२॥

(विश्राम - १६)

दोहा

भूत भविखत भूतेसुर, भवबंध इक मोच कह। भगति चिंतामणि भावनो, भगति भूषण दाय कह॥१॥
भृगुपति सीरोहर भगति, अभै कृतो भूषितह। भिष्माचारिज भावतीत, भोग मोखि सुख प्रदह॥२॥
भू कोटि जित भूनिवास भुवपति भुव भावनो। भुव गर्भा भुव हर भुवसह, भरता भुवि जीवनो॥३॥
भूत कोटि हर भगति भै, अंतकः भूत भावसो। भइष्ट प्रकास ईस भगति, प्रसाद इक भै नसो॥४॥
भगति रूप भगवंत भगत, वछल भव भय तारण। भरण पोषण भुवधारण, भोमि भार उतारण॥५॥
भुवन भान भौ हरण, भौ अवतार पतंगा। भगति भाव भगवन भागि, भव भय भंजन अभंगा॥६॥
भुवपति भुवधर भुवपाल, भेद भारी तारण। भवबंधु भव सुधरण भणत, भगत भीड़ निवारण॥७॥
भोग भुगता भार मिल्यो, भेलै भेलि भाषण। भट भारथ मैंटण भीड, भीखम सुपति राखण॥८॥
भूतलादि प्रतिपाल हरि, भगतिदायक सो हरि। भगति सोभा भगति रतन, भव जलधी हरोहरि॥९॥
भगत जीवनी भगति सुख, भगति हेत भया सो। भगति सिंधु भुवनेसुर हरि, भगति हितू भै नसो॥१०॥
भागि सुखराज भागि समि, भार निर्भार निरंतर। भाग सुभाग भगवंत भज, निरमल भव भासकर॥११॥
भवबंधू भुव समाधि भुव, सुमिरण भुवसार सो। भृत्यर्थो भवप्रियो भेदो, भेदान अभेद सो॥१२॥
भेद रहितो निर्भेद हरि, भार तैं रहि अभार। भार सहै सब मैं रहै, परसा यहि निजसार॥१३॥

(विश्राम - १७)

दोहा

महा पुरुष महंत मोटौ, महासुखी महासिधि। महा महाराजा येक, महा मंजन महानिधि॥१॥
महा सूक्षमो महा विभो, मायो महा महपति। महा महिमा महासु मंत्र, मति सदयो सु महमति॥२॥
महादेवाधिदेव रुद्र, महाइंद्र मह महीप। महा जोगेसु महा उग्र, भाणेसु महादीप॥३॥
महा ईसुरो महा सिव, महासंत सु महाछल। मुनि श्रेष्ठो सु महामुनिंद्र, महा ब्रम्हा महाबल॥४॥
मधुसुदन माधौ मुरारि, मंदिर धरण महिमहण। महा वाराह महीधर, मह प्रलै महि उद्धरण॥५॥
महगुह्यो मोघ वीर्जादि, मेष रूप महा हरि। महि मंडण मह मूल प्रकृति, महाश्रृंग सु महा श्री॥६॥
महा स्याम घण मह सकति, महानंद महारथी। मल्याचल नाथ मन छष्यो, महा उग्र धरोरथी॥७॥
महा निरलेप पद मुकति, महान आत्मामुकंद। मनु अभैप्रद मारिच घण, मेघस्याम महानंद॥८॥
मुसला सहस्त्र लाय सुधौ, मुष्ट घण मह मनोहर। महा मूल विद्या विनास, सुकति सुपद महेसुर॥९॥
महाभारथ महाबली, महावीर्ज महादुति। महाइष्ट महाव्रत मुखिर, महा मुकत परांगति॥१०॥
महाभाग्यो सु महा इंद्र, महा मन महासनौ। मति श्रेष्ठो सुमहि कर्मकर, महाकर्मी मह धनौ॥११॥
महा रिषीक महा मषै, महा मूर्ति मह सुरौ। महा तेजो महा ह्रदौ, मूर्ति मह महाधरौ॥१२॥

महामेरो मंदिर अचल, महसुख मोष महाण। मेर महादि सु प्रसराम, महा आण मैं आण॥१३॥

(विश्राम - १८)

दोहा

महा महूर्त महा सुदिन, महा मोह महावर। महा बंधनो महामुकत, महा तमो महा हर॥१॥
महा सार पद महा सुख, महाकाल महातम। महा कारिज महारथी, महा साध महाजम॥२॥
महा सिद्धि सुमहा साधिक, धीरज सु महा धुनी। महावीर महावाहो, सहज सु महासूनी॥३॥
महा पंडित सु महा जाण, जोति महा जोतिगी। महा दीप महा प्रकास, वौसर मह कौतिगी॥४॥
महा विज्ञान मह ज्ञाता, सबण महा सांवणी। महा भंजन घडण पारिखु, संजोग सु वणा वणी॥५॥
मन मोहनो महारूप, महा मन हरण सुमन। मदन मनोरथ मन मथन, मोह महा मन सदन॥६॥
मनित मान रूप मोह्यो, ब्रम्ह चक्रादि काल ए। मुकंद भुवन भाण मनोज, मंगल मन मंगल लए॥७॥
मंगल पद मंगल असमान, स्वामि महा साधिकह। महा आत्मा सु बुद्धि महा, आदिष्ट महा अंतकह॥८॥
महो ब्रम्ह सुमहा दानो, महा पुन्नि सुवीर्जयो। महा ईस सिधिमयं सर्व इ, महाधर्म अधूर्जयो॥९॥
महा जीवेस महासिव, मंजु केस जोगेसुर। महा सोभा सुसुख महा, विसवास सुमन अस्थिर॥१०॥
महा मीन मह तप महा, मंजन मगन महा सुचि। मह मृति वाणी सुमृति हर, माया नाथ महरुचि॥११॥
महासुख कालो अतीत, महा झीण मह मिही। महा दिवि मह महो अमल, महारिषि महारिहीं॥१२॥
महा ध्यान महा समाधि, महा ज्ञान अगोचरि। महा आवर्त महा अगह, महाभया छलोचरि॥१३॥
महामूल मंगलनिधान, महा मंगल मति निर्मल। महासिंधु मति धीरो मंत्र, महामंत्रो महावल॥१४॥
महा भयानक छल प्रबल, महाकालो मैमंत। महा मोद मत प्रसराम, महामेघो मैजंत॥१५॥

(विश्राम - १९)

दोहा

रोमांच लीण जलधि रुप, द्राह मुर्धो परांगछि। रेणुका सकति कृद रोग, हारक कृत परांगछि॥१॥
रवि लोचन खनीक राज, रथांग रुकम सनोति। रुकमणि रज राह रक्ष्यादि, रावणादि दमणोति॥२॥
श्री रामचन्द्र रघुनाथो, रहिति राघो रघुवंसि। रघु कुलिन रघुवीर सूर, वड राज सूरजवंसि॥३॥
राघवेन्द्र रघुमूल रघु, सधीरा रघुनायक। राजरुप रिणछौड राइ, रछिपाल रिणपाइक॥४॥
राजधिराज महाराज, राजेसु रज राजहिं। रघु मंडण रघुतिलक राज, सिरराजा विराजहिं॥५॥
राजाधिराज राजानि, राजवर्य राजेस्वर। रघुनंदन राइ श्रीराइ, श्रीराम रामेस्वर॥६॥
राजिवनैन राजेस्वर, तन रघुपति सुखरासि। रमापति अभिराम राम, राजा रन बनवासि॥७॥
राजसिंघ रावण हरणा, रिणराज नरि मराहु। राज हंस राजेंद्र राज, राखण अजान बाहु॥८॥

रिणगर्जन रिणराखण रिंद, रिण तूरी बजावण। रिण राजण राकेस रिण, असुरेसू नचांवण॥९॥
राम रामाइण रवण रुंड, राकस रिणां रोलण। रिण मंडण रिणपाल जीति, रिणां रुधिर झकोलण॥१०॥
रघु रिण मोचण रिणधीर, रुचि रिण मंडली गाजन। रिखिकेस बडराज राइ, रंक रद तहि निवाजन॥११॥
राज वैद रहिमां रहम, करी रोग नसांवन। रमिता राम रहिम रिजक, रोजी पहूंचावन॥१२॥
रसनां सु रंकारा पढै, रोम रोम रमिराण। आरति की रुचि मैं रमै, तहँ रंकराइ सुआण॥१३॥
विरह रुह रंगरेज राह, राखण राह रासी। आलै राचि परसराम, रसिक रसनां रासी॥१४॥

(विश्राम - २०)

दोहा

लोक तारण लोक भरण, लोक तरवर आलय। लोक विश्राम सुलोक निधि, लोक लोका पालय॥१॥
लोक उत्पति लोक आभ्रै, लोकादि लोक अंतकः। लोक इस्वर लोक भरता, धारको लोकाधिकः॥२॥
लोक पूरण लछिण लोक, लज्या सुलोको आस। लोक स्वामी सुलोकपति, लोकधर लोकवास॥३॥
लोक सुख लोकाभिराम, लोकबंधू लोकभ्रत। लोकधिष्ठता लोकमर्दन, लोकाक्रिया आश्रित॥४॥
लोक दीप लोक वीरा, प्रकासी लोकाखिणं। लोक सुकृत सुलोका सुख, मंडण सुलोका रछिणं॥५॥
लीला रस लीला अचल, लीलापति रस धरो। लीलाधाम कोटि बसत, रस गोवर्धन बुद्धरो॥६॥
लीलाजित महादेवो, लीला संत दुखहरो। लीला गिरि विहार व्याप्त, अकल सकल सुखकरो॥७॥
लिछमी विलास लछिमि पाल, लछिमि निवास लछिघर। लछिमीकांत लिलाटरवि, लछमि नरायण लछिवर॥८॥
लीला तेज प्रकास दुति, लीला जल प्रलै कर। लीलाधरो विसतार सु, लीला सुर्ग सदा थिर॥९॥
लीला प्रकासितौ चरित्र, लीला गोपिकर रुख। लीला रस सकल सोखिक, लीला पौष परं सुख॥१०॥
लीला अनंत लिव निवास, लिवसार लाभ सिंघह। लिवनायक लिवनाथ नित, लिव सुखवर लिव बंधह॥११॥
लिछमी वीर विकार हर, लिव पारस लिवलीण। लिवलज्या हर परसराम, लिव मंजनो लिवझीण॥१२॥

(विश्राम -२१)

दोहा

सर्व सर्वादि सर्वादि सर्वा, अंतक सुसर्व ठांवए। सदा नांव सहस्र नांव, सर्व नांव सुनांवए॥१॥
सर्वतोमुख सर्वतोवास, सर्वतो भद्र सर्व दुरवह। सर्व कल्याण सु सर्व इक भू, सर्व स्त्री रतनो दर्पह॥२॥
सर्व संतोष संतोष सर्वा, पद सर्वो हृदौ सुहृद हरि। सर्व सर्वादिक सनातनो, स्वयं प्रकास समस्त परि॥३॥
सर्वांग विद्या स्तोतरं सर्व, निसि दिवस परिसूर्जो। सर्वार्थ सर्वहरो सर्व स्वर्ग, पर स्वर्गा सर्व दूर्जो॥४॥
सर्व साइक सर्व कामयो, सेख सदा सेख सो। साखी त्रिगुणा सुमन पति, सर्वत्रि सर्वो भेख सो॥५॥
सर्व सिद्धार्थ सुचिसर्वा सुख, मूल सर्व सुजाणए। सर्व प्रियो सर्व उदार सर्व, संजोग सर्व प्राणए॥६॥

समस्त भयनासन सर्वसिधि, सर्वब्रम्ह विघनांत कह। स्वजनां श्रेष्ठ सर्व पूरिक, स्तोत्रार्थसिधि दायकह॥७॥
सर्व पातक हर सर्व सोक, सर्व हरख समाधये। सर्व मंत्रादि हवि कवि सर्वा, सर्वा सुमृति सुमृतिये॥८॥
सर्व सुरति मंत्रादि सर्व सो, सर्वासर्व क्षत्रियांतक। सर्व असुर संघार सो सर्व, असुर सर्व दुष्टा हंतक॥९॥
सर्व देव इंद्र सर्व द्रुपदा, सर्व सक्रारि सर्व भखिणं। सर्व सक्र ब्रम्हादि रचित पद, दिष्टि नीर जाणि रखिणं॥१०॥
सर्व देवांस सुगति पदा, सर्वदे दीर्घ उद्र को। सर्व सेवक सर्व सुसर्व रत, साखी सर्व सुभद्र को ॥११॥
सीस नाभि तैं प्रगट फिरि, वसै नाभि घर मांहि। अकल सिंधु मैं परसराम, उपजै सकल समाहि॥१२॥

(विश्राम - २२)

दोहा

सदा स्वाथ कृत सदा भद्र, सदा सांत सदा सिव। सिवाचार्जि सिवा त्राता, सदा पवित्र समस्त लिव॥१॥
सर्व लोक इक जठुर सदा, जित सर्व भूत संकरह। सर्व विज्ञान सर्वस्व स्वयं प्रभु, सर्ववागी सुरेसुह॥२॥
सुयंभू पिता सूयंभू सो, सुरति स्याम सारसो। सर्व जोग सर्वसु तपोनिधि, सदा सर्व अधार सो॥३॥
सुभद्र सारग्राही श्रेष्ठ, कल्याण सुंदर रुप दो। सदा सुमाया नाति सर्व, देव प्रियो सीस दो॥४॥
श्रीधर श्रीपति श्रीनाथ, श्रीवत्सल श्रीपालय। श्रीनिकेतनो श्रीराज, श्रीनिधि सु श्री आलय॥५॥
सर्वेसु भद्रीक सर्वासर्व, सर्व सासत्रा सुमंगल। सर्वसिंघ·समस्त राजसूर्य, ब्रम्ह सर्वे सुधा सु जल॥६॥
सर्वासर्व श्रेष्ठ सर्वेश्वर्य, सर्व चक्री गुपतात्मां। सर्व इंद्री आस्तो जन्मभू, सर्वातीत पर्मात्मा॥७॥
सर्व सुभद्रीक साध श्रेष्ठ, सर्वत्रय लोक पावनं। सर्वस पूरिक ब्रह्म सर्व सुभ, पारसद सर्व भावनं॥८॥
सर्व प्रेरक सुख्यात सर्वगि, सेस सर्व चराचरह। सदा उतिम पद सदानंद, सर्वोपरि सु श्रीवरह॥९॥
सर्वसाच रुप सत्य सामर्थ, सरणा सर्व सोकहर। सुभद्रीक रूप सांत सुपद, सर्व सेव संभारकर॥१॥
सिद्धिवर सिद्धि समाधि सेस, सुसाहिब सुखदाता। सर्व लोकैकनाथ जाण, सर्वधाता विधाता॥११॥
सर्वे सुधा अंग समस्त सुख, निरभै सो निरभार। परसराम सर्वे संगि सो, साखी सिरजनहार॥१२॥

(विश्राम - २३)

दोहा

सर्व सिद्धि राजसु सदागति, सर्व दर्सन सर्व सुत्रादि। सति सुपराक्रम सुग्रीवो, सर्व सुर सरण सुत्रादि॥१॥
सर्व सास्त्र सुसर्व सास्त्रादि, सर्व सुसास्त्र सुवोकह। सर्व सारुप गर्भादि सर्व, पुरुषार्थ सहोधिकह॥२॥
सर्व संगी सनेह सर्वत्रै, सर्व साखी सर्वेस्वर। सर्व तरवर सर्वेसुफलो, सर्वे छाया सर्वधर॥३॥
सर्व व्यापीक सुभाव समि, सर्वजन्मा सुसर्वजनी। सर्व दातार सिद्धि सर्व भुक्ति, सर्व देव सिरोमनि॥४॥
सर्व साधनादि सुसर्व सिद्धि, सर्व जाप सुजापये। सर्व जीवेसु सर्व सींव, सर्व सर्वेसु आपये॥५॥
सर्व तीर्थ साधनादि सर्व, तप सर्व धर्म सुधर्मए। सर्व बीज वीर्ज सर्वेश्वर, सर्वकारण सुकर्मए॥६॥

सर्व विश्राम सुसर्व सुख सर्व, आलै सर्व आलए। सर्व आश्रम सुसर्व आसा, सर्वकाल सुकालए॥७॥
सर्वो सतयार्थो सोमादि सुस्याम, सुंदर स्वयंवर। सर्व मेघादि सर्वपालो, सर्वभावन सुक्लांबर॥८॥
सीतापति सारंगधरो, सर्वालछिणो सुलछिणं। संखभ्रंनंदकी सुसंख पाणि, सारंग पाणि सुमरिणं॥९॥
सर्वेस्वर देव मैं देव, सर्व ब्रम्ह सुब्रम्ह सर्वए। सर्व संजोगी सुसर्वसार, सुसर्वपित्रो सुपित्रए॥१०॥
सर्व दिक्ष्यार्थो सर्व गुर सप्त, दीपो सुदयाल सो। संपूर्णो गति सुरानंदो, स्वस्थिरो सिधिमान सो॥११॥
सर्वसिद्धि की सिद्धि हरि सक्ल, सर्वसाधन कौ मूल। सर्वसिद्धि सिद्धार्थ प्रसराम, सिद्धि सुहरि बिनु अस्थूल॥१२॥

(विश्राम - २४)

दोहा

स्वयं भावो स्वयं प्रसादो, सर्वसु दर्सनो सर्वेजित। सर्व रूपो साकलि सर्वा, सिधिनाथो दुराचित॥१॥
सर्व सोभा सर्वपद सर्वा, सब्द साम विश्रामये। सर्व सरण सुविश्राम सही, विस्ववेत निवेतये॥२॥
सदा जोगी जोगराज, भोगी सर्व भोगये। सर्व सादिष्टि सतिनाथ सर्व, सर्वसुसिवो सारये॥३॥
सर्व भूतात्मा महेसो, श्री सेस संकरषणो। सर्व सांतरस सिव समाधि, सर्वसु मंत्र सुमोहणो॥४॥
सति सु आत्मा सर्व वसुधा, विस्व सति उदार सुकृत। सर्वसु मान परिवर्ति सार, सर्व भूतात्मा अरत॥५॥
सुइछ्या सति सामर्थो सर्व, सति देवन दूरि कह। सर्वकर व्यापीक समांनि, सर्व समांनि पूरिकह॥६॥
सर्वे भूतात्मा उतपति, सर्वभूतो रु संरकरह। सर्वानि भूतो अतीतो, सर्व भूत मनोहरह॥७॥
सति सासकति सोमनाथ, सत्यार्थो सहोदरह। सर्वसु निधान सुध आत्मा, सोखोक सुक्रो करह॥८॥
सर्व सगुण सोक हर सांति, सर्वसु निगुणां अंतकह। सर्व समदिष्टि समोधा समि, स्वस्ति सर्व सुमिरांतकह॥९॥
सर्व दिष्टि आदिष्टि सो सर्वा, आधारो समस्त समि। सर्व सुमन श्री आदिनाथ, सर्व संजोगी सर्वगमि॥१०॥
सर्व हरि हर पाप पाणि, हरि हरतार्थ सर्व हरि। हरिनाव वर हरोतमन, निर्भै हरि हरि वर हरि॥११॥
हरि अगणित महिमा अनंत, नाम वार न पारा। हरि समुद्र हम जीव भजन, वेसांस सु हमारा॥१२॥
होतार्थ हरि सर्वार्थ हरि, अंतक हरि हरि सुआदि। हरि सुख एक अपार सुख, हरि सुख बिनु सुख वादि॥१३॥
हरि हरि हरि न विसारिये, भजिये हरि इकतार। हरि सुमरण सुख प्रसराम, जपिये बारंबार॥१४॥

(विश्राम - २५)

दोहा

हरि मन्दिर हरि सर्व निधि, हरि सुमरण हरि सार। हरि जीवनि हरि राज पद, हरि सो हरण विकार॥१॥
हरि दरिया सुखसिन्धु हरि, हरि जल हरि प्रतिपाल। सर्व जीव को जीव हरि, हरि सबको रछिपाल॥२॥
हरि दामोदर हरिख वर, हरि हरि रत हरि हेत। हरि सोरथ हरि नाम हरि, हरि सब घर हरि खेत॥३॥
हरि हरता हरि सर्वकर, हरि भुगता दातार। हरि विवेक सुख हरि सकल, हरि सो हरि निर्भार॥४॥

हरिख सोकादि हरि निकुल, हेम कोटिनः कंप हरि। हेमपुर्णा खिलादिजा, हरि जलाधि मंदिर हरि॥५॥
हरि हेमांगोहयग्रिवो, हिरणकस्यिु विदार हरि। हरिण्यगर्भो हरिणाक्षिहर, हरि धर्मइ हरिनाथ परि॥६॥
हरि समर्थ हरि सार हरि, हरि हरि हरण विकार। हरिबल हरि बुधि बोध वर, हरि सबकर हरिसार॥७॥

चौपाई

हरि अनंत सेव्य अनंत सुभावा॥ हरि अनंत ईस रु अनंत भावा॥८॥
हरि अनंत आश्रम अनंत ठावा॥ हरि अनंत रुप हरि अनंत नांवा॥६॥
हरि अनंत आत्मा अनंत जीवा॥ हरि अनंत मूर्ती अनंत सीवा॥१०॥
हरि अनंत लोचन हरि अनंत सुख॥ हरि अनंत सोभा हरि अनंत सुख॥११॥
हरि अनंत दाता अनंत आसा॥ हरि अनंत वोहित अरु विसासा॥१२॥
हरि अनंत श्रवणा अनंत स्वासा॥ हरि अनंत काया अनंत वासा॥१३॥

दोहा

हरि अनंत वर सकल के, आदि अंत कै अंत। अति अनंत हरि परसराम, जाकै आदि न अंत॥१४॥

(विश्राम - २६)

चौपाई

हरि अनंत इंद्री हरि अनंत घर॥ हरि अनंत लीला हरि अनंत वर॥१॥
हरि अनंत मंदिर हरि अनंत देव॥ हरि अनंत महिमं हरि अनंत सेव॥२॥
हरि अनंत बाहू हरि अनंत कर॥ हरि अनंत कद्रउ हरि अनंत भर॥३॥
हरि अनंत सीसा हरि अनंत पद॥ हरि अनंत विस्तार हरि अनंत हद॥४॥
हरि अनंत तीरथ हरि अनंत तप॥ हरि अनंत ध्यान हरि अनंत जप॥५॥
हरि अनंत नेम हरि अनंत वरत॥ हरि अनंत सोभ हरि अनंत सुक्रत॥६॥
हरि अनंत साधा हरि अनंत सिधि॥ हरि अनंत आराधा अनंत विधि॥७॥
हरि अनंत औतार रु अनंत कुल। हरि अनंत बेसास रु अनंत बल॥८॥
हरि अनंत जोगी अनंत जोगा। हरि अनंत भोगी अनंत भोगा॥६॥
हरि अनंत रोगी अनंत रोगा। हरि अनंत सोगी अनंत सोगा॥१०॥
हरि अनंत ब्रम्ह अनंत ब्रम्हांडा॥ हरि अनंत व्यापिक अनंत पिंडा॥११॥
हरि अनंत भुव हरि अनंत व्योमा॥ हरि अनंत सूर्य अनंत सोभा॥१२॥

दोहा

हरि अनंत सितल सुभकरण, परसा उदित अपार। हरि अनंत परकास सदा, हरण तिमर अंधार॥१३॥

(विश्राम - २७)

चौपाई

हरि अनंत उदार हरि अनंत परि॥ हरि अनंत संतोष हरि अनंत हरि॥१॥
हरि अंतर औसर अनंत राई॥ हरि अनंत आचिर्ज कहयो न जाई॥२॥
हरि अनंत व्यापिक अनंत ब्रम्ह॥ हरि अनंत करणी अनंत क्रमा॥३॥
हरि अनंत तरवर हरि अनंत फल॥ हरि अनंत छाया हरि अनंत छल॥४॥
हरि अनंत मूला अनंत डारा॥ हरि अनंत वीर्ज अनंत विस्तारा॥५॥
हरि अनंत स्थूल अनंत अकारा॥ हरि अनंत रुपा रु निराकारा॥६॥
हरि अनंत मंत्र अनंत आराधा॥ हरि अनंत सकति रु अनंत साधा॥७॥
हरि अनंत भेषज रु अनंत वैदा॥ हरि अनंत साखी अनंत छैदा॥८॥
हरि अनंत दीप अनंत प्रकासा॥ हरि अनंत जोति अनंत उजासा॥९॥
हरि अनंत मुक्ति हरि अनंत पारा॥ हरि अनंत वैकुंठ अनंत सारा॥१०॥
हरि अनंत साहिब अनंत साथा॥ हरि अनंत सिध हरि अनंत नाथा॥११॥
हरि अनंत कुल अनंत परिवारा॥ अनंत नाइक अनंत आधारा॥१२।

दोहा

नांव अनंत अनंत हरि अरु, जीव भजन उनमान। कहत सुनत सुख प्रसराम, अगिण गिणै का ग्यान॥१३॥
हरि अगिणत रु नांव अनंत, कछू ना सकै गाय। अंत न आये परसराम, अमित यौंहि रह जाय॥१४॥

(विश्राम - २८)

(इति श्री नांव निधि लीला संपूर्ण॥२॥ पद ॥ ३७३॥
दोहा ३४३ चौपाई ३०)

अथ साँच निषेध लीला लिख्यते

(राग मारू)

चौपाई

हार्यो अणहार्यो सब हार्यो ।। हरि बिन जनम पदारथ हार्यो ।।१ ।।
बीतौ अणबीतौ सब बीतौ ।। हरि बिनि जनम वादिही बीतौ ।।२ ।।
खोयो अणखोयो सब खोयो ।। नर औतार भगति बिन खोयो ।।३ ।।
गयो अणगयो सबही गीयो ।। हरि बिन नर निरफल बहि गीयो ।।४ ।।
खोई अणखोई सब खोई ।। जो नर देह नांव बिन खोई ।।५ ।।
छोड्यो अणछोड्यो सब छोड्यो ।। जो हरि नांव हीण करि छोड्यो ।।६ ।।
खारौ अणखारौ सब खारौ ।। हरि अमृत लागै मनि खारौ ।।७ ।।
नाहीं अणनाहीं सब नाहीं ।। अपणो मन अपणै बस नाहीं ।।८ ।।
भूखो अणभूखो सब भूखो ।। हरि बिन मन भरमत अति भूखौ ।।९ ।।
भर्म्यो अणभर्म्यो सब भर्म्यो ।। हरि परहरि अपणौ मन भर्म्यो ।।१० ।।
भूल्यो अणभूल्यो सब भूल्यो ।। जो मन हरि सुमिरण तैं भूल्यौ ।।११ ।।
बूड्यौ अणबूड्यो सब बूड्यो ।। नांव हीन भौजल मन बूड्यौ ।।१२ ।।
मेलौ अणमैलौ सब मैलौ ।। स्वारथ रत अपणौ मन मैलौ ।।१३ ।।
रोगी अणरोगी सब रोगी ।। हरि वोखद बिन जो मन रोगी ।।१४ ।।
सोगी अणसोगी सब सोगी ।। मंगल हीण सदा मन सोगी ।।१५ ।।
रोयो अणरोयो सब रोयो ।। जो हरि विरह जनम भरि रोयो ।।१६ ।।
सोयो अणसोयो सब सोयो ।। हरि तैं विमुख होइ मन सोयो ।।१७ ।।
जाग्यो अणजाग्यो सब जाग्यो ।। हरि वैसास लागि मन जाग्यो ।।१८ ।।
चेत्यो अणचेत्यो सब चेत्यो ।। हरि चेतन चित करि मन चेत्यो ।।१९ ।।
उठ्यो अणउठ्यो सब उठ्यो ।। हरि सुमरण कारण मन उठ्यो ।।२० ।।
चाल्यो अणचाल्यो सब चाल्यो ।। हरि सनमुख अपणौं मन चाल्यो ।।२१ ।।
थोघ्यो अणथोघ्यो सब थोघ्यो ।। हरि सुमरण संगति मन थोघ्यो ।।२२ ।।
त्रीयो अणत्रीयो सब त्रीयो ।। भव समुन्द्र बूडित मन त्रीयो ।।२३ ।।
छूटौ अणछूटौ सब छूटौ ।। हरि भजि भौं बंधन तैं छूटौ ।।२४ ।।

फूल्यौ अणफूल्यौ सब फूल्यौ॥ जो हरि नांव लागि मन फूल्यौ॥२५॥
रह्यौ अणरह्यौ सब रह्यौ॥ हरि वेसास लागि मन रह्यौ॥२६॥
बांध्यो अणबांध्यौ सब बांध्यौ॥ मन हरि चरण कमल सौं बांध्यौ॥२७॥
कीयो अणकीयो सब कीयौ॥ अपणैं बसि अपणौं मन कीयौ॥२८॥
आयो अणआयो सब आयो॥ अपणौं मन अपणैं वसि आयो॥२९॥
माहीं अणमाही सब मांही॥ जो पैं मन अस्थिर हरि माहीं॥३०॥
जीयो अणजीयो सब जीयो॥ जो मन व्यापक होई जीयो॥३१॥
दीयो अणदीयो सब दीयो॥ अंतरजामी कौं मन दीयो॥३२॥
सेवा अणसेवा सब सेवा॥ अपणौं मन लाग्यो हरि सेवा॥३३॥
पूजा अणपूजा सब पूजा॥ जो मन सुद्ध करी हरि पूजा॥३४॥
पाती अणपाती सब पाती॥ अपणौं मन कीयौ हरि पाती॥३५॥
मोह्यौ अणमोह्यो सब मोह्यो॥ जो पैं मन मोहन सौं मोह्यौ॥३६॥
सोभा अणसोभा सब सोभा॥ जो पैं मन मानी हरि सोभा॥३७॥
हँस्यौ अणहँस्यौ सब हँस्यौ॥ हरि चरीत्र देखत मन हँस्यौ॥३८॥
भोगी अणभोगी सब भोगी॥ अपणौं मन हरि कै रस भोगी॥३९॥
प्यासौ अणप्यासौ सब प्यासौ॥ हरि जल कौं तरसत मन प्यासौ॥४०॥
चाख्यो अणचाख्यो सब चाख्यौ॥ रसना हरि अमृत रस चाख्यौ॥४१॥
मीठौ अणमीठौ सब मीठौ॥ सरि सुमरण लागै मन मीठौ॥४२॥
पीयो अणपीयो सब पीयौ॥ पीव पिछाणि प्रेम रस पीयौ॥४३॥
पोष्यौ अणपोष्यौ सब पोष्यौ॥ हरि रस सौं अपणैं मन पोष्यौ॥४४॥
धायो अणधायो सब धायो॥ हरि संतोष मानि मन धायो॥४५॥
भेद्यो अणभेद्यो सब भेद्यौ॥ जो मन हरि सुमिरण सौं भेद्यौ॥४६॥
धोयो अणधोयो सब धोयो॥ हरि जल सौं अपणौं मन धोयो॥४७॥
रातौ अणरातौ सब रातौ॥ जो पैं मन हरि कै रंग रातौ॥४८॥
निरमल अणनिरमल सब निरमल॥ हरिसौं राचि रह्यो मननिरमल॥४९॥
उजवल अणउजवल सब उजवल॥ आस रहित अपणौं मन उजवल॥५०॥
रहणी अणरहणी सब रहणी॥ अपणौं मन राख्यो हरि रहणी॥५१॥
साधन अणसाधन सब साधन॥ जो पै मन साध्यौ हरि साधन॥५२॥

करुणा अणकरुणा सब करुणा।। जो पैं मनिमानि हरि करुणा।।५३।।
सौंप्यौ अणसौंप्यौ सब सौंप्यौ।। सुमिरण सुख जाकौं हरि सौंप्यौ।।५४।।
अर्प्यो अणअर्प्यो सब अर्प्यो।। नांव भजन अपणौं मन अर्प्यो।।५५।।
रिछ्या अणरिछ्या सब रिछ्या।। मन मानै श्री राम कि रिछ्या।।५६।।
सरणौ अणसरणौ सब सरणौ।। जाकै हरि सम्रथ कौ सरणौ।।५७।।
पायो अणपायो सब पायो।। हरि कौ सरण सती करि पायो।।५८।।
बैठो अणबैठो सब बैठो।। हरि संतोष पाय मन बैठो।।५९।।
मूवौं अणमूवौं सब मूवौं।। आपौ मेटि आप तैं मूवों।।६०।।
बाहरि अणबाहरि सब बाहरि।। हरि भजि भयो वरण तैं वाहरि।।६१।।
भीतरि अणभीतरि सब भीतरि।। जो पैं सब सूझै हरि भीतरि।।६२।।
जाण्यौ अणजाण्यौ सब जाण्यौ।। मन क्रम बचन सति हरि जान्यौ।।६३।।
बूझ्यो अणबूझ्यौ सब बूझ्यो।। अवगति अगम अगोचर बूझ्यो।।६४।।
चींह्यो अणचींह्यो सब चींह्यो।। आतम राम सबनि मैं चींह्यो।।६५।।
सूझ्यो अणसूझ्यो सब सूझ्यो।। जो हरि निजरुप सति करि सूझ्यो।।६६।।
देख्यो अणदेख्यो सब देख्यो।। हरि निजरूप नैंन भरि देख्यो।।६७।।
दरस्यौ अणदरस्यौ सब दरस्यौ।। अपणौ पति आपण मैं दरस्यौ।।६८।।
परस्यौ अणपरस्यौ सब परस्यौ।। पारब्रम्ह परमेस्वर परस्यौ।।६९।।
हूवो अणहूवो सब हूवौ।। प्राणनाथ सौं परचौ हूवौ।।७०।।
समझ्यौ अणसमझ्यौ सब समझ्यौ।। हरि सेवा सुमिरण मैं समझ्यौ।।७१।।
मानी अणमानी सब मानी।। हरि सेवा अपणैं मन मानी।।७२।।
जाणी अणजाणी सब जाणी।। जो हरि भगति सति करी जाणी।।७३।।
उपजी अणउपजी सब उपजी।। जो हरि भगति आप उर उपजी।।७४।।
जायो अणजायो सब जायो।। जो हरिनाम आप उरि जायो।।७५।।
सोध्यौ अणसोध्यौ सब सोध्यौ।। अंतरजामी अंतर सोध्यो।।७६।।
लाध्यौ अणलाध्यौ सब लाध्यौ।। नर औतार राम धन लाध्यौ।।७७।।
आदर अणआदर सब आदर।। जाकै हरि सुमरण कौ आदर।।७८।।
भाई अणभाई सब भाई।। हरि कीरति अपणैं मन भाई।।७९।।
भायो अणभायो सब भायो।। हरि सुमिरण आरति सौं भायो।।८०।।

गायो अणगायो सब गायो ।। जो हरि नाम हेत सौं गायो ।।८१ ।।
सुमर्यो अणसुमर्यो सब सुमर्यो ।। जो हरि नाम नेम सौं सुमिर्यो ।।८२ ।।
कह्यौ अणकह्यौ सब कह्यौ ।। जो हरि हरि हिरदै धरि कह्यौ ।।८३ ।।
सर्यो अणसर्यो सब सर्यो ।। हरि सुमिरण सुमिरत सब सर्यो ।।८४ ।।
सुण्यौ अणसुण्यौ सब सुण्यौ ।। जो हरि सुजस सुद्ध होइ सुण्यौ ।।८५ ।।
सीख्यौ अणसीख्यौ सब सीख्यौ ।। हरि निजनांव कहण जोसीख्यौ ।।८६ ।।
वाणी अणवाणी सब वाणी ।। रसनां बोलै जो हरि वाणी ।।८७ ।।
बोल्यौ अणबोल्यौ सब बोल्यौ ।। रसनां राम नाम निज बोल्यौ ।।८८ ।।
सोख्यौ अणसोख्यौ सब सौख्यौ ।। हरि अमृत रसनां रस सोख्यौ ।।८९ ।।
जीत्यौ अणजीत्यौ सब जीत्यौ ।। हरि निज भजि जनमिआपणौं जीत्यौ ।।९० ।।
सेयो अणसेयो सब सेयो ।। मन क्रम वचन सति हरि सेयो ।।९१ ।।
पूज्यो अणपूज्यो सब पूज्यो ।। जो मन साध होय हरि पूज्यो ।।९२ ।।
अर्प्यौ अणअर्प्यौ सब अर्प्यौ ।। तन मन धन हरि कैं हित अर्प्यौ ।।९३ ।।
स्वारथ अणस्वारथ सब स्वारथ ।। जाण्यौ हरि स्वारथ कौ स्वारथ ।।९४ ।।
प्रमार्थ स्वारथ सब प्रमारथ ।। जो परमरुप जाण्यौ प्रमारथ ।।९५ ।।
कृता अणकृता सब कृता ।। जो जाण्यौ हरि सुकृत कृता ।।९६ ।।
तीरथ अणतीरथ सब तीरथ ।। जाण्यौ हरि तीरथ कौ तीरथ ।।९७ ।।
न्हायो अणन्हायौ सब न्हायौ ।। जो मन हरि निरमल जल न्हायौ ।।९८ ।।
वर्ता अणवर्ता सब वर्ता ।। जाण्यौ हरि वर्ता कौ वर्ता ।।९९ ।।
देवल अणदेवल सब देवल ।। जाण्यौ हरि देवल कौ देवल ।।१०० ।।
देवा अणदेवा सब देवा ।। जाण्यौ हरि देवन कौ देवा ।।१०१ ।।
सेवक अणसेवक सब सेवक ।। जाण्यौ हरि सेवक कौ सेवक ।।१०२ ।।
तरवर अणतरवर सब तरवर ।। जाण्यौं हरि तरवर कौ तरवर ।।१०३ ।।
छाया अणछाया सब छाया ।। जाकै हरि तरवर की छाया ।।१०४ ।।
दाता अणदाता सब दाता ।। जाण्यौ हरि दाता कौ दाता ।।१०५ ।।
भुग्ता अणभुग्ता सब भुग्ता ।। जाण्यौ हरि भुग्ता कौ भुग्ता ।।१०६ ।।
भोगी अणभोगी सब भोगी ।। जाण्यौ हरि भोगी कौ भोगी ।।१०७ ।।
जोगी अणजोगी सब जोगी ।। जाण्यौ हरि जोगी कौ जोगी ।।१०८ ।।

ईस्वर अणईस्वर सब ईस्वर।। जाण्यौ हरि इस्वर कौ ईस्वर।।१०९।।
ब्रम्हा अणब्रम्हा सब ब्रम्हा।। जाण्यौ हरि ब्रम्हा कौ ब्रम्हा।।११०।।
राजा अणराजा सब राजा।। जाण्यौ हरि राजा कौ राजा।।१११।।
मंगल अणमंगल सब मंगल।। जाण्यौ हरि मंगल कौ मंगल।।११२।।

दोहा

हरि मंगल मंगल सदा, मंगल मंगलचार। प्रसराम मंगल सकल हरि, मंगल हरण विकार।।११३।।

(इति श्री साँच निषेध लीला संपूर्ण ।।३।।
दोहा-१ / चौपाई-११२ / पद-११३)

अथ नाथ लीला लिख्यते

(राग मारू)

दोहा

भगति भंडारौ जाणिकैं, आय मिलै सब नाथ। परसराम प्रसिद्धि साध, भेटै भरि भरि वाथ॥१॥
परसा परम समाधि मैं, आय मिले बहुनाथ। दिव्य नाथ ये सत्य करि तुँ, सुमरि सुमंगल साथ॥२॥

चौपाई

बद्रीनाथ अनाथ कै नाथा॥ मथुरा नाथ भये ब्रजनाथा॥३॥
गोकुलनाथ गोवर्धन नाथा॥ नाग नाथ वृन्दावन नाथा॥४॥
कासीनाथ अजोध्या नाथा॥ सीतानाथ सति रघूनाथा॥५॥
जगन्नाथ जै नील गिरि नाथा॥ प्राणनाथ प्राणेस्वर नाथा॥६॥
कृपा नाथ श्री रंभनाथा॥ रंगनाथ सब नाथ सुनाथा॥७॥
अनंत नाथ अचलेस्वर नाथा॥ नेम नाथ श्री गोरखनाथा॥८॥
मायानाथ मल्याचल नाथा॥ मनसा नाथ भए मन नाथा॥९॥
अद्भुत नाथ सुदीरघ नाथा॥ अमृत नाथ पुंडरीक नाथा॥१०॥
सुरति नाथ सोइ ऋति नाथा॥ रंगनाथ रामेसुर नाथा॥११॥
रतन नाथ रिधि सिधि कै नाथा॥ दीना नाथ दयाकर नाथा॥१२॥
सोमनाथ सुंदर सुख नाथा॥ भाव नाथ भुवनेस्वर नाथा॥१३॥
जादौ नाथ द्वारिका नाथा॥ बाल नाथ जै गोपी नाथा॥१४॥
अकल नाथ त्रिभुवन कै नाथा॥ सकल नाथ नव खंड नव नाथा॥१५॥
धर्म नाथ धरणी धर नाथ॥ चतुर नाथ चिंतामणि नाथा॥१६॥
सुरतर नाथ सुमंगल नाथा॥ खेचर नाथ पुरंदर नाथा॥१७॥
पवन नाथ पानी कै नाथा॥ जीव नाथ चेतनि चितनाथा॥१८॥
बुद्धिनाथ बाणीवर नाथा॥ ब्रम्हनाथ नित संभू नाथा॥१९॥
आदिनाथ अंबरधर नाथा॥ अमरनाथ ब्रम्हाँड क नाथा॥२०॥
श्री विष्णुनाथ विस्वँभर नाथा॥ रमानाथ वैकुंठ कै नाथा॥२१॥
श्री हरि नाथा सति श्री नाथा॥ श्रीधर नाथ सकल कै नाथा॥२२॥
सिंभूनाथ सर्वेसुर नाथा॥ नित्यौ नाथा निरंजन नाथा॥२३॥

विद्यानाथ विचार कै नाथा।। ग्यान नाथ वैरागर नाथा।।२४।।
जोग नाथ जप तप कै नाथा।। जुगति नाथ तीरथव्रत नाथा।।२५।।
खट गुण नाथ प्रकृति कै नाथा।। अखै नाथ सकल गुणा नाथा।।२६।।
आतम नाथ अखंडित नाथा।। आगम नाथ अगोचर नाथा।।२७।।
अभैनाथ नाथे निज नाथा।। अजर नाथ आगैं अति नाथा।।२८।।
जोति नाथ जोगी जस नाथा।। सहज नाथ आगैं सति नाथा।।२९।।
निर्मल नाथ निरालँब नाथा।। निहचल नाथ निरंतर नाथा।।३०।।
निर्गुण नाथा सु सगुण नाथा।। सर्वनाथ समि पूरन नाथा।।३१।।
परम नाथ अपरंपर नाथा।। परसराम प्रभु अविगति नाथा।।३२।।
अति बल नाथ सकल कुल नाथा।। कला नाथ हरि केवल नाथा।।३३।।

दोहा

परसा परम समाधि मैं, आइ मिलै बहु नाथ। दिव्य नाथ ए सत्य तू, सुमरि सुमंगल साथ।।३४।।
सर्वनाथ कौ नाथ हरि, परसराम भजि सोइ। मन वांछित पाइये, आवागमण न होइ।।३५।।

(इति श्री नाथ लीला संपूर्ण ।।४।। दोहा-५ / चौपाई-३० / पद-३५)

अथ निजरूप लीला लिख्यते

(राग मारू)

दोहा

जाहि चिंतत चिंता मिटै, सो निजरूप निरूपि। परसराम हरि भजन बिनु, भरमैं जिन भै रूपि॥१॥

चौपाई

सुमरि सुमरि मन हरि निरभार॥ हरि सुख सिंधु वार नहिं पार॥२॥
व्यापक ब्रम्ह कर्म तैं न्यार॥ मैं मैं रहित रमित रंकार॥३॥
हरि निजरूप निरूप पिछांणि॥ जाहि चिंतत चिंता की हाणि॥४॥
अखिल अनंत अमर नहिं मरैं॥ ना सरीर नाना तन धरैं॥५॥
जन्म रहित जन्मैं नहिं मरैं॥ बिनां मीचुं मरि मरि औतरैं॥६॥
जरा मरण तन तात न मात॥ अभै रूप राजित जुग जात॥७॥
अवरण वरण न दीसैं रूप॥ सोभा बिनु बनि रहै अनूप॥८॥
बाल न वृद्ध सदा इकतार॥ अंतरजामी परम उदार॥९॥
नखसिख रोम रहे भरि पूरि॥ हरि ब्रम्हंड पिंड तैं दूरि॥१०॥
देखै आप दिखावै नाहिं॥ गावैं सुणैं आदिष्ट रहाहिं॥११॥
पोषै आप कै सोखै ताहि॥ रहै अतीत न मिलि पछिताहि॥१२॥
अंतरि बसै न अंतरि देइ॥ वैसा हो सुवही सुख लेइ॥१३॥

दोहा

वा सुख बिण वौ दुख सदा, तन मन सुद्ध न होइ॥ प्रेम सरस रस प्राणसुर, पीवै सो थिर होइ॥१४॥

(विश्राम - १)

चौपाई

निहचल अचल न पल थिर रहै॥ तजै न ठौर पंथ नित बहै॥१॥
उहां तै ह्यां न आवै सोइ॥ ह्याँ तैं जाइ उहां का होइ॥२॥
इहां उहां वाणी वपु दोइ॥ व्यापक एक न दूसर होइ॥३॥
चर्ण हीण चंचल बहु फिरै॥ हरि निरसंक संक नहिं करै॥४॥
ज्यौं अभै अनिल स्वर्ग संचरै॥ सघण चरित करि करि जलझरै॥५॥
आवत जात न वरिखत पार॥ पल मैं पलटि धरै औतार॥६॥

अपणौं स्वभाव वर्ण गुण खोइ॥ जा संगि मिलै ताहि सौ होइ॥७॥
अगिण रूप गुण नाम कहाय॥ सब कुल मिल अमिल होइ जाय॥८॥
प्रगट दिखाय गोपि लै धरै॥ वा रुति पलटि और बहु करै॥९॥
सीत उष्ण बरिखा दिन राति॥ रवि ससि गुडी डोरि हरि हाथि॥१०॥
बिणु कर करम करै करतार॥ ज्यौं तर पहूप पत्र बिसतार॥११॥
डाल मूल फल जड़ जा मांहि॥ यक उपजै इक खिर खिर जांहि॥१२॥
जात समूल कालि कहुं खेलि॥ तो सर्वरूप सकण संगि पेलि॥१३॥

दोहा

दिष्टिक तर बिसतार ज्यौं, उपजै बादि विलाइ। निज सरूप भै रूप बिनु, नहिं आवै नहिं जाइ॥१४॥

(विश्राम - २)

चौपाई

दिष्टक मांहिं मिली दिठि रहई॥ दिष्टक मिल्यो न पल दिठि सहई॥१॥
सकल दिष्टि जाकी दिठि मांहि॥ सूझै सकल दुरै कछु नांहिं॥२॥
लोचन उलटनि पलटै सोइ॥ पल्क पलक पलटत निसि होइ॥३॥
अस्त न होई परम परकास॥ सदा उदित पद अगम उजास॥४॥
ऐसो अकल सकल जा मांहि॥ दरपण बिंब जाति कुल नाहिं॥५॥
पेट ना पिष्ट अजर अस्थूल॥ दुख सुख दरद न व्यापै सूल॥६॥
पांचूं तत्त्व ना विद्या वाद॥ नित्यानंद सबद नहिं सुवाद॥७॥
रसना दसन अधर मुख नाहिं॥ लै लै स्वाद सकल रस खाहिं॥८॥
वरषै गगनि नीर धर पिवै॥ सोखै आप पोषि कण जिवै॥९॥
जहँ तहँ उपजि प्रगट वपु धरै॥ नाना रूप रंग रुति करै॥१०॥
उलटि रूप रस निज घर वरै॥ वपु बिसतार हुतासण चरै॥११॥
रज वीरज निज निस तन हेज॥ पवनैं पवन तेज कौ तेज॥१२॥

दोहा

बिनु अराध न प्रगट होइ, नहिं सुचि रुचि अवगार। सुख प्रेवस आतस अजर, सर्व जारि निरभार॥१३॥

(विश्राम - ३)

चौपाई

त्रिपति हीन सार धान साध॥ श्रवण हीन सुर सुणै अगाध॥१॥

समझै सुणै निकट घट नाहिं।। सर्वारंभ बसै जा मांहि।।२।।
ना सिर संधि नासिका लिलाट।। परमराज तहँ कोट न पाट।।३।।
नहिं मनसा मन पंथ पयाण।। नाद न विंद अगम अगिवाण।।४।।
जल बिण कमल कली कुलहीण।। अलि मकरंद पान लिवलीण।।५।।
परम निगंध न मिटै सुवास।। तहँ हरि आप दुती कौ नास।।६।।
पर्म सुमंगल विण आकार।। आसण अटल रहै निरधार।।७।।
ध्यान धरणि धीरज घर जाणि।। मूरति मधुर प्रेम पहिचाणि।।८।।
सहज सेज सोवै विणि निंद।। चिंता विणि चेतन गोविंद।।९।।
अकल सकल आधार न थंभ।। महामूल मनसा आरंभ।।१०।।
ना सुर सास सेस अवतार।। जाकै मुखि राजत रंकार।।११।।
अरध सास तैं नांव सहंस।। जनम कलप सुमिरै जन हंस।।१२।।
सुमिरै सुणै सदा निरवाण।। सो पावत नहिं पर्म प्रवाण।।१३।।

दोहा

मुख सेस सहस्र सुमरहिं, रसना रस अंकूर। प्रगट सुपति उर परि रमैं, उदधि उदै अंबूर।।१४।।

(विश्राम - ४)

चौपाई

प्रगट भये अंतर तैं आय।। दीनों दरस दास कै भाय।।१।।
सेस सेज पौढे श्री नाथ।। परम समाधि निरंतरि पाथ।।२।।
फेण भुजंग पिष्टि कर मंड।। नाभिज अंड खंड ब्रम्हंड।।३।।
सुरति सुयंभू ता सुत संभ।। प्रगट भये उपज्यौ आरंभ।।४।।
निरखत बदन भया न भयंक।। धरत न धीरज मनहि मयंक।।५।।
चितैं एक अनेक हो जाहिं।। आनन अगिण गिरा मिति नाहिं।।६।।
समझि न परी सु रह्यौ खिसाइ।। मन मलीन हो लाग्यो पाइ।।७।।
करी चिरत्र हरखे हरि राइ।। उठे उमगि ह्वै गये विलाइ।।८।।
हरि अचिंत चिंतवै सुहोइ।। हरखि सोक व्यापै नहिं कोइ।।९।।
व्यापक आप न कछु बीसरै।। ज्युँ रचि रचि चित्र चितेरो करै।।१०।।
करि कराय आपण निरभार।। देवल देव सेव सिरभार।।११।।
समझि न परै करै बहुरंग।। उदधि अंक मिलि उठै तरंग।।१२।।

दोहा

उपजि उपजि जहँ की तहीं, एक मेक मिलि जाहिं। हरि तरंगहिं अंग संग, तासुख समि सुख नाहिं॥१३॥

(विश्राम - ५)

चौपाई

आसन अहिर-देव देवेस॥ रसनाँ चँवर छत्र सिर सुसेस॥१॥
सुख निधान श्रीपति संजोग॥ स्वयं ब्रम्ह ईस्वर संभोग॥२॥
स्वासा विष्णु विधि रु भौ रूप॥ त्रिविध देवता मैं यक भूप॥३॥
महाराज राजा कैं द्वार॥ ठाढे देव सेव सैं वार॥४॥
वंदी वेद पौलि पड दार॥ पावत नाहिं महल कहु वार॥५॥
मति अगाह गावै गुणगान॥ सुरति सिंभु सेवे सुर जान॥६॥
मुनिहिं लीन ध्यावै धुनि ध्यान॥ हरि आदि अंत नहिं उनमान॥७॥
नाराइन गुण नांव अनंत॥ मति उनमांन रमैं श्रुति संत॥८॥
अगिण चरित गति लखी न जाइ॥ कहुँ हरि प्रगट कहुँ दुरि जाइ॥९॥
छिन मैं धरै अगिण अवतार॥ हरि जीव जंत करण सँभार॥१०॥
ज्यौं सिसुमन विलछण ग्रह करै॥ छिन मैं छेकि अनंत अनुसरै॥११॥
जाण राइ जाणै सब जाण॥ जाणि बिझाणि करै बहु बाण॥१२॥

दोहा

आवण जाण विनाण वर, घर घर हरि हरि मांहि। परम विसंभर भरि रह्यौ, नखसिख संचर नाहिं॥१३॥

(विश्राम - ६)

तामस गुण उपज्यौ सर नाल॥ राजस रूप कमल कौ जाल॥१॥
सातिग सजल नार कण ऐण। त्रिगुण विरछ रंचक नय रेण॥२॥
आदि विसँभर सकल कुल मूल॥ उपजै जीव जंत कण सूल॥३॥
जेते ब्रम्हा तेते नाल॥ खोजत खोजत सुधि संभाल॥४॥
थकित भए खोजैं मन पिंड॥ तर अर्द्ध रोम अगिणत ब्रम्हंड॥५॥
धरि धरि ध्यान रहै उर गाइ॥ इहाँ हमहिं नहिं आन सहाइ॥६॥
तव अँतरजामी अँतर जाणि॥ आसमान मैं उठी सुवाँणि॥७॥
निरविकार निरभै निज सार॥ सिंभु देव धुंनि वोअंकार॥८॥
गर्व प्रहारी दीन दयाल॥ रछया काज भये रछीपाल॥९॥

अंतरीछ आवण हरि राइ।। ब्रम्ह वाणि बल हर्यों सुणाइ।।१०।।
श्रवण सुनत उपज्यो वेसास।। विधि निषेध करि बांधी आस।।११।।
हरि कृपा हेत वपु धर्‌यौ।। विधि बिचार निर्भै वर वर्‌यौ।।१२।।

दोहा

निर्भै वर वरि थिर भयो, उपज्यौ बल बेसास। अहंतिमिर उर तैं गयौ, भयो प्रगट परकास।।१३।।

(विश्राम - ७)

चौपाई

तप जप करि तारण त्रैलोक।। पति पतिवरण हरण हरि सोक।।१।।
हरि निज स्वरूप रुप उर धर्यो।। भयो सुद्ध संसौ सब हर्यो।।२।।
ग्यान दीप गुर पर्म प्रकास।। भई सुबुद्धि तिमिर कौ नास।।३।।
हिरदै सुद्ध धुंनि सुनी अनूप।। मिट्‌यौ जीव उपज्यौ मनरूप।।४।।
तहँ निर्ति नांव नारद तद्रूप।। परसे आय प्रगट विस्व रूप।।५।।
करि प्रणाम परकरमा दई।। निज पदरेणु मानि मन लई।।६।।
वंदे चरण कमल कर जोरि।। कही सकल अंतर की छोरि।।७।।
एक वार चितयोचित मान।। कृपा कटाक्ष इहि वरदान।।८।।
तुम्ह परम ध्यान धीरज धीर।। ग्याता गुण निधान् गंभीर।।९।।
नव पल्लवी तरुणि नव तार।। उदै तिमिर हरण करण उदार।।१०।।
निरमल सकल रूप तन तेज।। कवण सूर सोखत लिव लेज।।११।।
मन वच क्रम सत्य सोई कहौ।। कवण ध्यान लागै थिर रहौ।।१२।।

दोहा

सोई मोहि कहौ जु तुम्ह, करौ कृपा उपदेस। मेरैं तुम्ह बिनु सत्य करि, नाहिं और दिगदेस।।१३।।

(विश्राम - ८)

चौपाई

भाल सुमिल हरि भुवन विराज। श्रवण सार नासिका सुराज।।१।।
निरखत नैन निरंतर नेह।। अंतरजामी पर्म सनेह।।२।।
चित चिंतत चिंतामणि ध्यान।। मन मनसा मोहन मन ग्यान।।३।।
मति लालच वीचारत मूल।। वाणी ब्रम्ह जरै अघतूल।।४।।
रसना विष्णु रम्मत मुख राम।। कैसौ कंठि हिर्दै हरि नाम।।५।।

बाहु बिसंभर कर कल्याण॥ उदर अनंत अकल जिय प्राण॥६॥
नाभि जु जाण राइ गोविंद॥ पर्म रूप रवि पूरण चंद॥७॥
निराकार आकार समेप॥ ऐक मेक व्यापक निर्लेप॥८॥
कटि करुणापति ऋति सुख सिंध॥ जुगल जंघ बंध्यो बुधि बंध॥९॥
निर बंधणि बध्यौ बंधान॥ खंड खंड संध्यौ संधान॥१०॥
चरण सरण धरणीधर धीर॥ सकल सिद्धि दायक वर वीर॥११॥
मन क्रम वचन मानि मन सही॥ विधि विचारि नारद सौं कही॥१२॥

दोहा

इहां इत उत चितवत जहुँ, तहूँ सकल हरि ठौर। नखसिख रोम रमैं हरी, आय जाय नहिं और॥१३॥

(विश्राम - ९)

चौपाई

नाहिं और जहँ तहँ हरि जान॥ बाहरि भीतरि एक समान॥१॥
अंतर खोजि निरंतर देखि॥ जीवन जनम सफल करि लेखि॥२॥
मुनि मन मुदित सुनत सुख मानि॥ बरिखत सरस सुधामधु वानि॥३॥
बाणी वचन विचारत दीन॥ पीवत सुरस भये ल्यौ लीन॥४॥
तबै सुरति सोचति ब्रम्हादि॥ चतुर सबद उपजै सनकादि॥५॥
सो बोलि नारद बसि कीये॥ नाम सुनाइ सदगति दीये॥६॥
सनक सनातन सनत कुवार॥ हरि लिवलीन भये निरभार॥७॥
दीयो सराप मतौ विचारि॥ बिमुकत भय तिहुं लोक मंझारि॥८॥
आदि सुन्नि मन कीयो विचार॥ उपज्यौ सोच सिष्टि व्यौहार॥९॥
चतुरानन चिंतत नहिं वार॥ पंच तत्व उपज्यो आकार॥१०॥
प्रथी अप तेज वाय आकास॥ तामैं अंस आपकौ निवास॥११॥
मद्धि सुन्नि मनसा व्यौवार॥ उठ्यौ मोह माया विस्तार॥१२॥
तुचया रोम रकत औगार॥ अंग अस्ति नादिका निसार॥१३॥
ए सप्त धात अस्म हरि अंस॥ रूप नांव करणी कुल वंस॥१४॥

दोहा

सो प्रताप सिर धरै, वंछित वर वलि वंड। जुत छतीस विंतीस विधि, रचे खंड ब्रम्हंड॥१५॥

(विश्राम - १०)

चौपाई

दिष्टि वाण वेध्यो जंजाल।। उपज्यो कलपि कामनां काल।।१।।
उर्द्ध सुन्य मैं आवै जाहिं।। उतपति परलै उपजि बिलाहिं।।२।।
सकल सुन्य सपनौ संसार।। अंध धंध घर घोरंधार।।३।।
अति सून्नि निरफल फल नाहिं।। स्वारथ स्वाद वादि बहि जाहिं।।४।।
भौ वन सघन सिकारी काल।। खेलैं खट कीराँ करि जाल।।५।।
इह गति समझि सकल आकार।। जीव जंतु जम लेत अहार।।६।।
जनम मरण जीवन जग आस।। यौं पिंड प्राण कर्म की पास।।७।।
काल व्याल सूझत नहिं संग।। जीत्यौ जीव जरा तन भंग।।८।।
तज्यौ मोह माया संजोग।। मिट्यो स्वाद स्वारथ सुख भोग।।९।।
तज्यौ भार जप तप व्रत दान।। बकिवो ग्यान ध्यान उनमान।।१०।।
भयो काल मुख माहिं विश्राम।। गयौ रूप करणी कुल नाम।।११।।
देखत पर्यो कूप मैं अंध।। भज्यौं न राम परम सुख संध।।१२।।
समझि न परी पिंड पहिचाँणि।। जात कहूँ चलि पंथ पयाँणि।।१३।।
भयो उदै अस्त त्यौंही जाण।। आदि अंत अपणी करि आण।।१४।।

दोहा

ज्यौं ऊगो त्यौं आंथयो, भयो सकल अंधार। सूरिज बिण सूझै नाहिं, कहुँ उबरण बहु भार।।१५।।

(विश्राम -११)

चौपाई

दानी सो जु देइ कछु दान।। जो जाकौ जैसो उनमान।।१।।
दियो दान जो लेइ बहोरि।। तब ताकी प्रभुता कौं खोरि।।२।।
भयो उचिष्ट कर्म संजोग।। उतिम ताहि ना लागै भोग।।३।।
राचि रह्यौ जो जाकै रंग।। सो ताकौ ताही कै संग।।४।।
मिली प्रकीरति मनसा नाथ।। मन मनसा मारथ कै साथ।।५।।
नाभि सुन्य सुर लेत निवास।। उपजै खपै तिहीं सुर स्वाद।।६।।
हिरदै सुनि मैं हरि कौ वास।। जाकै प्रगट होइ सो दास।।७।।
सहज सुन्नि मन कौ उनमान।। भावहीन निर्फल सो ग्यान।।८।।
कम इंद्री वर लेहु पिछानि।। भृंगी कीट साखि सुनि मानि।।९।।

कण तैं पलटि काग हरि होइ॥ यौं कण सुम्रत हींसा सोइ॥१०॥
अलप नीर पिघटै दुख भरै॥ त्रिविध ताप व्यापै बल हरै॥११॥
विणसि जाइ तन मन जम चरै॥ मिलैं सिंधु सोइ जल उच्चरै॥१२॥

दोहा

ज्यौं जल सिंधु समाइ करि, उलटि अनत नहिं जाइ। यौं सेवग सेवा सरणि, रहै सदा सुख पाइ॥१३॥

(विश्राम - १२)

चौपाई

ज्यौं दरिया मैं बूंद समाय॥ ताकूं वपु फिरि धर्यो न जाय॥१॥
गई बिलाय न लाभै ठौर॥ सो हेरत को लहै न और॥२॥
पहिरैं चीर अनूपम धोइ॥ छीन भयो नव तन नहिं होइ॥३॥
तन मन विणसै सून्य समाय॥ न कहै उहां की इहां आय॥४॥
ज्यौ तरवानं तूंग तजि जाइ॥ तीतरि बहुरि न लागै आइ॥५॥
ज्यौं मरि जाय न जीवै सोइ॥ उपजै और और ही होइ॥६॥
सो न मरै जाकै हरिभाव॥ हरि जीवनि नहिं आन उपाव॥७॥
तर विसतार अगिण फल होइ॥ जिहिं उपजै साँचौ फल सोइ॥८॥
सुख पावै छाया वसि जीव॥ जे सुमरै अपणौं निज पीव॥९॥
प्रेम सरस पीवै ल्यौ लाइ॥ प्रगट करै अपणौं पति गाइ॥१०॥
रह्यो सु हरि तरवर भरि पूरि॥ फल तजि अनंत न जाइ दूरि॥११॥
साखी सुक नारद सनकादि॥ और गये दिष्टक वहि वादि॥१२॥
भौ भर्मत भइ जनम की हांणि॥ सक्यौ न हरि निजरूप पिछाणि॥१३॥

दोहा

हरि परमारथ परहर्यो, जग स्वारथ कै स्वादि। भरमि परे भौ कूप मैं, जनम गँवायो वादि॥१४॥

(विश्राम - १३)

चौपाई

कढ़ै दार पावक गुण जाइ॥ पतित जीव पति बिण पछिताइ॥१॥
सो प्रकार काया कुर बंस॥ भौ भरमत खोयो हरि अंस॥२॥
तजि कुर वृति द्रवै सर वंस॥ पर्म अंस परसत होइ हंस॥३॥
मन अज्ञान अस्थिर नहिं होइ॥ बरक वारि हेरत श्रम खोइ॥४॥

सुख निधान पावत नहिं पीव।। आसा लागि भ्रमत जग जीव।।५।।
दीप तूल पावक पुट जरै।। बुझै अग्नि औरनि पर जरै।।६।।
यौं आत्म सौंज उतारु होइ।। परम आत्मा मिलै थिर सोइ।।७।।
ज्यौं भुजंग अंगिरा उतारि।। आजीरन करि दीन्ही डारि।।८।।
जीव सींव आगैं अगिवाण।। जहँ तहँ पढै सुमर दै माण।।६।।
ज्यौं यहि जीव सींव वर वरै।। तौं थिर होय जंमैं ना मरै।।१०।।
भुवन भीति जल मिल्यां चिणाइ।। करी चरित्र देखत दुरि जाइ।।११।।
ढाहै मांड फेर जो चिणै।। नवों नीर बरखे तो बणैं।।१२।।
ब्रम्ह कर्म सँगि सहज बिलाइ।। पारब्रम्ह सँगि मिलै न जाइ।।१३।।

दोहा

निसि मैं कछू न सूझई, को आवो को जाउ। मन परतीत न ऊपजै, लोचन मीचि पत्याउ।।१४।।

(विश्राम - १४)

चौपाई

लोचन मीच्याँ होय अंधार।। निसि वासुर मिलि एकाकार।।१।।
निसि विणसै वासुर भै मांनि।। त्यौं वासुर बिणसै निसि जाँनि।।२।।
उपजै हरख सोक दुरि जाय।। प्रगटै दुख सुख तहीं विलाय।।३।।
दीसत अति सोभा सी कोट।। भूप न सुख पावै वसि वोट।।४।।
धूम धाम अनूप दिखाहीं।। रवि प्रकास परस दुरि जाहीं।।५।।
ज्यौं उपजै दीसै बहु रूप।। विणसै अंति हेम ज्यौं धूप।।६।।
ज्यौं समीर सोखै धर नीर।। काल किरण चरि जाय सरीर।।७।।
दीसै बहु बाजी बिसतार।। प्रगट काल सब कौ संघार।।८।।
बोलै सूण काल वसि परै।। विंदक विंदै सो निसतरै।।६।।
वाणी सुणै विसारै सौंण।। भै निर्भै जाकै सो कौण।।१०।।
आप जाप जाणैं तहि लाभ ।। बूझ्यां अरथ न आवै जाब।।११।।
समझि असमझि न परै विचार।। अलख लखै को वार न पार।।१२।।

दोहा

बातैं कहत बनाइ कैं, देस दीप अनुसार। जो पै पंथ न चालई, तौं क्यौं उतरइ पार।।१३।।

(विश्राम - १५)

चौपाई-

अवरण वरण सुधरै अनेक।। लीला चरित करै बहु भेख।।१।।
बाजीगर बाजी विसतरै।। डाक बजाइ सकल मन हरै।।२।।
चलै समेटि अनत लै करै।। भुरकी भूलि समझि नहिं परै।।३।।
परखि जंबूरा संगि लेइ।। अपणूं भेद ताहि कछु देइ।।४।।
हरण करण न्यारो देखैं।। नाच नचाई एक एकै।।५।।
नाना चिरत करै चितरंग।। निज बल हीन सकल कौ भंग।।६।।
दिष्टि बंधि राखी सब मोहि।। जाणैं सो जाकै गुर होइ।।७।।
आँवल मूला मतौ अपूठ। कहै साच जग मानैं झूठ।।८।।
बिन परचै कूटै तुस धंध।। श्रवण नैण बिनु जड़ जाचंध।।९।।
समझि न परी धरी बेकाम।। जीवन जड़ी न जाण्यौ राम।।१०।।
जो निजरूप राम वर वरै।। सूझै ताहि साखि सो भरै।।११।।
प्रगट भये खेलै सुख सिंध।। बांधेउ जग आपु निरबंध।।१२।।
वै हरि निज विश्राम कहाहीं।। आगम निगम अगिण जामहीं।।१३।।

दोहा-

निरगुन गुन रसनां श्रवण, यौं इनकौ सुख स्वाद। निज सेवा निरवाण तहँ, अवरण वरण न वाद।।४।।

(विश्राम - १६)

चौपाई-

अवगति विगति न जाणैं सिंभ।। थके विरंचि करत आरंभ।।१।।
मुख सेस हभ्र सोचि जुग जाहिं।। निगम गूढ गावत गम नाहिं।।२।।
कमला करत निरंतर सेव।। तिनहू अगम आदि बड देव।।३।।
हरि अथाह जाकौ नहिं थाह।। तीर पार बिनु अगम अगाह।।४।।
निराकार निरमल निरलेप।। नाम रूप तैं रहैं अलेप।।५।।
ज्यौं अर्क इंदु वारुणि बहै।। पसरै सकल अलिप्यत रहै।।६।।
ज्यौं प्रतिबिंब कुंभ जल जोइ।। विणसै कुंभ गगन थिर होइ।।७।।
ज्यौं दरपन मैं दिष्टक दरसै।। आतम राम रूप मैं बसै।।८।।
उलटौ रूप पिछाणै ताहि।। सो न कहै जैसो सुख आहि।।९।।
अजर अमर देवन कौ देव।। हरि अभेव को लहै न भेव।।१०।।

नहिं निस दिवस धरणि आकास॥ चंद सूर नाँहि न सुर वास॥११॥
आवागवण पंथ ऋति नाहिं॥ पाणी पवन काल पछिताहिं॥१२॥
अगम गवन काहू गमि परै॥ चलै न प्राण सुरति संचरै॥१३॥

दोहा

सुरति सुवर कर पाणि करि, सुख मैं रही समाय। ज्यौं सरिता सुख सिंधु मिलि, सकी न दरस दिखाय॥१४॥

(विश्राम - १७)

चौपाई

सुरति सून्नि केवल विश्राम॥ सुजन सरणि सेवै निहकाम॥१॥
काया कमल कालक विलास॥ मध्य देव मनसा मनि वास॥२॥
वरण समीर तेज तन माँहि॥ प्रगट भिन्न दीसै इक ठाँहि॥३॥
ज्यौं सुर सबद सास यक संग॥ त्यौं पति दास नांव निज अंग॥४॥
बिना नाँव सुमिरण नहिं कोइ॥ सति नांव सुमरतहि सुख होइ॥५॥
पलटि जांहि औगुण गुण गाइ॥ ज्यौं मुख रंग पान रस पाइ॥६॥
मन मलीन मंजन हरि करै॥ ज्यौं रवि रूप रैंनि गुण हरै॥७॥
हरि पारस परसै जो कोइ॥ पलटि लोह तैं कंचन होइ॥८॥
सीखै सुणै कहै उपगार॥ समझि न परै दुरै कहुँ द्वार॥९॥
ज्यौं गुण ग्यान जाण मन माहिं॥ प्रगट रूप धरि धरि दुर जाहिं॥१०॥
सीप स्वाति रुति कण संग्रहै॥ नीरहि निपजि नीर मैं रहै॥११॥
तन पलटै मन सारा होइ। पति कूं परसि दास थिर सोइ॥१२॥
प्रेम प्रीति सुमरै हरि दास॥ मरै पहुप फल रहै सुवास॥१३॥
रसना रस नासिका सुवास॥ त्यौं सुर सबद निराला स्वास॥१४॥

दोहा

सास निरंतर सप्त सुर, नाना राग अनूप। ब्रम्ह जीव जन भजन बल, अकल सकल सुख रूप॥१५॥

चौपाई

बहणी हरै बसन कौ नीर॥ रहै अलीपित सूकै चीर॥१॥
हरि सुमिरण निर्मल मल हरै॥ जो सुमिरै तहिं निर्मल करै॥२॥
हरि सुपोत पावन जो धरै॥ देखै पिता रु पुत्र भौ तिरै॥३॥
साखी सकल विस्व असुरादि॥ जो सुपोत पाई प्रहलादि॥४॥

सुनत व्यास सुक कहत विचारि।। हरि भजौ तात मोह निवारि।।५।।
मन क्रम वचन कहतहुँ तोहि।। हरि समान समरथ नहिं कोइ।।६।।
भगति हेत वपु धरि औतरै।। हरि परम पवित्र पतित उद्धरै।।७।।
असरण सरण सति हरि सुनाँवु।। दीन बंधु ताकी वलि जाँवु।।८।।
हरि निजरूप निरंतर आहि।। गावै सुनै परम पद ताहि।।९।।
निज लीला सुमिरण जो करै।। तौ पुनरपि जनमि न वपु धरै।।१०।।
रहै अकलप कलपि नहिं मरै।। श्रवन सुनैं सीखै व्रत धरै।।११।।
मन क्रम वचन भजन उर धरै।। त्रिविध ताप कलिमल हरि हरै।।१२।।
हरि सुमिरण निरमल निरवाण।। जा घट वसै सति सोइ प्राण।।१३।।
परसराम प्रभु बिनु सब काच।। श्री हरिव्यासदेव हरि साच ।।१४।।

दोहा

जाकै हिंदै हरि बसै, हरि आरति रतिवंत। परसराम असरण सरण, सत्य भगत भगवंत ।।१५।।

(विश्राम - १९)

(चौपाई - २४२ / दोहा - २० / पद - २६२ / इति श्री निजरूप लीला संपूर्ण ।।५।।)

अथ श्री हरि लीला लिख्यते

(राग गौड़ी)

दोहा-

सत्य सु करि हरि हरि भजै, तजै सकल जंजाल। गुरु सेवा हरि भजन बिनु, प्रसराम सोइ काल ॥१॥
परसुराम हरि गुरु बिनां, जीवनि जनम हराम। गुरु सेवा हरि सरण बिनु, नाहिं कहूँ विश्राम ॥२॥
गुरु सेवा हरि भजन तैं, उपजैं प्रेम पियास। परसराम तव पाइये, भाव भगति वेसास ॥३॥

चौपाई-

श्री गुरु सति अरु सति हरिदासा ॥ जिनकैं भाव भगति वेसासा ॥४॥
हरि की भगति करै हरि गावै ॥ हरि गुर ग्यान ध्यान ल्यौ लावै ॥५॥
हरि गुर लीण रहै जग न्यारा ॥ हरि गुर प्रेम नेम निजसारा ॥६॥
हरि गुर संगि जीव जब लागै ॥ गुर कर लकुट भयो भव धागै ॥७॥
हरि पावक लागत अघ जारै ॥ हरि गुर सकल आपदा टारै ॥८॥
हरि गुर चरण सरण जब लीनां ॥ तिमिर हरण हरि दीपक दीनां ॥९॥
हरि दीपक अंतरि उजियारा ॥ हरि गुर मन के हरण विकारा ॥१०॥
दीपक ग्यान ध्यान गुरु सोई ॥ समझै सदा असमझि न होई ॥११॥
हरि गुरु सेव करै जो कोई ॥ ताकौ सबद सत्य करि होई ॥१२॥
हरि गुरुदेव देव कौ देवा ॥ सो भौ तिरै करै गुर सेवा ॥१३॥

दोहा-

गुरु सेवा हरि भजन बिनु, करिये सो कछु नाहिं। श्रवन नैन बिनु वपु धरैं, बसत सदा ग्रभ मांहि ॥४॥

(विश्राम - १)

चौपाई-

ग्रभ मैं बसै सदा सठ अंधा ॥ हरि न भजै जाणै निज धंधा ॥१॥
नांव हीण नर नांव बुलावै ॥ हरि बिनु जनम विटंब कहावै ॥२॥
जीवति प्रेत गति मृत सरीरा ॥ नींव सूझ न परहरै हीरा ॥३॥
कालवूत वपु काछि दिखारा ॥ तन खोड करण कंटक डारा ॥४॥
लोचन मोर चन्द्र आकारा ॥ सुर नासिका धवणि कै द्वारा ॥५॥
मुख बंबी जीन्हा अहिकारा ॥ स्वास अगनि वाणी विषझारा ॥६॥

पाइ सौंज निरफल करि डारी।। भज्यौ न हरि प्रीतम हितकारी।।७।।
हरि सुमिरण बिनु जीवत मूवा।। बिनां नीर सोभित ज्यूँ कूवा।।८।।
हरि परहरि नर जनम गमावै।। धृक जीवन हरि नाम न भावै।।९।।
भाव भगति हरि नाम न सेवा।। तौ मठ देवल ज्यूँ बिनु देवा।।१०।।

दोहा-

देव बिना देवल अफल, सकैं न सीस नवाय। जहँ बसही बधिक अहि तहँ, वटपराज तैं आय।।११।।

(विश्राम - २)

चौपाई-

आय बसै पैं निकसि न जाहीं।। करै विकार विघन तन माहीं।।१।।
विघन विकार करत भै नाहीं।। हरि घर मैं आए न सुहाहीं।।२।।
जब लगि हरि हिरदै न समावै।। नरहरि तब लग प्रेत कहावै।।३।।
मृतक मसाण जनम जगि आया।। हरि गुण कथा विचार न पाया।।४।।
हरि सुख कौं जाणत नहिं अंधा।। हरि बिनु को काटै पसु फंदा।।५।।
हरि नर पुरी प्रीति सौं बांधी।। ऐसो हरि न भजै अपराधी।।६।।
जो हरि आदि अंत उपकारी।। ऐसो हरि न भजै विभचारी।।७।।
हरि दीनदयाल सकल सोखी।। ऐसो हरि न भजै हरि दोषी।।८।।
हरि प्रीतम सबकौ सुखदाता।। सो हरि न भजै आतिम घाता ।।९।।
जोई न भजै हरि सुखकारी।। महापतित बलहीन भिखारी।।१०।।
हरि बलहीन सोइ नर कायर।। कारिज कछु न सर्यो जग आयर।।११।।

दोहा-

कारिज सर्यो न एक ही, वादि विगूते आय। हरि सुमरण नरदेह धरि, भूले बडो उपाय।।१२।।

(विश्राम - ३)

चौपाई-

भूले जो हरि भगति न जाणि।। भगति हीण निरफल नर प्राणी।।१।।
भाव भगति विसराम न पावै।। भौ भरमत भौ मांहि समावै।।२।।
भौ भरमत हरि भगति न जाणि।। भगति हीण जीवण बड हाणी।।३।।
भगति हीण जीवनि अस जाणी।। ज्यौं अहिरणि ताती पर पाणी।।४।।
भगति हीण जब लगि नर जीवै।। अमृत डारि डारि विष पीवै।।५।।

जब लगि हरि की भगति न आई।। रतन साटि कूक सख लिखाई।।६।।
जब लग हरि की भगति न भावै ।। जनमैं मरै सदा दुख पावै।।७।।
भगति हीण जीवन जग ऐसा।। ग्रीषम ऋति जलविण सुख जैसा।।८।।
भगति हीण जीवन जग झूठा।। पंथहीण वनि चलन अपूठा।।९।।
भगति हीण जीवन जंजाला।। बरीषा नाहिं ताहिं अनाला।।१०।।
भगति नाहिं तहँ बसै विकारा।। वासौ घसि आयो अहंकारा।।११।।

दोहा-

अहंकार विकार विष रत, परहरि हरि निजरूप। बड़े कहावत भगति बिनु, भये पंखी के भूप।।१२।।

(विश्राम - ४)

चौपाई-

भगति हीण उत्तिम नाहिं कोई।। अवरण वरण बराबरि दोई।।१।।
वैस्य सूद्र छत्री द्विज कोई।। भगति हीण जीवन धृक् सोई।।२।।
चाख्यौ चत्र चहूं दिस धाये।। गये एक घर एक न जाये।।३।।
भगति हीण ऐसा नर सोई।। चरम सरवोरि ईख की छोई।।४।।
नर हरि भगति हीण अस जाणी।। जिसौ अपीव ऊस कौ पाणी।।५।।
मांगि हलाहल हितसौं पीवै।। अमी कलस करताहि न छीवै।।६।।
भई या मति उज्जल मसि जैसी।। तासौं मिलि उपजै कछु तैसी।।७।।
उज्जल मैल बराबरि आसा।। स्याह सुफेद उभै कौ नासा।।८।।
कंचन लोह बराबरि बेडी।। पाँय पडी चलिबौ तिहि रेडी।।९।।
खलिक पूर तुलै एक भारा।। बोझ बराबरि जबि सिरधारा।।१०।।

दोहा-

स्वाद विविध मुख एक गुण, त्यौं तन पाप प्रवेस। वरणावरण सुभासुभी, दुउ पषि पति राकेस।।११।।

(विश्राम - ५)

चौपाई-

राका कुहू उभै तम सोऊ।। अर्क उदै थिर रहै न दोऊ।।१।।
ऐसी भगति विमल जो आवै।। निरमल करि हरि पुर पहुँचावै।।२।।
भगति उदै न कदै विभचारै।। जो को करै ताहिं कौं तारै।।३।।
राजा परजा भूप भिखारी।। नांव बिनां न तिरै भौ भारी।।४।।

हरि बिण भौ तारै को नाहीं ।। दीसै सब्ब भरमत भौ मांहीं ।।५ ।।
भौ समुद्र ताकौ नहिं पारा।। हरि बिण नर बूडै निरधारा ।।६ ।।
तिहि औसरि हरि बिण कौ तारै।। हरि बिण सकल काल कै सारै ।।७ ।।
काल ब्याल जाकौ भय मानैं।। तो हरि कौ सुख जीव न तानैं ।।८ ।।
बकी ब्याध गनिका द्विज गावै।। साखि कहै कहि सुणि न पत्यावै ।।९ ।।
जो हरि निरवाहै दै बाहीं।। सोई भजि भौ पार ह्वै जाहीं ।।१० ।।
है हरि नांव सबनि कौ तारक।। हरि बिनु और न कोई उबारक ।।११ ।।

दोहा-

को न उबारै हरि बिनां, भौ बूडत तिहिं बार। नांव सभरनी कीर बिण, बूडि गई निरधार ।।१२।।

(विश्राम - ६)

चौपाई-

धीर गहै पैं हरि न संभार्या।। हरि बिनु अफल गये फल हार्या ।।१ ।।
पिंड प्राणपति सुहरि सहाई।। ता हरि सनमुख चल्यौ न जाई ।।२ ।।
चरण सो जु हरि सनमुख धावै।। नैंन सो जु हरि दरसन पावै ।।३ ।।
रसुनां सो जिहि करि हरि गुणिये।। श्रवण सो जु जिहि हरिगुण सुणिये ।।४ ।।
तन मन सौंज सौंपि हरि आगैं।। हाथ जोरि हरि क पाँइ लागैं ।।५ ।।
हरि कै चरण कमल विसरामा।। सीस नाय करिये परनामा ।।६ ।।
करि प्रनाम परकरमां दीजै।। हरि निजरूप नैन भरि पीजै ।।७ ।।
हरि निजरूप निरूपैं दासा।। जिनकै भाव भगति वेसासा ।।८ ।।
हरि बेसास निरास न होई।। आसा और निरासा सोई ।।९ ।।
सोइ आस जिहिं करि हरि वरिये।। आप आस भौं बंधन परिये ।।१० ।।
भौ बंधन परि प्राण न छूटै।। मांहि मरै गुल गांठि न खूटै ।।११ ।।
विष बंधनि परि मुकत न हूवा ।। प्रान भयो नलनी कौ सूवा ।।१२ ।।

दोहा-

अपबंधनि आपै बंध्यौ, छोड़ै तो उड़ि जाय। मुगध अपविद्या आपणी, आप रह्यो उरझाय ।।१३।।

(विश्राम - ७)

चौपाई-

उरझि पुरझि करि जात न छूट्यो।। नैन महारस मनसा लूट्यो ।।१ ।।

लग्यौ मोह इंद्री रस भीनौं।। जानि बूझि पासी पग दीनौं।।२।।
पासि पर्यो निकस्यौं नहिं भावै।। कूप पंखि ज्यौं फिरि फिरि आवै।।३।।
अंध अचेत वादि बपु खोवै।। लाभ हानि उर आनि न जोवै।।४।।
महा मोह मोह्यो बल हारै।। हरि सुमरण कबहुँ न संभारै।।५।।
महा मोहनी मद्धि समाई।। दिष्टि परी तन मन लपटाई।।६।।
रुधिर पंक अचवत अति भावै।। तजि न सकै तामद्धि समावै।।७।।
विमुख जीव अपवसि करि खाया।। ऐसी प्रबल देव की माया।।८।।
मद्धि परै सोई जरि जाई।। ज्यौं पतंग आतुर अगिहाई।।९।।
काल पास उबरै नहिं कोई।। हरि सौं मिलै न मुकता होई।।१०।।

दोहा-

मुकत होइ जो हरि भजै, निसवासुर इकतार। सुपनैं संगि न भरमई, रहै सदा निरभार।।११।।

(विश्राम - ८)

चौपाई-

रहै सदा निरभार अभारा।। ताकौं हरि लागत अति प्यारा।।१।।
हरि प्यारौ उर तैं न बिसारै।। रटै अखंड नाम व्रत धारै।।२।।
जो कोउ हरि सुम्रण व्रतधारी।। सो न जन तिहूं लोक अधिकारी।।३।।
अधिकारी जो हरि विसारै।। हरि पतिवरत न उर तैं टारै।।४।।
हरि बिनु और कहूँ सुख नाहीं।। जहँ कहुँ जाय जरै दुख माहीं।।५।।
अति संकट दारुणि दुख भारी।। तजत न जीव जमनिका प्यारी।।६।।
महामोह ममता मन लीनां।। रहत सदा परवस मति हीनां।।७।।
मति हीनां रासब चढ़ि धावै।। हरि गजराज न हिरदै आवै।।८।।
हरि रस डांरि विषै रस पीवैं।। प्रथग सदा हरि हीन न जीवै।।९।।
महामूढ मन मरम न जानैं।। हरिपुर तजि जमपुर रुचि मानैं।।१०।।

दोहा-

परसा जीव सदा दुखी, कोउ न और सहाय। उबरण कौं हरि सरण बिनु, नांहिन आन उपाय।।११।।

(विश्राम - ९)

चौपाई-

हरि बिनु और उपाव न कोई।। हरि सुमरण जनकै सुख सोई।।१।।

सोई सुखी जाकै हरि प्यासा।। करि हरि प्यास तजै जग आसा।।२।।
जगत आस जीवन धृग सोई।। कर्म केलि भरमति बुधि खोई।।३।।
भौ भ्रमत भयो बुधि कौ नासा।। परि गये कंठ कर्म कै पासा।।४।।
पासि पर्यो स्वारथ संगि धावै।। ज्यौं कपि कूकर नटी नचावै।।५।।
बंध्यौ सुगह सु मुकत न होई।। करम भरम भरमैं भौ सोई।।६ ।।
करम भरम कै बांधै भारा।। हरि न भज्यौ जु करै निरभारा।।७।।
हरि निरभार विकार विचारैं।। करम भरम उरि संचि संभारैं।।८।।
करम कौ उपज्यौं भर्म समावै।। भरम समात न औसक पावै।।६।।
सोई मन मान लइ अणबूझै।। हरि बिनु पंथ अपंथ न सूझै।।१०।।

दोहा-

पंथ पयान न सूझई, अंध कौण दिस जाय। हरि दीपक हिरदै नाहिं, भरमत करम समाय।।११।।

(विश्राम - १०)

चौपाई-

करम समात न औसक जान्यौ।। हूतौ दुःख मैं सुख करि मान्यौं।।१।।
मांनि मांनि मन लग्यौ पसारै।। हरि तजि भयो करम कै सारै।।२।।
करम भरम संगति सुख पावै।। हरि परतीति न परचौ आवै।।३।।
विण वेसास आस नहिं पूजै।। अपणैं स्वारथ आप अरूझै।।४।।
स्वारथ स्वाद विवाद न त्यागै।। ताकौ मुख देख्यां अघ लागै।।५।।
भौजल मांहि गरे ग्रव गंदा।। छूटि न सकै पर्यो पसु फंदा।।६ ।।
सदा असमझि वसै जम काला।। ता घट जनमि न होइ उजाला।।७।।
जहँ रवि बसै तहीं परकासा।। जहँ निसि तहीं कर्म का वासा।।८।।
करम कुहाड़ी जबि कर आई।। अपणैं पाय आपही बाही।।६।।
तरु साखा संग मिल्यो कुठारा।। तब तरु तन को भयो प्रहारा।।१०।।
बहु दुख सहत करम कै सारै।। तउ सुमन हरि कौ न संभारै।।११।।

दोहा-

हरि संभारै मीन मन, लोभि लौह कौं खाय। भयो नीर तैं दूसरो, पर्यो जाल मैं जाय।।१२।।

(विश्राम - ११)

चौपाई-

जाय पर्यो मन मीन जंजालै।। तब लै जम करि कुटंबहि पालैं।।१।।
नीर तज्याँ ऐसो सुख पायौ।। जालि पर्यो जम किंकरी खायौ।।२।।
यौं बहुवार भयो तन भंगा।। रहत न जीव सुमिल जल संगा।।३।।
जीव सुमिल कौं नीर उबारै।। यौं हरि काल कष्ट तैं टारैं।।४।।
हरि तैं विमुख होइ सौ कीजै।। तर सूक सेइ कौ फल लीजै।।५।।
जो कछु करै सु हरि ही करई।। हरि बिनु कारज कछू न सरई।।६।।
दीनदयाल सकल कौ दाता।। अपणी करि आपण भुगताता।।७।।
हरण करण करुणा मैं सोई।। सुख निधान हरिसम नहिं कोई।।८।।
जिन सर्वस अर्पि सुरति नहिं पोषी।। सो हरि गति का जाणैं दोषी।।६।।
का जाणैं उनमान अधूरिक।। हरि है सकल विस्व कै पूरिक।।१०।।
हरि है सकल विस्व कै करता।। हरि अपणी दैआपण हरता।।११।।

दोहा-

हरता करता हरि हितू, हरि ही मैं विसराम। हरि विण जो कछु आन मत, करियै सोइ हराम ।।१२।।

(विश्राम - १२)

चौपाई-

सो हराम जो हरि बिनु करिये।। कारिज कछु न सरै बहि मरिये।।१।।
रतन अमोलक लिखि बांचै।। नैन निरखि करि परखि न सांचै।।२।।
कागद संगि मिले गरि जाही।। न्यारै होइ रहै वै नाहीं।।३।।
खोटै खरे काम नहिं आवै।। लिखे भरम कै भरम समावै।।४।।
हरि बिण बिध्या वाद कहावै।। जब लगि मनि संतोष न पावै।।५।।
त्रिपति हीण बकिवो विष वाणी।। औधे कुंभ न संग्रह पाणी।।६।।
वाणी अर्थ बनाय बखाणै।। कर दीपक बल अंध न जाणै।।७।।
सार गह्यो कर कौं नहिं बेधै।। हो अणी सनमुख ताहि छेदैं।।८।।
का भुजंग अमृत पै पीया।। त्रिपति न भई अमी विष कीया।।६।।
पढ़ि गुणि सुणि रहिये जग माहीं।। जब लगि ग्यान ध्यान हरि नाहीं।।१०।।
पढ़ि गुणि सुणि बर्सत रहै रीता।। तणि बुणि करि तुरि तज्यौ परीता।।११।।

दोहा-

सुधि बुधि स्वारथ मिलि गई, हेरि न लीनी हाथि। भरमत रीती रह गई, ज्यौं नालि जलि क साथि॥१२॥

(विश्राम - १३)

चौपाई-

नालि जलि संगि सरवस खोवै॥ परवस परी न पाछौ जोवै॥१॥
त्रिपुर दुवारि आप दुख रोया॥ यौं स्वारथ परमारथ खोया॥२॥
कहि सुणि करि स्वारथ व्यौहारा॥ हरि सुमिरन सबही तैं न्यारा॥३॥
हरि बिनु कारज कछु ना सरई॥ ज्यौं खर चँदन भार बहिमरई॥४॥
भार बहै पै मरम न जानै॥ धूर छार रासिब रुचि मानैं॥५॥
परम सुगन्ध निसाचर निन्दै॥ दुर्वासनांध बसि बल विन्दै॥६॥
हरि बल हीण तृपति कहँ पावै॥ मन विडाल स्वारथ संगि धावै॥७॥
जगत जूठि जल हाथ पसारै॥ ग्यान हीन गंगोदक डारै॥८॥
जाण विनाण बहुत मन माहीं॥ पै अंति अविद्या छूटै नाहीं॥९॥
वेद पुराण पठण गुण ग्रामा॥ निहचै मन माया विसरामा॥१०॥

दोहा-

पंखी उडै अकास कौं, फिरि आवण की आस। अनल पंखि कै भुवन दिसि, उपजै नाहिं विसास॥११॥

(विश्राम - १४)

चौपाई-

हरि वेसास प उपजै माहीं॥ मन चपल तूल अस्थिर नाहीं॥१॥
स्वारथ लागि जगत परमोधै॥ अपणौं पिंड प्राण नहिं सोधै॥२॥
ज्यौं दर्वी बहु पाक विरोलै॥ कारिज कछु न सरै भ्रम भोलै॥३॥
ज्यौं पाक अनेकहुँ जा माहीं॥ धात सुभाजन भेदै नाहीं॥४॥
बधिक मृग ज्यौं मृगहिं आराधै॥ पास पर्यो निरबंधै बांधै॥५॥
आपण सोवै विडनि जगावै॥ घर मुसि ताकी सुद्धि न पावै॥६॥
अंध हुस्यार - हुस्यार पुकारै॥ आंगणि सूतौ मुख न उघारै॥७॥
पडदै पसु परपंच न पेखै॥ हरि निज नैन उधारि न दैखै॥८॥
पाये भेद कछू भै नाहीं॥ मुसि निसंक तस कर चलि जाहीं॥९॥
निरधन भये सौं जस वहारी॥ अंति कालि होइ चले भिखारी॥१०॥

दोहा-

चोर गये मुसि आन दिसि, चढि धावै दिस और। वीचि पर्यो भ्रम तिमिर कौ, फिरि न लहै निज ठौर॥११॥

(विश्राम - १५)

चौपाई-

ठौर न लहै फिरै भ्रम भूला॥ पंथ हीण निसदिन दिस हूला॥१॥
नाँचि अंधारै बन मैं रूनां॥ हरि दीपक बिन हिरदै सूनां॥२॥
देवल सीखर चित्र कौ सीहा॥ तामैं पंखी बसै अबीहा॥३॥
आवै जांहि वसै मुख माहीं॥ मुख द्वारै जीवत उडि जाहीं॥४॥
चंचल हर पर खोसै खासै॥ करैं अपावन ठौर विनासै॥५॥
ताकी संक न मानैं कोई॥ नांव सिंघ तऊ सिंघ ना होई॥६॥
सत्य सिंघ जोइ दरस दिखावै॥ ताके निकटि न कोऊ आवै॥७॥
सिंघ सधीर ताकि तिहीं मारै॥ सूरवीर भै मेटि बकारै॥८॥
स्वान सुभाव असम संगि धावै॥ करै प्रहार न ताहि पत्यावै॥९॥
खाली ताल खिलौनां सोई॥ भर्यो अथाह डरैं सब कोई॥१०॥
यौं जो हरि हिरदै थिर होई॥ ताहि विकार न व्यापै कोई॥११॥
जब लग हरि हिरदै नहिं आवै॥ तब लग मन संतोष न पावै॥१२॥
मन संतोष तृपति जब आई॥ करणी कथणी साफलि सोई॥१३॥

दोहा-

सुफल होइ जो हरि भजै, तन मन प्रेम समोइ। पुनरपि जनमि न वपु धरै, आवागवण न होइ॥१४॥

(विश्राम - १६)

चौपाई-

आवण जाण भ्रमण भौ मांही॥ अबल बुद्धि उबरन कहुँ नांहीं॥१॥
धार अखंड नव रसै मेहा॥ भान किरनि न सहै तिण तेहा॥२॥
वोस प्रद्यलि कैसे भौ भीजै॥ आस निरास न वादै बीजै॥३॥
बीज न ऊगै बरिखा थोरी॥ नैकउ कीरैं निकसै कोरी॥४॥
ऐक पहुप दोइ वीर्ज राजै॥ कृष्ण निरंजन उभै जल काजै॥५॥
घन वरिषा कारण कण जानैं॥ त्यों अंतर पति रुति व्रम पिछानैं॥६॥
अंतर जामी प्राण सनेही॥ प्रेम नीर चेतन निज देही॥७॥

विमल अडोल नीर निज सूझै।। पावन सुमिलि प्रतिबिंब असूझै।।८।।
दिष्टि न आवै ब्रम्ह विनाणी।। मन होइ गयो पंथ कौ पाणी।।९।।
चंचल चपल दसौं दिसि धावै।। हरि निज रूप न देख्यो भावै।।१०।।
हरि निजरूप निरंतरि जाणी।। प्रेम हीण पति प्यास दुराणी।।११।।
जब लगि प्रेम न सींचि मूलं।। तव लगि होय नाहिं फल फूलं।।१२।।

दोहा-

जब लगि प्रेम वरषईं, सहज स्वाति कौ नीर।। कहि क्यौं मोती नीपजै, परम अमोलक हीर।।१३।।

(विश्राम - १७)

चौपाई-

बस अनेक जीव जलि भारी।। सीप स्वाति आरति सान्यारी।।१।।
न्यारै मतै बसै यक संगा।। भूलै सबि सब तैं बहुरंगा।।२।।
समझि न परई सेवै कर्मै।। अपणी मति आपण ही भर्मै।।३।।
ज्यौं बालक खेलैं चक हेरैं।। आप फिरै त्रिभुवन कौं फेरैं।।४।।
जहँ भ्रम नाहिं तहीं हरि नीरा।। अपभ्रमि हरि डार्यो पर तीरा।।५।।
जैसें उरग अंगिरा छायो।। सूझत नाहिं फिरत मुरझायो।।६।।
सुरझि अरूझै भ्रम षट साथी।। हरि भय कँवल नैन कौ हाथी।।७।।
जहँ उरझै तहँ बढ़ै विकारा।। हरि बिनु माया मोह पसारा।।८।।
लागि पसारै सर्वस खोया।। हरि सुख विण दुख मांहि समोया।।९।।
दुख दुःक्रित दारुणि अपहाणी।। जमतिल करि मन दीनौं घांणी।।१०।।
बहु सासनां सहत हरि परहरि।। तऊ सुमन सुमिरत नहिं हरि हरि।।११।।

दोहा-

परसा पासा पडि गयो, मन कोली करि जाल। आपणै कियो आपकौं, भयो अंति सोइ काल।।१२।।

(विश्राम - १८)

चौपाई-

अपणी रुति आपण नभ छाया।। धरणी दिष्टि आकास दुराया।।१।।
ज्यौं निर्मल नीर स्वर्ग तैं आया।। अप बल बरषि आप कर छाया।।२।।
जबही घर बरिषा ऋतु आई।। तबहीं घर अपगुणि अप छाई।।३।।
अपगुणि आतमदेव न दीसैं।। वपु व्यापक कफ कांकर खीसै।।४।।

पवन पाक दुरवास दुराया।। मन प्रतिबिंब सुमन की माया।।५।।
मन मैला तन उज्जल कीया। ऊस नीर ज्यौं जात न पीया।।६।।
ज्यौं घर बरत निघर कूँ छादै।। मन मनसा स्वारथ मिलि स्वादै।।७।।
ज्यौं बालक लज्जा पट पहिरै।। त्यौं मन मानि विषै वसि जहिरै।।८।।
यौं अपगुणि मैला सबि कोई।। सहज स्वाति रस निर्मल सोई।।९।।
मन मलीन मनसा करि छाया।। कायर कलपि कामना खाया।।१०।।

दोहा-

लीयो लखूनाँ चित्र कौं, चिंतामणि कौं साटि। कायर काचै लोह ज्यौं, खायो भीतरि काटि।।११।।

(विश्राम - १९)

चौपाई-

करणी कथनी सोच विचारी।। सोभित जिसी कनक की झारी।।१।।
नीर भरी नहिं जात पखारी।। य बड़ औगुण जो अंतरि कारी।।२।।
पाणि प्रवेस न पहुँचे गैली।। बाहरि मांजै भीतरि मैली।।३।।
भीतरि जनमि न उज्जल होई।। किहूं प्रकार जात नहिं धोई।।४।।
करणी बल यौं गयो अलेखै।। अंतरपति निहकर्म न देखैं।।५।।
कर्म करत निहकर्म न होई।। कर्म रहित निहकर्मी सोई।।६।।
कीजैं कर्म - कर्म की आसा।। कर्म करत न कर्म कौ नासा।।७।।
निर्मल बिना न निर्मल होई।। पंकै पंक न जाई धोई।।८।।
ज्यौं कण संग्रह करि दे जाणैं।। तामैं और कमाइ न आणैं।।९।।
त्यागि देइ तौ तबहीं टूटै।। और कमाइ नाहिं तौ छूटै।।१०।।

दोहा-

छूटै जो हरि कौं भजै, परहरि जग जंजाल। सो नर कर्मि न भर्मई, सुमरैं हरि रिछपाल।।११।।

(विश्राम - २०)

चौपाई-

हरि रिछपाल सुमरि लौ लीनां।। जिनि रज वीर्ज मिलि नर करनां।।१।।
जिनि रचि नखसिख संधि संवारी।। प्रीतम प्राणनाथ हितकारी।।२।।
श्रवण नैन मुख नाक बनाए।। सास सीस कर चरण चलाए।।३।।
जिन हरि सुन्दर सौंज बनाई।। रहै समीप सदा सुखदायी।।४।।

जीवन प्राण दान जिन दीना ।। जद्दुरा जरत राखि जिनि लीना ।।५ ।।
ग्रभ संकट बीते दस मासा। भयो सहाय तज्यो नहिं पासा ।।६ ।।
जैसौ हरि तैसी हरि कीनो ।। कृपा हेत नर देही दीनी ।।७ ।।
जिनि हरि करि नर देही आनी ।। दई मौज ऐसो बडदानी ।।८ ।।
दैन विडद हरि कौं बनि आवै ।। हरि कौ दियो सबै को पावै ।।९ ।।
भव विरंचि सुरचक्र कहावै ।। हरि पैं जाइ जाचि करि ल्यावै ।।१० ।।

दोहा-

थिर चर जल थल जीव कैं, हरि ही कौ आधार। सकल भरण पोषण करै, दाता परम उदार ।।११ ।।

(विश्राम - २१)

चौपाई-

हरि उदार ता सम को नाहीं ।। दाता भुगता सब हरि मांहीं ।।१ ।।
हरि मैं सकल जीव का वासा ।। पिवै अनेक जीव जल प्यासा ।।२ ।।
जल का उपज्या जलहि समाहीं ।। ज्यौं जल लहरि बसै जल माहीं ।।३ ।।
हरि सायर जन भये तरंगा ।। रहै समीप तजै नहिं संगा ।।४ ।।
ज्यौं बीरज मैं बट बिस्तारा ।। त्यौं उंकार सबद मैं सारा ।।५ ।।
ज्यौं तरवर कै दीसै छाया ।। रहै समीप ब्रह्म कै माया ।।६ ।।
धरणि विवोम बराबरि बूझै ।। जहँ कहुँ नीर स्वर्ग तहीं सूझै ।।७ ।।
जाकै समझि प्रगट सो देखैं ।। गुडि अगिण पवन सोई एकैं ।।८ ।।
हरि बिनु और दुती नहिं कोई ।। व्यापक एक सकल मैं सोई ।।९ ।।
हरि है एक अखंडित पूरा ।। भाव भिन्नि भरपूरि अधूरा ।।१० ।।

दोहा-

भरपूरि अधूरा न हरि, हरि पूरा भरि पूरि। सिंधु न पावै प्रेम बिनु, भयो निकट तैं दूरि ।।११ ।।

(विश्राम - २२)

चौपाई-

ज्यौं तरतिण कण उभै सरीरा ।। प्यास ऐक पीवै दुइ नीरा ।।१ ।।
तिण कण सदा स्वर्ग की आसा ।। तरकण कौं पाताल पियासा ।।२ ।।
हरि पतिवरत दुहुँ निकौ साचौ ।। तिणद्रुम ज्यौं याकौ यक काचौ ।।३ ।।
तिण बरिखा ऋति उपजि समावै ।। तरु धर नीर सदा सुख पावै ।।४ ।।

द्रुम ज्यौं नीर मिल्यौ रस पीवै।। यौं हरि संग सदा जन जीवै।।५।।
हरि परिहर न करै अप हाणी।। यौं हरि भजै मीन ज्यौं पाणी।।६।।
हरि जल बिनु मन मीन न जीवै।। प्रान रहै जो हरि जल पीवै।।७।।
अलप जीव कै ज्यौं जल प्यारा।। निराधार कै हरि आधारा।।८।।
हरि आधार न विसरै सोई।। हरि परिहरि निरधार न होई।।९।।
हरि सुमरै हरि कौ व्रत धारै।। हरि सुमरन उर तैं न विसारै।।१०।।

दोहा-

और ना आणैं सति करि, सुमरै हरि निरवाण। ताकैं हरि जल मीन ज्यौं, जीवन-जीवनि प्राण।।१२।।

(विश्राम - २३)

चौपाई-

ता हरि कौं विसरै जिन भाई।। सुमरि सदा भौ मांहि न जाई।।१।।
भौ समुद्र बूडत हरि तारै।। हरि भै काल ब्याल बल हारै।।२।।
काल ब्याल घर दंड न भरिये।। हरि हरि सुमरि सुमरि निसतरिए।।३।।
तारण तिरण सदा हरि सोई।। हरि सम सम्रथ और नहिं कोई।।४।।
हरि समरथ संगति सुख पावै।। सुमिरै सदा प्रेम ल्यौ लावै।।५।।
प्रेम भजन जाकै मन प्यासा।। ताकै हृदै करै हरि वासा।।६।।
और मिलै न काहु उपचारै।। हरि है प्रेम भजन कै सारै।।७।।
ज्यौं दुग्ध धार करि दुह दुहारा।। महषी मोह फिरै तहँ लारा।।८।।
दुगध हेत पसु पुत्रहीं त्यागै।। यौं हरि प्रस्न प्रेम कै आगैं।।९।।
ज्यौं जसुमति हरि पद करि डारा।। यौं लागत पै पुत्र तैं प्यारा।।१०।।

दोहा-

यौं हरि आयो आदि दै, विसरैं श्री अरधंग। प्रेम भजन ता दास कै, रहै सदा तासंग।।११।।

(विश्राम - २४)

चौपाई-

ज्यौं तरंग सायर संगि नीरा।। सुजन प्रेम निज ऐक सरीरा।।१।।
यौं हरि भाव भजन सतसंगा।। प्रेम सुमिल सो प्राण अभंगा।।२।।
महिषी गज जल सरणि सिधारे।। मसक समूह रहै ता न्यारे।।३।।
यौं हरि विश्राम हृदै होई।। परम सनेह सुमिर सुख सोई।।४।।

हरि सुख बिनु औसक सब जाणी।। हरि हरि सुमरि २ सुक वाणी।।५।।
हरि तजि आनि उपाय न करिये।। हरि सम्रथ निर्भै वर वरिये।।६।।
हरि सौं प्रेम प्रीति निज आसा।। ताकै भुवन करै हरि वासा।।७।।
प्रेम बूंद जाकै नहिं माहीं।। ताकौं हरि दरसन कहुँ नाहीं।।८।।
ज्यौं सठ नारी पतिव्रत धारै।। ग्यान सुरति सर्वस दै टारै।।९।।
दासा तन करि धरै न आगैं।। बिनु सेवा वसि भई दुहागैं।।१०।।
बरी भूप मन तैं उतराणी।। सेवा हित चेरी पटराणी।।११।।

दोहा-

चेरी पटरानी भई, हरि पतिवरत सनेह। हरि तैं विमुख सदा दुखी, सुख न लहै धरि देह।।१२।।

(विश्राम - २५)

चौपाई-

देह धर्यां हरि बिन सुख नाहीं।। हरि सुख बिना सदा दुख माहीं।।१।।
ज्यौं दिष्टिक मैं ब्रम्ह समाया।। सुख ना लहै दिष्टक की छाया।।२।।
यौं हरि दुर्यो रहै तन माहीं।। अपणी सकति संभारै नाहीं।।३।।
ज्यौं अपणों बल सिंघ ना जानैं।। वन मैं बस्यौ रहै भै मानैं।।४।।
अबल भयो बल कौ न संभारै।। अघ गज गरजत विरचि न मारै।।५।।
वनि प्रबल भये दँतुस गुँजारै।। बनि सिंघ गरजत पै बल हारै।।६।।
फिरै निसंक उदंगल रोरैं।। डाल मूल सजडा तरु तोरैं।।७।।
अति मैमंत मदन मदि आए।। हरि सिंघ बिनु नहिं डरत डराए।।८।।
हरि पंचानन प्रगट रुचि बोलै।। ता सनमुख को है बल तोलै।।९।।
ब्रम्ह अगनि प्रगटी को टारै।। छिन मैं जागि पुरातन जारै।।१०।।

दोहा-

जरै पुरातन विषै वन, उबरै कोई नांहि।। और न दूजा संचरै, दाझि मरै तामांहि।।११।।

(विश्राम - २६)

चौपाई-

मांहि मरै मरि निकसै नाहीं।। हरि पद परसि मिलै हरि मांहीं।।१।।
मांहि मिलै सदगति है सोई।। देखि डरै ताकूं दुख होई।।२।।
भेद अभेदी का परवाणै।। अमी वाणि विष सम करि जाणै।।३।।

ज्यौं कुरंग भ्रमि वन कूँ बूझै ।। अंगि सुवास न आपौ सूझै ।।४ ।।
अस्थिर मन आपौ पहिचानैं ।। जहँ तहँ हरि देखै सुख मानैं ।।५ ।।
हरि वेसास निरंतरि आणै ।। मन क्रम बचन सत्य हरि जाणै ।।६ ।।
सोइ सूर पंडित मुनि त्यागी ।। हरि सुमिरन जाकी ल्यौ लागी ।।७ ।।
सो कवि गुणी जाण बडदाता ।। हरि सनेह जाकौ मन राता ।।८ ।।
उत्तिम सोइ जु तजै जग आसा ।। हरि भजि करै करम कौ नासा ।।९ ।।
और सकल निरफल करि डारै ।। सति सति करि हरि नाम संभारै ।।१० ।।

दोहा-

नाम संभारै नेम धरि, परसा प्रेम पिछाणि। परम सनेह न बीसरै, ज्यौं चात्रिग ऋति वाणि ।।११ ।।

(विश्राम - २७)

चौपाई-

सुचि हिर्दै सुमरै हरि वाणी ।। सोइ हरि रूप सति करि जाणी ।।१ ।।
हरि निरमल निरमल हुइ गावै ।। हरि सुमिरन बिनु और न भावै ।।२ ।।
हरि हरि सुमरि २ हरि जाणै ।। हरि परहरि उर और न आणै ।।३ ।।
हरि सुख सिंधु परम सुखकारी ।। प्रीतम प्राणनाथ हितकारी ।।४ ।।
जा जन कै हिर्दै हरि वासा ।। ताकौ कर करम कौ नासा ।।५ ।।
करम विकार भार हरि टारै ।। पावक प्रबल महाअघ जारै ।।६ ।।
निरमल करै सकल मल खोवै ।। हरि निरमल तातैं मल धोवै ।।७ ।।
हरि निज सार विकार निवारै ।। निरमल नीर नांव विष झारै ।।८ ।।
हरि निज नांव जपै हरि दासा ।। हरि सुमरै तजि आस निरासा ।।९ ।।
आसनि राम दास कै मांही ।। जो हरि हरि सुमरै सुख मांही ।।१० ।।
हरि हरिदै तब विघन न कोई ।। हरि सौं प्रीति बुद्धि बल सोई ।।११ ।।

दोहा-

हरि बल बुद्धि हिरदै वसै, परम विवेक विचार। सकल सिद्धि ता दास कै, हरि सुख मंगल चार ।।१२ ।।

(विश्राम - २८)

चौपाई-

हरि मंगल गावत निसतारा ।। हरि दीपक निस द्यौस उजारा ।।१ ।।
हरि माहाराजन कै राजा ।। हरि है भव समुद्र की पाजा ।।२ ।।

हरि सुमिरन सब कौ सिरताजा ।। सुमरै ताकै सारै काजा ।।३ ।।
हरि ध्रू कौं निरभै पद दीन्हां ।। कृपा हेत अपणां करि लीन्हां ।।४ ।।
हरि हिरनाकुस कौ उर फार्यो ।। करि सहाय प्रहलाद उबार्यो ।।५ ।।
हरि अंबरिष की रिछा कीनी ।। हरि दुर्वासा कौं फेरि दीनी ।।६ ।।
हरि पँडवा सँगि सदा सहाई ।। भीर परी तबि लिये बचाई ।।७ ।।
हरि द्रोपदी प्रगट पति राखी ।। कैरूं सभा दुष्ट सबि साखी ।।८ ।।
जहँ जहँ भीर परी तहँ आये ।। ग्रसत ग्राह तैं गज मुकताये ।।६ ।।
भगत हेत हरि विरम न लावै ।। श्री वैकुंठ गरुड तजि धावै ।।१० ।।

दोहा-

भगत वछल भै हरण हरि, हरि तारण गज ग्राह। प्रगट पैज हरि की सदा, सु तौ अंति निरवाह ।।११ ।।

(विश्राम - २६)

चौपाई-

सो हरि नाम क्रपण मैं पायो ।। अब न तजौं मोरैं जी भायौ ।।१ ।।
जाकी आरति प्रगट भयो अब्ब ।। बिसरि जाउं तौ बहुरि भजौं कब्ब ।।२ ।।
बार बार हरि हिर्दै सँभारूं ।। हरि जीवनि उर तैं न बिसारूँ ।।३ ।।
हरि को ग्यान ध्यान करि जीऊं ।। हरि निजरूप नैण भरि पीऊं ।।४ ।।
हरि निजरूप अरूप अनूपा ।। दरस परस पावन मन भूपा ।।५ ।।
मोरै नैण बैण मुख सोहै ।। हरि बिनु हितू और धौं कोहै ।।६ ।।
हरि हमरै हम्ह हरि कैं साथा ।। हरि हम्ह रहैं सदा रँगि राता ।।७ ।।
हरि सुख सदा रहै दुख नाहीं ।। हरि संजोग भोग कर माहीं ।।८ ।।
हरि भीतरि बाहरि हरि सोई ।। येक मेक हरि और न कोई ।।६ ।।
हरि दरिया तामद्धि बसेरा ।। सुरति सीप मन मोती मोरा ।।१० ।।

दोहा-

मोती बींधि न बंधि है, सेवै सिंधु अपार। निर्मल सदा अमोल मन, मंजन हरि आचार ।।११ ।।

(विश्राम - ३०)

चौपाई-

हरि मेरौ आचार बिचारा ।। विधि निषेध हरि प्राण अधारा ।।१ ।।
हरि सुचि हरि संजम ब्यौहारा ।। हरि सुमिरन भौ तारण हारा ।।२ ।।

हरि तप हरि तीरथ व्रत आसा।। निहचै हरि सुमिरण वेसासा।।३।।
हरि निजरूप निरंतर देवा।। ताकी सदा हमारैं सेवा।।४।।
वार वार हरि कौं सिर नांऊ।। रसना ता हरि कैं गुण गाऊं।।५।।
हरि प्रीतम कबहूँ न बिसारूं।। मोरी जीवनि सदा सँभारूं।।६ ।।
मन क्रम वचन सति हरि जाणां।। अब बिसरूं तौ हरि की आणां।।७।।
हरि ही जाति पाँति कुल करणी।। हरि धीरज मन की या धरणी।।८।।
हरि मोरैं मात पिता दाता।। हरि ही बंधु सहोदर भ्राता।।६।।
प्रीतम मोरैं प्राण सनेही।। रहै समीप सदा बिनु देही।।१०।।

दोहा-

हरि विदेह गुण देह धरि, नाम रूप तैं न्यार। पंचतत्त्व बिण तत्त्व हरि, रहै सदा निरभार।।११।।

(विश्राम - ३१)

चौपाई-

ज्यौं मणिगण सोभित सब प्राणी।। बांधे विधि करि बींधि विनाणी।।१।।
सूत्र येक पोये करतारा।। आप रहै सबहीं तैं न्यारा।।२ ।।
बंधणि परै न मुकता होई।। रहै अलप्पित सब तैं सोई।।३।।
ज्यौं वुणि तार तार सौं साँध्या।। हरि अपगाँठि आप सौं बाँध्या।।४।।
हरि है अजर अमर अविनासी।। हरि निज वर तैं लोक निवासी।।५।।
रोम रोम जाकौ परकासा ।। ता हरि मद्धि हमारो वासा।।६।।
हरि सुख सिंधु वार नहिं पारा।। हरि मैं वसै सकल विसतारा।।७।।
जीव जंतु कौ अंतर जामी।। हरि सेवक हरि सबकौ स्वामी।।८।।
हरि प्रतिपल दयाल उदारा ।। वै हरि है अवगति अविचारा।।६।।
हरि अविचार विचार न जाणूँ।। अपणी मति उनमान बखाणूँ।।१०।।

दोहा-

रसनाँ येक भंडार हरि, निधि पड़ी जो अलेष। पहुँचि कहा मो जीव की, थक्यो गुणत गुण सेष।।११।।

(विश्राम - ३२)

चौपाई-

अजहूं सेस सहस मुख गावै।। हरि अपार कौ पार न पावै।।१।।
हरि घर घरणि चरणि चित लावै।। हरि अथाघ कौ थाघ न आवै।।२।।

खोजत सदा राज तजि कासी।। हरि कारण हर फिरत उदासी।।३।।
सौं क्यौं रहत विरह वपु नागै।। भव अंबर आभूषण त्यागै।।४।।
कँवल कली खोजत कल बीते।। भरमि विरंचि रहै थकि रीते।।५।।
बड विरंचि हेरत हरि भूले।। सोइ उँकार सबद सुणि फूले।।६।।
निगम अगिण गुण गुणत उमाहे।। हरि अगाह जात न अवगाहे।।७।।
नेति नेति कहि मन विरमावै।। हरि अनंत कौ अंत न पावै।।८।।
सुर नर मुनि वर नारद व्यासा।। सुक सनकादिक हरि की आसा।।९।।
देख्यौ सुन्यौ जिसौ जिनि जाण्यौ।। हरि निजरूप न जात पिछाण्यौ।।१०।।

दोहा-

जो कहिये करिये कछू, दीसै बहु विसतार। वार पार भीतरि सबै, हरि कौ वार न पार।।११।।

(विश्राम - ३३)

चौपाई-

हरि कौं वार पार नहिं कोई।। तूं अपणै भजन समझि सोई।।१।।
सब सुमिरै अपणै उनमानां।। हरि कैसौ जैसो जिनि जानाँ।।२।।
हरि सौं प्रेम नेम उर जैसो।। ताकौं हरि दरसावै तैसो।।३।।
जाकै मन जैसो हरि आयो।। तिनि अपणौं तैसो हरि गायो।।४।।
हरि सौं प्रीति निरंतर जैसी।। तृपति भई ताकै उर तैसी।।५।।
जस जाकै हरि कौ वेसासा।। ताकै भयो तिसौ परकासा।।६।।
जाकौ भाव भजन सौं जैसौ।। ताकौ प्रसन होइ हरि तैसो।।७।।
जैसी पहुँचि तिसौ फल हेरौ।। अपणैं आप दुरि भयै नेरौ।।८।।
अपणी रुचि जैसो जो पीवै।। तैसी जोति प्रगट मन दीवै।।९।।
अपणी रुचि जैसौ जिनि जानाँ।। जस कछु पिया तिसा मन मानाँ।।१०।।

दोहा-

प्रेम नीर निहचौ गह्यां, अचवै जो इकतार। सलिता सिन्धु समागमी, होय अगम व्यौहार।।११।।

(विश्राम - ३४)

चौपाई-

अगम नीर देखत मन धूजैं।। बूंद एक अचवत सबि सूझै।।१।।
दरिया जबि दीसै तबि पूरो।। पिव मीन तौ कहा अधूरो।।२।।

जहँ तै उपज्यौ तहीं समावै।। बसै मध्य पैं मरम न पावै।।३।।
पंखी चँचु भरि तन मन पोषै।। पैं न होइ सब सायर सोखै।।४।।
बस्यौ विहंगम उदधि अमोघै।। पिवै प्यास पै थाघ न थोघै।।५।।
का खग दौर सुरग सिर वैरै।। परम सिंधु पायन कौ पेरै।।६।।
तैसी प्यास तिसौ सब पीवै।। अमृत बूंद एक बहु जीवै।।७।।
नाँव प्रातप कहाँ लौं कहिये।। हरि कौ वार पार नहिं लहिये।।८।।
हरि कौ वार पार नहिं कोई।। तीर पार विणि है हरि सोइ।।९।।
हरि सम सरि हरि ही भल होई।। हरि सम दूसर और न कोई।।१०।।

दोहा-

आदि न अंत अनंत हरि, हरि तरवर निरधार। आगम निगम अनंत फल, हरि मैं हरि औतार।।११।।

(विश्राम - ३५)

चौपाई-

हरि औतार निकौ हरि आगर।। हरि निज नाँव नाँव कौ सागर।।१।।
हरि सागर मैं सकल पसारा।। निर्गुण गुण जाकौ व्यौहारा।।२।।
हरि व्यौहार विचारैं कोई।। हरि भजि सहज समावै सोई।।३।।
सो भागवत भगति अधिकारी।। हरि कीरति लागै जिहिं प्यारी।।४।।
हरि कीरति जाकौ मन मानैं।। सो हरि नाँव महातम जानै।।५।।
हरि लीला सुमिरै सुमिरावै।। सो हरि संग सदा सुख पावै।।६।।
सुमिरै सुणैं सुधारस पीवै।। सो हरि संग सदा जन जीवै।।७।।
सति सति सुमिरै हरि नामाँ।। ता जन कौं हरि मैं विसरामा।।८।।
हरि विसराम अखिल अविनासी।। जन अस्थिर हरि चरण निवासी।।९।।
हरि सुमरै हरि ही सम सोई।। हरि हरि भगत भेद नहिं कोई।।१०।।
हरि है अज अजपा हरि जापा।। जहँ हरि है तहँ पुण्य न पापा।।११।।
पाप पुण्य हरि कौं नहिं परसै।। परसा प्रेम रूप जन दरसै।।१२।।

दोहा-

दरसि परसि जन प्रसराम, हरि अमृत भरि पीव। ताहरि कौं जनि बीसरौं, होइ रहौं हरि जीव।।१३।।
हरि रस पीवै प्रेम सौं, तन मन प्राण समोइ। परसराम ता दास की, सरणि रह्यां सुख होइ।।१४।।
जो हरि सौं मिलि हरि भजै, हूं ताकी बलि जावुं। परसराम जन सत्ति करि, जहँ हरि तहँ हरि नांवु।।१५।।

(विश्राम - ३६)

(इति श्रीहरि लीला सम्पूर्णं।।६।। चौपाई-३७९/ दोहा ४१/पद ४२०)

अथ श्री निर्वाण लीला

(राग मारू)

दोहा-

परसराम कौ आदरै, करम भरम बेकाम। सदा सहाइक जीव कौ, सुमरो केवल राम॥१॥

चौपाई-

रामहि रमौं राम रमि जीवूँ॥ अमृत नाँव महारस पीवूँ॥२॥
निरमल जस रसनाँ रचि गाऊँ॥ राम भजन भारी सुख पाऊँ॥३॥
सम्रथ राम सजीवनि मेरी। दरिया छाडि परूँ नहिं सेरी॥४॥
सेरी सेरा मेरी मेरा॥ कर्म उपाय राम नहिं नेरा॥५॥
कर्म उपाय करौं नहिं कोई॥ जा कीयाँ हरि मिलन न होई॥६॥
वेद पुराण सम्रण पढ़ि जोई॥ हरि बिनु पार न पहुँच्या कोई॥७॥
विध्या वेद पढ़े जग फूलै॥ कथनी कथी सुम्रन तैं भूलै॥८॥
आपण भर्मै जग भरमाया॥ अफल गये फल राम न पाया॥९॥
तप तीरथ व्रत लै वेसासा॥ वेद उपाय पुन्य की आसा॥१०॥
आसा वसि नर जनम गमाया॥ मन थिर राखि न प्रेम समाया॥११॥

दोहा-

प्रेम समाय न हरि भज्यो, परसा धरि वेसास। भगति गमाई भरमताँ, लोक वेद की आस॥१२॥

(विश्राम - १)

चौपाई-

विध्या वेद जगत की किरिया॥ हरि तजि भरमि बहू अनुसरिया॥१॥
रन बन ढूंढत रैन बिहाँणी॥ प्राण पुरुष अंतरि अगिवाँणी॥२॥
प्राण पुरुष सौं परचौ नाहीं॥ बिनु वेसास जलै घट माहीं॥३॥
जलनि मिटै जो हरि रस पीवै॥ भर्मत थकै सहजि सुख जीवै॥४॥
ग्यानी ग्यान समझि नहिं जाणी॥ हरि विण वादि विषै रस वाणी॥५॥
साखी साखि कहत जग खीनां॥ रमिता राम न किनहूं चीन्हा॥६॥
मेरा तेरा मुसिपद कीया॥ राम सुधारस विरलै पीया॥७॥
आस कर्म सुणि भये उदासा॥ भर्मत फिर्या कटै क्यौं पासा॥८॥

तप तीरथ करि देह गमाई।। राम नाम सौं प्रीति न लाई।।९।।
बहू बूडै जोग की आसा।। हरि जोगी कौ तजि वेसासा।।१०।।

दोहा-

हरि जोगी कौ प्रसराम, जीवत ज्यौं वेसास। लागौ आसा जगत की, तहँ जोग कौ विणास।।११।।

(विश्राम - २)

चौपाई-

जोग जुगति की सार न जाणी।। स्वांग पहरि बाजी सी ठांणी।।१।।
रमिता पति की गति न पिछांणी।। घट घट व्यापक ब्रम्ह विनांणी।।२।।
भूत भरम की सेवा लागै।। अवगति नाथ तज्यौ भ्रम जागै।।३।।
एकाँ बहु जीवण की आसा।। साधन साधत गये निरासा।।४।।
मनसा मिटी न मन घरि आया।। ब्याज बिसाहत मूल गमाया।।५।।
मूल गयां तैं निरधन हूये।। मांगी भीष भरमि फिरि मूये।।६।।
त्रिकुटी साधै जोग विचारै।। हरि बिनु जनम पदारथ हारै।।७।।
मौन गहै पणि राम न गावै।। जनम भलो पणि वादि गमावै।।८।।
ध्यान धरै अरु आसन साधै।। मुकता होइ न राम अराधै।।९।।
इन्द्री जीति नगन मनि मूवा।। हरि बिनु वादि गवाई जूवा।।१०।।
निराहार यक पीवै दूधा।। मन हरि विण भ्रम होइ न सूधा।।११।।

दोहा-

होय न सूधौ भर्म तैं, परसा मन मैमंत। आन उपासन जो करै, सिर नाहीं हरि कंत।।१२।।

(विश्राम - ३)

चौपाई-

अन तजि तजि हठ करि व्रत कीया।। राम बिनां धिग ध्रिग वो जीया।।१।।
वन खंड वसि कीनि तप आसा।। राम नाम विण गये निरासा।।२।।
साध्या पवन गुफा घर कीया।। वादि गये जो नाम न लीया।।३।।
पवन बंध बाँध्याँ फल नाहीं।। करै उपाय सिद्धि कै ताईं।।४।।
रिधि सिधि है करता कै सारै।। देइ किन देइ फेरि विचारै।।५।।
दोवू तजै राम ल्यौ लावै।। सो जन जाणि परम पद पावै।।६।।
तप बल बहू अहं धरि ऊठे।। पहुँचि न सकै विचैं ही लूटे।।७।।

साधन साधि चढ्यौ अहंकारा।। भौ सागर झूलै बिचि धारा।।८।।
बूडै बहू पराये सारै।। राम बिनाँ को पारि उतारै।।६।।
अंध अचेतन कलपत मूये।। विषै विसारि न सदगति हूये।।१०।।

दोहा-

कलपत मूयें कर्म वसि, गये धर्म कौं हारि। राम हितु बिण परसराम, को तारै भव पारि।।११।।

(विश्राम - ४)

चौपाई-

सदगति साध सरण बिनु नाहीं।। जो थिर राम बसै घट माहीं।।१।।
मांहि बसै तब्ब होइ उजाला।। भरम करम कै तूटै ताला।।२।।
ताला कटै तबै सुख होई।। रहै अकल्प विघन नहिं कोई।।३।।
धीरज धरै प्रेम ल्यौ लावै।। राम रमै सो राम समावै।।४।।
जो हरि नाम प्रीति मन लागै ।। आवागवण मिटै भ्रम भागै।।५।।
मन कै विषै विकार न जाहीं।। स्वारथ स्वांग धर्यां सुख नाहीं।।६।।
नाटक चेटक स्वांग कहाए।। हरि बिनु सकल काल छलि खाए।।७।।
मंत्र जंत्र पढ़िवो खद मूला।। उद्र उपाइ करै जग भूला।।८।।
कर्म करत हरि चीति न आया।। खाये सकल ब्रम्ह की माया।।६।।

दोहा-

सकल माया ब्रम्ह की, कर्म भर्म कै जीव। भज्यौ न केवल प्रसराम, सोधि सकल वर सीव।।१०।।

(विश्राम - ५)

चौपाई-

ऐसी सकति सकल वसि कीये।। ब्रम्हासिव सुसक्र छलि लीये।।१।।
देखि सरूप मोहनी छाये।। त्रिभुवन आदि सकल भरमाये।।२।।
जीवत जीव न वांच्या कोई।। आसा वसि बांधे पति खोई।।३।।
उबर्यां कोई दास निरासा।। जा काहू का हरि मैं वासा।।४।।
हम्ह जीवां की कौण चलावै।। ज्यौं जल मैं बुदबुदा दिखावै।।५।।
विणसै बेगि न लागै वारा।। राम न भजै करै अहँकारा।।६।।
थोड़ी आव भजन नहिं कीया।। तन धरि कहा सर्यो ध्रग जीया।।७।।
भारी हाणी परी तन खीनां।। राम कथा सुमिरण नहिं कीनां।।८।।

ऐसो राम नाम निज सारा।। सो तजि भर्मि बह्यौ संसारा।।९।।
भुगति मुकति की कीनी आसा।। राम विसार्यो प्रेम निवासा।।१०।।
पूजा पाती देई देवा।। राम बिनां झूठी सब सेवा।।११।।
षट क्रम कर्म पाक आचारी।। हरि बिनु भरमि विगूते भारी।।१२।।

दोहा-

भर्मि गये वहि हरि बिनां, कुल करनी आवारि। तरि न सके भव प्रसराम, श्री गुरु ग्यान विचारि।।१३।।

(विश्राम - ६)

चौपाई-

पार ब्रम्ह कौ तजि वेसासा।। मूये बूडि जगत की आसा।।१।।
आपण मरै और कौं ज्यावैं।। विण वोखद बड वैद कहावै।।२।।
करणी कथनी ग्यान अचारा।। राम भगति पद इन तैं न्यारा।।३।।
उबरै जन दुविध्या तैं न्यारै।। जिनि जिनि केवल राम सँभारै।।४।।
अवगति अकल अनंत अभेवा।। ताकी कौं जाणैं करि सेवा।।५।।
सेवक सो जु सहज हरि सेवै।। मन कौं पकरि प्रेम रस भेवै।।६।।
दास जु दीन पणौं जिय धारै।। जन जीवनि अपणी न विसारै।।७।।
वैष्णव ब्रम्ह जाणि वेसासी।। रहै निरास पडै नहिं पासी।।८।।
सोइ साध जो पाचूँ साधै।। संसो तजि अवगति आराधै।।९।।
पंडित सो जो पदहिं विचारै।। अहर्निसि ब्रम्ह अगनि परजारै।।१०।।
वकता वेद भेद जो सोझै।। निगम विचारि अगम गति खोजै।।११।।
सुरता सो जो सबदहिं जाणैं।। बोलणहारा कौं पहिचाणैं।।१२।।
भगत भरम तैं न्यारा होई।। पारब्रम्ह गति जाणै सोई।।१३।।
जाकी सुरति जहीं बनि आई।। जहँ जहँ प्रीति तहीं घर जाई।।१४।।

दोहा-

जाइ तहीं घरि जीव सो, जहँ जाकौ विसराम। करम करौ न परसराम, भजौ भरम तजि राम।।१५।।

(विश्राम - ७)

चौपाई-

जब लग अपणौं मन नहिं सोझै।। काहे भगति मुकति नर खोजै।।१।।
जब लगि घर तजि बाहरि धावै।। तब लगि दास न रामहिं पावै।।२।।

जब लगि स्वर्ग नरक की आसा॥ तब लगि नहिं हरि सौं वेसासा॥३॥
जब लग राग दोष जिय आणैं॥ तब लग जनपति कौं न पिछाणैं॥४॥
राम सुमरि जन मनहिं समावै॥ तब आपणपौं आप दिखावै॥५॥
ऐसो अकल सकल भरभाई॥ अपनों भेद न दै रे भाई॥६॥
को नेरैं को दूरि बतावै॥ को ब्रम्हंड पिंड गति पावै॥७॥
नाव रूप धरि रह्यौ समाई॥ सब घटि वसै न देख्यो जोई॥८॥
आप निरंतरि अंतरि छाया॥ इत बुत कहत न किनहूँ पाया॥९॥
जो जन राम आस तजि गावै॥ ताकी दिष्टि परम पद आवै॥१०॥
निज जन नांव निरास सँभारै॥ लीला पद निरवाण विचारै॥११॥
जा ठाकुर का प्रगट पसारा॥ छांदै चलत न मिलै अपारा॥१२॥

दोहा-

छांदै चालै जगत कै, भगत होण कौ नांहि। भाव हीण नर प्रसराम, बूडि मरै भौ मांहि॥१३॥

(विश्राम - ८)

चौपाई-

दुबिध्या भर्यो कही नहिं मानै॥ सुगरौ साध सत्ति करि जानैं॥१॥
धनि वै साधू राम उपासी॥ हरि सौं मिलि जग साथि उदासी॥२॥
तिनकी चरण सरण जो रहिये॥ अभै अमोलक हरि फल लहिये॥३॥
कर्म उपाय कियां कछु नाहीं॥ जो पैं साधु समागम नाहीं॥४॥
कर्म भर्म फिरि रीता आवै॥ साध सबद खोजै तौ पावै॥५॥
साध सबद आसंक्या तूटै॥ जामण मरण मिटै भ्रम छूटै॥६॥
आवागवण लखै सुख पावै॥ गरभवास फिरि बहुरि न आवै॥७॥
जाहि करम काटण की होई॥ हरि तजि भर्मि मरौ मति कोई॥८॥
को जाणै काहू कछु भावै॥ मेरैं जी साँचि यहै आवै॥९॥
ऐसो राम अकल अविनासी॥ ताकौ दास परै क्यौं पासी॥१०॥
हरि दरिया मैं मुकता खेलैं॥ राम सुमिर दुविध्या अघपेलै॥११॥
दुविध्या धरै सु राम न पावै॥ यौंही फिरि फिरि जनम गवाँवै॥१२॥
पूरण ब्रम्ह येक हरि सोई॥ प्रसूराम जाणै जन कोई॥१३॥

दोहा-

वो जाणै जन भजन की, बांधि लइ जिन टेक। मनसा वाचा प्रसराम, प्रेरक सबकौ येक॥१४॥

(विश्राम - ६)

(इति श्री निर्वाण लीला संपूर्णं॥७॥ चौपाई १०१/दोहा १०/ पद १११)

अथ समझणी लीला लिख्यते

(राग गौड़)

चौपाई-

कैसौ कठिन ठगौरी थारी॥ देख्यो चरित महाछल भारी॥१॥
बड आरंभ जु औसर साध्या॥ ज्यौं नलनी सूवा गहि बांध्या॥२॥
छूटि न सकै अकलि कल लाई॥ निरगुण गुण मैं सब उरझाई॥३॥
उरझि पुरझि को लहै न पारा॥ भुरकी लागि बह्यो संसारा॥४॥
बहि गये बाजी मांहि समाया॥ अविगत नाथ न दीपग पाया॥५॥
दीपग छाँडि अंध्यारै धावै॥ बस्त अगह क्यौं गहणी आवै॥६॥

दोहा-

गहणी बस्त न आइये, गुणिजन कियो विचारि। अंध अचेतन आस बसि, चालै रतन विसारि॥७॥

(विश्राम -१)

चौपाई-

धीरज बांधि न बात विचारी॥ निरधन भये गये निजहारी॥१॥
यौं न बिचारि सु क्यौं हम्ह आये॥ मतौ कहा कहि कौण पठाये॥२॥
ताकी मति गति सार न जाणी॥ जिन तन दिया सु कौण विनाणी॥३॥
कौण काज मानुष तन धार्या॥ बस्त गवाइ विषै वसि हार्या॥४॥
कहा जबाव करौगै आगै॥ पकडि अंति जम लेखा मांगै॥५॥
हम्ह दिखाई जु उहाँ कमाए॥ उहां कमाइ इहाँ का ल्याए॥६॥

दोहा-

साहिब लेखा मांगि है, तिल तिल बात विचारि। कहौ कहा कहि छूटिवौ, परै सिरै सिरभार॥७॥

(विश्राम - २)

चौपाई-

विनाष सम निगुसां वा मार्या।। मार सही पैं हरि न सँभार्या।।१।।
हरि हरि हरि सुमरण नहिं आवै।। विषै विकार सरस जिय भावै।।२।।
तासौं रचि पचि सर्वस खोया।। अंति दुखी सुख कारणि रोया।।३।।
क्यौं सुख होय हलाहल खाया।। अमृत प्रेम सरस नहिं पाया।।४।।
पावै सो जो प्रथम विचारै।। ब्रम्ह अग्नि गुरु गमि तन जारै।।५।।
जरै वरै तन सीतल होई।। पावै दास परम पद सोई।।६।।

दोहा-

पाइ परम पद थिर रहै, वहै नहिं भ्रमधार। सो सेवक साहिब सरणि, देखै चरित अपार।।७।।

(विश्राम - ३)

चौपाई-

देखि चरित चिंता नहिं व्यापै।। व्यापक मिलै सुमेलै आपै।।१।।
आप जाप का जाणे भेवा।। देखै सकल विसँभर देवा।।२।।
देव न तजै भजै हो दीनाँ।। त्रिगुण रहित भगति ल्यौ लीनाँ।।३।।
भाव भगति पावै विसरामा।। सो सेवग सति करि निज रामा।।४।।
राम सकल व्यापक है सोई।। सेवक कहै सु सति करि होई।।५।।
होइ सही जो जाण्या जाई।। जाण्या बिनां जलै जम लाई।।६।।

दोहा-

जम ज्वाला मैं जलि भुयें, मेर तेर गलि लाय। लोक लाज खोया सबै, भज्यौ न राम सहाय।।७।।

(विश्राम - ४)

चौपाई-

राम सहाय भजै नहिं भूलैं।। खाय हलाहल सुख कौं फूलै।।१।।
सुख लाभै जो सुकृत होई।। दुख दुकृत व्यापै नहिं कोई।।२।।
रहै अकलप अकल गुण गावै।। सो निजदास राम फल पावै।।३।।
फल पायाँ तैं निर्फल नाहीं।। राखै सफल सुमंदिर माँही।।४।।
सो फल बसै सुमंदिर साचा।। सो न बसै तब लग घर काचा।।५।।
काचै मंदिर काल रहाई।। सदा पुकारै पीड न जाई।।६।।

दोहा-

पीड़ मिटै जो हरि भजै, तन मन आस गवाय। छूटि जाइ मैं तैं सबै, ताकौं काल न खाय॥७॥

(विश्राम - ५)

चौपाई-

काल ना खाय अकल घरि आवै॥ साहिब मिलि सेवक सुख पावै॥१॥
सुख पावै तजि आस पसारा॥ दुख सुख दास दुहूँ तैं न्यारा॥२॥
न्यारा होइ भजै जो कोई॥ निर्मल दास कहावै सोई॥३॥
साचै लागि विसारै झूँठा॥ अपमारग तजि चलै अपूँठा॥४॥
आस निरास तजै व्यौहारा॥ माया ब्रम्ह दूहूँतैं न्यारा॥५॥
सुमिरै राम रहै अनुरागी॥ सोई जाणि परम बैरागी॥६॥

दोहा-

बैरागी जो ब्रम्ह गति, पर्म नाम सूँ काम। प्रेम सरस निरवाण पद, सहज सुरति विश्राम॥७॥

(विश्राम - ६)

चौपाई-

करि विश्राम मन मनहिं डुलावै॥ देखि अदिष्ट न पूठा आवै॥१॥
आवण जाण जगत भरमाया॥ मन मनसा मिलि पंथ चलाया॥२॥
चलै न अचल न पंथ न देहं॥ कौ आवै कौ जाइ सुकेहं॥३॥
केहां जाइ कहौ धौं कोई॥ जात न दीसै रहै न सोई॥४॥
सोई रहै तजै निज देही॥ यहि अंदेस कहँ बसै सनेही॥५॥
आवण जाणा झूठी आसा॥ उपजै खपै रूप कौ नासा॥६॥

दोहा-

ब्रम्ह वृछ मैं सब बसै, डाल मूल विसतार। परसराम अवगति कथा, जाणैं जाणनहार॥७॥

(विश्राम - ७)

(इति श्री समझणी लीला संपूर्ण॥८॥ चौपाई ४२/दोहा ७/ पद ४९)

अथ श्री तिथि लीला

(राग मारू)

चौपाई-

साध सुधारस अमृत झरै।। पिवै सु जीवै दूजा मरै।।१।।
बोलै सतगुर सबद विचार।। पँद्रह तिथि खोजौ निज सार।।२।।
(अथ तिथि) मावस मैं तैं दोऊ डारि।। मन मंगल अंतरि लै सारि।।३।।
बाहर निकसि कहै जिनि बात।। दिढ कर मतौ मिलै ज्यौ तात।।४।।
पड़िवा परम तंत ल्यौ लाइ।। मन कौं पकडि प्रेम रस पाइ।।५।।
पीवत पीवत होइ उजास।। सुख मैं रहै मरै नहिं दास।।६।।
दोजि दीन ही सुमिरै राम।। दुविध्या तजै भजै निज काम।।७।।
सहज सुरति मैं रहै समाइ।। थिर हो बंध काल नहिं खाई।।८।।
तीजि तिहुँ गुण न्यारा बहै।। त्यागै झूठ साच संग्रहै।।९।।
अणभै खोजि चढै असमानि।। सो सेवक साहिब सामानि।।१०।।
चौथि चहुँ दिसि मंगलाचार।। घट घट देखै राम अपार।।११।।
अविगति अलख लखै जो कोइ।। साहिब दास यक संगि सोइ ।।१२।।
पांचै पंचतत्त्व लै सोधि।। एकैं ठौड आणि परमोधि।।१३।।
इनकौ कह्यौ करै जिनि जाँणि।। पति सौं परचौ होइ पिछाँणि।।१४।।
छठि छह चक्र फिरत जो रहै।। चंदि सूर सम दउ निरबहै।।१५।।
ब्रम्ह अगनि मैं जारै प्राण।। सो पावै जन पद निरवाण।।१६।।
सातमि सिंभुदेव की सेव।। जो करै लखै सोई भेव।।१७।।
मूरति अकल अदिष्टि विचार।। जो खोजै सो पावै पार।।१८।।
आठमि अकल सकल मैं वसै।। काल रूप धरि सब कौं डसै।।१९।।
काल कवल नहिं जाणै भेव।। ता जन संगि रमै हरि देव।।२०।।
नौमि नरहरि नांव मझार।। हरि परहरि जिन रचै विकार।।२१।।
बोलै ब्रम्ह सत्ति करि मानि। आगम निगम नित्य करि जानि।।२२।।
दसमी देही भीतरि देव।। अंतरि अवगति बसै अभेव।।२३।।
ताहि देव सौं करौ पिछाणि।। बाहरि भीतरि एकैं जाणि।।२४।।

एकादसी अकल कौ अंगा।। तासौं हिंत करि करैं संगा।।२५।।
जरा न व्यापै काल न खाइ।। एक राम रमि सहज समाइ।।२६।।
बारसि देखि ब्रम्ह विस्तार।। दरिया अगम वार नहिं पार।।२७।।
हरि दरिया मैं जन न्हाइ।। थिरि हो रहै न आवै जाइ।।२८।।
तेरसि तीन भवन मै सौइ।। पूरण ब्रम्ह और नहिं कोइ।।२९।।
कर्म न काया अपरंपार।। गुण बिनु निर्गुण रहै निरधार।।३०।।
चौदसि चीन्ह अगम पुर ठौर।। करि विश्राम तजै दिसि और।।३१।।
चेतन होइ चरण हरि गहै।। गुरु प्रसाद जुग जुग थिर रहै।।३२।।
पून्यौं परम जोति परकास।। अंतरि दीपक अकल उजास।।३३।।
तासौं मिलि कीजै आनंद।। परसराम प्रभु पूरण चंद।।३४।।

दोहा-

पून्यु पूरौ परसराम, नखसिख व्यापक एक। चंद न दूजौ देखियत, तिथि मत आन अनेक।।३५।।

(इति श्री तिथि लीला संपूर्ण।।९।। चौपाई ३४/ दोहा ९/ पद ३५)

अथ वार लीला

(राग गौडी)

चौपाई-

वार वार निज राम सँभारूँ ।। रतन जनम भ्रमि वादि न हारूँ ।।१।।
हित सौं श्रवण सुधारस पीऊँ ।। निसिदिन सुमरि सुमरि सुख जीऊँ ।।२।।
यहि निति नेम प्रेम उर धारौं ।। निज जीवनि रघुनाथ सँभारौं ।।३।।
हरि सुख सिंधु अति रतौ तिरिये ।। जो सतसंग सरण अनुसरिये ।।४।।

दोहा-

सत संगति सौं मिलि रहूँ, करि आदि अंति विसराम। जनमि जनमि याँही रहौं, सदा सँभारू राम ।।५।।

चौपाई-

आदित आदि अंति हरि सोई ।। सदा उदित पैं अस्त न होई ।।६।।
अस्त होइ तौ उदित विनासा ।। ताकौ नाहिं कछू वेसासा ।।७।।
अवगति अकल अनंत अपारा ।। निस वासुर इक तार उजारा ।।८।।
ऐसो जो निजरूप पिछाणैं ।। सो सति करि अपणौं पति जाणैं ।।९।।

दोहा-

पति पावै निरभै रहै, भौ तरि उतरै पार। जनमैं मरै न औतरै, सुमिरैं राम अपार ।।१०।।

चौपाई-

सोम सुरति करि सीतल वारा ।। देखि सकल व्यापक व्यौहारा ।।११।।
सो न बिसरि जाकौ विसतारा ।। सम दिष्टि होइ सुमरि अपारा ।।१२।।
बिनु सुमर्यां नाहिंन निसतारा ।। सुमरि सुमरि उतरौ भौ पारा ।।१३।।
जनमि न कलषि लिपै संसारा ।। ज्यौं जल कँवल रहै निति न्यारा ।।१४।।

दोहा-

निति न्यारौ निहचल रहै, आदि अंति विसराम। घन चात्रग रुति प्रेम सौं, सदा सँभारू राम ।।१५।।

चौपाई-

मंगल कँवल कलस मैं पावै ।। तजै उदंगल मंगल गावै ।।१६।।
मैं तैं मोह मतैं न बधावै ।। मन मधुकर माया न मिलावै ।।१७।।
जनमैं मरै न संकट आवै ।। समझि सुमंदिर सहज समावै ।।१८।।

पैसि महल मैं भूल सँभारै।। ऐक अकल भजि सकल विसारै।।१९।।

दोहा-

सकल विसारै थिर रहै, सुमरै राम अपवार। ता सेवक कैं सत्ति करि, निति प्रति मंगलाचार।।२०।।

चौपाई-

बुद्धवार जो बुद्धि प्रकासै।। मिटै कुबुद्धि अँधारौ नासै।।२१।।
परम विवेक बुद्धि वर ऐही।। अंतरि खोजै राम सनेही।।२२।।
प्रगटै ब्रम्ह उजारा होई।। वाहरि भीतरि सूझै सोई।।२३।।
दिढ़ वेसास मतौ न छिगावै।। निरभै भजि भौ माँहि न आवै।।२४।।

दोहा-

भौ बंधन आवै नाहिं, सुमिरै राम अपार। तहँ कुबुद्धि ना संचरै, उदै सुबुद्धि भंडार।।२५।।

चौपाई-

ब्रहस्पति विष तैं रहै नियारा।। कलियुग करम न व्यापै कारा।।२६।।
विषै विकार विघन जो कोई।। सकल विस्व तारण हरि सोई।।२७।।
मन परतीति प्रेम जो होई।। पति सौं परचौ और न कोई।।२८।।
धीरज धरि पति कौ जसगावै।। अंति सुगति पति माँहि समावै।।२९।।

दोहा-

अंति सुगति पति सौं मिलै, निपजि नीर तैं न्यार। और सकल संसै सरणि, जीव विषै व्यौहार।।३०।।

चौपाई-

सुकरवार जो सुमिरै सोई।। जो निजरूप परम पद होई।।३१।।
परहरि सबै सुठौर विचारै।। दिढ़ वेसास अडिग व्रत धारै।।३२।।
सेवै सदा न संकट आवै।। सत्य सत्य पति सरणि समावै।।३३।।
समझि सुबुद्धि अनत सुख नाहीं।। संसौ सदा बसै दुख माहीं।।३४।।

दोहा-

दुख मै मरै न नीसरै, संसैरत संसार। यो परहरि वो सुमरिये, जो सुकृत निरभार।।३५।।

चौपाई-

समझि सनिचर तन मन माहीं।। बाहरि निकसि गयाँ सुख नाहीं।।३६।।
दुख सुख सोच पोच संसारा। तातैं निकसि रहै जो प्यारा।।३७।।
वार वार तन धरै न आवै।। श्री गुर सरणि सदा सुख पावै।।३८।।

रहै निरंतरि धरि वेसासा ।। परसा राम अगम की आसा ।।३९ ।।

दोहा-

राम अगम सौं गम करौ, बूडौ जिनि बेकाम। परसराम प्रभु राम बिण, नाहिं कहूँ बिसराम ।।४० ।।

(इति श्री वार लीला संपूर्ण ।।१०।। चौपाई ३२/ दोहा ८/ पद ४०)

अथ नक्षत्र लीला

(राग गौड)

दोहा-

परसा आस न भजन की, जबि जग आसा और। हरिनाम बसै हेत विण, लहै न निरमल ठौर ।।१ ।।
आसा अविगत नाथ की, दूजी आस निवारि। परसराम या अश्विनी, अमृत नाउँ सँभारि ।।२ ।।

चौपाई-

असुनि अमृत नावँ संभारै ।। और सकल निर्फल करि मारैं ।।३ ।।
आगम निगम आस अघ धारा ।। आवण जाण जगत व्यौहारा ।।४ ।।
वपु धरि अफल गयै बहु प्राणी ।। अहलक कोइ निपूलि विलाणी ।।५ ।।
अग्य असुर जड़ पल्लव खारै ।। अवबल आवत जात विकारै ।।६ ।।
आवण जाण आस वसि होई ।। आस निरास रहत थिर सोई ।।७ ।।
थिर हो रहै न आवण जाणा ।। निहचल खेलै सहज समाणा ।।८ ।।
अंतर बसै निरतंर सेवा ।। रूप अरूप अनूपम देवा ।।९ ।।
अंतरजामी अपरँगि राता ।। अविगत अकल सकल सुखदाता ।।१० ।।
आदि अंत आगै अविनासी ।। अविगत अकल सुमरि सुखरासी ।।११ ।।

दोहा-

सुख रासी न विसारिए, परम सनेही जाणि। परसा निरमल नाँव गति, या सुणि और न आणि ।।१२ ।।

(विश्राम - १)

चौपाई-

भरणि भयानक भरि भौतिरणी ।। भौ जल भर्मैं नाव सभरणी ।।१ ।।
भौ तिरवे का भेद न जाणै ।। अभै न होय वसै भै राणै ।।२ ।।

भाव समझि कैं भगति न भरई।। विण भगवंत भजन कौ तिरई।।३।।
भजन भरी निरभारिक होई।। विष विकारि सरभारिक सोई।।४।।
भीतरि भेदी जगत कहावै।। भागै देखि न भुरकी भावै।।५।।
भै निरभै तिरि भरि भरि पीवै।। भँवर भयो मकरंदै जीवै।।६।।
दूभर भरणां सूभर भरई।। भली बुरी लै भारि न मरई।।७।।

दोहा-

भारि न मरई भै धरै, भरमि न दूसर होय। भगति भरेति जोइ भरै, परसा पंडित सोय।।८।।

(विश्राम - २)

चौपाई-

क्रितिगा सबै किर्तम करि जाणां।। काया कागद कर्म भराणां।।१।।
कँवला कलणि देखि न डराणां।। केलि करत को कौण कलाणां।।२।।
काम दहणि करतूति न जाणी।। करी कर्म काटण दिस काणी।।३।।
श्रुति स्मृति बोलैं कवि वाणी।। कर्म रहित निहकर्म विनाणी।।४।।
कठिण परी करुणा मैं भूले।। करुणासिंधु सुनत नहिं फूले।।५।।
केवल कृष्ण सुमरिणहि ऊठे।। केसव नांइ दिसैं मन पूठै।।६।।
कुल करणी कारण अकुलाने।। कर्म पासि पडि काल समाने।।७।।
काल किरखि काची कुमिलानी।। कण संग्रह विण कथा कहानी।।८।।

दोहा-

कथा कहाणी कण बिना, साचि न सीझै कोय। काची करणी प्रसराम, करि कल्याण न होय।।९।।

(विश्राम - ३)

चौपाई-

रोहिण जो अपणौं मन रोहै।। दिढ करि ग्यान सूप सौं सोहै।।१।।
रोकै मन मंदिर कै द्वारा।। देखै करि गुर ग्यान उजारा।।२।।
कौण कहँ रहै हरण विकारा।। अंतर जामी प्राण अधारा।।३।।
जिनि रकत रेत संधि सँवारा।। पंच तत्त्व पच्चीसौ पसारा।।४।।
रहै समीप सदा निर्मोहैं।। रूप आरत रछ्या कर कोहैं।।५।।
रमता रमैं रहै सबि न्यारा।। राजित रज गज मैं रंकारा।।६।।
धीरज धरै धरम की धारा।। जपि रघुनाथ नाम निज सारा।।७।।

राम रतन हिरदै धरि राखै ।। रचि रचि रचि रसना रस चाखै ।।८ ।।

दोहा-

रसनां रचि रावण हरण, दशरथ राम रसाल। परसा सो न विसारिये, रोहिणी रवि निराल।।९।।

(विश्राम - ४)

चौपाई-

मृग सिर जो मनकौं सरि आँणै ।। बाँधि मिरग हरि मारग ताँणै ।।१ ।।
छूटि जाय तौ पैं गहि ल्यावै ।। खेत विडानां खांन न पावै ।।२ ।।
मोहन मंत्र पढाय न लेई ।। माया मोहन लाग न देई ।।३ ।।
महाणारँभ मलीण विचारै ।। मनसा मारि अपूठी मारै ।।४ ।।
मारै मरमि मरण भौ टारै ।। बाँधै भूलि अमर फल चारै ।।५ ।।
मैं तै तरक अमीरस पीवै ।। माधौ माधौ जपि जपि जीवै ।।६ ।।
मदुसूदन मह महण मुरारी ।। मुरमारण मुख मैं महि धारि ।।७ ।।
मारि महातम मंगल गावै ।। उमगि मिलै मन माँहि समावै ।।८ ।।

दोहा-

माँहि समाइ न बीछट, परसराम मन मीन। मान सरोवर नेम धरि, रहै सदा लिवलीन।।९।।

(विश्राम - ५)

चौपाई-

आद्रा आदर देस पिछानैं ।। रहै नियादर सबि तै छानैं ।।१ ।।
आदर देय नियादर नाहीं ।। देखैं प्रगट सकल हरि माँही ।।२ ।।
आदू ऐक और नहिं कोई ।। आदि मध्य अभि अंतरि सोई ।।३ ।।
आप अखंडित अंतर जामी ।। अविगत अकल सकल कौ स्वामी ।।४ ।।
आपण अधर धरी जिन धारा ।। सोई सदा निृभार अपारा ।।५ ।।
जैसै मधुबन भार अठारा ।। इह विधि रहै मधुरिषि प्यारा ।।६ ।।
तिहि वनि कुसम कमोद सुवासा ।। खंडित की अणलागै आसा ।।७ ।।

दोहा-

आस निरास न लागई, ऐसा हरि सुख रूप। आदर दै उर राखियै, परसा अगह अनूप।।८।।

(विश्राम - ६)

चौपाई-

पुनरवसा नर मन वसि होई।। परम सिद्धि साधन बड सोई।।१।।
प्रथमैं पंच सुवसि करि जाणै।। पर्म सनेही संगि पिछाणैं।।२।।
पाणिग्रहण करि प्रीति लगावै।। पुनरपि जनमि न पूठा आवै।।३।।
पतिव्रत धरै प्रेमरस पीवै।। प्रभु की सरणि सदा सुख जीवै।।४।।
पाँव न पद परमारथ पूजा।। हरि पर्म सनेहि होय न दूजा।।५।।
पारब्रम्ह परमेसुर पूरा।। मतैं हीण सो कहै अधूरा।।६।।
हरि पारस पारवार वैला।। पंथ बीचि पसुवनि कै गैला।।७।।
तै परपंच पसारा छोई।। पर्म हंस परसण पण सोई।।८।।

दोहा-

परसा पूरण परम गुरु, पावै जाण प्रवीण। पूनिम पूरौ देखिये, पंद्रह तिथि कैं हीण।।९।।

(विश्राम - ७)

चौपाई-

पुष्प सही जो पुखता होई।। हरि पख पाय न्रिपषहिं सोई।।१।।
पर्म पवित्र सुमरि सुखरासि।। पखा पखि त्यागैं पग पासी।।२।।
आप आप सौं खेल विचारै।। कौण पराई पीड पुकारै।।३।।
पंखि पंखि कै पहरै बोलैं।। मतौ मता सौं अंतर खोलै।।४।।
पंक भई पाणी कै सारै।। पाणी पवन मिल्यौ बल हारै।।५।।
पदम पदारथ पोत पिछाणैं।। भौ पारि परै इहिं परवाणैं।।६।।
हरि पदम पुराण पढै जीवैं।। वपु धरि आपै पाप न छीवैं।।७।।

दोहा-

आपै पाप न छीवई, छाडि सकल की आस। पुरुष पराक्रम प्रसराम, करै पर्म पुरि वास।।८।।

(विश्राम - ८)

चौपाई-

अस लेखा जो लेखौ दीजै।। लेखौ काटि अलेखौ कीजै।।१।।
लेखौ लिखतां लेखणि तूटै।। होई अलेखै जबै छूटै।।२।।
लेखै चोखै पूरि सलूझै।। जबैहूँ जाय निरमल सूझै।।३।।
आसा काटि असुर पुर जारै।। सुर लै संगि असुर कौं मारै।।४।।

जीति असुर सुर कै घरि पैसै ।। सुर घर समझि अभै पुर वैसे ।।५ ।।
असलि होय तो साल न सालै ।। संसौ साल सदा घर प्यालैं ।।६ ।।
संसौ गयाँ त्रिसंसै होई ।। सुख निधान सुमिरण सुख सोई ।।७ ।।
जाणी सख सबि कौ सुख दाई ।। रहै सदा सुखतर सरणाई ।।८ ।।

दोहा-

सुखतर सरण सदा रहै, सेवा सुमरण लागि। परसा लागि अपार सौं, लेखौं दीजै जागि।।६।।

(विश्राम - ६)

चौपाई-

मघा मरण जीवण अघ जारै ।। आवण जाणा दूरि निवारै ।।१ ।।
मैं तैं मेटि सु मतौ विचारै ।। माया विषम न सातैं झारै ।।२ ।।
गुरु अँकुस ग्यान सुण सिर धारै ।। मन मैमंत मोह तैं टारै ।।३ ।।
रहै त्रिमोही सबि तैं न्यारा ।। माघ सनान करै इक तारा ।।४ ।।
निर्मल होय रहै मल खोवै ।। हरि परम सुजल ममता धोवै ।।५ ।।
हरि तीरथ प्रयाग सुखकारी ।। मंजन करौ सदा व्रतधारी ।।७ ।।
विमल अमोल महामति जाकी ।। जाणैं गति सुमिरण सेवाकी ।।७ ।।
महिमां कहि कवि कोटि वखाणैं ।। परम महामुनि होय सुजाणैं ।।८ ।।

दोहा-

जाणैं मरम महामुनी, परसा प्रेम पिछाणि। मन की माहींहिं लेये, मुगध मघासा जाणि।।६।।

(विश्राम - १०)

चौपाई-

पूर्वा फाल्गुनी फल येही ।। लगै फालगुण परम सनेही ।।१ ।।
सोई फूल सुफल सुखदानी ।। अमृत वास अमीरस वानी ।।२ ।।
ज्यौं बछनाग कुसुम सिरभारा ।। खात काल कर गहै विकारा ।।३ ।।
फूलै कंस वंस अहँकारी ।। जुग विषै बेलि बछि कचनारी ।।४ ।।
भौ न विस्तार देखि सुख नाही ।। खेल फाग मारथ मिलि जाहीं ।।५ ।।
सूकौ तरवर खरौ उदासा ।। नाहि पहुप फल कौ वेसासा ।।६ ।।
पहुप पत्र फल छाँह विहूणां ।। यौं जग जनम अफल फल हीणां ।।७ ।।
रितु फागुण जुगनी गुणियारा ।। भई उदास अठारह भारा ।।८ ।।

दोहा-

भार अठारह भणहणी, मति फागुण जुग लीण। परसराम प्रभु हरि बिनां, फालगुणी फल हीण॥९॥

(विश्राम - ११)

चौपाई-

उत्रा उत्तम जनम ना हारै॥ हरि भजि नर औतार सुधारै॥१॥
उत्तम नाम भजन व्रत धारै॥ हरि विसरै न भजै अविसारै॥२॥
उद्यम यहि उरतैं नहिं टारैं॥ उमगि उमगि हरि नांव सँभारै॥३॥
उतरि मरै तौ मरण न होई॥ कलि अजरांवर जीवै सोई॥४॥
उत्तम मध्यम ऊँचा नीचा॥ दोऊ दूरि करै लै सीचा॥५॥
इत उत बाद न बांधै वाता॥ मुकत रहै हरि कै रँगि राता॥६॥
आसा बीज न ऊसर कारै॥ कर्म न करै रहै हरि सारैं॥७॥
हरि कौं परसि इहाँ नहिं आवै॥ वाही संगि मिल्यौ गुण गावै॥८॥

दोहा-

गुण गावै संगि मिल्यौ, सहै न संधि वियोग। परसराम यों सेइये, हरि सायर सुख जोग॥९॥

(विश्राम - १२)

चौपाई-

हस्त हस्त हरि नांव विसार्या॥ हरि विष हरण न हिरदै धार्या॥१॥
हसि हसि कित खसिये बेकाजै॥ हाय हाय हरि कौ व्रत लाजै॥२॥
हरि व्रत लाज गयाँ दुख भरिये॥ भौ समुन्द्र हरि विण कौ तिरिये॥३॥
नर हरि हीण होय सो हारै॥ हरि विण हारि परै दह खारै॥४॥
हरि नखसिख व्यापक सुखनामी॥ हरि क्यौं भूलै लौणहरामी॥५॥
भूलि गये हरि सौ हित कारी॥ भ्रमि दुख सहत आपदा भारी॥६॥
हीण भये हरि सी निधि हारै॥ माँगत खात काल कै मारै॥७॥
भूखै भ्रमत त्रिपति नहिं आई॥ फिरि फिरि कीनी पेट भराई॥८॥

दोहा-

पेट भराइ परसराम, करि खोयो थिर ठांउँ। भूलि गये मतिहीण नर, हस्त खस्त हरि नांउँ॥९॥

(विश्राम - १३)

चौपाई-

चित्रा चिंता हरण सबूरी।। चिंत गयाँ चार्यों दिस पूरी।।१।।
चाखि लियो चित चढ्यौ चितारै।। हरि की चरचा चार विचारै।।२।।
सो चेतनि चित की चतुराई।। चित्र जु विसारि चितारै लाई।।३।।
ज्यौं चात्रिग चितवन चित दीनैं।। चिहन धरैं चितचोरै चीन्है।।४।।
चंद चरित चंदोर पसारी।। चित चकोर कैं प्रीति सुन्यारी।।५।।
चाहि अगनि ताकौ नहिं जारै।। जिनि कीनों चक्र चक्रधर सारै।।६।।
चरण गवण चलि चाहि न काई।। चंदन भयो रहै सुखदाई।।७।।
भौ चक्रित विचरै सचु पावै।। चोरी करै न चोर कहावै।।८।।

दोहा-

चोर कहावै सो नाहिं, अचल चरण वेसास। परसराम भौ चित्र तैं, चेतनि होय सुदास।।९।।

(विश्राम - १४)

चौपाई-

स्वाति स्वयंबर जाकै आवै।। सत्य सत्य सोई सुख पावै।।१।।
और जीव जलि बसै बिकारी।। सीप स्वाति आरतिसा न्यारी।।२।।
आरतिवंत स्वाति सुख मानैं।। सिंधु न वोर कछु करि जानैं।।३।।
वरै सुवर भौ सिंधु विसारै।। सीप स्वाति कारण व्रत धारै।।४।।
सीप स्वाति रत सो मति साची।। रहै सदा पति कैं रँगि राची।।५।।
अमृत बूंद सुधारस प्यासा।। संपुट वोचि रहै तहँ आसा।।६।।
अचवै नाहिं समझि जल खारा।। तिहिं निपजै नग त्रिमोलि प्यारा।।७।।
स्वाति सुधारस मनसा पोषी।। सहज सुभाय रहै संतोषी।।८।।

दोहा-

संतोषी सुखतर सदा, सुख दाता सुखरूप। परसराम ता संत कै, सुमरण सील अनूप।।९।।

(विश्राम -१५)

चौपाई-

बहुरि विसाखा स्वाति न सेखै।। व्यापक ब्रम्ह निरतंर देखै।।१।।
व्रतधरि करै विष्णु की सेवा।। वासुदेव देवनि कौ देवा।।२।।
दरस पूरसि सदा सुख पेखै।। दर्पण साहि सु करि मुख देखै।।३।।

दिढ वेसास सदा सिर नावै।। सहज सुभाव सुमंगल गावै।।४।।
इहिं विधि भजि बल कौं न विसारै।। विधन विकार भार हरि टारै।।५।।
बहुरि वसेख समझि इक सूझी।। व्यापक मैं व्यापति सो दूजी।।६।।
तातैं दुती भाव दरसावै।। बिनां विमेक न भरमि मिलावै।।७।।
विवरि विवरि अपणौं मन बूझै।। विसु पूरण बिसु ही मैं सूझै।।८।।

दोहा-

सूझै सकल सनेहिया, मिलै न बांह पसारि। परसराम कछु आप मैं, यहै वसेख विचारि।।९।।

(विश्राम - १६)

चौपाई-

अनुराधा अनरथ की क्यारी।। अर्थ तज्यौ अनरथ की मारी।।१।।
जहँ तहँ कहूँ बसै अनुराधा।। सोई सोधि सकल जम खाधा।।२।।
आन पुरुष कौ आदर कीनौं।। आदिनाथ कौं नाँव न लीनौं।।३।।
मुकति नियादर आन अराधै।। अखिल ईस कौ मंत्र न साधै।।४।।
अखिल ईस आनंद सरूपा।। ऐक अगिण टारण जम कूपा।।५।।
सो आराधि अगनि निज सारा।। अभैकरण जारण अघ भारा।।६।।
निर्मल नाम सकल मल त्यागी।। राग दोष आगैं अनुरागी।।७।।
सो हरि साधि समरि गुण गाथा।। अविगत नाथ अभै पद दाता।।८।।

दोहा-

अभै राज उतीम सुपद, सो हिरदै धरि साधि। परसराम आधार हरि, आरति सौं आराधि।।९।।

(विश्राम - १७)

चौपाई-

जेष्ठा जो ज्येष्ठ पद जाणै।। ज्येष्ठ कौं जेष्ठ पहिचाणैं।।१।।
करि पहिचाँणि जाँणि छल बलई।। जाणि बूझि जंजाल न जलई।।२।।
जगत पिता जगदीसहिं जाणै।। जीवनि जाणि न जगहिं पिछाणैं।।३।।
जगन्नाथ कौ दरसन देखै।। जीवनि जनम सुफल करि लेखै।।४।।
जाणि जगत गुरु जगत वियापी।। जगत बंध जगवर जग जापी।।५।।
आप जाप कीनौं बिसतारा।। जै जै कार भयौ जै कारा।।६।।
जंत्रि ऐक बहु जंत्र बजावै।। जंत्री जंत्र मिल्यौ जस गावै।।७।।

जग जंत्र साजि बहुरि बिझाणैं ।। या जोग गति येक जन जाणैं ।।८ ।।

दोहा-

जुगति पिछाणै जोग की, जिको जोगी समांनि। परसराम निज जोगि जन, सो जग झूंठी जानि ।।९ ।।

(विश्राम - १८)

चौपाई-

मूल जनम साची मति साईं ।। जु माता पिता दुहु कौं खाई ।।१ ।।
महामूल जाणै जो कोई ।। जनमत ही जोगेसुर सोई ।।२ ।।
मति सधीर जग आगि न दाझै ।। रहै निमोही मोहि न बाझै ।।३ ।।
रहै नृमोही मध्य समाया ।। स्याम सुँ मिलत मोह तजि माया ।।४ ।।
महामूल कौं सदा सँभारै ।। अहंमेव ममता विष जारै ।।५ ।।
जाकौ मन मनसा कै सारै ।। मंत्र हीण कौं माया मारै ।।६ ।।
सीचै मूल सुकावै डाला ।। प्रेम पोय करि पहिरै माला ।।७ ।।
मनसा मरण मनोरथ जाणैं ।। मणिया सकल मूल दिसि आणैं ।।८ ।।
आघा पाछा जाण न पावै ।। ऐक बुलायां सत चलि आवै ।।९ ।।

दोहा-

चलि आवै सबि मूल दिस, आग्या मेटि न जांहि। परसा उपजै मूल कै, सो फिरि मूलिं समांहि ।।१० ।।

(विश्राम - १९)

चौपाई-

पूर्वा पुत्र अपूरब जायो ।। प्रगट सुरवि महिं मंडल छायो ।।१ ।।
साई दिस दिसा अनूपम जाणी ।। अंस बस्यौ निसि घोर विलांणी ।।२ ।।
भयो प्रकास सकल सुख मानैं ।। महिमा अंध उलूक न जाणैं ।।३ ।।
ज्यौ पूरब नन्दा नन्दराणी ।। ब्रम्ह अगम सुधि की सहनांणी ।।४ ।।
ज्यौं दुतिया ससि मंडल छाया ।। सूझै अपणी सूधि समाया ।।५ ।।
व्यापक पूरण परम सेनही ।। जननी अगिण भई धरि देही ।।६ ।।
यौं प्रभु समरथ सबि सुख दाता ।। रहै प्रेम रातै सौं राता ।।७ ।।

दोहा-

रातौ प्रेम सदा रहै, परम सनेही जाँणि। परसा पल न विसारिये, करि पूरी पहिचाँणि ।।८ ।।

(विश्राम - २०)

चौपाई-

उत्रा ऊतरी करि मन खोजै ।। ऊतम जन अपणौं उर सोझै ।।१ ।।
आपौ खोजि न खोजै औरैं ।। औरैं खोजि न लाभै ठोरैं ।।२ ।।
औरैं खोजि खलक मैं जाणाँ ।। खालिक रस तजि खेलि भुलाणाँ ।।३ ।।
खोजत खोजत खलक पिछाणीं ।। होय गयो खलु खेल विझाणी ।।४ ।।
ऐसो खेल खिलारहिं बूझै ।। जाहि सकल खालिक मैं सूझै ।।५ ।।
खलक न जाणै पहुप परागा ।। हरि अपणैं रँगि खेलै लागा ।।६ ।।
ताहि पिछाणि बसै जो माहीं ।। तजि खर पंथ खार कछु नाहीं ।।७ ।।
खलक लागि जिन होय भिखारी ।। खरै लागि लागै ज्यौं खारी ।।८ ।।

दोहा-

खारी लागै सत्य करि, जो हरि सुमरै गाढ। परसराम जन जाणिये, उत्तम उत्तराषाढ ।।९ ।।

(विश्राम -२१)

चौपाई-

श्रवण सुरति करि सुनि मन प्राणी ।। श्री गुरु कहै सत्य सोइ वाणी ।।१ ।।
सत्य सत्य करि हरि हित कारी ।। हरि सुख सिंधु सुमंगल कारी ।।२ ।।
सुमरि सुमरि विसरै जिन सोई ।। सदा सहाय न दूसर होई ।।३ ।।
हरि सम्रथ की सेवा कीजै ।। सेय सदा नृसंसै लीजै ।।४ ।।
रहै निसंक संक बहि जाई ।। निसँघ होय आसँघै सवाई ।।५ ।।
महासूर वीर सु भै नाहीं ।। नरसिंघ बोलै जाघर माहीं ।।६ ।।
हरि सिंघ जो वसिकरण सिधाहीं ।। सूझै सकल सिंध मुख माहीं ।।७ ।।
साधू संगति सोई साची ।। मिटै सँदेह साल मति काची ।।८ ।।

दोहा-

काची साच न सीझई, कहत नाहिं कछु राखि। परसराम गज अंक ज्यौं, श्रवण सदा सुणि साखि ।।९ ।।

(विश्राम - २२)

चौपाई-

धनेष्टा सो धनाधि कहावै ।। ध्यान धरै धीरज धर पावै ।।१ ।।
पाय सुधन कौं धरै न धारा ।। देय न काहू धरमि उधारा ।।२ ।।
विलसै आप जाप व्रत धारै ।। इहीं विधि सौं आधार सँभारै ।।३ ।।

सो धनि धनि मति धीर कहावै ।। दिढ व्रत धारि घणि दिस धावै ।।४ ।।
धरि धरिणी धर उरि अविसारा ।। जो बांधि धनक हरण विकारा ।।५ ।।
बाँकी धुरि जो जाय पधोरी ।। धुरि बैठै सु कहावै धोरी ।।६ ।।
जिनि बांधी धुरि सकलि अधारी ।। सेय सदा अंबर धर धारी ।।७ ।।
धखणि बुझाय धुखी धसि धोवै ।। धाम धुजा धोखै धुकि रोवै ।।८ ।।

दोहा-

रोवै धुकि धन कारणैं, धाह न आवै छेह। परसा धूरज धू परी, सो धनेष्टा सनेह ।।९ ।।

(विश्राम - २३)

चौपाई-

सत भीखा करिकैं भौ भरमै ।। बिनु भगवंत भजन आ सरमैं ।।१ ।।
प्रभु कौ भजन भरोसौ नाहीं ।। भेद बिनां भटकत भै मांहीं ।।२ ।।
भूखै भ्रमत त्रिपति नहिं आई ।। भाव भगति बिनु पेट भराई ।।३ ।।
मांगि भीख भ्रमि भये भिखारी ।। भौ भरमत हरि भगति विसारी ।।४ ।।
भेष पहरि भगवंत न जान्यौ ।। भर्मत भार बहत मन मान्यौ ।।५ ।।
भौ समुन्द्र झूलत मन फूलै ।। भुरकी लागि अभै वर भूलै ।।६ ।।
अभैराज अस्थिर घर नाहीं ।। भानु किरणि परसत तम जाहीं ।।७ ।।
संसै सदा त्रिसंसै नासी ।। सुनि सतकर्म सकल सोभासी ।।८ ।।

दोहा-

सोभा सकल न सोभई, नाक बिनाँ सिंगार। परसा काचो सत भिखा, साच बिनां सिरभार ।।९ ।।

(विश्राम - २४)

चौपाई-

पूर्वा भाद्र पदा भै जाहीं ।। भद्र भयाँ पाछैं भय नाहीं ।।१ ।।
भये अभै जु अभै पद लागै ।। पद परसत निर्भै भै भागै ।।२ ।।
भाव सहित मन भोग लगावै ।। प्रेम प्रसाद सदा सुख पावै ।।३ ।।
सदगति सदा प्रगट सुख देखै ।। सुपद उपासिका आन न पैखै ।।४ ।।
भू भीतरि भूपति भूपाला ।। निसि न परै अविगत उजियाला ।५ ।।
दीपक सकल सुमंगल कारी ।। सदा प्रकास न रहै अँधारी ।।६ ।।

सेय सुपद पंकज अति प्यारा।। हरि पद सरणि सदा निरभारा।।७।।
हरि पंक हीण जो उर होई।। पद परसण परमारथ सोई।।८।।

दोहा-

परमारथ पद पर्म धन, पूरौ कहूँ न हीण। परसराम भजि भद्र पद, भद्र पर्म पद लीण।।९।।

(विश्राम - २५)

चौपाई-

उत्रा भाद्र पद जो पद बूझै।। यहै वोत इत उत सबि सूझै।।१।।
लोचन हीन होय सुन देखै।। इत उत अंतर आपण एकै।।२।।
आपण एक न कहौं अधूरा।। व्यापक सबि मैं है हरि पूरा।।३।।
हरि पूरै कौं पूरा देखैं।। मति वोछी वोछो करि लेखै।।४।।
रहै नियादर सबतैं छानैं।। इत उत उत्तर देसु पिछानै।।५।।
उर्द्ध कंवल सूधौ करि राखै।। अमृत प्रेम सुधारस चाखै।।६।।
ता रस लागि रहै ल्यौ लीणां।। ता ऊपरि सूझै हरि झीणां।।७।।

दोहा-

सूझै तबि जबि सुद्ध होय, तन मन मंजन जाणि। परसा उज्जल भाद्र पद, वोत भई पहिचाणि।।८।।

(विश्राम - २६)

चौपाई-

रेवति रहित वोत उर येही।। करि रछया करि राम सनेही।।१।।
जहँ न वोत रहित वो राजा।। रैति बिनां भरमत बेकाजा।।२।।
रंचक सुख रचि रीता धावै।। रतन जनम लै रेत रलावै।।३।।
रुचि करि होत नाहिं हरि सारै।। आरति बिण हरि काहि उबारै।।४।।
उबरै जो सुमिरण व्रत धारै।। रहै निरंतर अंतर सारै।।५।।
ज्यौं सूरमा रिण फिरि संभारै।। रावत रातौ रमैं पसारै।।६।।
समझि सीस तैं भार उतारै।। रटै अवीसर सौ न विसारै।।७।।

दोहा-

तहँ आरति जहँ जलचरि, तलफि मरै विण वारि। परसा समझि सुरेवती, तारण तरण मुरारि।।८।।

(विश्राम - २७)

चौपाई-

अभै अभीच भयाँ भै नाहीं।। और सकल भरमत भै माहीं।।१।।
सिद्धि योग सबि कौ सिरदारा।। जाकै उदै सकल उजियारा।।२।।
तिमरकार हरि जोतिग जोई।। सकल सिद्धि साधन है सोई।।३।।
ऐसो जोतिग अंतर धारै।। विघन विकार भार हरि टारै।।४।।
आनंद कंद साधन सब सारी।। महा महूर्त मंगलकारी।।५।।
पल मैं पलक वहै अति ताता।। अविगत अकल सकल सुखदाता।।६।।
रहै नृबंधन बंधणि आवै।। मुकत रहै को इक जन पावै।।७।।
जाकै पर्म हंस सुमति राजै।। नीर खीर टारण बल ग्राजै।।८।।
जो महाविग्य पंडित विख्याता।। लहै अमीचि भौ तिरै ग्याता।।९।।
निरभै पद निरवाण नृमोही।। रछया फलदायक है वोही।।१०।।

दोहा-

सोइ फलदायक ईस सुँ, दिन समहूर्त साधि। परसराम प्रभु अभै वर, जोग जुगति आराधि।।११।।

(विश्राम - २८)

(इति श्री नक्षत्र लीला संपूर्ण।।११।। चौपाई २३२/ दोहा ३०/ पद २५२)

अथ श्री बांवनी लीला

(राग गौड)

दोहा-

श्री गुरु दीपक उर धरै, होई प्रगट परकास। अक्षर परच्यौ प्रेम करि, सकल तिमर कौ नास ॥१॥
सत संगति संग अनुसरि, रहै सदा निरभार। बांवन पढै बनाय करि, वदि सोई आकार ॥२॥

चौपाई-

वोत होत जो वैसा होई ॥ वैसा वोखद और न कोई ॥३॥
बोसाँ प्यास कहौ क्यौं जाई ॥ हरि सुखसिंधु सु उर न समाई ॥४॥
उद्यम जो उर होय उजारा ॥ उदित उभै वर दुरै अँधारा ॥५॥
उमगि सँभारि उजागर सोई ॥ उन मैं मिलि उनहीं सा होई ॥६॥
अंतरि अगम अगोचर देवा ॥ अविगत अकल अनंत अभेवा ॥७॥
अविहड अजर अमर अविनासी ॥ अनंद अचल मूल अखिलासी ॥८॥
इई अडपै अडै भौ छोडै ॥ बेडै चढि पडि प्राण न बोडै ॥९॥
रडि पडि रटै तडाकि न तोंडै ॥ पति सौं प्रीति सवाई जोडै ॥१०॥
एई अंति इतै जो होई ॥ इत उत येक और नहिं कोई ॥११॥
जो जापौं तौ वाकी सेवा ॥ यौ सेवग याकौ वो देवा ॥१२॥

दोहा-

आदि अंति जो देखि यक, कहिये बहू बनाहिं। कहि सुनि कर इनमैं सबै, इण बाहरि कछु नाहिं ॥१३॥

(विश्राम - १)

चौपाई-

कका कहि सुणि और ना कोई ॥ कुल करणी परहरि भजि सोई ॥१४॥
कर्म रहत निहकर्म विचारै ॥ कैसो कैसो कृष्ण संभारै ॥१५॥
खखा खिसै खसम विणा केई ॥ जिकै खेलै खलक मिलि सोई ॥१६॥
परहरि खलक खोजि जो आवै ॥ हो निरदोस अखै पद पावै ॥१७॥
गगा जो गुरु ग्यानहि पावै ॥ तजि गुमान गोविंद गुण गावै ॥१८॥
गुर गम करि विग्यान समावै ॥ होइ अगम ताकीगम पावै ॥१९॥
घघा नीघर घरहि गुवावै ॥ घर घर फिरत नाहिं घर पावै ॥२०॥

बोघर अति घर हर करि जाणी ।। जा मै मिलै न सारँग पाणी ।।२१ ।।

दोहा-

ङ ङ ङा ङारै जगत तैं, करि मन मरण सनेह। निति न्यारो निहचल रहै, सरणि सदा करि ग्रेह ।।२२ ।।

(विश्राम - २)

चौपाई-

चचा चिंता हरण संभारै ।। चंद चकोर सुप्रेम विचारै ।।२३ ।।
अहि चंदन चात्रिग घन आसा ।। चिंत विसारि चितारै दासा ।।२४ ।।
छछा छिटकि छिटकी बहू छीनां ।। छार मिलै हरि नाम न लीनां ।।२५ ।।
छुछि करि कैं रस पीया नाहीं ।। छनि छनि गये अगिण छिन माहीं ।।२६ ।।
जजा जीवनि कबहुं न बिसारै ।। हरि जस जपै सु जनम सुधारै ।।२७ ।।
विण जगदीस जगत जुग जाहीं ।। जप तप जागि जोगि जामाहीं ।।२८ ।।
झझा झूठि झगरी झखि मरहीं ।। रुचै न सरस सुनी झर झरहीं ।।२९ ।।
अझरण झरै सुणी झर पीवै ।। मिटै असमझि समझि सुख जीवै ।।३० ।।

दोहा-

ञ ञञा निजपद निरखिये, नेरा नांहि न दूर। निर्मल दीसै नाम विण, रह्या सकल भरि पूरि ।।३१ ।।

(विश्राम - ३)

चौपाई-

टट्टा टेव जो टेक न छूटै ।। मिटै कुटेव जगत तैं तूटै ।।३२ ।।
कटै कष्ट भी संकट न आवै ।। रहै निकटि रटि सरणि समावै ।।३३ ।।
ठठा ठठकि करैइ मन पूठा ।। समझि सुठौर रहै जग रूठा ।।३४ ।।
और ठौर ठिक परै न कोई ।। हरि भजि ठौर ठिकाणौं सोई ।।३५ ।।
डडा डिग्यां ठौर नहिं काई ।। होय अडिग सुमिरण कर भाई ।।३६ ।।
डिगि डिगि गये बहु गिनत नाहीं ।। ग्रसे काल बूडे भौ माहीं ।।३७ ।।
ढढा ढही ढूंढे ढिगि ढोवै ।। राखि अढर ढरकाई न खोवै ।।३८ ।।
ढोरी ढरकि ढूकि रस पीवै ।। ढबकि न मरै सहज सुख जीवै ।।३९ ।।
राणा खण कुवाणि ना ठाणैं ।। आनन्द पद उरि आणि पिछाणैं ।।४० ।।
भौ रिण जीति उरणि घर पावै ।। बहु रिण द्वारि रिणाई आवै ।।४१ ।।

दोहा-

जग ऊरणि आरणि रमैं, अगिण अणी कौ पूर। अनुग सहित रावण हतैं, सो राणौ रिण सूर॥४२॥

(विश्राम - ४)

चौपाई-

तता त्रिहूं गुणा तैं न्यारा॥ तैरूं तिरै अतिर संसारा॥४३॥
त्रिविध ताप ताकै तन्न नावै॥ त्रिभुवन पति आरति करि गावै॥४४॥
थथा थला थोघै किन माही॥ थर हरि कथि थारौ कौ नाहीं॥४५॥
थाँभि थाँभि थपि उथपि न आवै॥ थिर होई रहै सौ थिति पावै॥४६॥
ददा दरपण देखि पिछाणैं॥ दीसै प्रगट दुरै नहिं छानैं॥४७॥
दीपग हरि दूसर नहिं कोई॥ दुख सुख दरद देह गुण सोई॥४८॥
धधा जोई धीरज धरि जाणैं॥ परम निधान सुध्यान पिछाणैं॥४९॥
बिण अधीर धखिण धखि जारै॥ निर्धन मरै रामधन हारै॥५०॥

दोहा-

न ननां नाटक मिटि गयाँ, तबहिं तेरा कोइ। भजि निरभै निर्वाण पद, निर्वाहै ज्यौं तोहि॥५१॥

(विश्राम - ५)

चौपाई-

पपा पति कौ पार ना आवै॥ प्रीति पर्म पद पूरा पावै॥५२॥
मन परतीति प्रेम जो होई॥ पार ब्रम्ह भजि परचौ सोई॥५३॥
फफा फिरि फिरि फेरेहिं खाहीं॥ फावा फीटा फूटि समाहीं॥५४॥
फूलि फूलि मन फल तैं फाटै॥ खोयो सुफल कुफल कै साटै॥५५॥
बबा व्यापक ब्रम्ह विनांणी॥ बल वेद विदित विधि बहुवाणी॥५६॥
विद्या वाद विषै विण कोऊ॥ जाकै अवर्ण बराबरि दोऊ॥५७॥
भभा भरमि ना भौ मैं जाई॥ भीतरि भेद अभै रे भाई॥५८॥
भाव भगति भगवंतहिं गावै॥ निर्भै भजि भौ मांहि न आवै॥५९॥

दोहा-

म ममा मारग मोकला, मरि भेटैं जो मेर। मार न खाई मिलि रमैं, परम राम कौं हेर॥६०॥

(विश्राम - ६)

चौपाई-

यया जोग जुगति जोइ जाणैं।। योगी जाणि न जगहिं पिछाणैं।।६१।।
जो जग मैं जगपति कूं पावै।। तौ जन जनमि न जगमैं आवै।।६२।।
ररा राम रतना जो जानैं।। जो रछिपाल रमैं रुचि मानैं।।६३।।
आरति करि रचि विचरचि न जाई।। रछया करि राखै सरणाई।।६४।।
लला लालचि लागि ना बहिएं।। लालच लाग्यां अलह न लहिएं।।६५।।
लखि लिखमी वर अलख न होइ।। अलख बिनां ल्यौं लखै न कोई।।६६।।
वावा वागति वोही जाणै। बैसो होइ सुवाहि पिछाणैं।।६७।।
वा विण दीसै और न कोई।। इत उत व्यापि रह्यौ हरि सोई।।६८।।

दोहा-

इत उत व्यापक सकल मैं, अकल सु कल्यौ न जाई। वुतपति परलै वो नाहिं, उपजै खपै विलाई।।६९।।

(विश्राम - ७)

चौपाई-

शशा सुपति सुमरै जो कोई। सुमरि सुमरि सुख पावै सोई।।७०।।
सुख सुमर्यां तैं होइ उजारा।। ज्यौं सविता न सहै निसि कारा।।७१।।
खखा खेल मर्यो अति भारी।। खिरि खिरि गये बहू संसारी।।७२।।
खेल विचारी खलक तैं भागै।। तै न खिरै जु अखिर सौं लागै।।७३।।
ससा सत्य सबदहिं उरि आणैं।। तजै असत्य सत्य गुर जाणैं।।७४।।
समझि सनेह नृसंसै सोई।। श्री गुर सरणि सदा सुख होई।।७५।।
हहा जो हरि नाँव संभारै।। हीरौ हाथ चढयौ सु न डारै।।७६।।
हरि हरि सुमिरै हेत न टारै।। हरि बिनु जनम सुवादि न हारै।।७७।।
खिरि खिरि खारी खाँनि समाहीं।। ऊखलि खलि हो कैं ख्यौ जाहीं।।७८।।
खरा निखर करि खोट समोया।। खास खूंस मिलि खालक खोया।।७९।।

दोहा-

अखिर है खिरि रूंख कै, वो अखिर नित निरवांण। कागद सरतर मसि बिनां, लिखि बांचै सो जांण।।८०।।

(विश्राम - ८)

चौपाई-

सोइ जाण जो जाणैं सारा।। फूटै सँगि मिलि बहै न भारा।।८१।।
विद्या सोइ पढै उरि आणै।। ब्रम्ह अगमि ताकी गमि जाणैं।।८२।।
पंडित जो तन मन सुधि पावै।। इहिं आइ उहां जाइ समावै।।८३।।
जाणैं जो मन कौं विसरामा।। परसा जन सुमिरै सो रामा।।८४।।

दोहा-

राम सँवारे सबि तजै, आदि अंत फल सूल। परसराम जन ता सरणि, निराकार निरमूल।।८५।।

(विश्राम - ९)

(इति श्री बांवनी लीला संपूर्ण।।१२।। चौपाई ७४/ दोहा ११/ पद ८५)

अथ विप्रमती

(राग मारू)

चौपाई

सबकौ सुणियौ विप्रमती सी।। हरि बिनु बूडै नांव भरी सी।।१।।
वाँमण छै पणि ब्रम्ह न जाणैं।। घर मैं जगतपति ग्रह आणैं।।२।।
जिण सिरजै ताकूं न पिछाणैं।। करम भरम कौं बैठि बखाणैं।।३।।
ग्रहण अमावस थावर दूजा।। सूतग पातिग प्रोजन पूजा।।४।।
प्रेत कनक मुख अंतरि वासा।। सती अऊत होम की आसा।।५।।
कुल उत्तिम कलि मद्धि कहावै।। फिरि फिरि मद्धिम कर्म कमावै।।६।।
आन देव पूजै सिर नावै।। ऊँच्च जाति कूँ लछि न लावै।।७।।
कर्म असौच ऊचिष्टा खाहीं।। मतै भिष्ट जम लोकहि जाहीं।।८।।
सदा न्रिमालय उद्रहीं भरहीं।। महा प्रसाद की निंदा करहीं।।९।।
दान उपाय करि लियो न्हालै।। झूठ साच करि लरिका पालै।।१०।।
सुत दारा की झूठणि खाही।। हरी भगतण की छोति कराहीं।।११।।
न्हाय धोय उत्तिम होय आवै।। विष्णु भगत देख्याँ दुख पावै।।१२।।
स्वारथ लागि फिरै बेकाजै।। राम सुण्या पावक ज्यौं दाझै।।१३।।

रामकृष्ण की छौडी आसा।। पढि गुणि भये कर्म कै दासा।।१४।।
सीखै करम करम सँगि धावै।। जो बूझै ताहि कर्म दिढावै।।१५।।
निहकरमी की निंदा करीजै।। करम करै ताकौ मन धीजै।।१६।।
हिर्दै भगत भगवंत न आवै।। हिरनाकुस कौ पंथ चलावै।।१७।।
देखौ मति कौ जो परकासा।। विणां भासकर तम का वासा।।१८।।
ताकौं पूज्यां पाप न ऊडै।। नाव सवरणी भौ मै बूडै।।१९।।
पाप पुण्य कै हाथा पासा।। मारि जगत कौ कीयौ नासा।।२०।।
राकस करणी देव कहावै।। वाद करै गौपाल न गावै।।२१।।
ज्यौं वहिनि कुल वहनि कहावै।। घर मंडण वा घरहिं जरावै।।२२।।
ज्यौं वैस्य ग्रह साह कहावै।। भीतरि भेद मुसे न लखावै।।२३।।
ऐसी विधि सुर विप्र भणीजै।। भगति विमुख सुपचा सम दीजै।।२४।।
अंध भयै आपौ न संभारै।। ऊंच नीच कहि कहि निज हारै।।२५।।
ऊंच नीच मद्धिम सा वाणी।। ऐकैं पवण ऐकहीं पाणी।।२६।।
ऐकैं माटी ऐक कुँभारा।। ऐकैं सबकौ सिरजण हारा।।२७।।
ऐकैं चाकि सबि चित्र बनाया।। नाद बिंद कै मद्धि समाया।।२८।।
अंतरजामी विप्रक सूदा।। ताहि विचारौ करि मन सूधा।।२९।।
व्यापक ऐक सकल कौ गौती।। नांव कहा धरि कीजै छोती।।३०।।
हंस देह तजि न्यारा होई।। ताकी जाति कहौ धौं कोई।।३१।।
विणसि गयाँ पाछै का कहिये।। ऊंच नीचि कौ भरम न लहिये।।३२।।
नारी पुरुष किं बूडा बाला।। तुरक किं हींदू करौ सँभाला।।३३।।
स्याह सुपेत किं राता पीला।। अवरण वरण किं ताता सीला।।३४।।
अगम अगोचर कहत न आवै।। अपणैं अपणैं सहजि समावै।।३५।।
समझि न परै कही कौ मानैं।। परसा दास होई सो जानैं।।३६।।

(इति विप्रमती संपूर्णं।।१३।। चौपाई ३६ / पद ३६)
इति श्रीपरसरामजी की वाणी संपूर्णं।। पोथी कौ संवत् १६७७)

परशुराम सागर-चतुर्थ-खण्ड

परशुराम - पदावली

(श्री परसराम देवकृत पद)

राग ललित-

गोविंद मैं बंदीजन तेरा॥
प्रात समै नित उठि गाऊं तौ मन मानैं मेरा॥टेक॥
किर्तम कर्म भर्म कुल करणी ताकी नाहिं आसा॥
तेरा नांव लिया मन मानैं हरि सुमरण वेसासा॥१॥
करूं पुकार द्वार सिर नाऊं गाऊं ब्रम्ह विधाता॥
परसराम जन करै बीनती सुणियौ अवगति नाथा॥२॥१॥

राग ललित-

जो जन हरि सुमिरण व्रतधारी॥टेक॥
सो क्यौं डरै दास दुविध्या तै जाकैं राम महावल भारी॥टेक॥
नृपनारी अहंकार आप वलिपति देखत सुत मान उतारी॥
राख्यौ जतनि जाणि जग ऊपरि दीसै ध्रू अधिकारी॥१॥
नरसिंह रूप धर्‌यो हरि प्रगटे हिरणाकुस मार्‌यो उरफारी॥
जन प्रहलाद बांह दे अपणी राख्यौ सरणि उबारी॥२॥
कैरूं सभा सकल नृप देखत चीर गह्यो ग्रवहारी॥
हरि सुमरत द्रौपदी पति राखी प्रगटी प्रीति पुकारी॥३॥
रावण रंक कीयौ जिण छिन मैं अनुग सहित सब सेनि संघारी॥
परसराम प्रभु थापि विभीषण अरु निर्भैकरि लंक संभारी॥४॥२॥

राग ललित-

तो मन मान्यो मोहन जी कौ॥
जाट धनूं जु किसाण राम कौ जाणत मरम जमी कौ॥टेक॥
नाऊ सेवक सैंन कहावत सो मरदनियां नीकौ॥

अरु रैदास चमार चरणूं कूंपण ही जोरन सीख्यो ।।१।।
बुणी कबीर मिहींमद मूंदी घण मोला रंगजी कौ।।
नामौं छीपौं वागौ सीवैं सुंदर वर के जीकौ।।२।।
जैदे तिथि पाखी बतावै गाइ सुणावै हीकौ।।
जाकै हदै वसै जस निर्मल परसराम प्रभु पीकौ।।३।।३।।

राग भैंरू-

हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे।।
राम राम राम जपि जन विस्तरे।।टेक।।
गोविंद गोपाल नांव संभारि।। माधौ मोहन मुकुंद मुरारि।।१।।
कैसौ कृष्ण कृष्ण निराकार।। अगम अगोचर अपरंपार।।२।।
नरहरि नरहरि निर्भै साथ।। अविगत अकल विसंभर नाथ।।३।।
पूरन ब्रम्ह निरंजन ठांऊ।। परसराम प्रभु निर्मल नांउ।।४।।१।।

राग भैंरू-

हरि हरि हरि हरि हरिदै धरौ।।
राम राम राम रसनां उच्चरौ।।टेक।।
तजौ जंजाल कर्म भ्रम पास।। भावभगति करिधरि वेसास।।१।।
प्रेम सरस पीवौ ल्यौ लाइ।। नित आनंद काल नहिं खाइ।।२।।
वाद विवाद झरवन जंजाल।। परसा हरि विण ग्रासै काल।।३।।२।।

राग भैंरूं-

राम राम राम राम जपि मेरे मंना।।
राम नाम विण नर नरधनां।।टेक।।
अमृत नांउ अमरल्यौ लीन।। गावै वेद द्वारि होइ दीन।।१।।
राम नाम नवका निजसार। तिरे अनेक बैठि भवपार।।२।।
अविगत आदि अंत नहिं कोइ।। परसा अंतरि बोलै सोइ।।३।।३।।

राग भैंरू-

केवल कृष्ण केसवा नांउ।।
ताकी मैं बलिहारी जांउ।।टेक।।
निर्मल नांउ अमोलक हीर।। राम रमत मनि उपजै धीर।।१।।

सोइ हरि जीवकी जीवनि प्रान॥ परसा भजि जींऊ भगवान॥२॥४॥

राग भैंरू-

साधु संगति सुमिरण कूं राम॥
भाव भगति निर्मल विश्राम॥टेक॥
विण वेसास न लागै रंग॥ आस अगनि वन मन कौ भंग॥१॥
भर्मि बहै जिन जग व्यौहारि॥ पसर्यौ अकल अनंत विचारि॥२॥
उलटि देखि आपा पर मांहि॥ परसराम हरि है कहा नाहिं॥३॥५॥

राग भैंरू-

हरि रस महिंगा पीया न जाइ॥
जो पीवै सो या मन कूं खाइ॥ टेक॥
नाम न मरै न माया मरै॥ तातैं जनमि जनमि दुख भरै॥१॥
आसा तृष्णा अंतरि साल॥ क्यौं यह मनुवा होइ निहाल॥२॥
लोग रिझायो हरिगुण भज्यो॥ पहर्यो स्वांग डिंभ नहिं तज्यौ॥३॥
काम क्रौध बांधे घटि रहै॥ तब लग दास न पतिकौं लहै॥४॥
आपा पर जाणैं जो एक॥ राम भगत कै याही टेक॥५॥
ब्रम्ह बापक बोलै घर लहै॥ हरि रस सोई चाखै सुखि रहै॥६॥
नां कोई बैरी नां कोई मीत॥ ऐसी दसा रहै मन जीत॥७॥
परसराम जीवत जो मरै॥ तव ता जन कौ कारिज सरै॥८॥६॥

राग भैंरू-

सब मैं राम संवारै काम॥
कासूं कौण कहै वेकाम॥टेक॥
एकैं माटी एकैं नीर॥ ताकौ विधनां रच्यौ सरीर॥१॥
भीतर पवन बंन्धो सुवसंत॥ बोलै वाणी ब्रम्ह अनंत॥२॥
पूरण ब्रम्ह सकल जग संगि॥ राचि रह्यो माया कै रंगि॥३॥
अपणी सौं आपण रह्यो समाइ॥ चेतन होइ न दास कहाइ॥४॥
चेतन हू आन होइ विणास॥ वर्णै न देही कै संगवास॥५॥
उठै सबद सिंधु की कहै॥ परसराम प्रभु की को लहै॥६॥७॥

राग भैंरू-

जन धनि रामहिं जाणैं सोइ॥
सुमिरै लोक वेद की खोइ॥टेक॥
जप तप तीरथ पूजा पास॥ अंतरि पति खोजै सोई दास॥१॥
अंतरि खोजि पिछाणै आप॥ छांडै नरक सुरग पुनि पाप॥२॥
परसा काल न देही दहै॥ हरि सौं मिलै एक होइ रहै॥३॥८॥

राग भैंरू-

राम राम राम सूं मेरै काम॥
और सबै बकिवौ बेकाम॥टेक॥
कुल आचार विचार न जाणूं तप तीर्थ व्रत की नहीं आस॥
ऊंच नीच कछु समझि न आवै निहचै हरि सुमिरण वेसास॥१॥
कथनी कथूं न व्यास कहाऊं आस लबधि जिततित नहिं जाऊं॥२॥
राम चरन भजि और न भावै हरि सम्रथ की सरणि रहाऊं॥
खटकर्म पाकपूजा विधि करणी करि परसा उत्तिम नर न कहाऊं॥३॥९॥

राग भैंरू-

सत गुरु सोज बतावै याहि॥
तन तैं बिछुरि कहां मन जाहि॥टेक॥
घट फूट्यां प्राणी कहां जाइ॥ जा तन दीसै रहै न माहि॥१॥
छांडि माया भयो उदास॥ कौण गयो कहां पायो वास॥२॥
बाजत पवन थकित होइ रह्यौ॥ माटी परी धरणी घरु गह्यौ॥३॥
बोलन हार मरे नहिं सोई॥ तौ को जीवै को मिर्तक होई॥४॥
सुरति निरति मैं रही समाइ। नां सोई आवै ना सोई जाइ॥५॥
परसराम एक अचरज भयो॥ तौ को ठाकुर को जन होइ रह्यो॥६॥१०॥

राग भैंरू-

का कही ए कहणैं नहीं जोग॥
भूलौ भरम न जाणैं लोग॥टेक॥
काजी कलमां पढै कुरान॥ ताकी चलि चालै मुस्सलमान॥१॥
करै हलाल भार सिरि वहै॥ देखत दीन आपणूं दहै॥२॥

मुसलमान जो मन कू मुसै॥ काटै कर्म काया कूं कसै॥३॥
पांचू चूरि सूर होइ रहै॥ मुसलमान भिस्ति सो लहै॥४॥
हिंदू राम नाम उच्चरै॥। पूजै भूत कर्म बहु करै॥५॥
जागत जीव मार करि खांहि॥ तातैं सबै नरक मैं जांहिं॥६॥
जोगी गोरख गोरख कहै॥ ता गोरख कौ मरम न लहै॥७॥
सो गोरख या घट की मांहिं॥ सतगुरु मिलै तौ देइ बताहिं॥८॥
भूलै मुगध न जाणैं मूल॥ ज्यौं जल मांहि सिला अस्थूल॥६॥
भीतरि भिदै न सुख मैं रहै। तातैं जनमि जनमि दुख सहै॥१०॥
हृदै सुद्धराम जो जपै॥ साध संगति रहै सब दिन तपै॥११॥
राग दोष तैं न्यारा रहै॥ परसराम प्रभु सो जन लहै॥१२॥११॥

राग भैंरू-

जन भजन निर्भै निर्वाण॥
मन सम्रथ होइ गही कमाण॥टेक॥
क्यौं जुति मिलै अंधारौ मांहि॥ विण रवि उदै उजारौ नाहिं॥१॥
ब्याल वरण सौं नित व्यौहार॥ लीयो न आइ ब्रम्ह औतार॥२॥
कंस केस थिर नग्र मझारि॥ नंद जसौदा दीनों डारि॥३॥
देवकी कौ सुत सब जग जाणि॥ बासुदेव सूं नहीं पिछांणि॥४॥
परसराम स्वारथ व्यौहार॥ हरि प्रीतम निर्मल निजसार॥५॥१२॥

राग भैंरू-

सोई जन धनि जो रामहि जाणैं॥
कर्म भर्म कुल काणि न मानै॥टेक॥
तीरथ वरत न वेदहिं गावैं॥ जपैं निरंजन जनमि न आवैं॥१॥
बाहरि जाइ सु जाण न पावै॥ उजड़ अपणू आणि बसावै॥२॥
परसराम आस तजि गावै॥ ताकी दिष्टि परम पद आवै॥३॥१३॥

राग भैंरू-

अंजन भेद भलो वणि आयो॥
अंजन मांहि निरजन पायो॥टेक॥
अंजन मिल्यां निरंजन गायो॥ अंजन विण बोलै न बुलायो॥१॥

कीयो निरंजन अंजन भायो।। बोलै अंजन मांहि समायो ।।२।।
परसा अति संजोग बणायो।। अंजन मांहि निरंजन छायो।।३।।१४।।

राग भैंरू-

राम चरण सुमिरण निरवाण।।
सोई हरि न विसारौं मेरी जीवनि प्राण।।टेक।।
आगम निगम दुहूं तैं न्यारा।। सिंभु सुदरसन प्रान पियारा।।१।।
अविगत नाथ विसंभर देवा।। सहज सुरति मैं जाकी सेवा।।२।।
मूरति अकल सकल मैं वास।। परसराम दरसै कोई दास।।३।।१५।।

राग भैंरू-

राम राम राम राम जपि मन मूढि।।
ऐसो राम विसारि न भव जल बूढि।।टेक।।
तजि व्यौहार कर्म कुल करणी संक्या वाद विषै रस खोइ।।
सम्रथ राम संभारि सबेरा तन घटि गयां कछू नहि होइ।।१।।
अब कैं जो भूल्यौ इहि औसर फिरि फिरि बहुत सहैगौ चोट।।
परसराम प्रभु राम सरण बिन उबरण कूं नाहिं न कोई वोट।।२।।१६।।

राग विलावल-

हरि राम कृष्ण मूल मंत्र **साधै** जो कोई।।
मनसा मन करि मिलाप, **भजिए-**
निज संचि आप, **व्यापै नहीं** त्रिविध ताप, जीवै सुखि सोई।।टेक।।
अचवै सुधा सवोक, निर्मल जल **प्रेम** पोष, व्यापति संताप सोक, ताकै नहिं होइ।।
वोखदि हरि नांव सार, जाकै उरि दुरै विकार, तिरिए भौ जल अपार, देखत गति होई।।१।।
निर्भै निर्वाण जाप, मेटै दुख सुख संताप, संकि तापुर पुन्नि पाप, डारै विष धोई।।
जाकै प्रगट भये अपार, पर्म भाण अति उदार, तहां न तिमिर अंधकार सूझै निसि खोई।।२।।
हरि सम सुख नाहिं और, देख्यौ भ्रम ठौर ठौर, जहां तहां जंजाल जौर, पावक मुखि छोई।।
अकलप घर पर्म नाब, अस्थिर वेसास ठाम, परसराम विश्राम, तामै वसि जोई।।३।।१।।

राग विलावल-

हरि सुमिरन न बिसारिये जपिये मन लाई।।
तनि त्रिविध ताप व्यापै नहीं संसो सब जाई।।टेक।।

हरि विपत्ति व्याधि वेदनि हरै बहु विथा विराम॥ हरि ऐसे उपगार रूप सारण सब काम॥१॥
हरि भर्म भयाण न सरि सकै तन मन कै कैद॥ सब पीड प्रहारै हरे हरी हरि है बड़ वैद॥२॥
हरि सम्रथ आनन्द कंद सोखण सब सोग॥ जरा मरण जम काल आदि त्रास न अघरोग॥३॥
हरि निर्मल निर्मल करै मेटै सब दुख दोष॥ ताहिं विषै विकार न व्यापई सीतल सुख पोष॥४॥
सुमरि सुमरि सब सुद्धरे निर्भै निज नांऊ॥ परसराम प्रभु नांव की हूं वलि वलि जांऊ॥५॥२॥

राग विलावल-

हरि हरि सुमरि न कोई हार्‌यो॥
जिनि सुमर्‌यो तिनहिं गति पाई राखि सरणि अपणी निस्तार्‌यो॥टेक॥
कैरूं सभा सकल नृप देखत सती विपति पति नाऊं संभार्‌यो॥
हाहाकार सबद सुनि संकट तहिं औसरि प्रभु प्रकट पधार्‌यो॥१॥
हरि जिसौ सम्रथ और न कोई महा पतित तिन कौ दुख टार्‌यो॥
करधरि चक्र धस्यौ आतुर होइ ग्राहग्रसित गज आणि उबार्‌यो॥२॥
दीनानाथ अनाथ निवाजन भगत बछल जु बिडद जिनि धार्‌यो॥
परसराम प्रभु मिटै न कबहूं साखि निगम प्रहलाद पुकार्‌यो॥३॥३॥

राग विलावल-

हरि सनमुख जोपै मन रहि है॥
तोपै कहां चिंत करिवे की जो चहियत सोई हरि महि है॥टेक॥
सकल सिद्धि को मूल कलपतर सोई सम्रथ इच्छा फल देहैं॥
मनवांछित पद उच्च अभै सुख हरि कौ दियो फेरि को लैहैं॥१॥
रवि को उदो असह निसि अति हैं आतुर चलत न पलु रहि है॥
त्यौं अघ तिमिर ताप तन मन तजि पद प्रकास परसत दुरि जैहै॥२॥
यह परतीति सत्य सब जाणैं हरि सुख सिंधु न दुख कौ सहि है॥
परसराम प्रभु कौ सेवत जन सो न बहुरि कबहु पछि तैहै॥३॥४॥

राग विलावल-

अब न तजौ हरि पीव कौं मैं प्यासे पायौ॥ हरि अमृत रस प्रेम सौं पीवत मन भायौ॥टेक॥
सो पति मोहि प्यारौ खरौ न अभायौ॥ निमष न न्यारौ सहि सकौं राखूं उर लायौ॥१॥
मैं अपणैं निज प्राण लै हरि संगि लगायौ॥ जाकूं मैं सर्वस दियौ सोई वसि आयौ२॥
हित करिकै दुख हरन कौ तन मन लपटायौ॥ अब न कछु अंतर रह्यौ मन मनहिं मिलायौ॥३॥

गुण बहुत मोहि विसरूं नहीं जु आरति रस पायौ ।। परसराम पर्म हितू हरि जु उर जरत बुझायौ ।।४ ।।५ ।।

राग विलावल-

हरि जी सौं प्रेम नेम जोरहि है ।।
तौ कहा जगत उपहासि प्रीति तैं सरै कहा कोउ कछु कहि है ।।टेक ।।
हरि निजरूप अनूप अभै वरसुवसि भयो ऐसो सुख जहि है ।।
पर्म पवित्र पतित पावन जस सौ तजि कौण सुरगि चढि ढहि है ।।१ ।।
पतिव्रत भयो तौ रह्यौ नहिं कछु वै ऐसी बड हाणि जाणि कौ सहि है ।।
कौंण पतित पति कौ व्रत परहरि भ्रमि संसार धार मैं बहि है ।।२ ।।
आन उपासन करि पति परहरि ध्रिग सोभा ऐसी जो महि है ।।
तजि पारस पाषाण बांधि उरि वसि घर मैं घर कौ को दहि है ।।३ ।।
हरि सुख सिंधु अपार प्रगट जस सेई सुमरि सुणि करि सुख लहि है ।।
परसराम निर्वाह समझि यह तजि हरि सिंघ स्वान कौ गहि है ।।४ ।।६ ।।

राग विलावल-

हरि प्रीतम सौं मन मिल्यौ मिलि मोह लगायो ।। अब हरि तैं बिछुरै नहीं हरि मिलि सुख पायो ।।टेक ।।
पर्म सनेह सदा रहै जो न विसरत विसरायो ।। हरि तजि अनत न भर्मइ जु कहू कौ भरमायो ।।१ ।।
मन हरि सौं मिलि थिर भयो डोलै न डुलायो ।। हरि निर्मल निति नेम तैं भूलै न भुलायो ।।२ ।।
हरि निजरूप अनूप सौं मन मानि लुभायो ।। सेइ सुमरि सुणि सब तिरे जिनि जिनि मन लायौ ।।३ ।।
सरण और हरि सौं कहूं किनहूं न बतायो ।। परसराम प्रभु पतित कौ पावन जु कहायो ।।४ ।।७ ।।

राग विलावल-

हरि पिव सौं मिलि सुख भयो दुख दूरि गवायो ।। सेवत हरि सुख सिधु कौ जु इच्छा फल पायो ।।टेक ।।
तन मन पलटि अभै भयो भै कर्म नसायौ ।। ज्यौ पारस परसत लौंह तैं कहि कनक बुलायौ ।।१ ।।
मैं प्रीतम पर्म सनेह सौं राख्यौ उरि लायो ।। अब न तजौं भजिहूं सदा सु मेरै बसि आयौ ।।२ ।।
अंतरि तजि सर्वस दीयौ दै भलो मनायौ ।। हित करिकैं सेयो हितू सोई मुख गायौ ।।३ ।।
मैं निज अमृत आरति पीयो पीवत अति भायौ ।। सोई हरि रस रसना परसराम लागत न अभायौ ।।४ ।।८ ।।

राग विलावल-

हरि प्रीतम सौं प्रेम कौं नित नेम न छूटै ।। मैं जतन जतन करि प्रीति सौं बांध्यौ सु न खूटै ।।टेक ।।
अति नीकै करि जो लाग्यौ सो नेह न तूटै ।। चित वसि चिंता हरन कै सुवलु करि न विछूटै ।।१ ।।
परम चैन मंगल निधान अचवत न अखूटै ।। ता अमी सिंधु संगति सदा मिलि कैं रस लूटै ।।२ ।।

हरि सदन सदा सुख कौ निवास जस भरि जो जूटै॥ कंचन गिर भीतरि वसै सु पाषाण न लूटै ॥३॥
अति सनेह हरि पीव सौं मन मिल्यौ न फूटै॥ परसराम प्रभु आनन्द कंद तजि को कर कूटै॥४॥९॥

राग विलावल-

हरि प्रीतम सौं जो मिल्यौ सोई मन सारा॥ हरि तैं विमुख जहां लगै सू फूटौ संसारा॥टेक॥
पारस कौं परसत लौह तैं कंचन हूवा॥ सो न पलटि करि लौह होइ जीवै नहिं मूवा॥१॥
पूरै मिलि पूरौ भयो सोइ जाइ न आवै॥ ज्यौं सलिता सुख सिंधु सौं मिलि सैल न भावै॥२॥
सुरति सीप हरि सिंधु मैं सतसंग निवासा॥ नग निर्मोलिक नांव तैं निमज्यौं तहीं आसा॥३॥
निर्मल नित निकलंक सौं सेवत सुख सागर॥ परसा ताकी जोति कौ रहै परकास उजागर॥४॥१०॥

राग विलावल-

मन मोहन सौं जो मिल्यो सोई रहत न राख्यौ॥ सो न पीवै रस तूस कौ जिनि अमृत चाख्यौ॥टेक॥
अति सनेह हरि सौ भयौ सुहरि ही हरि गावै॥ हरि कै रंगि रातौ रहै कछु और न भावै॥१॥
चात्रिग ज्यौं पीव पीड़ करै पीव मिलि सुख पावै॥ आन आस तज जगति की स्वात बूंद बर सावै॥२॥
अति रस लुबध पराग कौं मिलि माहिंन छीवै॥ मधुप कंवल कैं कोस मैं रस पीयां जीवै॥३॥
सब चित वित आधीन होइ प्रभु कै वसि कीयो॥ हरि हित करि अंतर तज्यौ अपणू करि लीयो॥४॥
गांठि प्रेम की जो परी सु कैसे करि खूटै॥ परसा मन गोपाल सौं बांध्यौ सु न छूटै॥५॥११॥

राग विलावल-

श्री मन मोहन के रंगि रंग्यौ सुन जात निचौर्‌यो॥ रगतजै न सो फीको परै झाझै झक झोर्‌यो॥टेक॥
हरि सनमुख जबहिं चल्यो तब मैं न बहौर्‌यौ॥ हरि सौं मिलि सर्वस दीयौ मोतैं मुख मोर्‌यौ॥१॥
पलटि प्रान तहीं कौ भयौ मोतैं चित चोर्‌यौ॥ हरि आधीन कुरंग ज्यौं डोलत संगि डोर्‌यौ॥२॥
जतन जतन करि प्रीति सौं पहिलीं मैं जोर्‌यौ॥ ता पति कौं परति प्रबल भयों तूटत नहिं तोर्‌यौ॥३॥
मन मोहन चितयो नहि उर मैं हून निहोर्‌यो॥ नैन उभै सुख सिंधु ज्यौं आवत न अहोर्‌यो॥४॥
एकमेक पिय प्रेम सौ अंग संग डहोर्‌यो॥ परसा पै पाणी मिल्यौ सु बिछरत न बिंछोर्‌यो॥५॥१२॥

राग विलावल-

हरि पीव विना कासों कहूं मेरे मन की बात॥ बिना परचै पर देश की कैसी कुसलात॥टेक॥
को जाणै मन कौंण कौं दीयो अनदीयो॥ हरि जाणैं कै हरि नहि जैसो जिनि कीयो॥१॥
कीट नींव कौ ईष कै संगि लागि न जीवै॥ जो उपज्यौ रस ईष कै सुजीव न पीवै॥२॥
मन बांध्यौ जा नेम सौ सोई प्रेम पिछाणैं॥ परसा साचन छूटई जो झूठे परवाणैं॥३॥१३॥

राग विलावल-

हरि प्रीतम मोसौं सखी बोलै न बुलायौ ॥ कहा करूं कैसै रहूं मानैं न मनायौ ॥टेक॥
मैं अनाथि आधीन होइ अपभुवन वसायौ ॥ सर्वस लै आगैं धर्‌यौ रीझै न रिझायौ ॥१॥
नीकै करि मैं आपणूं ग्रह भेद बतायौ ॥ सब तन मन धन आदि दै कछुवै न दुरायौ ॥२॥
कवण दोस तैं मौंनि प्रभु कछु कहि न सुनायौ ॥ यहैं बहुत धोखौ दहै जु मैं मरम न पायो ॥३॥
सब सयान निरफल कछु कियौ न करायो ॥ परसराम प्रभु जब लगैं नाहिं न वसि आयो ॥४॥१४॥

राग विलावल-

मन किन करी काहूं सों कहै पेरक होइ पैरै ॥ यहै सोच संसौ सदा जु व्यापै जीअ मेरै ॥टेक॥
देत न अंतर और कूं अपणूं ज्यौही त्यौंहीं ॥ बातैं बहुत बनाइ करि मिलवौ कोई क्यौंहीं ॥१॥
कहै कछू कछुवै करै कोई मरम न पावै ॥ जिसौ वाहरि भीतरि तिसौ कछू कहत न आवै ॥२॥
व्यापक वपु धरि धरि सबै जहां तहां जिनि मोहि ॥ आवत जातन जाणींए सु निधि जात न डोहि ॥३॥
सर्वस सव काहू कौ कहूं जाकै वसि आवै ॥ सुमन सु अंतर आपणूं काहूं कौं न दिखावै ॥४॥
रहै समीप सदा मिल्यौ संगि लाग्यौ डोलै ॥अंति न अतर आपणूं काहूं सो सुन बोलै ॥५॥
परसा प्रभु देखै सुणै बोलै संगि सोई ॥ समझि न कछु ताकी परैं जैसो जो होई ॥६॥१५॥

राग विलावल-

अविगत गति जाणी न जाई काहूं कै कीऐं ॥ अगम अगोचर निगम तैं जु खोजत मन दीऐं ॥टेक॥
अवरण वरण ईहां उहां कहिए जो ऐसा ॥ सेत न पीत न स्याम सो जैसे का तेसा ॥१॥
कोई कैसेहीं कहौ मति कौ उन मानां ॥ ज्यौं पंखी सबलै उडै अपणूं उडाना ॥२॥
उडि जाणैं सोई उडै पांखां कै सारै ॥ गहि राखै न गिराई देई जीतै न कछु हारै ॥३॥
सुरग कबण तैं दूरि है अरु कौणै तैं नीरा ॥ सब काहू कौं सारिखौ तातौ न कछु सीरा ॥४॥
डोलै डिगै न अरु फिरै कहूं न आवै ॥ जैसे कौ तैसो रहै परसा मुख गावै ॥५॥१६॥

राग विलावल-

प्रीतम है वसि प्रीति कै सुन्दरि सु पिछाणैं ॥ ज्यौं दरपण दिस नैणा कै पारिख परवाणैं ॥टेक॥
दिसि मुसि आवै नहीं ऊंचो असमानै ॥ सोइ पाइयत प्रतिबिंब मैं अंतरि आमानै ॥१॥
जलथल कुल व्यापक सबै वरतैं निज आणै ॥ ज्यौं वरिषा रुति जलऊंच कौ गिरि तकै निवाणै ॥२॥
दुरै न वात दुराव की जु करिए मनि मानैं ॥ अंतर की जाणैं सवै हरि खरे सुजानैं ॥३॥
सनमुख कौं सनमुख सदा प्रानन कै प्राणै ॥ परसराम प्रभु मिलन कै सुणि लै सहिनाणै ॥७॥१७॥

राग विलावल-

सुणि पीय तुमहि कहू हित गाथ॥
रामचन्द्र बल बिना जु वल उरि ध्रिग सोई जीवन जनम अकाथ॥टेक॥
जाकै सिव विरंचि से जाचिक ठाढै द्वार पसारै हाथ॥
निगम रटत नित नेत नेत कहि पावत नहिं दरस निज साथ॥१॥
ब्रह्म अगम सोई भयो समागम तेरै भागि प्रकट दसमाथ॥
पर्म उदार चरण चिंतामणि हृदै सुधरि भेटौ भरि वाथ॥२॥
साखि अगिण हूं कहूं कहा लगूं महापतित भजिए सुनाथ॥
परसराम प्रभु अंतरजामी भजिए जौग तिलक रघुनाथ॥३॥१८॥

राग विलावल-

रघुपति हितै हमार तात॥
मनक्रम वचन सत्य करि रसना, गावत सुनत सदा निसि प्रात॥टेक॥
अगम नीर जहां नांव न चालै पंखि न पहुंचै लगै न घात॥
ता जल मैं रघुनाथ नांव तैं देखौ सिला तिरि ज्यौं पात॥१॥
देखि प्रगट कपि भुवन भुवन परि फिरत निसंक न नैक डारत॥
रामचन्द्र वल चपल विचारत गिणत न तोहि पलक पल मात॥२॥
सोई मतिमूढ अज्ञान अंध पसु जाहिं न भावै हरिजी की बात॥
परसराम प्रभु प्रगट विराजत मेरी जीवनि वै सुनि भ्रात॥३॥१९॥

राग विलावल-

सति सति करिकै हरिराम दरस जो पाइये॥
तबही सब आनन्द सुमंगल देखि प्रगट सिरनाइये॥टेक॥
चरण कंवल की रज लै पट सौं अपर्णै कर उर लाइये॥
तन मन सुद्ध होइ पद परसत अरु त्रेताप नसाइये॥१॥
पर्म रसाल सुजस रस रसनां पति कौं गाइ सुनाइये॥
सोई बड़भागि जन्म साफल्य सोई सर्वस दै भलौ मनाइये॥२॥
मनक्रम वचन सत्य करि इत उत चितवन चित न डुलाइये॥
निरखि निरखि निजरूप अनुपम परसा वलि वलि जाइये॥३॥२०॥

राग विलावल-

राजत है रघुपति पुर आवत॥
सोलह कला संपूरण ससि ज्यौं निसि मैं सोभा सिंधु दिखावत॥टेक॥
घर घर के नर नारि बाल सुनि सिमिट सकल सनमुख उठि धावत॥
चन्दन तिलक थाल माला करि कनक कलस आरति वंदावत॥१॥
मिलत भरथ रघुनाथ सौं भ्राथा दरस परस सब जन सुख पावत॥
ब्रम्ह अगम गमि निगम न पावत ताकै लोचन जल वरिखावत॥२॥
अति औसर कपि सेस विचारत महा चरित गति उर न समावत॥
घुरैं सरस निसाण सुमंगल जय जय सुर परसा जन गावत॥३॥२१॥

राग विलावल-

उर व्रत धरि करि मन राम सुजस जो गाइये॥
तब ही सब आनन्द सुमंगल मन वंछित फल पाइये॥टेक॥
भजिये हरि हरि हरि आरति करि पुनरपि जनमि न आइये॥
रहिये चरणि सरणि सम्रथ की भ्रमि जमलोकि न जाइये॥१॥
जहां वैसे सिरमौर सिरोमनि तही वैकुंठ बसाइये॥
भव संकट कारणि हरिपुर तैं बहुरिन फैरि पठाइये॥२॥
तहां निर्भै सदा काल भय नाहिं अभै सरणि सिर नाइये॥
रहिये प्रेम सिंधु मिलि परसा हरि अचवत न अघाइये॥३॥२२॥

राग विलावल-

राम सुमरि सचु पाइये सुमरै जो कोई॥ काल कर्म की चोट तैं उबरैं जनसोई॥टेक॥
ऐसी कहिये कौण सौं को कहि न मानैं॥ मानैं जो जाकौ गुर मिल्यौ निगुरौ कहा जानैं॥१॥
मन न भजै साचै मतै झूठौ मत ढाणैं॥ अपणौं पिंड न खोजई ब्रह्मंड बखाणै॥२॥
दाता भुगता कोण है तिरि है को तारै॥ जात बह्यों भौ सिंधु मैं आपौ न संभारै॥३॥
आप संभारै सोतिरै बूडै पर आसा॥ परसा आसा वसि भये न मिलै हरि दासा॥४॥२३॥

राग विलावल-

ऐसे क्यौं हरि पाइये मन चंचल भाई॥ चपल भयो चहूं दिसि फिरै राख्यौ न रहाई॥टेक॥
मैं मेरी छूटै नहिं करता गुण बीध्यौ॥ काम क्रोध को ध्यान लै विष सौं रचि रीझ्यौ॥१॥
डिंभ मोह माया वसूं आधीन बडो बंधायौ॥ आस लबधि परवस पर्‌यौ पति छांडि बिकायो॥२॥

का पूजा परपंच की देखै रु दिखावै॥ का जप तप वेसास विण व्रत तीरथ न्हायैं॥३॥
अनत कला काछै कछै बहु स्वांग दिखावै॥ मूरख आप न समझई औरनि समझावै॥४॥
कहा तिलक छापा दिये नाचै अरु गावै॥ आवा गवण न जाइहै भरम्यौ भरमावै॥५॥
मूंड मूंडायो तौ का भयो तन पहरि माला॥ अंतर कपट न छूटई कां बसै गोपाला॥६॥
कहा कथा कविगुण कहै जो तत्त्व न जाणैं॥ आपा पर एक आतमा परतीति न आणैं॥७॥
गायैं सुणैं न सुख भयो अरि मिटैं न भै सो॥ भीतरि भिद्यो न सुख लह्यो जैसे को तैसो॥८॥
आस करै बैकुंठ की मनकी नहीं छूटि॥ जबलग मनवो वसि नहीं तबलग सब झूठि॥९॥
कपट कियां रीझै नहीं करता नहीं काचौ॥ परसराम प्रभु तौ मिलै जो होई मत साचो॥१०॥२४॥

राग विलावल-

साच पियारो पीव कूं झूंठैं न पतीजै॥ झूंठे तैं न्यारौ रहै सांचे सौं धीजे ॥टेक॥
परम सुजान ज्यौं हरि हंसि कंठि लगावै॥ तिहिं परचै हरि पीव कौ सेवक सुख पावै॥१॥
खरि कसौटी जो सहै सहि करि जब सीझै॥ तब कब हूं ता प्राण सौं हरि प्रीतम रीझै॥२॥
पूरै पूरौ ऊतरै कसतां कसि पूजै॥ सो निरमौलिक निपज्यो नग नांव कहीजै॥३॥
साहिब दरी खोटो खरो विण कस्यो न छूटै॥ सिरी सहै धमक निसंक होई हीरो सु न फूटै॥४॥
काच कथीर न सहि सकै कसणी जो काचौ॥ जतन करत ही विणसी जाइ पति सौं नहीं साचौ॥५॥
सब काहू को पारिखूं पारिख सब साधै॥ परसराम परख्यां बिना तौ प्रभु गांठि न बांधै॥६॥२५॥

राग विलावल-

सांच कहत कित मारिये सोचौ जिय मांहिं॥ जब लग लज्या लोक की तब लग ल्यौ नांहिं॥टेक॥
देव अगनि को को भये नाहिंन अनदेही॥ देह अगिन अण भै रचै ल्यौ राम सनेही॥१॥
बांधै भर्म विकार सौ दीसै भै मांही॥ मन तजि मन हरि सौ रमै तांकौ भै नाहीं॥२॥
कर्म भर्म आधीन होइ हरिसौं न पत्यारो॥ हरि आधीन न दीन होइ दुनिया तैं न्यारो॥३॥
मूआं स्वारथ सब मिटै जीवत साध न होई॥ कर्म भर्म आसा तजै परसराम जन सोई॥४॥२६॥

राग विलावल-

जब कबहूं मन हरि भजै तबहि जाई छूटै॥ नौतरि जग जंजाल तैं कबहूं न बिछूटै॥टेक॥
काम क्रोध मद लोभ सौं बैरी सिर कूटै॥ हरि विण माया मोह कौ तंतूर न तूटै॥१॥
हरिख सोक संताप तैं निज नेह निखूटै॥ हरि निर्मल नीर न ठाहरै मनि वासणी फूटै॥२॥
सोच पोच संसौ सदा सर्पिणि ज्यों चूंटै॥ परसा प्रभू विण जीव कौ दुख सुख मिलि लूटै॥३॥२७॥

राग विलावल-

राम बिना कौ राखि है सरणै मन मेरे।। भूलौ कित जंजाल मैं सुमिरत नहीं चेरे।।टेक।।
जै सुमिरै सुख कारणे भीर परयां टेरे।। नाहिं छुडावत कौ हितू सुमिरे बहुतेरे।।१।।
अंति कालि संकट परयां देखत जम घेरे।। सजन कुटुम्ब सुत सुन्दरि आवत नहिं नेरे।।२ ।।
छांडि कपट भजि नरहरि मेटै भ्रम फेरे।। परसराम जग जनम बंध काटै प्रभु तेरे।।३।।२८।।

राग विलावल-

घरि गोपाल न देखई बाहरि कित धावै।। रे मनसा मन मूरखा तौ कौ बोरावै ।।टेक।।
अह ममता तोकौ दहै तेरी नहीं ठौरै।। तूं जाणत कहूं दूरि है करता कोई औरै।।१।।
त्रिकुट कोटरी क्यौं रहै आवै ताहिं मारै।। मारि कहूं पठवै नाहिं अपणूं करतारै।।२।।
कलि जुग है घर काल कौ द्वापर भरमावै।। त्रेता गुण तीनौं मिटै सत जुग सुख पावै।।३।।
जाणत है जग की सबै जग नाहिंन जाणै।। भूलि रहै भौ मैं सबै कोई दास पिछाणै।।४।।
दीसै सब मैं सारिखौ खोजै सब पावे।। परसराम प्रभू निकसत है निसांण बजावै।।५।।२६।।

राग विलावल-

अब मोहि राम आस तेरी।।
नाहिंन आन उपाय आसिरौ तो बिन देव सकल हेरी।।टेक।।
तू ही दाता तूही भुगता तू पूरण सब माया है तेरी।।
तारण तरण सकल कौ करता तूं सम्रथ जीवनि मेरी।।१।।
तो बिन ठौर नहीं मो जन कौं तीनौं लोक दई फेरी।।
परसराम प्रभु तुम चितवन रहौ दुविध्या जिन आवै नेरी।।२।।३०।।

राग विलावल-

उत्तम कुल तैं का सरयो जो राम न भावै।। तातैं सुपचि सिरोमनि जु गोपाल ही गावै।।टेक।।
साखि महामुनि वेद व्यास विध्या अधिकारी।। तन की तपति तबै गई जब फेरी विचारी।।१।।
छाडि भर्म अहंकार भार नारद गुर किया।। करि सेवा तन मन दीया निर्भै निज लिया।।२ ।।
और सूनूं सुखदेव कौ तपकुल अभिमानी।। आई विदेही गुर कियौ तब तैं गति जानी ।।३।।
व्याध गीध पसु पांखि साखि सुमिरत गति पाई।। परसराम हरि विण पवित्र मिथ्या चतुराई।।४।।३१।।

राग विलावल-

हरि सुमिरण बिन तन मन झूंठा।।
जैसे फिरत पसू खर सूकर उदर भरत उंदर भ्रमि बूठा।।टेक।।

अकर्म कर्म करत दुख देखत मद्धिम जीव जगत का झूठा।।
निर्धन भये रामधन हार्यौ माया मोह विषै मिलि मूठा।।१।।
हरि सुमिरण परमारथ पति विण जमपुरि जात न फिरत अपूठा।।
परसराम तिनसौं का कहिये ज्यो पारब्रम्ह प्रीतम सों रूठा।।२।।३२।।

राग विलावल-

नरदेही धरि हरि न कह्यो जो।।
धिग जीवन जग जनम गंवायो भौसागर भ्रम धार ब्रह्यो जो।।टेक।।
देखि विभव विस्तार अलप सुख अभिमानी मन मगन भयो जो।।
माया मोह विलास विषै सुख पावक परि तन प्राण दह्यो जो।।१।।
कनक भुवन नृप राज महावल है गै बदी करत गयो जो।।
मानूं वसत भुजग सदा निसि नीर बिनां वनि कूप ढह्यो जो।।२।।
अति अहंकार विकार आप वलि गायो सुण्यौ न सुजस लयो जो।।
परसराम भगवंत भजन बिन अनुग सहित जम लोकि गयो जो।।३।।३३।।

राग विलावल-

गर्व न राघौ सहि सकै गर्वो जिन कोई।। उलट पलट छिन मैं करै मैं कीया न कोई।।टेक।।
सुर्ग धरै धर ऊपरै धर सुर्ग चढावै।। मन मानैं त्यौं प्रेरवे बहु नाच नचावै।।१।।
धन जोवन कुल संपदा असपति अधिकारी।। गर्वहि रावण बहि गयो कंचन पुर हारी।।३।।
गाफिल होइ न सोईये मुसिये घर सारा।। भोर भयां पछताइये जब होइ उजारा।।३।।
हरण करण जाणैं सबै अन्तर जामी।। परसा सो न विसारिये हरि सम्रथ स्वामी।।४।।३४।।

राग विलावल-

बल औतार स्याम सुखदाइक।।
पूरब प्रीति संभारि नंद की भगति हेत जसोदा वसि आइक।।टेक।।
उधौ कुबिजा अक्रूर देवकी अग्रसेन वसुदेव मनभाइक।।
संकित असुर कंस कुल जीय मैं आयो काल निकटि न सुहाइक।।१।।
घर घर मंगलाचार बधाई नरनारी गावै जस वाइक।।
परसराम प्रभु कृष्ण कंवल दल मथुरा प्रगटै वैकुंठ नाइक।।२।।३५।।

राग विलावल-

अघ तिमिर दूरत हरि नांव तैं।।

ज्यौं रजनी चलिवे कौं चंचल थिर न रहत रवि धाम तैं ।।टेक ।।
सुमिरण सार प्रगट जसु जाकौ भवतारण गुण ग्राम तैं ।।
जामण मरण विघन टारन कोई और नहीं बड राम तैं ।।१ ।।
कलह केलि कुल काल कलपना कटत कलपतर छाम तैं ।।
मिटत दुरित दुर्वास दुसह दुख सुख उपजत अभिराम तैं ।।२ ।।
पतित पतित पावन पद परसत छूटत छल बल काम तैं ।।
तन मन सुद्ध करण करुणामय नर निर्मल निहकाम तैं ।।३ ।।
हरि हरि हरि सुमिरन सोई सुकृत बिरकत मतधन धाम तैं ।।
असरन सरन प्रेम रत जन कौं करण अरिति भ्रम भाम तैं ।।४ ।।
हरि सुमिरै ताकौं भै नाहीं निर्भै निज विश्राम तैं ।।
लिपै नहीं संसार सु परसा अधिकारी जल जाम तैं ।।५ ।।३६ ।।

राग विलावल-

जाको हरि जी कौ नांउ न भावै रे।।
उलट्यौ जाइ नदी कै जल ज्यौं जग मिलि जनम गंवावै रे ।।टेक ।।
हरि जी के नाव सुन्यां दुख उपज्ये आन भज्यां सुख पावै रे ।।
आपण बिगरि बिगारै और निमत्ति भर्म्यौ भरमावै रे ।।१ ।।
गर्व संकट संसार धार मैं आवत जात विकावै रे ।।
सूकर सर्प स्वान खर पसु की अगिन जूणि फिरी आवै रे ।।२ ।।
जम की त्रास भौ काल पास तैं हरि बिण कौन छुडावै रे ।।
परसा प्रभु बिण अंत जीव सुभीर परयां पछितावै रे ।।३ ।।३७ ।।

राग विलावल--

हरि जी कौ नांव भज्यौ मोहिं भावै।।
मन क्रम वचन सत्य करि रसना हरि हरि सुमरि सुमरि सुख पावै ।।टेक ।।
भगत वछल भै हरण भगत वंस भौ तारण भौ पार पठावै ।।
पतित पार कर कृपा सिंधु सो कृपण पाल गौपाल कहावै ।।१ ।।
असरण सरण अनाथ बंधु हरि अधम उद्धारण बिड़द बुलावै ।।
दीन बंधु दातार दयानिधि सुनि सोभाग भरोसो आवै ।।२ ।।
तिरत काठ पाषाण नांव तैं नर न तिरै क्यौं जो हरि गावै ।।

परसराम हरि दीपग उर धरि साखि संत मुनि स्मृति बतावै ॥३॥३८॥

राग विलावल--

हरि जी कौ नाम कबहूं न तजिये॥

मन क्रम वचन अविसर रसुनां निसि वासर गोविंद ही भजिए॥टेक॥

जठरा अगनि जरत जिनि राख्यो सो परहरि आन ही कित रजिए॥

रहिये सरणि सदा सुखतर की पावन प्रेम रजा सौं गजिए॥१॥

भौ सागर दुस्तर हरि तारग साखि प्रगट सुणि सुणि सुख सजिए॥

हरि सम्रथ सुखमूल कलपतर ताहि बिसारि न औरहि जचिए॥२॥

निर्फल जाण सयाण विभै बल और सकल बकवौ बेकजिए॥

असरण सरण पतित पावन जस परसा ताहिं न गावत लजिए॥३॥३६॥

राग विलावल--

हरि विण घर सोभित जैसे कूंवा॥

भगति नीर बिन सूनि सदा निसि संसौ साल सोक निधुवा ॥टेक॥

तामाहि वसत भुजंगनि भामनि सपलेटक छोटकते जुवा॥

विषै विकार भरे नखसिख लौं अक्रम कर्म कर्ण कौं हुवा॥१॥

अति भयभीत रहत निसवासर घर मही नर विलावसि सुवा॥

सदा दुखि सुख लहत न कबहुं घर घर करि पापी पडि मुवा॥२॥

फूलै फिरत असोम अलखै निर्फल कड़बेलि के फुवा॥

उपजि खिरत बहूवार जगत मैं ज्यौं तरवर के पके पतऊवा॥३॥

विणसि जात विश्राम विमुख सब क्यौं सुधरत नाहिंन हरिदुवा॥

परसा प्रभु कौं भजि न सकत सठ कहि [illegible] मर हुवा अण हुवा॥४॥४०॥

राग विलावल--

हरि अमृत रस रोग कौं हरता गुरि दीयौ॥

सिव सेस आदि सनकादि साखि जिनि जिनि रस पीयौ॥टेक॥

सब सुमिरण कौ सार सो सुक नारद भाख्यौ॥

हरि नांव कह्यो तिण सब कह्यो कहिवै न कछु राख्यौ॥१॥

यज्ञ जोग जप तप तुला तीरथ व्रत न्हाहिं॥

हरि नाम बराबर दैन कौ दूजो कोइ नाहिं॥२॥

जदपि बडो वैकुंठ है सोई हरि मांहिं॥ हरि हरि कहै सु हरि मिलै वैकुंठ न जाहिं॥३॥
हरि पारकरण संसार तैं तारण सुख नामि॥ ऐसे-प्रभु कौं परि हरै सोई है लूण हरामि॥४॥
हरि निहकर्म जहां बसे तहां कर्म न लागै॥ परसराम पावन सदा जो हरि सों मिलि जागै॥५॥४१॥

राग विलावल--

विप्र कर्‌यो तौ का सर्‌यौ सुचि साच विहिणूं॥ विषय लीपति सोई आतमां डोलत हरि हीणूं॥टेक॥
हरि तैं विमुख सदा रहै हरि नांव ऩ जाणैं॥ हरि जन की निंदा करै मुख आन बखाणैं॥१॥
न्हायो धोयो सुचि भयो निर्मल होइ आयो॥ घर मैं सुद्राणी वसै ताके करि खायो॥२॥
काछाने ज़ल मंजन कहै गाई श्री कैसी॥ जग्यो पवित्र न आदरै पतनि सब जैसी॥३॥
खान पान तिन मैं सदा भीटे सब भांडे॥ परसा चाल गंवार की तौ काहे कै पांडे॥४॥४२॥

राग विलावल--

विप्र जनम सब तैं भलो जो हरि फल लागै॥ हरि लीव लीण सदा रहै जु संसारहिं त्यागै॥टेक॥
हरि जप हरि तप व्रत हरि तीरथ न्हावै॥ हरि तजि कर्म न भर्मई सोई विप्र कहावै॥१॥
द्वादश अर्द्ध सदा करै अष्टार्द्ध जानी॥ सष्टार्द्धन परहरै विप्रा सबमानी॥२॥
हरि सेवा सुमिरन करै और न करि जाणैं॥ ब्राह्मण सोई परसराम जो ब्रह्म पिछाणै॥३॥४३॥

राग विलावल--

वैद कहा जो विथा न बूझै॥
करि न सकै उपचार और कौ जीवनि जडी नजीक न सूझै॥टेक॥
कछुवै कहैं करै कछु औरैं वोषधि व्याधि संग नहीं साथौ॥
अड़क वैद नाड़ि सुम्रति विण जो दूखै पेट पपोलै माथौ॥१॥
नाभि वसत मद मृग निकस्यो भजिलीनूं मानि भर्म भरिवाथौ॥
भज्यौ सकल संसार आस धरि तज्यौ नाथ भर्मि भयो अनाथौ॥२॥
उद्र उपाई करत पापी पसु भगति विमुख डार्‌यो हरि हाथौ॥
परसराम परचै विण पाणी ताकौ जीवन जनम अकाथौ॥३॥४४॥

राग विलावल--

बात विचारौ सांच की दिल मैं जो आवै॥ दिल आइ दुख कौं हरै दूजी न समावै॥टेक॥
मुसलमान खतने कियां ओरति हींदवानी॥ उजूकल मैं खतनैं बिनां क्यौं मुसलमानी॥१॥
उनि काटि पठायो क्यौं नहीं जु ग्रभ मैं हौ पासा॥ हरि हिंदु करि पठ्यो यहां तुम काट्यो किहि आसा॥२॥
सुनति [illegible] दे[illegible] कौ करि कै कहा कीनूं॥ जो हरि प्रेरक प्रान कौं सोई हेरि न लीनूं॥३॥

साहिब मानैं सांच की करणी जो करिये॥ जूठि करणी परसराम करी पार न परिये॥४॥४५॥

राग विलावल--

साची करणी बिनकरै करतां न पतीजै॥ काची कौ मानै नहीं तौ काहे कौं करीजै॥टेक॥
जीव दया दिल मैं नहीं भावै मद मांसा॥ चाहै भिस्ति खुदाय पैं मोहि आवै हांसा॥१॥
पकडि मंगावै जीव तौं मृतक कर खांहि॥ जौर जहर जगदीश सौं करि दोजिग जाहि॥२॥
आपण मारै हक कहै हरि हथि हरामा॥ जिवा अरथ जु कारणै बडे बेकांमां॥३॥
हक हलाल बिना सबै निर्फल जो करिये॥ कर्म अनाहक परसराम करि दोजगि परिये॥४॥४६॥

राग विलावल--

जो हरि नांव न बीसरैं सुमिरै सुमिरावैं॥ मनसा वाचा कर्मना हरिकौ सोई भावै॥टेक॥
हरि लिवलीण सदा रहै हरि सौं मन लावै॥ हरि परहरि दिस और कौ मनसा न डूलावै॥१॥
हरि हरि हरि हरिदै धरै धरि ध्यान लगावै॥ हरि निर्भै पद पाइकै भव मांहिं न आवै॥२॥
हरि सेवा सुमिरण करै हरि कै गुण गावै॥ हरि हरि भजत न भूलई हरि पुर सोई पावै॥३॥
सोभा नर औतार कौं हरि कौं सिर नावै॥ हरि सौं प्रभू तजि परसराम पदई न लजावै॥४॥४७॥

राग विलावल--

सेवा श्री गोपाल की मेरे मन भावै॥ मनसा वाचा कर्मणा याही मन आवै॥टेक॥
करि दंडोत सनेह सौं सनमुख सिर नावै॥ लोचन भरि भरि भाव सों हरि दरसन पावै॥१॥
हरि चरण कंवल हिरदै सदा थिर अणि बसावै॥ प्रेम नेम निहचौ गहै मन दै लिव लावै॥२॥
उमगि उमगि आनन्द सौं हरि कै गुण गावै॥ यौं प्रसाद फल परसराम जो हरि भगत कहावै॥३॥४८॥

राग विलावल--

हरि अमृत रस प्रेम सों प्यासौं जो पीवै॥ सो न मरै अस्थिर सदा जुग जुग जन जीवै॥टेक॥
परम पवित्र सुनाम तैं सुमिरैं सुख पावैं॥ सो न डरै जम काल कैं सिरी ताल बजावैं॥१॥
नर पावन सद गति सदा सुमिरै हरि सोई॥ हरि आसा तजि आन कौ आधीन न होई॥२॥
सूझै सकल सनेहियां सम्रथ सुखकारी॥ तिमिर हरण हिरदै वसै व्यापक वनवारी॥३॥
लिपै नहीं संसार सौं सब तैं निरभारा॥ साखि प्रगट जल जाम ज्यौं न्यारे तैं न्यारा॥४॥
जग पंडित दातार सूर कविराज कहावै॥ हरि लिवलीण गुलाम कौं सबहि सिर नावै॥५॥
सोई कुलीण उत्तम सदा निरमल बडभागी॥ परसराम हरि नाम सौं जाकी ल्यौ लागी॥६॥४९॥

राग टोडी--

मन हरि भजि हरि भजि हरि भजि लीजै॥ हरि सुमिरण मन विरंबन कीजै॥टेक॥

हरि सुमिरण बिन दादि न आगै।। हरि तैं विमुख भयां जम लागै।।१।।
ज्यौं दर्पन सुख अंध न देखै।। यौं हरि विण जनम अलेखै।।२।।
हरि सुख मूल भज्यां दुख छीजै।। परसा हरि अमृत रस पीजै।।३।।१।

राग टोडी--

हरि गावत सुमिरत फल नीकौ।। जीवन जनम सफल ताही कौ।।टेक।।
हरि नर कौं सुख नाक सखी कौ।। नाक बिन आभूषण फीकौ।।१।।
पहुप पराग पियां सुख फीकौ।। परसा हरि भजिए सोही टीकौ।।२।।२।।

राग टोडी--

जो न भज्यौ नांव हरि जीकौ।। तौ हरि विण जनम अकारथ जीकौ।।टेक।।
ज्यो विकल जीव संगि बुद्धि भ्रमि कौ।। सोच न उपजत समझि गमि कौ।।१।।
रुचि करि अचवत ऊस जमी कौ।। डारत कर तैं कलस अमी कौ।।२।।
परसा तन सुमिरण बिन फीकौ।। तन वर हरि भजिए सोई नीकौ।।३।।३।।

राग टोडी--

जाइये न आइये आइये न जाइये।। हरि सेवा सुमिरन मन लाइये ।।टेक।।
हरि ल्यौ लीन भयां सुख पाइये।। हरि परहरि मनसा न डुलाइये।।१।।
हरि निर्मल नांव निरंतर गाइये।। परसा प्रभु भजि प्रेम समाइये।।२।।४।।

रोग टोडी--

गावहिं तौ मन रामहिं गाई।। राम बिना चित अनत न लाई।।टेक।।
राम सुमंगल पद निर्वाण।। जा घटि बसै सत्य सोई प्राण।।१।।
नर सोई जो राम ल्यौ लीण।। राम विमुख तांकी मति हीण।।२।।
राम संजीवणी मंत्र अधार।। परसराम प्रभु हरण विकार।।३।।५।।

राग टोडी--

राम सुमिर मन रामहिं गाइ।। राम बिना नहीं आन सहाइ।।टेक।।
अपमारग तजि विषय विकार।। हरि हरि भजि केवल निजसार।।१।।
कर्म उपाय न करि भ्रम और।। राम बिना झूंठि सब ठौर।।२।।
राम समान मित्र नहीं कौंई।। परसा प्राण जीवन धन सोई।।३।।६।।

राग टोडी--

राम विसंभर तेरा नाऊ।। सिर ऊपर राखौं बलि जाऊ।।टेक।।

पायौ निकट परम सुख ध्यान।। सीतल सिंधु भरयौ अमान।।१।।
राखौ सरण सकल के धणी।। अबकै मोहि तौही निकै बणी।।२।।
भागौ जिन मैं नाहीं देऊ जाण।। परसराम प्रभू तेरी आण।।३।।७।।

राग टोडी--

सीतल रुति राख्यौ विस्तार।। उनयौ सघण अणंत नहीं पार।।टेक।।
बरिखै ब्रम्ह अमीरस झरै।। पीवै सु जीवै दूजा मरै।।१।।
पीवण हार मरै नहीं सोई।। जो पीवै सो निर्भै होई।।२।।
परसराम रूप वलि जाऊँ।। सरस महारस प्रेम समाउं।।३।।८।।

राग टोडी--

हरि ठाकुर करता केसवा सब जीव जीवनि देव नर हरी।।टेक।।
ताकूं जपूं सकल की जिन करी।। अधर धरनी अधकर लै धरी।।१।।
पवन थंभ दै रच्यौ अकास।। आप निरन्तर अंतरि वास।।२।।
तीन लोक जाकै मुख माहिं।। सेऊ ताहिं अबर कौ नाहिं।।३।।
परसराम प्रभु राम अपार।। खोजत खोज न आवै पार।।४।।९।।

राग टोडी--

हरि हरे हरि हरि हरे हरि।। हरि दरसिये नैण भरै भरि।।टेक।।
हरि कौ रूप अनुपम देखिये।। जीवन जनम सकल करि लेखिये।।१।।
नेम धरैं हरि प्रेम सौं गाइये।। परसा हरि भजि भगत कहाइये।।२।।१०।।

राग टोडी--

हरि गाइ बरि कब गावैगा।। ऐसी सौंज बहुरि कब पावैगा।।टेक।।
जो हरि नांव न गावेगा।। तौ जनम जनम दुख पावैगा।।१।।
नाच बहुरि कब नाचैगा।। यह गइ कहां लगी सौचैगा।।२।।
निज साज दीयौ करि सुपद बजाइ।। भयौ कुसाजि तब कछु न बसाइ।।३।।
वैगि विचारि समझ मन मांहि।। परसा विरब कीयां सुख नाहिं।।४।।११।।

राग टोडी--

मन हरि भजि हरि भजि हरि भाई।। तजि रे निर्फल गर्व गुमान बडाई।।टेक।।
कितियक दौर आवतौ आई।। काहै कौ सिर लैत बुराई।।१।।
पारि परसी कैसे हीण कमाई।। सूधौ चालि हरि की सरणाई।।२।।

पर हरि आन चरित चतुराई।। परसा प्रभु सौं करि मित्राई।।३।।१२।।

राग टोडी--

श्री गोपालहि गर्व न भावै।। गर्व प्रहारी विरह बुलावै।।टेक।।
गर्व कियां हरि दरस दुरावै।। दीन भयां हिरदै हरि आवै।।१।।
हिरणकसिपु उर गर्व जरावै।। इहां इन्द्र प्रहलाद कहावै।।२।।
गर्व ही रावण घरहिं गंवावै।। दीन वभीषण लंका पावै।।३।।
गर्व करै सोई बुरो दिखावै।। साखी सगी ससिपाल सुणावै।।४।।
परसा गर्वि न कोई सुख पावै।। दुरजोधन गुन विदुर बतावै।।५।।१३।।

राग टोडी--

हरि है एक अवुर नाहिं कोई।। दोही कहैं दोजगि मैं सोई।।टेक।।
बाहरि भीतरि अंतर जामी।। व्यापक एक सकल कौ स्वामी।।१।।
पूरी दिसि तहीं हरि पूरा।। दिसी हीण सोई कहै अधूरा।।२।।
परसराम प्रभू अंतरि बोलै।। सोई देखै जो अंतर खोलै।।३।।१४।।

राग टोडी--

अंजन माहिं निरंजन सूझै।। तब हरि सुख कौं कोई यक जन बूझैं।।टेक।।
निराकार आकार समाणा।। ज्यौं पावक कासठ पाषाण।।१।।
मथि काड्यां तैं बाहरि आवै।। जागि लगै तब कर्म जरावै।।२।।
अपणैं रंगि मिलवै भजि घरि सौं।। परसा हूंसि परसत जन हरि सो।।३।।१५।।

राग टोडी--

हरि मारग चालत भै नाहीं।। हरि विण और सकल मैं माहीं।।टेक।।
हरि मारगि चालत जन छूटै।। हरि बिण जीव सकल जम लूटै।।१।।
पाखन पंथ सकल सुख कारी।। जो चालै तिनकी बलिहारी।।२।।
हरि मारग सब की निसरणी।। परसा जन पावन हरि करणी।।३।।१६।।

राग टोडी--

दाता हरि दातार सौं दूजौं कोई नाहिं।। दाता भुगता और जौं सबही हरि माहिं।।टेक।।
भव विरंची जाचिग जहां सुर वती सुरस वही।। और नराधिक जीव जन्तु जाचै अब तब ही।।१।।
जल थल व्यापक सबै अरु सब ही कौं पूरै।। ताकौं सेवग और न कोउ तकै क्यौं झूरै।।२।।
तन मन धन दाता हरिदै दूरि न होई।। सब कौं पालै पोष दैं परसा भजि सोई।।३।।१७।।

राग टोडी--

हरि सुमिरण करिये निसतरिये।। हरि सुमिरण बिन पार न परिये।।टेक।।
हरि सुमिरै सोई हरि नाती।। हरि न भजै सोई आतम घाती।।१।।
हरि सुमरै हरि कौ हितकारी।। हरि न भजै सोई विभचारी।।२।।
हरि सुमरै सेवग सुखनामी।। हरि न भजै सोई लूण हरामी।।३।।
परसा हरि सुमरै हरि सोखी।। हरि न भजै सोई हरि दोषी।।४।।१८।।

राग टोडी--

जो कछु हुतौ भयौ फिरि सोई।। यह अचरज जाणै जन कोई।।टेक।।
तजि वियोम घर बूंद कहाणी।। सोई सिंधु मिली पाणी कौ पांणी।।१।।
पलटि भयो पांणी तैं पालौं।। पालौं प्रघलि नीर निरवालौ।।२।।
हरि न मिलै सोई उरवारा।। हरि अपार पाइ सोइ पारा।।३।।
परसा आप जाप कर बूझै।। आप मिट्यां आप सोई सूझै।।४।।१६।।

राग टोडी--

जीवन भयो पापी अपराधी।। भूलि गयो हरि भगति न साधी।।टेक।।
हरि उपकार कियो सु न मान्यौं।। आन धर्म आदरि उर आन्यौ।।१।।
और कर्म सीख्या सुणि लीनां।। तैं राम विसारयौ क्यौं मतिहीनां।।२।।
हरि गुण कियो सु हृदै न आयो।। औगम सौं भ्रमि जनम गंवायो।।३।।
पाथर नांव भरि लैहि भारै।। परसा प्रभु विण कौं भव तारै।।४।।२०।।

राग टोडी--

मति सोई जु हरि कै रंग राची।। हारे न भजै सोई मति काची।।टेक।।
हरि सौं मिलि मति होत न पाछी।। मति हरि सौं मिलि रहत अति आछी।।१।।
तन मन मगन प्रेमरस माची।। मति सद्गति जु काल तैं वाची।।२।।
परसराम सोही मति सांची।। हरि पैं जाइ भगति जिनि जाची।।३।।२१।।

राग टोडी--

हरि सुमिरै ताहि कर्म न लागै।।
लिपै नहीं फलु पाप देह तैं हरि कौ नाम सुनत ही भागै।।टेक।।
हरि निहकर्म कर्म कौ पावक सहि न सकै जारै जग जागै।।
साखि प्रगट सब संत कहत मुखि पतित भयै पावन सुनि आगै।।१।।

प्रिथक न होत रहत हरि सु मिलत यौं हरिजन ज्यौं पहूप परागै ।।
संकित जम सारिख सब दोषी देख्यौ दिसि उजागर दागै ।।२ ।।
जो निर्मल करै सकल मल सोखै इसौ अमृत अचवत अनुरागै ।।
परसराम हरि सुमिल सदा सोई नर औतार तिलक बड भागै ।।३ ।।२२ ।।

राग असावरी--

प्यारे प्रीतमावे। प्रीति न तौ भजै वे ।।
मैं तेरी पीआवें ।। तू मोहि जिनि तजै वे ।।
पीव सरणै बिनावे ।। कैसी सुख लहूं वे ।।
पंचा मिलि मुसेंवे ।। तौ विण दुख सहूं वे ।।
दुख सहूं तो विण प्राण प्यारे राखि मोहि सरणै पीया ।।
मैं अनाथ अनाथ बधू तौ बिना धृग धृग जीया ।।
जल बिनां क्यौं मीन जीवै तलफि करि तन मन तजै ।।
यौं तौ मिलन कौं प्राणपति मेरी प्रीति तोकौं भजै ।।विश्राम ।।१ ।।
साच वचन तुम्हांवे ।। सुन्दरि सुणि कहूंवे ।।
मैं परदेशी यावै ।। उदासीन हरि हूं वे ।।
तू मोहि न मतै मिलि वे ।। तौ तू का सगी वे ।।
तैं मोहि प पिछांणिया वे ।। प्रीति न तोलगी वे ।।
यक लागि प्रीत न तैं पिछाण्या प्राणपति प्रीतम कहीं ।।१ ।।*
तसमात खरे उदास तुम तैं तून कछू मेरी सगी ।।
मैं वस्यौ अंतरि तै न जाण्यां प्रीति तौ सौ ना लागी ।।विश्राम ।।२ ।।
मैं हूं सगुणि वै ।। निगुणां संगि रहूं वे ।।
गुण धर तैं करि वे ।। सुतौ गति ना लहूं वे ।।
मेरै औगुण जिन धरो वे ।। तू दरिया सो भरावे ।।
मैं न कछू पिया वे ।। तू अपरम परा वे ।।
अपरम पार अपार अविगत अकल ताकूं कौ कलै ।।
अन भैं अनंत न अंत आवै संगि रहै सबकूं छलै ।।

---

* पद में एक चरण न होने से अधूरा है ।

ऐसौ विनांणी बड विधाता भेद छेद को लहै॥
श्रगुण के घरि वसै निर्गुण जाति पांति न कुल कहै॥विश्राम॥३॥
मेरे अंतरि जामीयां वे॥ जन न भुलाइए वे॥
मेरे औगण मेटि कैं वे॥ संगि लगाइए वे॥
मैं संगि तरंगणि वे॥ तोहि मैं रहूं वे॥
तू दरिया देखिये वे॥ पार न परि लहूं वे॥
लहूं न पार अपार दरिया अगम गति त्रिभुवन धणी॥
तू ब्रम्ह है मैं हूं छांह तेरी मोहि तोहि अब नीकै वणी॥
मैं सुवौ मैं तू समायौ मोहि तोहि अंतर नहीं॥
परसराम प्रभुराम दरिया दास की मानूं कहीं॥विश्राम॥४॥१॥

राग असावरी--

कहा करूं करुणा नाथ क्यों मोहि और न कछू सुहाइ॥
मोहन मेरैं जीअ बस्यौ इत उत कहूं न बिरंबइ॥टेक॥
यह सुख तजि कहां जाइये दुख जहां तहां भ्रम और॥
हरि प्रीतम विसरूं नहीं मेरे जीव की जीवन ठौर॥१॥
प्रेम सरस सर सींचि कैं मेरे काटे सकल बिकार॥
पल भरि पलक न वीसरूं मेरे प्रीतम प्रान अधार॥२॥
हरि चितवन चित ही रहै कछु और न आवै चीति॥
जो रोम रोम अंतरि रमै अब तासौ लागी मोरी प्रीति॥३॥
अबहि न व्यापै दूसरी मेरे अंतरि उपज्यौ धीर॥
परसराम प्रभु कै मिल्यां मेरी मिटि विरह की पीर॥४॥२॥

राग असावरी--

हरि विण धरत मन बहु भेष॥
भ्रमत भव अंधार वन मैं चित न सुमिरण सेष॥टेक॥
भाव भगति न भजन हरिकौ नहीं न वल वेसास रे॥
प्यास उपजि न प्रेम पीयो तज्यौ नेम निवास रे॥१॥
दरस परस न समझि सेवा न ग्यान ध्यान अनूप रे॥
वै हरि न अंतरि बसे कबहूं परम मंगल रूप रे॥२॥

अस्थिर न जग आधीन मनसा सदा रहत सकाम रे।।
जनम दुखित न सुखी परसा बिनां हरि विश्राम रे।।३।।३।।

राग असावरी--

जनम गंवायो रे नर मूरखि अंधा।। हरि विण कठिण कटै क्यौं फंदा।।टेक।।
पर घरि रहै कहैं मैं मेरा।। आवा गवण वहै भ्रम फेरा।।
सतगुर मिल्यां न मन घरि आया।। मुगध अचेतन मूल गवाया।।१।।
काल निरंजन कंवला माहीं।। राख्यौ काल निरंजन नाहीं।।
वांव कुबुद्धि भगति न यक साधी।। छाडि परम सुख सूनि अराधी।।२।।
कहा जन्म जो राम न जाणां।। अंतर खोजि न सहजि समाणा।।
परसा जे सदगति नहीं हुए।। परलै के जीव जनम लै मूए।।३।।४।।

राग असावरी--

राम न जाण्यौ रे नर अंधा।। जनम गंवायो करि करि धन्धा।।टेक।।
देही देही करि देही खोई।। मांगी माया देत नहीं कोई।।१।।
दाता भुगता सोई मारै तारै।। जगत अचेतन ताहि न संभारै।।२।।
सब घटि व्यापक जगत न जाणैं।। परसा पंति कोई दास पिछाणैं।।३।।५।।

राग असावरी--

सोवै कहा सुख जागि न देखै।। पायौ जनम सु जात अलेखै।।टेक।।
तासंगि जागि जु राम अपारा।। फाटि तिमिर घटि होइ उजारा।।
जबलगि निसि तब लगि सुख नाहीं।। रवि प्रगटे खेलौ सुख माहीं।।१।।
चेतनि चेत अचेतनि काहे।। तेरो करता है रमै जो माहें।।
आपो मेटि न मिलै गवारा।। हरि विण होत अकाज तुम्हारा।।२।।
सोवत बहुत गए सब खोई।। जागत मुस्या न सुणिए कोई।।
परसा जन हरि धन रखवारै।। ता जन कौं फिरि राम उबारै।।३।।६।।

राग असावरी--

हरि सुमिरण वेसास विसार्‌यो।। मन कलपत फिर्‌यो काल को मार्‌यो।।टेक।।
बादि बक्यो खायो कै सोयो।। अंति गयो निर्फल खोयो।।१।।
बिसर्‌यो पर्म सिंधु सुखदाई।। मन स्वारथ विचरत न अघाई।।२।।
परमारथ पद कौं न पिछानै।। परसा मन अपणैं अग्यानैं।।३।।७।।

राग असावरी--

प्रीतम हरि अंतरि न संभार्‌यो।। अंतरि थकौ दूरि करि डार्‌यो।।टेक।।
नेडौ थकौ निआदर कीयो।। दै आदर उरलाय न लीयौ।।१।।
मन न मिल्यौ हित सों दै हीयो।। अंतरि जामी न अंतर दीयो।।२।।
परसा इहां आइ यौंहीं जियौ।। जु अमृत दूर कियौ विष पीयो।।३।।८।।

राग असावरी--

मिल्यौ ही रहै तासौं मिलन न होई।। अमिल रह्यां पाई निधि खोई।।टेक।।
विधि बिगरिईं सु न जान सुधारी।। अब सरै कहा पहिली न विचारी।।१।।
परसा इहै अंदेसो है भारी।। भज्यो न हरि प्रीतम हितकारी।।२।।६।।

राग असावरी--

राम निआदर आदर नाहीं।। आवण देत नहीं घर माहीं।।टेक।।
जोगी हू तौ भयै घरवारी।। कीयौ घरै जौ छूटी तारी।।१।।
परवसि पर्‌यो करै जो भावैं।। बाहरि फिर तन ही सुख पावै।।२।।
परसा एक अंचभो भारी।। पति पैं सेव करावै नारी।।३।।१०।।

राग असावरी--

हरि बिण लगी माया धाइ।। जीति लियो आपणैं वसि स्वाद करि करि खाइ।।टेक।।
जित सुतित पसु कंठि कीएं लोभ लीयां जाइ रे।।
भ्रमत ही बहि गयो भोजलि राम सक्यौ न गाइरे।।१।।
करि चरित संग विरंग बाजी जीव लियो भुलाइ रे।।
बीसरी सुधि प्राणपति की चल्यो जनम ठगाइ रे।।२।।
मन क्यों तिरें विण सांच सुख निधि विषै रह्यो समाइ रे।।
परसराम न भज्यो अविगत अकल त्रिभवण राइरे।।३।।११।।

राग असावरी--

नरहरि कठिन माया जाल।। तो बिनां काटै कौण मेरै सुणं दीन दयाल।।टेक।।
मोह मिटै न आस पासी धीर धरी न जाइ रे।।
जात उलटचौ नदी जल ज्यौं राखि राघौ राइ रे।।१।।
थिर रहै न मन विण सुख निधि विषफल खाइ रे।।
प्रबल माहिन अबल कौ बल विधन हूवौ जाइ रे।।२।।

तू धणी अरु दास भर मैं साच विण बेकाम रे।।
परसराम सु सरणि सेवक राखि समृथ राम रे।।३।।१२।।

राग असावरी--

जब लग काया तब लग माया।। काया विनां न दीसै माया।।टेक।।
काया दुख सुख माया व्यापै।। काया मिटी भयो 1मेली आपै।।१।।
काया पंच तत्त्व का वासा।। गावै सुणै तिरण की आसा।।२।।
काया जनमैं काया मरई।। विण काया को तारै तिरई।।३।।
काया भाव भगति विश्रामा।। काया बिनां कहै कौ रामा।।४।।
काया कर्म बिना कोई दासा।। जिनके भाव भगति वेसासा।।५।।
परसा पति कै काया नाहीं।। काया सकल बसै जा माहीं।।६।।१३।।

राग असावरी--

मन जिन वहै माया लागि रे।। सुनि मूढ राम संभारि हित करि साध संगति जागि रे।।टेक।।
तजि गर्व ग्यान विचारि गाफिल भूलि जन मन हारि रे।।
भजि अकल नरहरि नांव निधि ज्यौं ऊतरैं भौ पारि रे।।१।।
आज काल कि पलक पल मैं लीयौ वस करि काल रे।।
देखता बहि जाइ औसर समझि राम संभारि रे।।२।।
छूटि है हरि की सरणि जब तब करिसि जो मन हारि रे।।
काच साटै खोइ कंचन जाइ जिन निज हारि रे।।३।।
सुणि सीख साधु जु कहै हित करि हरि कथा व्रत धारि रे।।
परसराम अपार भजि भ्रम आल जाल विसारि रे।।४।।१४।।

राग असावरी--

मन सुनि समझि एक विचार रे।। सत्य करि रघुनाथ भजि तजि कर्म भर्म विकार रे।।टेक।।
कर्म करणी सकल संसै नहीं निज परकास रे।।
भर्म वेई पहरि नख सिख सहीसि दुख सुख त्रासरे।।१।।
स्वाद स्वार्थ आस पासी प्रगट पसर्‌यो जाल रे।।
मीचि चाल्यो पर्‌यो तामैं तौं खैंचि खांसी काल रे।।२।
जमपुरी जनम अचेत मति जहां डिंभ वल अहंकार रे।।
तहां न पति विश्राम दीपक महा घोरंधार रे।।३।।

नग्र नांउ सु गांउ दीसै चाहिए सो नांहि रे ॥
सरस सैंजल देखि पंखी भरमि भूखा जाहि रे ॥४॥
सुणि सीख निगम निचौड़ वाणी भूल्यो जग मांहि रे ॥
ठाहरै क्यौं नीर निर्मल जहां अपक फूटै ठांहे रे ॥५॥
जब ग्यान तजि विग्यान उपजै सरै सब काम रे ॥
प्रेम सरस निवास निहचौ वसै तौ संगि राम रे ॥६॥
लिव लीण दीन सुभाव अंतरि भगति फल वेसास रे ॥
भजै अकलप रहत निस दिन परसा निज दास रे ॥७॥१५॥

राग असावरी--

समझि न रे मन मेरा भाई ॥ झूठ रचै जिनि या भौमि पराई ॥टेक ॥
तू परदेसी तेरा विड मैं वासा ॥ तामैं तोहि क्यौं आवै हासा ॥१॥
देखि भूलि सिरे अंध गंवारा ॥ माया मोह भरम संसारा ॥२॥
ना घर बाहिरे ना घर मांहि ॥ ठाढ़ो पंथ विरख की छांहि ॥३॥
पडि है विरख कछु न वसाई ॥ वेग विचारि सोचि रुति आई ॥४॥
चालन हार मोहि जिनि बांधे ॥ तेरे काज काल व्रत सांधे ॥५॥
जाहिं है विथा सो क्यौं सुखि सौवै ॥ परसा दास दुखित दुख रोवै ॥६॥१६॥

राग असावरी--

मन रे उलटि मन कौ सोधि ॥ पाइये क्यौं परम पद यौं आन वसु पर मोधि ॥टेक ॥
जल तरु चिपट आस पासी मौह जालि रे ॥
अकल जल विण अंध अपबलि गिले संसे कालि रे ॥१॥
आप जाप सु वसै अंतरि अकल अविचल साच रे ॥
ताहि लागि विकार परहरि सुभ असुभ कृत काच रे ॥२॥
प्रगटि पावक पवन लागो सकल झल व्यौहार रे ॥
ऊंच नीच निवाण जल थल धरनि धूं धूं कार रे ॥३॥
क्यौं बुझै असमान लागी वाद बल अहंकारि रे ॥
परसराम निवास हरि विण गए जनम कूं हारि रे ॥४॥१७॥

राग असावरी--

मन जो खोजो खोज विनांणी ॥ अविगत पति सारंग पाणी ॥टेक ॥

कंद मूल फल खाइ विचारै बहता पाणी पीवै ।।
छांडि अजोध्या वन मैं वासा आस पास तजि जीवै ।।१।।
पदम अठारह वनचर बन के एक ठौर जो आणै ।।
रामचन्द्र दशरथ सुत सीता अपणै संग पिछाणै ।।२।।
सर पंजर करि साइर तरिये तिरतां विरम न कीजै ।।
रावण मरै असुर सब जीतै तब लंका गढ लीजै ।।३।।
बदि छूटै तैंतीस देवता मिलै विभिषण कौ टीका ।।
परसराम प्रभु राम राजी तो सब जग लागै फीका ।।४।।१८।।

राग असावरी--

मनुवा भरिमि भूलौ जाइ।। निकटि राम न समझि देखै रह्यौ सकल समाइ ।।टेक।।
तीर्थ व्रत न कटै पासी जाण आपण आस रे ।।
मुगध देह तिम्रि दौरि मूवां छाडि हरि वेसास रे ।।१।।
विण भेद [illegible] पहिर मुंडित तिलक छापा साज रे ।।
करै पूजा फिरै हैं भटकत सुवांग मार्यां लाज रे ।।२।।
कहा स्वांग जो धर्यां स्वारथि साच त्रिण बे काम रे ।।
परसराम सु जनम हार्यो जो न जाण्यो राम रे ।।३।।१९।।

राग असावरी--

मन मेरै राम रमि यह साच।। आल जाल विसारि मूरख छाडि दै भ्रम काच।।टेक।।
भ्रमि भूलि बहि जिन जाहि भौ जल पकडि हरि की वोट रे ।।१।।
राम पर्म दयाल भजिमन मुगध (अब) डारि विष की पोट रे ।।
चेति मुगध विचारि मन मैं जनम जुवा जाइ रे ।।
परसराम अपार प्रभु विण काल देखत खाइ रे ।।२।।२०।।

राग असावरी--

मन रे राम हिरदै राखि।। श्रवण सुदिढ सुप्रीत करि सुणि साध जन की साखि।।टेक।।
काहे कौ आल जंजाल झांखै छाडि विष फल काच रे ।।
राम अमृत नाम निर्मल सुमरि करि हरि राच रे ।।१।।
काल खाइ न जुरा व्यापै पडै जम की पास रे ।।
खोजि हंसा संग तेरै सेइ धरि मन वेसास रे ।।२।।

अगम गंज अपार दरिया सकण सीप समेत रे॥
सौंज सेखर सुवणिज करि लै जाइ नर चेत रे॥३॥
परहरि न हरि समझि सुकृत सोचि देखि सुठौर रे॥
परसराम निवास नर हरि नांव भजि तजि और रे॥४॥२१॥

राग असावरी--

जो सति करि हिरदै हरि होई॥ हरि सुमिरण जन कै सुख सोई॥टेक॥
हरि निज रूप यह पर्म पद कहिए॥ सोइ परहरि परवस कित वहिए॥१॥
जा जन कै हरि कौ वेसासा॥ परसा सो भरमैं क्यौं दासा॥२॥२२॥

राग असावरी--

पीव रे जीव रस राम नाम प्यारा॥ जा पीवत मिटि जाय रे विकारा॥टेक॥
अमृत जिनि डारै करि खारा॥ त्रास मिटे पीयां निसतारा॥
दाता कवि पडित बल भारे॥ चाख्यौ नहीं सकल पचिहारे॥१॥
राजा राइ सूर सुरा तांणी॥ प्यासे मुए न पायो सुपाणी॥२॥
पाणी फूटि भया घटि रीता॥ पीयां बिनां जनम वादि बीता॥३॥
धीरज धरै सुधारस पीवै॥ परसा जन सोई सुखि जीवै॥४॥२३॥

राग असावरी--

पायो जनम न हारि राम संभारि रे॥
प्रीतम प्रान जीवन धन प्यारौ, सोई भजि पल न विसारि रे॥टेक॥
दीपक बिनां सु मंदिर सूनूं घोर अंधारे वास॥
यौं मन मोहनिसा निज हार्‌यो परि आसा की पास॥१॥
ज्यौं उडि जात पिसान पवन मिलि देखत सबै बिलाइ॥
जित तित कलपि पर्‌यो पावक मैं दाझत विरंब न काइ॥२॥
सोचि विचारि समझि भजि रे परहरि और उपाइ॥
कर तैं रतन गिर्‌यो दरिया मैं दिष्टि परै कब आइ॥३॥
वसत गवाइ न जाय बह्चो यौं भूलि भर्म की धार॥
मन कै मतै तिरैगो कैसै खेवट विन भौ पार॥४॥
तजि व्यौहार सकल सुख दुख लागि मरै मति मांहि॥
सुमिरण पर्म पद चित करि चिंतामणि तन मांहि॥५॥

धीरज बांधि कह्यो सुनि सति करि अंतरि धरि वेसास॥
परसराम हरि सुमरि अविसर पूरण पर्म निवास॥६॥२४॥

राग असावरी--

मनसा नहीं मरै मन कौ भावै त्यौं परमोधि॥
रहति कहति करतूति भजन वल अपणं आपण सोधि॥टेक॥
साधन सधि सुरग चढि उडै तन मन बांधै बंध॥
अंति पडै आसा बसि पासी राम भजन बिन अंध॥१॥
आगम निगम कहत निज हारे मन की मिटी न पीड॥
अधिक दर्द दूनूं दुख संकट हरि वोखद नहिं नीड॥२॥
कर्म करत केते नर मर गए बूडि भर्म भौ मांहि॥
राम भजन बिन जे बूडे तिन मैं उबरना कोई नाहिं॥३॥
कोई निजदास पीवै रस निर्मल तन मन आस गवांइ॥
परसा मनसा ताहि न व्यापै जु हरि भजि प्रेम समाइ॥४॥२५॥

राग असावरी--

भेष भर्म जो राम न गायो॥ मन परवसि, नांहिन घरि आयो॥टेक॥
कलपत फिरै मुगध मति हीनां॥ माया काज अकरम बहु कीनां॥१॥
कर्म करत निज नांव न पायो॥ भव बूडे जस जनम गवायो॥२॥
कैसे तिरै जै बसै विष मांहि॥ हरि सुमिरण सौं परचौ नांही॥३॥
सुख न लहै परचै विण देही॥ परसराम विण राम सनेही॥४॥२६॥

राग असावरी--

झूठ साग्यान कथ्यां कछु नाहीं॥ जो हरिजी सौं प्रीत न उपजै माहीं॥टेक॥
ग्यान दिढाव भखणि जग आसा॥ विण निज नाम कटै क्यों पासा॥१॥
मन कलपै दिल नाहिं सबूरी॥ विण दिढ मतै परै क्यौं पूरी॥२॥
बाहरि फिरै सु जो घरि आवै॥ तौ सहजैं साईं दरस दिखावै॥३॥
तब साची जब तीनौ त्यागै॥ परसा प्रेम राम ल्यौ लागै॥४॥२७॥

राग असावरी--

कहि सुणि कथनी काची॥ जो हरिजीसौं प्रीत न लागै साची॥टेक॥
करणि करि करि कर्म बंधाया॥ छाडि कर्म निजराम न गाया॥१॥

अंतरि कपट कथ्यां का होई।। जलविण पंक न जाई धोई।।२।।
जब लगि प्रेम प्रीति ल्यौं नाहिं।। तौ परसराम वसै क्यौं माहीं।।३।।२८।।

राग असावरी--

ग्यान गया घरि गोरख आया।। जोगि जाति निरंजन राया।।टेक।।
आसण अटल अकल संजोगि।। ताकि त्रास सौं मूएं बड भोगि।।१।।
अचल न चलै चलै न आवै।। आवै तो जो आयो न दिखावै।।२।।
देखन हार मरै न सोई।। परसा मिलि ताही सौं होई।।३।।२९।।

राग असावरी--

साईं हाजरा हजूरि, देखि निकट है न दूरि।। ताकौं भजि विकार रह्यो सकल पूरि।।टेक।।
दिल मैं संभारि बोलै को मझारि गावै गुण गाथा।। कौंण है सौ वरण है केसौ जो रहई तन साथा।।१।।
सास वास कहां निवास कैसी कल लाई।। आवैं सो और जाई कहां खोजो रे भाई।।२।।
देऊरे मसीत मांही सकल व्यापी कहा नाहीं।। सत्य है रहीम राम और दुविधा भरमाही।।३।।
अखिल ब्रम्हंड राइ सोई प्रभु पिंड माहीं।। परसा क्यों विसरिराम दरिया दिल मांही।।४।।३०।।

राग असावरी--

खोजि करीमां वाहरि नाहीं।। राम रहीम वसै दिल माहीं।।टेक।।
दिल खोज्या तैं और न कोई।। तूं जाकौं मारै साहिब सोई।।१।।
मारा मारी और जोर न करणां।। तामस तेज भर्म दुख भरणां।।२।।
गुसाह राम अनाहक करणी।। हक्क हलाल भिस्ति नीसरणी।।३।।
भिस्ति लहै जोई दीन संभारै।। परसा हरि भजि दुनी विसारै।।४।।३१।।

राग असावरी--

प्रीतम प्रान नाथ सब माहीं।। देहि का गुण अस्थिर नाहीं।।टेक।।
ज्यौं नट औसर का छै नाटक मति निर्तत गुणहिं संमानां।।
जो दूरि भयो सु मिलत सुरिता ज्यौं कहत मांन कौं मानां।।१।।
ज्यौं विधु आकास सचल अवणैं मैं आवत जात दिखावैं।।
बादल संगि चलतहि चंचल निहचल दिष्टि न आवै।।२।।
हरि निर्मल निजरूप निरंतरि अंतर तैं न सूझै।।
ज्यौं पंथ चलत पंथी कै चालि थकै थके थक्यो सोई बूझै।।३।।
ज्यौं जल मैं खेवट कै खेएं नांव चलत सब चालै।।

यौं निर्गुण गुण मांहि समाणां एक दोय करि हालै ।।४।।
ज्यौं थिर नीर समीर सुमिल चल निहचल रहै न सोई।।
यौं परसराम व्यापक व्यापति रत निर्मल कदे न होई।।५।।३२।।

राग असावरी--

मैं हूं अकल सकल मेरी माया।। मैं तेहिं लागि जगत भरमाया।।टेक।।
मैं ही धरणि गिगन रवि तारा।। मैं ही हूं पाणी पवन पसारा।।१।।
मैं तो हूं रैंन द्योस कल लाई।। मैं ही काल सकल छलि खाई।।२।।
मैं ही मूल अनत होय छाया।। मैं ही हूं डाल तास फल पाया।।३।।
मैं ही पहुप पत्र नर नारी। मैं दाता भुगता भूप भिखारी।।४।।
मैं ही हूं देवल मैं ही देवा।। मैं सेवग मेरी सब सेवा।।५।।
मैं अविगत अलख अभेवा।। दिष्टि अदिष्ट सबद सुर लेवा।।६।।
सब हीं मैं मो बिन कछु नाहीं।। मैं व्यापीं ब्रम्ह बसौं सब माहीं।।७।।
मैं ही निर्गुण सगुण बिनाणी।। परसा हूं न निज गति जाणी।।८।।३३।।

राग असावरी--

हो विधनां विधि रचि जु काई।। ताकि गति कछु लखी न जाई।।टेक।।
जो उतपति परलै होइ सु दीसै यह अविगत भाई।।
माया मंदिर तन तजि निकसैं तौ हंस कहां होई जाई।।१।।
आवत जावत प्रगट पंथ देखिये रहै न जीवै काया।।
यो अचरज सतगुरु समझावै कै जिन चरितउ गाया।।२।।
रहै जहां कौ तहां सु जाइ न आवै मरै न सोई जीवै।।
निज रूप सादिष्टि अगोचर जो अण भै रस पीवै।।३।।
अवरण वरण रहित करुणा मैं ताहि कोई दास पिछाणैं।।
दरिया अगम बूंद परसा जन सो महिमां का जाणै।।४।।३४।।

राग असावरी--

अविगत गति तेरी को धौं पावै।। अगम अगाही काही गमि आवै।।टेक।।
अकथ अतीत सुकथ्यो न जाई।। कागद अलख लिख्यो न समाई।।१।।
आदि न अंत न हीण बडाई।। नहीं अवरण वरण सुदेत दिखाई।।२।।
काया कर्म काल नहीं खाई।। सहज न सुन्य अकल कल लाई।।३।।

परसा पति गति लखी न जाई।। राम सुमरि जीऊ जस गाई।।४।।३५।।

राग असावरी--

तुम नांऊ निरालंब अंतर जामी।। सहज रूप सहजैं सुर स्वामी।।टेक।।
वपु अतीत व्यापक वपु धाता।। गुण अतीत निर्गुण गुण दाता।।१ ।।
सबद अतीत सवद जाहि गावै।। भाव अतीत भाव कौ भावै।।२।।
सब अतीत सब की गति जानै।। सवद अतीत नांव गुण छानै।।३।।
मन अतीत मिलि मनहि न चावै।। प्रभू सूक्षिम परसा न दुरावै।।४।।३६।।

राग असावरी--

वे जग धंध कि राम भुलाया।। किनहु जनि नर हरि पाया।।टेक।।
धंधा जांति पांति कुल करणी धंधा मोहरु माया।।
धंधा करत सकल जग खीणां सुमिरण चीति न आया।।१।।
धंधा तप तीरथ व्रत आसा धधै अंध लगाया।।
धंधै लागि बहुत भौ बूडे राम नाम नहीं पाया।।२।।
धंधौ कर्म भर्म सिधि साधन घंधै भुंदु खाया।।
परसराम धंधै विण सो जन जिनि हरि सौं चित लाया।।३।।३७।।

राग असावरी--

पंडित मिलि यक करहु विचारा।। बधिक बसि भयौ कुटुंब हमारा।।टेक।।
बधिक सर धरि सोवत मारे।। लागी चोट सु जागि पुकारे।।१।।
बधिक संगि वस्यो वाजारी।। जिनि चुनि २ नगर नायिका मारी।।२।।
राज निकंटक एक दुहाई।। बांधे चतुर मिटी चतुराई।।३।।
ऐसो नष्ट नाम लै जौरा।। लैहै नाम सु व्है है वोरा।।४।।
वोरा होइ भजै जो कोऊ।। तौ रहै निरास आस तजि दोऊ।।५।।
परसा जन जो पदहि पिछानै।। धोखो मिटै समझि मन मानैं।।६।।३८।।

राग असावरी--

मरणां बहुत दुख कैसै मरिए।। जीवत पति न मिलै कैसी भरिएं।।टेक।।
मूंवा बिना न मिलै रे मुरारी।। यह खोजनी मन खोजि संवारी।।१।।
दूरि पयाणां समझि न आवै।। पूरी मिलै न परचौ आवै।।२।।
प्रात न होइ अजूं बडराती।। ऊजड चलन न देत संगाती।।३।।

मारगि चलूं तौ भाजै कांटा।। सतगुरु मिल्यां मिटै सब आंटा।।४।।
छाडि विकार विचारौ काया।। ता मैं है त्रिभुवन को राया।।५।।
पर घर तजि अपणैं घरि आवै।। सोई दास परम पद पावै।।६।।
जा ठाकुर का प्रगट पसारा।। छांदै चलत न मिलै अपारा।।७।।
परसा जन ताहि देख्यां जीवै।। अणवै संगि महारस पीवै।।८।।३९।।

राग असावरी--

है कोई सांचौ दीवाणी।। मेरी सुणै रे पुकार विनांणी ।।टेक।।
मोहि जितावै मैं हूं हारी।। मेरा घर लीया मैं मारी।।१।।
मैं लै निकसी काच कथीरा।। ता घर मैं विसर्‌यो यक हीरा।।२।।
ता घर आय बस्यो मुलतांणी।। सरस सलिल सुरौ सुरि वाणी।।३।।
परसा या पदहि पिछाणैं कोई।। तौं सोई बड पापी बौरा होई।।४।।४०।।

राग असावरी--

है कोई साध सुभट संग्रामी घरि संग्राम सभारै रे।।
वाहरि जाय भिडे नहीं पर दल आपणूं कुटुम्ब संघारै रे।।टेक।।
सूरौ सो जु मद्धि मिलि झूझे निकसि न जीतै हारै रे।।
दस दल मेंलि हतै सब कायर सूरै सूर उवारै रे।।१।।
आसा तजै निरास रहै जो कर सिरभार न लेई रे।।
सोई रिणी सूर सधीर महा मुनिपति कौ पूठ न देई रे।।२।।
मन ल्यौ लीण दीन पौरसि विण फिरि आपणपौ मारै रे।।
परसा सो जन भिडै न भाजै ता संगति निस तारै रे।।३।।४१।।

राग असावरी--

होई साधू सोई हरि गावै।। जाकौ मन प्रेमि समावै।।टेक।।
घटि घटि जाय सुघट मैं राख्यै करै न घाटि अधूरा।।
दूरि करै दुविध्या कौ अंतर सब घटि देखै पूरा।।१।।
दिढ वेसास गहै निज परचौ हरि सेवा सौं लागैं।।
धीरज धरै सदा सुख विलसै प्रेम सम्बन्ध न त्यागै।।२।।
थिर होय रहै अकल आनंद मैं मगन भयो रस पीवै।।
बीच न मरै कलपि जग ससै अकलप जुगि जुगि जीवै।।३।।

परम रसाल रसायन रसनां पीवै प्यास मन साचै ॥
परसराम प्रभु ताजन कै बसि बांध्यौ तागै काचै ॥४॥४२॥

राग असावरी--

हरि पद गावै जो गाइ जाणै॥ बिण जाण्या कहा बखाणै॥टेक॥
श्री गुरु सवद समझि सरि बोलै चालै तहीं परवाणैं॥
ताकौं भजन भरम कौं भेदै पहुंचै ठौर ठिकाणैं॥१॥
राखै मन अपणूं वसि करि निज नेह पिछाणैं॥
जाइ जहां कहूं मनकी मनसा फेरि अपूठी आणैं॥२॥
मनसा वाचा मन सौं मन दै रीझ वै कौण सुजाणैं॥
ऐसो को आपौ अंतर तजि खेलै मिलि निरवाणैं॥३॥
अंकुस बाज फिरै मन मुकता अपमारग कौ ताणैं॥
रहै प्रेम पालि विण परसा निहचल नीर निवाणै॥४॥४३॥

राग असावरी--

केवल राम रमैं सोई दासा॥ जाकै नाहिन आस निरासा॥टेक॥
रहै ऐकांत सकल विण सारै सोवै कदे न जागै॥
सदा अकलप अकल गुण गावै भूखा रहै न मांगै॥१॥
जामण मरण बिचारि विस्तरै दुख सुख मनकी माया॥
इनकैं रंगि न राचै कबहु तौ पुनरपि धरै न काया॥२॥
भाव भगति परतीति प्रेम रस सतगुरु सूझै मांही॥
परसराम ता जन कै हरि बिन इत उत हूजा नाहीं॥३॥४४॥

राग असावरी--

है कोई अणभै पद कौ बूझे॥ अंतरगति अविगति सूझै॥ टेक॥
मैंगल बांधि सहज कै संकलि मेटे आस पसारा॥
अजपा जपै अदिष्टि विचारै रहै सकल तै न्यारा॥१॥
आगम निगम तजै निज रीझै परहरि विषै विकारा॥
जो जाई समाइ प्रेम सागर मैं ता संगति निसतारा॥२॥
अंतर जोति अकल प्रकास्या त्रिभुवन भयो उजारा॥
पूरण कला परम पद परसा पावै सो जन प्यारा॥३॥४५॥

राग असावरी--

याही हरि कृपा तुम्हारी हूं चाहूं।। तुम सौं हूं पति व्रत निभाहूं।।टेक।।
यह नित नेम न हूं छिटकाऊं।। तुमकौं सोई सुमरि सुख पाऊं ।।१।।
जो मन मैं तुम्हरे वसि कीयो।। सो मन अबर कौं जात न दीयो।।२।।
जेहि मन मैं तुम सूलै बांध्यौं।। तिहि मनि जात न और आराध्यौ।।३।।
जो मन चरण कंवल सौं लायौ।। ता मन कै मनि और न आयो।।४।।
जो सिर मैं तुमकौं प्रभू नायो।। ता सिर कूं फिरि और न भायो।।५।।
सोई मन पर्म प्रेम सौं भेऊं।। तुम कौं सेंइ न औरहि सेंऊ।।६।।
यहै चित परसा प्रभु पाऊं।। तुमकौं गाइ न औरहि गाऊं।।७।।४६।।

राग असावरी--

हरि मेरी आरति क्यौं न हरौ।।
मैं अनाथ प्रभु तुम अंतर जामी, सुनि किन कृपा करौ।।टेक।।
मैं जन दीन दुखित दिस नाहीं तुम बिन गत सगरौ।।
अब करुणा सिंधु सहाय करौ किन गुण औगुण न धरौ।।१।।
तुम किये पवित्र पतित मंडल अघ होइ अगनि चरौ।।
जन जिवनि दुख हरन कृपानिधि सो अब क्यौं विसरौ।।२।।
सब खोट कमाई गांठि मैं बांध्यो और दीनूं डारि खरौ।।
लेहू सुधारि सकल पति सति करि खोजौं कहा परौ।।३।।
मैं मति हीण भाव सेवा बिण मन परघरि घालि धरौ।।
परसा प्रभु भगत बछलता यह जिन विरद टरौ।।४।।४७।।

राग असावरी--

प्रगट भये हरि मंगलकारी।। सब काहू की सोच निवारी।।टेक।।
गावैं गुण नाचै सब नरनारी।। देखै सुर औसर अति भारी।।१।।
जो अपरपार लीला औतारी।। आनंद की निधि कैलि विहारी।।२।।
अविगति अकल सकल धारी।। सचराचर व्यापक बनवारी।।३।।
दीन दयाल भगत हितकारी।। परसा पूरण ब्रम्ह मुरारी।।४।।४८।।

राग असावरी--

आनंद नंदक भुवन अति राजै।। जहां प्रगटे प्रेम कौ सिंधु विराजै।।टेक।।

तोरन कलस धुजा सब साजै॥ घरि घरि नई बधाई बाजै॥१॥
देव अमर दुंदुभि बजावै॥ नाचै रिसि जहां तहां मुनि गावै॥२॥
घुरै सरस नीसांण अपारा॥ धर अंबर धुंनि जै जै कारा॥३॥
ब्रह्मादिक सिंभु सुणि आवै॥ मंगल देखि देखि सुख पावै॥४॥
दुख मोचन सब के चिंताहर॥ भूरि भाग जाकै अपरम्पर॥५॥
निगम करै अस्तुति उर खोलै॥ जस कीरति बंदीजन बोलै॥६॥
सब सनमुख चितै अति भावै॥ देखे सुर औसुर सिर नावै॥७॥
पर्म रसाल रसिक रस पीवै॥ जुगि जुगि जन परसा प्रभु जीवै॥८॥४९॥

राग असावरी--

सखी तन मन धन हरि कै बस कीजै॥ हरि प्रीतम अपणूं करि लीजै ॥टेक॥
सर्वस सौंपि सरण हरि रहिये॥ तजि हरि सिंधु अनत न बहिए॥१ ॥
ज्यौं सुमिल जीव जल अंतर नाहिं॥ यौं अंतर तजि रहिए हरि माहीं॥२॥
मौहि अंतर जामी कौ हित भावै॥ हेत बिना हरि हाथि नहीं आवै॥३॥
यह मन समझि सत्य जो होई॥ परसा प्रभु भजिए सुखी सोई॥४॥५०॥

राग असावरी--

जो हरि हैं व्यापक सब माहीं॥ ता हरि सौ कछु परचौ नाहीं॥टेक॥
आदि अंति अंधार बसै जब उर सों क्यौं समझि सलूझै॥
ज्ञान प्रकास बिना दोजग सूं छूटै कैसे करि हरि सूझै॥१॥
भाव भगति वेसास हीण नर भ्रमि भ्रमि जनम गंवावै॥
रहणि राजसेवा सुमिरण विण सुख संतोष नहीं पावै॥२॥
मन जात बह्यौ भ्रम धार मांहि जो भयो कर्म'काल कै सारै॥
तिहिं औसरि हरि परम हितू बिण भव बूडत कौ तारै॥३॥
बिण परचै सब परपंच पसारा आवै जाई अलेखै॥
परसराम प्रकट प्राण कौ प्रेरक दिष्टि बिनां कौ देखै॥४॥५१॥

राग असावरी--

याकौं समझि सकै जो कोई॥ ताकौं आवागवण न होई॥टेक॥
कहां तैं आयो कौण पठायो भेष पहरि जो भूल्यो॥
नैण महारस आसा वसि कौ डोलत फूल्यो फूल्यो॥१॥

जलथल जूनिं सकल कुल जल मैं जो थिर न कबही।।
सुर्ग मृत पताल आदि दै फैरी आबै जो छिन में सबही।।२।।
कबहूं जीव ब्रम्ह होई कबहूं कबहू भूप भिखारी।।
कबहूं जीव मैं मेरी करि संचै पुनि त्यागै करि खारी।।३।।
कबहूं कर्म कुलीण जाण घण ग्याता चतुर विवेकी।।
कबहूं मन मूरिख अभिमानी सूझत सुणि न देखी।।४।।
समझै सुणै विचारै ज्ञौ देखै पर कबहूं बोली न बोलै।।
प्रगट होइ दुरि रहै निरंतर अंति न अंतर खोलै।।५।।
कबहूं सूर सुणी कवि दाता पंडित मुनि तप ध्यानी।।
कबहूं सुनि सुधारस पीवै अरू मौनि गहै मन ज्ञानी।।६।।
पुरवासी सोबै अरु सुणि जागै सुपिनैं सुख दुख देखैं।।
थाकै पंथ पर पंथी न थाकें निहचल चलत अलेखै।।७।।
रहै समीप सदा दुख सुख सौं चलत न भेद बतावै।।
रहै जो अभेद भेद लै सबको परसा जन ताहि गावै।।८।।५२।।

राग असावरी--

जिनि सुत हित नांव नरांयण लीनूं।।
सोई हरि राखि लियो जमपुर तैं विप्र अजामिल जान न दीनूं।।टेक।।
जगत निआदर सब कोई जाणैं पै सरणि गया तैं कहा पछीनूं।।
पारि कीयो तिनि संसार धार तैं जिनि रस विषै जनम भरि पीनूं।।१।।
रति ब्रष लीपति कुटिल कामी महा पतित लै हरि पावन कीनूं।।
असरण सरण विरद पतित तारण परसा प्रभु करि दीनूं।।२।।५३।।

राग असावरी--

है पतित पावन प्रभु मैं सुणि पायो।। पतित सरण लीये तिनहि बतायो।।टेक।।
पतित पार कर विरद भुलानूं।। हम हैं पतित तुम क्यौं न पिछानूं।।१।।
तुम राखि लेऊं अपणी जिनि खोवो।। हूं करिहूं पतितन मांझ बिगोवो।।२।।
और पतित तारे त्यौं तारो हमही।। सब की लाज वहन हरि तुमही।।३।।
जाहिं जाचिग जाचि निरास न होई।। सबमें बड दातार कहावै सोई।।४।।
परसराम प्रभु यह सुणि लीजै।। सेवक जोई कहै सोई सोई कीजै।।५।।५४।।

राग असावरी--

जुगिया जग कै संग वसै जग जुगिपन पावै ।।
घर मंदिर ढूंढै नहीं भ्रमि ज़नमि गवावै ।।टेक ।।
भ्रम तप दहि न पहुंचियै फिरि करमि बंधावै ।।
जित तित विषै वूलूझिकै मोहि सौ तहीं समावै ।।१ ।।
जोग जति चरित बाजी रचि तासो मिलि गावै ।।
जो गाइ बजाइ रिझाई तौ आयौ ताही दिखावै ।।२ ।।
अकल सकल पूरण पिता ऐसे बसि नहीं आवै ।।
परसराम जो जन सनेह सों ऐसे प्रीती लगावै ।।३ ।।५५ ।।

राग असावरी--

मेरी तुम ही कौ सब लाज बडाई।।
ज्यौं जाणूं त्यौं ही त्यौं राख्यौ अपणं करि आपण हरि राई ।।टेक ।।
कर्म उपाय बहुत करि देखे मति निहकलप त्रिपति नहीं आई ।।
हरि कलप तरोवर की छाया बिण कबहूं मन कलपना न जाई ।।१ ।।
तुम दीनानाथ अनाथ सब निवाजन क्रपन पाल गोपाल कन्हाई ।।
परम पवित्र पतित पावन प्रभु अधम उधारण विडद सहाई ।।२ ।।
पाप हरण त्रैताप निवारण असरण सरण बडी सरणाई ।।
अब न तज्यौ तन मन दै भजिहूं हरि अमृतनिधि प्यासे मैं पाई ।।३ ।।
श्री गुरु कही अरु सुणि मैं नीकै कीरति प्रगटि सकल भरि छाई ।।
सेस आदि निगमादि सुमहिमा भव विरंचि उरि धरि मुख गाई ।।४ ।।
तुम दीन दयाल कृपाल कृपा निधि दुखहरन सकल सुखदाई ।।
लै निबहन कौं परसराम प्रभू तुम बिन और को सूझै न सहाई ।।५ ।।५६ ।।

राग असावरी--

कवण देस जाइवो कहां रहिबो ।। कवण सुनत काहू की कहा कहिबो ।।टेक ।।
यौं न कहत कोई मैं पायो ।। हरि कौं मिलि अबहि हूं आयो ।।१ ।।
जात सबै दीसत सब जाणी ।। कोई आइ उहां की कहै न प्राणी ।।२ ।।
तहां न कोई आवत जाता ।। पंथ पंथी संग नहीं साथा ।।३ ।।
गांव न ठांव ऩांव कछु नाहीं ।। आवण जाण भरम जामाहीं ।।४ ।।

यह अचिरज जन जो बूझै।। परसा प्रभू पूरौ जाहि सूझै।।५।।५७।।

राग असावरी--

अगिण चरित हरि एक अकेला।। बाजीगर खेलत बहु खेला।।टेक।।
समझि न परै अपार कहावै।। ताकौ वार पार को पावै।।१।।
नाना रूप करै को जाणैं।। ताहि कहा कहि कूंण वखाणैं।।२।।
अपणी रुचि लीला वपु धारै।। जनम मरण दोऊ हरि सारै।।३।।
चलत अनंत सदा थिर दीसै।। मोहि अचिरज सोइ जगदीसै।।४।।
निकटि न दूर प्रगट सुख स्वामी।। परसा प्रभु हरि अंतर जामी।।५।।५८।।

राग असावरी--

हो ब्रजराज सनेही सुणि कहूं एक तुमही तुम्हारी बात।।
दान उगाहन की ऐसी तुम क्यौं लाई हो सनेही यह घात।।टेक।।
पाई किन पाई सुमोहि कहौ सुं कहत रहे पराई बात।।
अपणी प्रगट कर हू किन हम सौं जु चोरी आवत जात।।१।।
तुम बात अनोखी सी कही ताको अचिरज आवै मोहि।।
तुम सीखि लई काहू और पैं किधौं नन्द सिखाई तोहि।।२।।
तुम मह्यो मह्यो कहि उठी आप ही छाक बर सी आइ।।
बनहि अचानक आइ हमारी चरित बिडाई गाइ।।३।।
काहे कौं अनहुई कहत जो देखी न सुनी अनकाजि।।
अबताईं ये हुई न होहि हैं ब्रज मडलि कहूं राजि।।४।।
परमेश्वर मानैं नहीं हम चोर सुनहूं मन लाई।।
कह्यो सुनहूं नहीं और को तौ नन्द बूझि घरि जाइ।।५।।
अब तौ हम तुम आयबणी है दान देऊ किन देऊ।।
जैहो तबै सबै जब दैहो यह समझि सखि सुणि लेऊ।।६।।
हम सब ही नित आई गई इहिं मारग कई बार।।
किनहीं रोकि सकी नहीं यह अब चले नव सार।।७।।
तुस बिन दीनैं जैहो कहां अबहि मेटि हमारौ दान।।
लैहूं सबै निबेरि पलक महि तब दैहूं तोहि जान।।८।।
लेऊ लेऊ जु जानत हो जो कछु दान लेऊ सब लेऊ।।

परसराम प्रभु मन हमरो लीयो फिरि किन देऊ ॥६॥५६॥

राग असावरी--

मेरी कब न करी हरि तुम रखवारी॥

जहां कहूं सुमर्‌यो जब कबहुं तब ही तब सोच निवारो॥टेक॥

असरण सरण अनाथ बधु सुणि विपति परी हमकूं तुम तारी॥

तुम विण और को सम्रथ सुख दाता हरि राखण कूं लाजहमारी॥१॥

चीर छुवत अरि असह सभा मैं हा कृष्ण कृष्ण तब नांव पुकारी॥

तिहिं औसर आतुरत आइ तुम प्रगट भयै पुरवण सिर सारी॥२॥

तुम करुणा सिंधु आरिज अगमागमि मानूं हरि मेरी मनुहारी॥

तुम प्रभु सदा रहौ सिर ऊपरि मैं चेरी हूं जुग जुग बलिहरी॥३॥

मैं हूं अनाथि अबला मति वोछी अंधक बलि बिधनां करी नारी॥

पावन भई परम पद परसत भली बुरी तऊ दासि तुम्हारी॥४॥

भगत बछलता बिरद निबाहण गुण भजि औगुण किन बिचारी॥

सिंधु न कदे तजत परसा प्रभु जो आइ मिलत सलिता संग हारी॥५॥६०॥

राग असावरी--

हरि सुख सौ सुख और न कोई॥ हरि सुख विण सुख है दुख सोई॥टेक॥

हरि सुख भव विरंचि मन भायो॥ हरि सुख सेस सहस मुख गायो॥१॥

हरि सुख नारदादि मुनि जान्यो॥ हरि सुख सौं जाको मन मान्यो॥२॥

हरि सुख मिलि सनकादिक मीठे॥ अति अमृत निधि निगमनि दीठे॥३॥

हरि सुख तैं सुखदेव उजागर॥ सब परहरि परसे हरि नागर॥४॥

हरि सुख ब्रज बनितानि लाधौ॥ हरिमन सौं अपणूं मन बांधौ॥५॥

परसराम प्रभु जन की राखी॥ हरि सुख जिन पायौ सोइ साखी॥६॥६१॥

राग असावरी--

यौं निबहत क्यौं अब विरद की लाजा॥

असरण पतित पावन ब्रत धारि लीयो कहो किहि काजा ॥टेक॥

हम पापी अति आतमघाती खाज तज्यो अरु खायो अन खाजा॥

अक्रम कर्म करत मन मान्यौ डार्‌यो करि निहकर्म निकाजा॥१॥

गनिका विप्र नांव भजि निरमल वकि परसि पावन तुरि ताजा॥

पापहरण भव पारकरण कौं सुनियत है नांव प्रेम की पाजा॥२॥
दरस परस वेसास हीण हम नांव विमुख भरमत बेकाजा॥
सब पतितन कौं दीयो सोही दीजै हरि मेटौ किन मेरी मौताजा॥३॥
जिनकौं नाम सुनत मुख देखत बूडि जात जल मद्धि जिहाजा॥
सुनियत अधिक उजागर जग मैं बडे पतित तिन मैं हूं राजा॥४॥
हूं कामी कुटिल विषै रस लंपट सब निलजनि मैं बडो निलाजा॥
मेरी होड पतित को करि है हूं पतितन मांहि पतित सिर ताजा॥५॥
मेरो नांव सुनत जम डरपत भागि जात तजि असह अवाजा॥
पतितन मो सारिका परसराम प्रभु होइ सकै को है अनदाजा॥६॥६२॥

राग धनाश्री--

हरि परहरि भरमत मति मेरी॥
कहत पुकारि दुरावत नाहिन यह तौ प्रगट फिरत नहिं फेरि॥टेक॥
श्री गुरु सबद न मानत कबहूं उमगि चलत अपणी हर हेरी॥
तजि निजरूप विषै मन मानत उरझत हित सौं बूडण की बेरी॥१॥
नाहिंन संक करत काहू की चरत निसंक अति कूप तैं नेरी॥
परसराम छिटकि परी जो भौ जल मैं सो अब कैसे पाईयत हेरी॥२॥१॥

राग धनाश्री--

जीव निफल हरि भगति विसारी॥
आसा वसि बेकाम राम तजि वादि मुएं भौ धर्म भिखारी ॥टेक॥
ज्यौं कायर दल चलत सूर विण धीर न धरत गहै भै भारी॥
जाणि परत बल हीण राज विण जो पहुच्यौ तिनहिं चढी मारी॥१॥
ज्यों गजराज अनाथ दांत नाक विण पीव विहुण सोभित नहीं नारी॥
सिंधु अपीव पहुप बिन परमल सकल साच विण विषै विकारी॥२॥
ज्यौं जल नाव कीर विण बूडत डोलत पूंजि तूट थकित व्यौपारी॥
परसराम हरि भगति हीण नर नांव कहाइ महा निधि हारी॥३॥२॥

राग धनाश्री--

ऐसे ही जात सकल संसारा॥
स्वारथ स्वाद विषै रस विलसत रहत न कबहूं न्यारा ॥टेक॥

ढिंभ मोह माया वसि मिलि करि जनम गंवावत सारा।।
जो सुपनैं सोवत सुख मानत तो सूझत वार न पारा।।१।।
उपजत खपत अलेखै पल पल आवत जात असारा।।
बूडत सकल समूह सिंधु मैं बांधि कर्म भर्म के भारा।।२।।
निसि वासर एक तार कपट मति करत कर्म कौ हारा।।
जैसे तजत पतंग अपण प्राण कौं परि पावक की धारा।।३।।
नहीं गुर ग्यान ध्यान उर दीपक मिटत न कबहू अंधारा।।
परसराम निरफल तरु फल विण सूक साक खल खारा।।४।।३।।

राग धनाश्री--

हरि विण धृग जीवण व्योहारा।।
जो लगत न मन गोपाल भजन सौ तजत न विषै विकारा।।टेक।।
कलि कौ रस विलसत सुख करि परिगण कठिन कारा।।
अब मिटत न वै जु दुवासू निकसे गत कागद के कारा।।१।।
निघट गई निज सौंज वादि पैं कछु सोचि न कियो विचारा।।
हार्‌यो रतन जनम खलि साटै बहुरि न मिलत उधारा।।२।।
जूंनि अगण जल थल भर्मत सुख न लहत फिरि सारा।।
परसराम जो भगवत विमुख नर धर्मराइ कै प्यारा।।३।।४।।

राग धनाश्री--

जब लग हरि सुमिरन नहीं करिए।।
तब लग जीवन जनम अकारथ भरमि भरमि दुख भरिए।।टेक।।
अति अथाह दुस्तर भवसागर सों कैसे करि तरिए।।
हरि जिहाज पाये विण ता महि बूडि भले बहि मरिए।।१।।
अति संकट ससौ सुख नाहीं जो मित्र मुरारि न करिए।।
प्रीतम परम हितू पूरै बिण परसा पारि न परिए।।२।।५।।

राग धनाश्री--

जनम सिराय गयो सु न जाण्यौ।।
हरि सुमिरन बिण वादि जहां तहां भरमत सोच न आण्यौ।।टेक।।
आल जाल जम काल काजि कलि जुग सौं वांनिक वान्यौ।।

विलसत विषै विकारनि अचवत भव समुद्र कौ पान्यो ॥१॥
अग्य अगिण अघ भार सांचि उरि सुकृत करि परवान्यौ॥
पर्म पवित्र पतित पावन जस सो कबहुं न बखान्यौ॥२॥
गायो सुण्यो न सुमर्‍यो कबहूं हरि देख्यो न पिछाण्यौ॥
सदा अचेत परम मंगल विण कायर कर्म कुठाण्यौ॥३॥
भयो बूडि व्यौहार हाणि घर जाणि लाभ करि करि मान्यौ॥
परसा प्रभु विण धूंधकार मैं अंध असमझि बिझान्यौ॥४॥६॥

राग धनाश्री--

पाई निधि निरफल बहुत गई॥
फूलि फूलि फल बिन कुम्हिलाणी त्रिगुण तुषार दहीं॥टेक॥
कंचन भवन निवास वास पैं सुमिरण सुख न कहीं॥
वै घर अति सब जमपुर जिमि उपजत कर्म जहीं॥१॥
जीवन जनम विगार्‍यो जग मिलि हंसि हरि हाण सही॥
प्रभु तै विमुख सदा लघु शोभा जो बड पदई न लही॥२॥
नांव बिना सब सौंजहिं सिंधु मैं जहां की तहीं बही॥
खेवट बिनां वादि भोजल तैं पारि न तिरनि वही॥३॥
जहां देह सनेह मोह माया सुख दुख कौ सिंधु तहीं॥
विभौ विलास आस धृग परसा जहां हरि नांव नहीं॥४॥७॥

राग धनाश्री--

मन रे हरि नांव हेत काहे न संभारै॥ भूलो कित भरम लागि पायो निज हारैं॥टेक॥
भौसागर अपार पूर्‍यो भरि थाघ न पाई॥ करुणा मय कीर बिनां पैरयौं नहीं जाई॥१॥
अति मोह को जंजाल जाल तासौं सब छाई॥ सूझै न सेरी संभाल खैंचि काल खाई॥२॥
उबरण कौ जाणि और ठौर नहीं काई॥ बहिए नहीं भर्म धार तिरिये गुण गाई॥३॥
हरि बिण कोई नाहीं और तेरो सुखदाई॥ ताकौं भजि बार बार भूलै जिन भाई॥४॥
समर्थ सुखधाम काम सांचि सरणाई॥ परसा दुख हरण तारण त्रिभुवन कौ राई॥५॥८॥

राग धनाश्री--

मन रे निज राम नाम काहे न संभारै॥ जिनि दीनों प्राण दान सो पति कौं बिसारै॥टेक॥
जठराग्नि जरत गर्भ राख्यौ दस मासा॥ जाकौं तजि भरम भूलि लाग्यौ जग आसा॥१॥

परहरि जंजाल जाल तामैं सुख नाहीं॥ परसराम राम राम रमिए रूचि माहीं॥२॥६॥

राग धनाश्री--

राम नाम सुमरि निज सार नेम धारी॥ ऐसो सुख नाहीं और दीसे हैं दुख भारी॥टेक॥
निर्भै निरवाण रुप अजर अमर काया॥ व्यापै नहीं भर्म सूल अकलप जाहिं छाया॥१॥
तजि और आस निरास निर्भै निज सोई॥ ताहि सेई कलपि इहां आयो नहिं कोई॥२॥
बोलै निसांण निगम वाणी रस पियासा॥ जाको है विडद प्रकट गावै निज हासा॥३॥
परसा हरि सुख सुधाम धीरज का वासा॥ सोइ चिंतामणि पर्म नाम भजिए वेसासा॥४॥१०॥

राग धनाश्री--

मन सुमरि सुमरि, हरि को वरत धारि, हरि पर्म सुख करि, उर तैं न विसारी॥टेक॥
न करि विरंब वाणि, छांडि दै जग की काणि, जातैं हो भजन हाणि, सो कहा क्यूं करिए॥
प्रभु रटि बारूंबार, आपणं सनेही सार, प्रीतम प्राण अधार, हरि न विसारिए॥१॥
हरि है कृपा निधान जीव की जीवनि प्राण, परम हित सुजान जाणैं तन मन की॥
तासौं न बनैं दुराउ, जाणैं सबहूं कौं भाउ, अंतर जामी सुभाउ, समझि सबनि की॥२॥
हरि सो हितू विसारि, लाभ धौ कैसो बिचारि, रतन जनम हारि, कित भ्रम बहिए॥
सोई सेई भ्रम त्यागि, तजि न जाइए भागि, रहिए ताहिं सौं लागि, पतिव्रत गहिए॥३॥
व्यापक सबहि माहिं, सबही जामैं समाइ, अभै ताकूं भै नाहिं, ताही संगि रहिए॥
परसा अंतर खोई, सेईए सदा ही सोई, सेवै सौं ताही सौ हौई, हरि ही सौ कहिए॥४॥११॥

राग धनाश्री--

निज राम नाम जिनि भज्यौ सोई जीव ब्रह्म हुए॥ हरि चरण जिन विसारे सु वादि आये मूए॥टेक॥
गनिका गज व्याध गीध जिनि जिनि चित कीये॥ तिनके अघ मेटि मोहन आपणैं सगि लीये॥१॥
अमृत श्रुति सार सुरस नेम धारि जो पीये॥ सो सुर नर प्रेम प्रीति सुमिरत सुखि जीये॥२॥
पतितन पति प्रेम पुंज विसरै जिनि भीये॥ परसा जन ल्यौ धरै लिखि राखि सौ हरि हीये॥३॥१२॥

राग धनाश्री--

विचरत संत सुधारस पाएं॥
तजि माया मद धंध जाणि मोहन सौं मोह लगाएं॥टेक॥
मधुरिखतर विसतार परस्पर पद पल्लव लपटाएं॥
बक साखा जड़ मूल पहुप फल उसत न उसन लगाएं॥१॥
सोखत है मधु मिष्ठान महामति ज्यों कीट भृंग ज्यौ लाएं॥

करि संग्रह रस विलसि प्रगट करि उड़त प्रसंग उडाएं।।२।।
सजल सुपदम अचै जल जीवनि मिलत न मतै मिलाएं।।
मधुकर कुसुम सुहास तृपति करि पावत सुख न सताएं।।३।।
परमारथ कारीन वपु धारै जग सुवारथ विसराएं।।
पावन करत फिरत भुव मंडल सत्य सुभेष बनाएं।।४।।
वरिखत है प्रेम प्रभाव सु अमृत पोषत अपहि पिवाएं।।
लेत सैल जड सरणि सीचि करि सदगति मृतक जिवाएं।।५।।
श्रिक चंदन श्रुति सार सुदीपक देत सुठौर बताएं।।
पारस परम हंस जन परसा पर्म सुमंगल गाएं।।६।।१३।।

राग धनाश्री--

वै हरि एक सकल के धाम।।
जाकू सेस सहस मुख गावै रसना दौइ सहस भये नाम ।।टेक।।
मछ कछ वाराह सिंघ नर बावन भृगुपति भये औतार।।
तामैं राम कृष्ण अधिकारी हरि दरिया जामैं लहरि अपार।।१।।
लोचन है दौइ विराट बहु सुर सूर्ज सोम परैं कूल एक।।
बद्रीपति जगपति रिण मोचन व्यापै सकल धरै बहु भेक।।२।।
भव विरंचि हरि अगोचर निगमहूं अगम न पावै भेव।।
परसराम प्रभु जो अंतरजामी पूरण ब्रम्ह हमारे देव।।३।।१४।।

राग धनाश्री--

प्रीतम केसवै हो मोहि विरह सर लाग।।
यों दुख क्यौं सहिये पीव तुम विण होत सु तन कौ त्याग।।टेक।।
कैसैं रहणि रहूं हरि तुम बिन मोहि उपज्यौ वैराग।।
अब जनि विरंब करौ करुणामैं मिलि मेटौ दुख दाग।।१।।
तुम हो परम कृपाल कृपानिधि कहां मेरो यह भाग।।
आरति मोहि मिलहू किन माधौ गुण औगुण तजि राग।।२।।
अति दीन हम दीन दयाल तुम सुणियो सम्रथ आप।।
जाग तजि न सोवौ सुख दाइक दीन वचन सुणि आप।।३।।
प्रीतम निकटि बोल न बोलै यह अंदेस अनुराग।।

परसराम प्रभु करुणा सिंधु सौं सखि सलिता समाग ॥४॥१५॥

राग धनाश्री--

हरि दीन दयाल जी अपणी दया न दूरि करौ॥
हमारे गुण औगुण मन तुम जिन हृदै धरौ॥टेक॥
हम हैं अनाथ अनाथ बंधु तुम जीवनि प्रान हमारौ॥
अब तुम हीं कौं सब लाज हमारी आरति हरि न हरौ॥१॥
अबहि तुम तबहीं तुम हम कौं कारिज सरि न सरौ॥
सरणाई सम्रथ सकल सुखदाता सो जनि टेक टरौ॥२॥
हम न कछु न कछु कहि जानत हैं है भरोस तुम्हारौ॥
जैसे प्रभु हौ तुम तैसी कछु करियौ इहां कौ है हमरौं॥३॥
असरण सरण विरद अपणां सोई किन करौं खरौ॥
परसराम प्रभु आईवणी अब तुम हम तैं न डरौ॥४॥१६॥

राग धनाश्री--

हरि संगि खेलन हूं चालि तू कित है सखी बरजै मोहि॥
जिय मैं सोचि न देखई तू हरि सौ प्रीतम है और कोहि ॥टेक॥
दुतिया कह्यो न मानही है यह सखी तौ पै सरस सुवाणि॥
आप मुरारि तैं उठि मिलि मेटि दई सब कुल की काणि॥१॥
जो भयो कुल काल सौं ताकी री मोहि नाहि आस॥
अंतर जामी जो मिलै तासौं प्रीति करूं घरवास॥२॥
निलज भई लज्जा नहीं तासौं कहिए कहा वणाइ॥
पडदै राखी ना रहै प्रकट ही पीव पैं चलि जाइ॥३॥
तर्क वचन जे निर्मित सकलेसनि अंध गंवारी॥
पीव संग खेलत भै नहीं करि जो कहि विभचारी॥४॥
भूल्यौ अंति परवसि हम हीं कही जो कही है और॥
इन बांतनि पति पाऊं तौ जाऊ जहां जीवनि ठौर॥५॥
प्रेम पुरुष चित वसै विसर गयौ आवण जाण॥
हरि विण और न भावै परसा प्रभु जीवण प्राण॥६॥१७॥

राग धनाश्री--

कब गाइबो जीवनि राम, हो बौ मन कौ विराम, बसिबौ रसुना नाम, हरि ही हरी ।।टेक।।
कब कटिबौ आसा कौ पास, करिबौ कर्म कौ नास, हो बौ भजन अभ्यास, जनम सही।।
कब पाइबौ प्रेम निवास, हरि कौ हृदै प्रकास आइबौ मन बेसास, दुरति दही।।१।।
कब छूटिबौ काल भै भागि, रहिबौ नाम सौं लागि, जीतिबौ जनम जागि, भागि जो होई।।
कब होईबौ संत समागि, रहिबौ ज्यौं अनुरागि, जरिबौ न भ्रमं आगि, सुख है सोई।।२।।
कब कहिबो जगिवेकाम, मिटबौ सुख सकाम, चितबौ जापति जाम सुफल घरी।।
कब पाइबौ मन विश्राम, हरि सौं सुख सुधाम, है प्रभु परसराम, सरण खरी।।३।।१८।।

राग धनाश्री--

मन राम राम राम सुमरि देवन कौ देवा।। ब्रम्हा सिव सेस सक्र करत जाकी सेवा।।टेक।।
सुर नर मुनि नारदादि, प्रगट साखी सनकादि, कहत है यो जस निकट के रहेवा।।
हरि नांइ जै तारे अपार, लहै को तिन कौ न पार, नेत निगम कहै पावै नहिं भेवा।।१।।
वे तौ तिरे कुल जाति हीन, जो भज्यौ हरि होई दीन, सरनां नेम धारि प्रेम प्रीति हेवा।।
नबका निज नांव की करि, जात है भव धार तिरि, पतित तैं पतित पार बहु खेवा।।२।।
एक है आस सब निरास, दुविध्या है काल पास, तामैं है दुख जीव छाडि भ्रम भेवा।।
निज नांव सौं ल्यौ लाइ लै, मन दै गोबिंद गाई लै, परसराम नाम लै अमृत मेवा।।३।।१६।।

राग धनाश्री--

मन हरि भजि सारण सब काज।।
दीन दयाल देह को दाता ताहि सेवत सुमिरत कैसी लाज।।टेक।।
नर औतार सिरोमनि सब तैं दीनूं जिनि सुन्दर करि साज।।
ताहि हरि कौ नांव लेत नहीं अपराधी क्यौं भूलि जात बेकाज।।१।।
जग्य जोग तीर्थ व्रत साधन सकल धर्म तिन कौ सिरताज।।
परसा प्रभु सरण सबनि कौ भौतारण हरि नांव जिहाज।।२।।२०।।

राग धनाश्री--

आरति करि लै अवगति नाथ की।।
बैगि विचारि विरंब जिनि लावै सौंज सुफल करि साथ की।।टेक।।
पर्म उदार चरण चितवन करि परहरि भ्रमणि अकाथ की।।
परसराम सोई सकल पति सम्रथ सुनै पुकार अनाथ की।।१।।२१।।

राग धनाश्री--

आरति प्रभु अंतर जामी॥ मैं सेवक तू सम्रथ स्वामी॥टेक॥
दीपक एक अनंत उजाला॥ ताकूं परसि कटै भ्रम ताला॥१॥
घंटा ताल है अनाहद वाणी॥ घटि घटि व्यापै भ्रम विनांणी॥२॥
सबद अनाहद बाजा बाजै॥ सुन्य सिंघासण राम विराजै॥३॥
सहज सुरति साहिब मेरा॥ देखै दास जो चरण का चेरा॥४॥
आतम देव और नहि कोई॥ परसराम बोलै सति सोई॥५॥२२॥

राग धनाश्री--

आरति प्रभु कंवल नैन करत मृदित चेरौ॥
ठाडौ दरबार द्वारि, करत नवनि चौंरि, मोल कौं लियो तुम्हारि, तेरो हूं घटि केरौ ॥टेक॥
करत न को निहाल, छाडि औरि आल जाल, हाथ लै मृदंग ताल, गाऊं रे जस तेरो॥
परसराम प्रभु स्याम, देहूं दान हरि नाम, दीजिए भगति दाम, नेम मेटौ न मेरौ॥१॥२३॥

राग धनाश्री--

आरति सकल दीपक राम॥
अखंड जोति अभंग मंदिर रचित बड विश्राम॥टेक॥
अकल मूरति अटल आसन अखिल अविगति नाथ॥
पूजा विविध अनंत मोहे जित सु तित तेरे सब साथ॥१॥
अजर आपणं दिष्टि सब है बिस्व रूप मैं बिस्तार॥
ब्रम्हंड पिंड अनेक अंतरि वसै जाकौं वार न पार॥२॥
ब्रम्ह चरित अपार महिमा अगम गति व्यौहार॥
रटै संकर सेस ब्रम्हा निगम करत जै जै कार॥३॥
देखि परम उदार दरसन सरस त्रिभुवन सार॥
निरखि निज निरवाण औसर थकित सुर अवतार॥४॥
प्रहलाद धू सुक व्यास नारद करत मुनि जन सेव॥
परसराम प्रभु निवास नरहरि प्रगट पूरण देव॥५॥२४॥

राग धनाश्री--

जब लगि हरि हिरदै न समायो॥
तब लग सुख संतोष न सोभा जग मिलि जनम गमायो॥टेक॥

कहा सर्‌यो नर नांव रूप तै जो भूपति भूप कहायो ।।
जीवन जनम गयो दुख माहिं पैं सुख सिंधु न पायो ।।१ ।।
वेद पुराण सुण्यो सब योंही सीख्यो गायो गाइ सुणायो ।।
मेटि न सक्यो कर्म तन मन तैं हरि निहकर्म न गायो ।।२ ।।
कीयो न करायो सबै गमायो जो हरि मन न बसायो ।।
मन कै दोष मिटै क्यौं परसा जो हरि मन माहिं न आयो ।।३ ।।२५ ।।

राग धनाश्री--

जब लगि हरि सुमरण सु न करिए।।
तब लग जीवन जनम अकारथ सुख न कहूं दुख भरिए।।टेक ।।
भव सागर तिरिबे कौं दुस्तर विण हरि जिहाज कैंसे कै तिरिए।।
विण हरि परचै संसार धार महि निति भर्मि भर्मि बहि मरिए।।१ ।।
जीवत लौं नरक माहिं बसिवौ और मूवां नरक महिं गरीए।।
जनमि जनमि जम लोक जाण कौ नर मरि मरि कै औतरिए।।२ ।।
मिथ्या वाद विवाद भजन बिना सो करि करि क्यौं निस्तरिए।।
झूंठ कमाइ सांच कौं परहरि यों परसा पार न परीए।।३ ।।२६ ।।

राग रामगरी--

हे देव दीन बंधू तुमहि दोस नाहीं।। मोरै तोर वेसास उपज्यौं न माहीं।।टेक ।।
मति अंध अग्यान जग आस भ्रमत, फिर्‌यो सदा मन भूख तृष्णा न जाई।।
त्रिपति निजरूप हरि हंस न सेयो, सुरग सुख पंथ तजि पर्‌यौ खाई।।१ ।।
स्वाद स्वारथ विलसि रोग रोगी भयो, गयो तामाहीं तउ तज्यौ नहीं जाई।।
ईसौ मन नीच अपमीच सूझै नहीं, अमर फल डारी विष गांठि खाई।।२ ।।
विथा वपु गई विचरी अपवसि क्यौं, लागै नाहीं जहां बैद कौ बल कोई।।
वोखदी जतन गुण जहां नाहीं लागै, मरै हैं सोई अंति जीवण न होई।।३ ।।
प्रभु पतित पावन मैं असत जाणयो, यों करी अपघात विष पान पीएं।।
सुणूं महाराज दया सिंधु परसा सु, यों जात जम लोक नर सौंज लीएं।।४ ।।१ ।।

राग रामगरी--

सुणौं देव देवाधि येक अरज तुम सौं करूं आपणैं दास कौं दुख न दीजै।।
काटि सब कष्ट रिछिपाल हरि भै हरण अभै करि अपणी भगति दीजै।।टेक ।।

अगणि औतार उपकार कारणि कृपा भगत कै हेत बहु भेष जो ल्याये।।
करत बहु रूप निज रूप रछ्या करण कर धरै चक्र ततकालि आये।।१।।
वदत है सब साध तब साखि साची सदा करत हरि सत्य जो संत भाखै।।
यौं सुणियो मैं सत्य करि भगत वछल सदा आपणैं भगत की पैज राखै।।२।।
आदि रू अंति इकतार असरण सरण प्रगट नीसांण तिहूं लोक बाजै।।
ब्रम्ह सिव सक्र सनकादि सुक सेस सहस मुखि अमित महिमा बिराजै।।३।।
व्यास नारद निगम कहत निज वाणि यौं दास कौ दास हरि सम न कोई।।
परसा सुहरि अघ दवण परम मंगल प्रभु धरहूं पैज अबैं सोई।।४।।२।।

राग रामगरी--

सुणहूं हे राम जैसी बात भई मोरी।। मैं हूं पतित कैसे रहूं सरणि तोरी।।टेक।।
ऐंचि अचयो सु विष पैसि भव सिंधु मैं पिवत बहु प्यास अजहुं न त्यागै।।
भयौ रस लूध मन त्रिपति पावै नहीं स्वादि लागो असर और और मांगै।।१।।
रह्यो जो मन सोइ संसार सुख नींद मैं सदा निस पूरहिं कबहूं न जागै।।
सहिलै नहीं छीन मोह मद मैं ऊपरि फिरी मंत्र जंत्रादि वोखद न लागै।।२।।
लियो वपु जीति अबै नखसिख न सूझै सुणै विथा बहु देखि भै वैद भागै।।
परसा सु वेसास निज रूप रछया बिनां मरत हूं प्रगट अपणैं अभागै।।३।।३।।

राग रामगरी--

सुणूं राम रघुनाथ या बीनती दास की मेरे दीन बंधु सुन तुम सौं पुकारैं।।
विथा दुख विपति तन ताप व्यापै अधिक झूंठहिं संगि सांच की सूझ हारौ।।टेक।।
मैं पर्‍यो भूलि उद्यान मैं बन पंथ लाभै नहीं किसी दिस जाऊं बस्ती न पाऊं।।
रोकि लूट्यो पिसन पहूंचि करि लीयो कृपण धन हीन प्रभु सरणि आऊं।।१।।
काम रिपु क्रोध रिपु काल रिपु दहै राति दिन त्रास दुख बंदि वसि कीव।।
मोह बड़ विघन तृष्णा तरल तनी बसै क्यौं करूं केसवे कर्म बसि जीव।।२।।
संसार बड सिंधु कछु पार पाउं नहीं नांव नरहरि बिना मांझि न लीया।।
अधिक संकट बडै बेग बाहर करौ जात उलटच्यौं प्रवाह बूडत लीया।।३।।
मैं मुगध मति हीण गुर ग्यान खोजूं नहीं गर्व गाफिल भयो जात भ्रम धार।।
हा नाथ हा नाथ त्राहि त्राहि त्रिभुवन धणी राखि लै राखि लै सरण या बार।।४।।
भाव बिण भगति बिण कौं तारै तिरै जीवन यौं आस बसि प्रेम बिण प्रीति।।

कुबुधि अहंकार कपट हृदै बसै जो कीयो बस आपणै जाणि जम जीति ।।५ ।।
विषै विष फंद अति अंध सुझै न दिसि कुदिसि अगनि जल जलन पाया ।।
परसा जन दुखि विण साध संगति सरणि क्यौं मिटै झाल रिछिपाल राया ।।६ ।।४ ।।

राग रामगरी--

कहौ क्यौं विण सु भगति निस्तार होई ।। जो प्रीति पति प्रेम रसनां न पोई ।।टेक ।।
बकिवाद बकिवाद करि स्वारथ सुगण मंद मति मोह माया समोई ।।
क्यौं होत निरमल जु मल मद्धि मिलै सुरति सतसंग सिल सौं न धोई ।।१ ।।
सुणि अंध कित धंध सौं लागि लालचि बह्यौ पाई नर देह तैं वादि खोई ।।
विषै आस वसि मोह की पासि बंध्यो सुकृपाण धनहीन निकस्यौ न होई ।।२ ।।
जो संसार व्यौहार करि कर्म भर्मत फिर्‌यो बहि गयो धार भै भार सोई ।।
सूझै नहीं इहां बार उहां पार हरि कीर विण परसा उतारै न कोई ।।३ ।।५ ।।

राग रामगरी--

गयो मन वादि अस्थिर न होई ।। जो सत्य निजरूप सुमर्‌यो न सोई ।।टेक ।।
हारि चाल्यो महा निधि साथि न तो मुगध बल बुद्धि विण बस्तु खोई ।।
क्यौं होत निस्तार निज निधि परहरि भगति नेम निहचै न कोई ।।१ ।।
तज्यौ आस वेसास विश्राम हिरदै सूं विण पहिचाणी को देत ढोई ।।
जूंनि अनेक सत जनमि भर्म्यो सूझ्यौं न तटवाणी रस हीन छोई ।।२ ।।
तृष्णा तरल रूलत न सूल सालै सदा दुखित सुख सोच्यौ न कोई ।।
त्रिप्ति उरि वोत हरि हेत परसा समझि प्रीति पति प्रेम मोई ।।३ ।।६ ।।

राग रामगरी--

मनां रे कर्म बन्धन है सबै और जो देखिए विषै बलबंधु भवसिंधु भारी ।।
रघुनाथ पति भजन तैं परम गति पाइये नांव निरबंध निर्भै मुरारि ।।टेक ।।
आस की पास पडि जलत रुचि जहां सु तहां मोह की अगनि नहीं जात टारी ।।
सोचि देखि मन बहुत व्याकुल भयो एक अकल विण सकल संसै संघारी ।।१ ।।
यै अचिरज बडौ देखि करि मन डर्‌यो अनंग गति कुमति मिलि माहिं बीझयां ।।
विण भगति ग्यान की धार बहिं पार पायो न कोई उरवारि बहुरंगि रीझ्यां ।।२ ।।
जग गांठि की वोखद थकि तो व्याधि व्यापै बहुत वैद वेसास विण व्है न कारी ।।
यौं श्रवणि सुणिता सीखतां गावतां सुमिरता देखतां तू देखि बड़ सौंज हारी ।।३ ।।

जीव जग लागि करि राम बल वीसर्‌यो रहति को कहत रिधि सिधि विकारा॥
मुकत कौ बंध निरबंध हरि परहर्‌यो मूल तज चित चढ्यौ है दोरि डारा॥४॥
अधिक संकट माह मोह घोर निसी मैं रतै तू ही सीस लै चढायो भार मूआ॥
परंसराम प्रभुराम सुमिरण बिनां मन बहू विगूचण भई जात जुआ॥५॥७॥

राग रामगरी--

अजू रे जीव जीवै कहा आस वेसास लै तू निकसी निरवाण पद क्यौं न गावै॥
सदा सुख सोग संताप संकट दहै रे मंदमति जगत कित सीस नवावै॥टेक॥
पकडि गुर ग्यान विग्यान कर धरि करद मर्मत की मारि डर भेद मांही॥
होइ घाइल घिरौं घूमि घर मैं परौं बिण परमगति पाई मरि जाइ नाहीं॥१॥
सुणि मूढ आरूढ़ होइ सिंघणि सुगहि गवण करि अगम दिसि दूर नाहीं॥
सब भर्म तजि भेद भजि सुदिढ़ संसौ न करि तिरि है प्राण सुर पारि जाहीं॥२॥
समझ सुख धाम सब काम पूरण कला सकल मैं अकल व्यापक बिहारी॥
देखि बड बैद निहवंण दिष्टि मरि जहां सुतहां प्रगट पूरण सुखकारी॥३॥
सकल अरि जीति करि प्रीति निज भजन सौं हेत करि भेट पति संग सोई॥
परसा जन प्रेम नेम धरि सुमरि हरि नांव सुख सिंधु सम सुख न कोई॥४॥८॥

राग रामगरी--

सोई हरि अभै पद ताहि भै नाहीं॥ मुगध मन और सब देखियत वस्तु भै माहीं॥टेक॥
सहत है जम त्रास भौ पास रत जीव जो मति बिनां निज ठौर निहचल न होई॥
सोई सेइ पद सरण दुख दोष विष हरण कौं बिन हरि और सम्रथ न कोई॥१॥
समझि सुणि साखि हरि प्रकट तारण पतित कहत सब संत मति सति जाणी॥
और छाडि जंजाल बल काल कुल कलपना सुमरि हरि नांव निहकलप वाणी॥२॥
और सब कर्म भर्मादि मत सिद्धि साधन सकल तुच्छ कण हीण सुणि सोचि जोई॥
परसा सु आरंभ जो और अगिणत करै तोऊ उर्द्ध मन सुद्ध हरि, बिन न होई॥३॥९॥

राग रामगरी--

सोई हरि प्राणपति प्रगट मन किन संभारै॥ बिन भगति नर जनम कित वादि हारै॥टेक॥
समझि दिढ बुद्धि करि सुद्ध निर्मल सुपति सत्य सुख रूप निर्भ मुरारी॥
निरखि निधि सोई भजि गाइ गुण पर्म पद सर्व सुख सकल आनंदकारी॥१॥
हरि नांव सुखरूप साधन बडो भजन कौं जो भज्यो उरधारि भौ पार तारै॥

सर्व सुख दैत वैकुंठ पुर आदि देइ और जो दुख सोक सभै हरि निवारै।।२।।
कछु समझि मति अंध तजि सब धंध परबंधए कर्म करि सुख न कोई।।
श्रुति सु संम्रति कहै साखि सुख सिंधु की श्रवण सुनि सीखि मुखि सुमरि सोई।।३।।
चित गहि चरण दुखहरण कै सरणि रहि कृष्ण केसौ सुमरि सार वांणी।।
परसा वेसास उर धारि प्रभु सेई जो अंतर निरंतर वसै सत्य सो जांणी।।४।।१०।।

राग रामगरी--

सुमरि मन सुमरि हरि हेत करि हृदै धरि मंत्र निज मूल मिथ्या न खोई।।
परम रस प्रेम रसनां विलसि नेम धरि डारि अपकर्म भव भर्म छोई।।टेक।।
राम रमि तू राम रमि तहां विराजै रतन जहां सु तहां जीव जंत्रादि सोई।।
रह्यो सकल भरपूरि नहीं दूरि नीरौ बसै बास विद्रूप दुतिया न कोई।।१।।
प्रगट निज रूप रवि निकट ज्यौं देखै सुणै गाइ गावै तो सुहरि सति होई।।
समझ गुर ग्यान विग्यान अंतरि करि सुपति प्रीति परसा कीयां देत ठोई।।२।।११।।

राग रामगरी--

मनां सुमरिये राम संसार तारण हरि जांहि सुमर्यां कछु पार होई।।
और आल जंजाल भ्रम काल भौ छाडि दै द्रुमति संगति तिर्यो नाहिं कोई।।टेक।।
ब्रम्हादि सनकादि सुर सुमिरन करै प्रकट विडद गति निगम गावै।।
सिव सेस मुनि ध्यान उंमान अमृत कथा सुरस पीवै न त्रिपति पावै।।१।।
देखि पसु पंखि द्विज आदि अधम उद्धरे जिनि भज्यो तास के सरे कांमां।।
जाति छीपौ जाकी अगम महिमा करी सो मिलि भयो एकै हरि नांइ नामां।।२।।
देखि कुल रीति प्रतीति कलमां पढै करै गोत कबीर नहिं सूग काए।।
कबीर कंवल प्रगट प्रभु तैं भयो बास नव खंड बहू भंवर धाए।।३।।
जाकी जाति मद्धिम अधम अरस परस नहीं जाणि सत्य संसार नीचा।।
या साखि प्रसराम प्रभु भजन की जो प्रगट रविदास सब लोकि ऊंचा।।४।।१२।।

राग रामगरी--

ऐसो भजन भै हरन भै और व्यापै नहीं कौई अभै हरि नांव जो हेति भासै।।
त्रिविध तनु ताप संताप सौखण जो प्रबल सुणत बल ब्याल भै काल नासै।।टेक।।
अघ तिमिर निसि घोर अंधार देखै मिटै कब जब सत्य करि रवि प्रकासै।।
त्यौं रोर बर चोर निज रूप रछया करण राम रघुनाथ नर उर उजासै।।१।।

ज्यौं सिंधु धुनि श्रवनि सुनि सकल संसै सब वन भुवन जीव जंत्रादि त्रासै॥
त्यौं हरिख अरि सोक जनम मरणादि तैं सुतरि कबहू न फिरि बस्तु वासै॥२॥
मिटत सब किरणि बलहीण तन तेज विण निरखि रवि जब राहू ग्रसै॥
सुनहिं पावन सुजस श्रवणि जो संचरै तैं सोधि वपु विद्या की जड़ उकासै॥३॥
ज्यौं सुणत धन गाज मगराज जीवै नहीं मरत है करि पिंड तैं प्राण पासै॥
त्यौं विघन कलि काल कृल कलपतर सकल सुख मूल भजि दुख निकासै॥४॥
रहत निरभर तजिभार दिस बोर ज्यौं सिंधु सनमुख मदा नदि निवासै॥
परसा सु जन धन्य नित नेम निहचौ गहै प्रेम निज नीर जिनि पियो प्यासै॥५॥१३॥

राग रामगरी--

सत्य है साध कौ सबद मिथ्या न होई॥ मानूं न मानूं सुइच्छा सूं कोई ॥टेक॥
आनन्द लीला रमैं पंच वसि करि जमैं रहै संसार की धार न्यारा॥
गहै वेसास निरदुंद संतोष धन पीवै अमी रस तजि विकारा॥१॥
जपै हरि नांव हृदै धरै हित करै सदा इकतार निर्भार वांणी॥
निरवाण निजरूप परसा पति रमित ता दास की श्रुति समांणी॥२॥१४॥

राग रामगरी--

श्री सिंघ नृसिंघ देवा॥ सिंघ बड सिंघ ज्यौं सिंघ सेवा॥टेक॥
सिंघ अनि सिंघ बल सिंघ कामा॥ अभै सिंघ निज सिंघ राया॥१॥
सिंघ रछया सकल सिंघ छाया॥ सिंघ व्यापक सिंघ वपु बनाया॥२॥
सिंघ वरु सिंघ अरि सिंघ गाजा॥ राजै है सिंघ सिंघ मैं सिंघ राजा॥३॥
सिंघ गरजनि सदा सिंघ वाचा॥ परसा प्रभु सिंघ नृसिंघ साचा॥४॥१५॥

राग रामगरी--

ऐसो मन तजत न तन के खोट॥
लिये रहत अपणै अपणै संग सहत सकल की चोट॥टेक॥
ज्यौं रुति लता उपजि नव पल्लव लै तिन द्रुम की वोट॥
उरझि पुरझि सुरझत दुख पावत बिछुरत अबोट॥१॥
ज्यौं घर खार खोरि घर भरि भरि करत अनत लै कोट॥
वरिखि वरिखि वर्षत विष धोवत ऊसर अति अटोट॥३॥
दर्पन दिव्य जगत संगि विचरै पति स्वारथ मति छोट॥

निरखत बदन नैन कर कीये उभै निरंध्रनि चोट ॥३॥
धर धुकित सीस तर हर करि ज्यौं चरण चलावै पोट॥
परसराम जिम कौंप प्रकट ही जात नरक लीयें जोट॥४॥१६॥

राग रामगरी--

अपन मन तजत न मदन विकार॥
मुगध गण्यौ भूल्यौ माया बसि जहां तहां भ्रमत असार॥टेक॥
ज्यौं रुति सुवान असुद्ध अंध मति होई सहत सिरमार॥
ऐसो विट़ल अटल आसावति तनहूं कि सुधि न संभार॥१॥
घर घर फिरत हात नहीं आवत हेरत विष व्यौहार॥
अति रस लंपट लालच लियौ लायें ढके उघारत द्वार॥२॥
चंचल चपल सकल संगि धावै निसि वासर इकतार॥
रोक्यो धरत न धीर डरत अति काइर करत पुकार॥३॥
करम असोच पोच नहीं सोचत लोचत लिहत हूंकार॥
परसराम पति हीण निआदर कोइ न करै रखवार॥४॥१७॥

राग रामगरी--

सु कैसैं करि हरि पति कौ व्रत धारै॥
जो साधै नहीं भगति परमारथ स्वारथि पंच पसारै॥टेक॥
रहै सदा मलीन मोह माया मिलि काम क्रोध तन जारै॥
हरि दीपक गुरु ग्यान ध्यान विण भर्मै भुवनि अंधारै॥१॥
दुख सुख सोच पोच आंदाहन हरिख सोक न विसारै॥
लाभ हाणि निज नेम प्रेम बिण अंध नहीं कछु बिचारै॥२॥
अहंकार बल डिंभभार सिरतैं न कबहूं जो उतारै॥
बूडै प्राण असमझि भगति विण भव समुद्र को तारै॥३॥
यौं उपजै खपै तिहूं गुण संगति जो आसा कर्म न डारै॥
प्रसराम प्रभु विण मन परवसि सदा काल कै सारै॥४॥१८॥

राग रामगरी--

कठिन परी कैसे भज्यों हरि नांव तुम्हारा॥ मैं परवति बांध्यो फिरूं छूटै न विकारा॥टेक॥
दारुणि दह दिसि दौं बलै दौंवै घर छाया॥ अग्नि झाल भीतरि जलै जल दिष्टि न आया॥१॥

प्रेम बूंद मोपैं नहीं जिहिं तुम बसि आवौ॥ माया विषय वसि भयो जन दुखि छुडायौ॥२॥
होहूं कृपाल कृपा करौ जागत जनि सोवो॥ भगत वछल विडद अपणूं जिनि खोवो॥३॥
सेवक जीय रहसि ऐंचति तैं सोई पावै॥ परसा ठाकुर सो सही जो या चिंत गंवावै॥४॥१६॥

राग रामगरी--

तुम कहिये चिंताहरण मोहि चिंता भारीं॥ राम विडद तौऊ जाणि हूं जो हरौ हमारी॥टेक॥
जीवत जो परचौ नहीं को मूआ पति यावै॥ पिंड पर्‌या जो सुख पाइयै सो मोहि न भावै॥१॥
करौ कृपा माहि केसवे दुख मिटि उबारौ॥ राखि सरण सुख पाये संग तैं जनि टारौ॥२॥
प्रेम सुरस अंतर बसौ छिन छिन पीऊं॥ परसा प्रभु हरि सदा दरसन द्यौ जीऊं॥३॥२०॥

राग रामगरी--

ऐसी राम हित विण कहूं काहि॥ तन छीजै दुख सह्चो न जाहि ॥टेक॥
प्यासो क्यों करि जीवै विण पाणी प्राण परस प्रीतम चलि जाइ॥
औसर मिट्चौ वहुरि कब मिलि है पाणी बहि मुल्ताणि समाइ॥१॥
पाणी बिनां मीन तन त्यागै तलफि तलफि तूटै यों तन पौंन॥
पाछैं कहा मिलै जो दरिया बहि जावै काहि जिवावै जीवै कौन॥२॥
दावानल प्रकटि सब जारै उबरण अंतर रहै न कोई॥
तब घण बरषि कै कहा सींचै जब बीज जड़ डाल न होई॥३॥
दीन दयाल भगत हितकारी तुम विण पल रह्चो न जाइ॥
विलपै दास दुखी विंण दरसन परसा प्रभु करौ सहाइ॥४॥२१॥

राग रामगरी--

जाकौं हरि निजरूप दिखावै॥
ताकौं सदा चिंत सुमिरन की जाकौं हरि विण और न भावै॥टेक॥
हिरदै वसियो रहै हरि अस्थिर हरि विण और न आवै॥
हरि जहां तहां सुख सिंधु सु मंगल हरि ही हरि दरसावै॥१॥
श्रवन निहारि नैन निहारि अंतर हरि चित तैं न भुलावै॥
हरि हरि हरि बोलै मुख वाणी रसना हरि हरि हरि हरिगावै॥२॥
हरि गुर ग्यान ध्यान पूजा हरि हरि हरि ही सौं प्रीति लगावैं॥
तन मन सौंज सौंपि हरि आगै जो हरि हरि ही कौ सिर नावै॥३॥
सोवत हरि जागत हरि जीवनि हरि हरि ही सौ ल्यौ लावै॥

बैठत हरि उठत हरि चितवत धावत हरि संगि धावै ।।४।।
हरि हरि उचरत निसि वासर हरि अचवत न अघावै ।।
हरि हरि हरि सुमिरत जन परसा हरि ही मद्धि समावै ।।५।।२२।।

राग रामगरी--

जिन कै प्रेम भजन सुख आइक ।। तिन कै वस त्रिभुवण के नाइक ।।टेक ।।
हरि सनेह करि सुक मुनि गायो ।। निर्भि भयो (अरु) परम पद पायो ।।१।।
श्री हरि सकल सवारण काजा ।। सुणि भौ तिरियौ परीछित राजा ।।२।।
हरि सुमिरण प्रहलाद उबार्‌यो ।। भगत सहाइ जो सिंघ वपु धार्‌यो ।।३।।
हरि पद सुमरि सुमरि उर धारै ।। चरण कंवल कमला न विसारै ।।४।।
प्रिथु उर धरि हरि पल न विसार्‌यो ।। घर चित नित सु नेम व्रत धार्‌यो ।।५।।
हरि प्रतिपल भगति प्रण पार्‌यौ ।। बंदन करत अक्रूर निस्तार्‌यौ ।।६।।
करि दास भाव हरि कौ मन दीयो ।। हरि हनवंत नाम सम कीयो ।।७।।
हरि निज रूप सकल सुखकारी ।। जो सखा भाई पंडव हित कारी ।।८।।
हरि बांवन राज प्रिथि को लीनौं ।। बलि सर्वस दै अपणै बसि कीनौं ।।९।।
प्रेम नेम कै बसि अपरं पर ।। ब्रज बालक हो रमै सकलवर ।।१०।।
भगत बछल हरि भगत वसि ।। परसराम प्रभु सदा एक रसि ।।११।।२३।।

राग रामगरी--

संतौ राम भजन भै भागा ।।
परम निवास नांव निधि कैसो ता चरणनि चित लागा ।।टेक ।।
आवण जाण वरण विधि छूटी अवरण मैं निधि पाई ।।
चिंता मिटि सकल पति परस्यो सो सुख कह्यो न जाई ।।१।।
राति धौस मिलि सहज समाणी धरणी अधरैं पाई ।।
सूरज भागि दुर्‌यो उत्तर मैं चंदा दछिन मैं जाई ।।२।।
जहां सूनि सहर सुर लोक देवता अवसापुरी बसाई ।।
परसराम अविनासी राजा ता प्रभु सौं बनि आई ।।३।।२४।।

राग रामगरी--

जो हम करैं सु कछु न होई ।। कछु करि हैं राम सु व्है हैं सोई ।।टेक ।।
हमरा किया जो अकिया होई ।। हरि करि है सुन मेटै कोई ।।१।।

जो हम करैं सु करणी झूंठी॥ राम करैं सु होइ न अपूठी॥२॥
आप करै सोई अप मारग॥ हरि की लार रहै निर्भारक॥३॥
निज निरभार सोई सोई छूटै॥ परसा राम विमुख जम लूटै॥४॥२५॥

राग रामगरी--

अवधूं ग्यान अगोचरी दिष्टक मैं नाहीं॥ दिष्टि आदिष्ट न देखिए व्यापक सब माहीं॥टेक॥
मद्धि वसै तौ देखिए देखैं नहीं कोई॥ वाकौ सोई देखि हैं जु वाही सो होई॥१॥
रहति कहति मैं हो नहीं सो सब तैं न्यारा॥ दिष्टि मुष्टि आवै नहीं निरमल निरधारा॥२॥
रहत सुमिलित निरंतरा नखसिख न अधूरा॥ ज्यौं नभ सोभित नीर मैं यौं वाही रह्यो भरिपूरा॥३॥
गाण अजाण न जाणई जाणै सभी गाणां॥ परसराम प्रभु सिंधु मैं जो रहै समाणां॥४॥२६॥

राग रागमरी--

मन रे धीरज धरौ विसारौ॥
मेर तेर अपबल की तजि करि अंतरि राम संभारौ॥टेक॥
नाई नाज दहूं दिस खोवै कण कौ स्वाद न पावै॥
स्वाद कुस्वाद लहै रस धरणी जामैं बीज समावै॥१॥
पाव न पाक कडाही पडदै कर गहि कली हिलावै॥
भौजन संगि जलन कौ स्वारथ स्वाद कुस्वाद न पावै॥२॥
जब लगि जीव बसै घट भीतरि जीवत जीव कहावै॥
निकस्यो जीव भई जब माटी सब प्रेतक नांव बुलावै॥३॥
साखि साखि कहत जग खीणा कही सुणि भरम पाया॥
परसा राम जो बस्यो नहिं अंतरि तौ आसा मूल गंवाया॥४॥२७॥

राग रामगरी--

राम विण सरणि कवण की रहिए॥टेक॥
कर्म कठिन माया बड बंधन जनमि जनमि दुख सहिए॥
प्रलै काल संसार सु पावक तामैं परत परत न दहिए॥१॥
नाहिं न हितं अबर कोई हरि विण जहां कहूं सुख लहिए॥
विथा रोग वियोग सोच दुख अपणूं और कवण सूं कहिए॥२॥
तुम दया सिंधु दुख हरण कृपा निधि दिढ सु पात जो गहिए॥
परसराम जन तिरत विरंब नहिं गुर प्रसादि निर्बहिए॥३॥२८॥

राग रामगरी--

मन खोजि नर हरि गाऊंगा।। हरि हरि तजि अनत न जाऊंगा।।टेक।।
अक्रूर घटि विश्रांत न परसौं जलि जमुना न बहाऊंगा।।
मथुरा बसि मन मोहन मिलि हूं ता सरणै सुख पाऊंगा।।१।।
केसी कंसनादि कै भै नहीं डरपूं कालि दहै मैं न्हाऊंगा।।
धू अस्थां न रहूं धीरज धरि न चरि घाट चित लाऊंगा।।२।।
दस औतर कर्म नहीं भरमूं जनम अस्थान रहाऊंगा।।
सुनंद गांव निज नांव महापति ताहि देव सिर नाऊंगा।।३।।
जप तप तीरथ व्रत भर्मि पतिव्रत नाही लजाऊंगा।।
परसा दास रच्यौ बंसी पुर ता सूरति मांहि समाऊंगा।।४।।२६।।

राग रामगरी--

उधौ हरि हम सौं जो करी तैसी को जानैं।। हम जानैं कै करि हितू तुम तैं सब छानैं।।टेक।।
कहा कहैं अब कोण सों जो हूवो अणहूवो।। यहै सोचि संसौ सदा जु कागणि संगि सूवो।।१।।
वूहां सर्वस सबकौ हर्‌यौ फिरि भये अबोलै।। इहां हित करि आपण हरी उनसौं मुख बोलै।।२।।
अति हिताय अपणो जताय भये अण बोलै।। परसराम प्रभु ब्रज तज्यौ मथुरा में डोलै।।३।।३०।।

राग रामगरी--

सुहरि सौं झगरौ किस्यौ पति देऊ हमारा।। तेरी संगति बूडि है नहीं होइ निसतारा।।टेक।।
हे सुंदरि यौ जनि कहै प्रीतम दुख पै है।। अब तौं मेरै वसि पर्‍यो जैहै तब जै है।।१।।
रीझै कत विवचारणि निम्रल मल लावै।। आवण दे किन मो लगैं मत ही सुख पावै।।२।।
सो सुंदरि क्यौं आई हैं मैं कामण करि जीता।। मेरै ही रंगि रातौ जु रहै तेरौ नहीं प्रीता।।३।।
तुहुं कुबुद्धि संसै भरी तेरै क्यों वणि आवै।। हेत सुमति संगति रहै तो तैं सुख पावै।।४।।
मैं नखसिख लू सौंप्यों सबै हुतौ हमारौ।। जिनि बातनि सूं भौ बूडि है सोई दीनों चारौ।।५।।
कत मूरखि गर्वै गई दिन दस बोराबै।। भौ संकट दुख सिंधु मैं जो तो कौं छिटकावै।।६।।
मोहि याहि नीकैं वणी हम दोउ मिलि जागै।। हूं या कीयो मोह रहै निरभै मन तैं भागै।।७।।
सुण तेरो प्रीता यौ नहीं न तू याकी प्यारी।। यो दूजौ जाइ बसाई हैं तोहि छाडि गंवारी।।८।।
सौकि सालि सुख को नहीं सुख सुंदरि पायें।। परसा सुख दुख मिटै दरिया दिठि आयें।।९।।३१।।

राग रामगरी--

प्रीतम पर्म दयाल सौं मिलि मैं सुख पायो।। पोषि सुधारस सौं हरि दुख दूरि गंवायो।।टेक।।

विरह असुर की त्रास तैं जु तन मन मुरझायो॥ जिनि मृतक जिवांवण कारणैं सु अमृत वरसायो॥२॥
जिनि विरह जरत पीय प्रेम सौं उर सीचि सिरायो॥ पीव परसि पर्म मंगल भयो मेरे मन कौ भायो॥३॥
अति आरति विलसत सदा पीय सरस सुनायो॥ परसराम मन प्यासो खरो पिवत नाहीं अघायो॥३॥३२॥

राग रागमरी--

अपणां नांव चलाइये मुसिएं मेरा तेरा॥ राम न रीझै साच विण वकीएं बहुतेरा॥टेक॥
सुख तरंग गंगा बहै निर्मल जाहि नीरा॥ ताकी ढिंग छीलर खणै चाहै जो जल सीरा॥१॥
अमृत कुंड नहाइये ढिंग कूप खणी जै॥ सेझै सीर न आवइ जो चौढै सौंई रीझै॥२॥
चित चोरी साधन हुतै तो क्यौं साह कहावै॥ याजो कबहुं दूरि हौई तौ साहिब जन भावै॥३॥
जाकि पूंजि वणिजिए ताहि पूठि नाहीं दीजै॥ तासौ रहिए दीन हौइ साईं द्रोह न कीजै॥४॥
साई द्रोह दुख आपकौं पीव मानैं नाहीं॥ परसा कहिए कूण सौ सोचो जिय माहीं॥५॥३३॥

राग रामगरी--

नरहरि यह संसौ मोहि आवै॥
साहिब जो अंतर को नाहीं तौं हरि नर कहा कहावै॥टेक॥
आदि रु अंत जोई एक ही दीसै सोई है मद्धि समाया॥
करणी कथणी दोय करी राखी तैं यो का भर्म लगाया॥१॥
दरिया अगम गम नाहीं तामैं काया कलस कहाई॥
फूटौ कलस भरयो जल कौ जल टरै न टारयो जाई॥२॥
तू निह कर्म किन करिया किन धर्या घट माटी॥
तू पड़दै राखि भूलाये कौ किन बांधि भरमि की टाटी॥३॥
जो गुण धरया तैं ही धरिया गुण मिटि नृगुण समावै॥
एकमेक कछु समझि न परइ परसा रामहि गावै॥४॥३४॥

राग रामगरी--

पलटि सि नां हो नाथ पलटिसि नां॥ तुम करुणा सिंधु कृपाल कैसो ॥टेक॥
तुम हो दीना नाथ दयाल॥ मोहि राखि राखि रछिपाल॥
मेरी तौ तुम ही लगि दौर॥ तुम विण कोई नाहीं और॥१॥
मेरी सुणिये विषम पुकार॥ हौं आतुर आवण की या बार॥
प्रकट होवहू इहां आइ॥ जोहू जीऊ दरस हूं पाइ॥२॥
तू असरण सरण मुरारि॥ मैं सरण गह्यो सुविचारि॥

मैं अनाथ अरु बल हीण।। तुम समरथ सब लीण।।३।।
तुम ही अंतर जामी जान।। तुम ने कछु नाहिं न छान।।
कहिये जुजिनि जावैं नाहीं। प्रभु तू तौ सब जाणैं याहि।।४।।
मै जड़ जीव सदा अग्यान।। तुम्हारै बल कछु न जान।।
यौं मैं कीयो अधिक अकाज।। तुम बिन रहै न मोरी लाज।।५।।
हू भव संगि भ्रम्यौं मति हीण।। प्रभू तजि निर्मल निकुलीण।।
परसराम कहै पाइ लागि।। भयो विमुख सु मोर अभागि।।६।।३५।।

राग रामगरी--

श्री राम राम राम श्री राम लीजै।। रसुनां प्रेम पर्म रस पीजै।।टेक।।
हरि सुमिरण सुमिरै सो निर्मल।। सास विमल जो पीवै पर्म जल।।१।।
हरि कीरति जहां जात बखाणी।। परम पवित्र सुद्ध सोई वाणीं।।२।।
हरि गुण सुनै श्रवणि सुख पावै।। जीव सदा सोई पवित्र कहावै।।३।।
लोचन पवित्र जो रुप निहारै।। कर पवित्र हरि कै हित बारै।।४।।
हृदय पवित्र होत हरि गाये।। सीस सुद्ध जौ हरि द्वार नवाय।।५।।
तन मन प्राण पर्म पद पांएं।। मनसा मति अवगति ल्यौ लाएं।।६।।
चरण पवित्र चलत हरि सनमुख।। करि हरि निमत नेम निरमल रुख।।७।।
सकल सौंज हरि हित अर्पित जोई।। परसराम नखसिख पवित्र सोई।।८।।३६।।

राग रामगरी--

कैसे हरि भजन ऐसे आणि वांणी।।
कठिन ता जीव कौ पारु पैलौ भयौ।। बीचहि वार महि और ठांणी।।टेक।।
फंद माता पिता बंध कुल भाकसी जगत पसु पौरि पट काणि मांणी।।
पगै लिया वेडी गलैं पुज वासी जडयौ स्वाद संकलि पड्यौ मोह खांणी।।१।।
काम छल क्रोध बल लोभ घण लौह ज्यौं छीजयो ताइ तन जात हांणी।।
कर्म जंजीर भर्म जाल परसा पर्यो भगति ता विमुख छूटै न प्राणी।।२।।३७।।

राग रामगरी--

को जाणैं इच्छा कला कीनूं विस्तारा।। भेद न कहूं कूं कदे देत न हरि प्यारा।।टेक।।
अपणी लीला सब करै अरु सबहि नितै न्यारा।। करि कराइ करुणा मई आपण निरभारा।।१।।
अपणी रुचि आनंद मैं विहरत वनवारी।। जो संक न काहू की करै समरथ सूखकारी।।२।।

नखसिख व्यापक सकल महि सबही की जानै ।। प्रकट सकति देखै सुणै अरु सबहि तैं छानैं ।।३ ।।
आगम निगम अगोचरि हरि गति मति छानी ।। पढि गुणि सुणि जु थकी रहै पंडित मुनि ग्यानी ।।४ ।।
रहै समीप न पाइये यह अचिरज मोहि आवै ।। परसराम प्रभू अंतरि बसै आपौ न दिखावै ।।५ ।।३८ ।।

राग रामगरी--

प्रीतम श्री गोपाल सौं मन मानैं ।। चिंताहर सुखतर सदा अंतर की जानै ।।टेक ।।
अंतर जामी अगम की सुगमी करि बूझै ।। भूत भविष्यत वर्तमान जाकौं सब सूझै ।।१ ।।
देखि अणदेखि सुणि सब जातैं नहीं छानैं ।। गुण औगुण जाकैं जहां हरि सवै पिछानैं ।।२ ।।
सुमिरण सेवा बंदगी मानै जो करिये ।। मनसा वाचा कर्मणा सुमर्‍यो भव तिरिये ।।३ ।।
निर्वाहै समरथ हरि जिनकौ गहि वांही ।। दूरि करै दुख दोष कौं राखै सुख माहीं ।।४ ।।
हम सर्वस लै आपणै कीनूं हरि सारै ।। सु हरि थिर प्रसराम मनि बस्यो हमारै ।।५ ।।३९ ।।

राग गूजरी--

वैद न जाणै मन की सूल ।। दोषौ कछू कछू दै वोखद उठै सवाइ रूल ।।टेक ।।
वहा सलिल सिल मैं वहि निकस्यो जो न भिदै अस्थूल ।।
विण भेधां न मिलै जल सौं जल अंतरि वज्र विफूल ।।१ ।।
ज्यौं चंदन अहि रहै एक संगि विष न तजै समतूल ।।
परसराम का कहै सुणै सुख जो न गहै मनमूल ।।२ ।।१ ।।

राग गूजरी--

लोचन लोचत है ल्यौ लाएं ।।
हरि दरसन कारणि अति आतुर उतरि न फिरत फिरांएं ।।टेक ।।
पलभरि पलक न पलटत चितवन समझत नहीं समझाएं ।।
उझि उझि चलत जुगल जग परहरि हरि सनमुख सुख पाएं ।।१ ।।
उमगि उमगि मिलन कारण निस वासुर रहत सजल जलछाएं ।।
परसराम निर्भै रुचि मानत अपणै पीव कै प्रेम समाएं ।।२ ।।२ ।

राग गूजरी--

रसना राम नाम निज गाय ।।
आल जंजाल विषै रस तजि करि भजि भगवंत सहाय ।।टेक ।।
धीरज बांधि परम गति चित दै घर तजि वन जिन जाय ।।
अविगत नाथ जो देखि तन मन मैं तू ताहि देव सिर नाय ।।१ ।।

मन हरि सुख सेइ सरण जिन छीझै पीव सौं प्रीति लगाय।।
परसराम प्रभु प्रेम पुंज रस सो प्रसाद नित पाय।।२।।३।।

राग गूजरी--

भजन सूं कारे व्है हौ काटि।।
कहा जनम पायो जो हार्यो ज्यौं सकली गर माटि।।टेक।।
ज्यौं समसेर बिनां सकलीगर मल सौं जोडै साटि।।
ऐसैं यो मन रहै कपट रत राम कहण की नाटि।।१।।
भव बूझत मति हीण खसम बिण ज्यौं गनिका तन हाटि।।
अंत विमूचणि परसा प्रभु विण भागि न लिख्यो ललाटि।।२।।४।।

राग सारंग--

हो मन मोहन होरी खेल ही, लिये संगि सखा बहू वृंद री।।
वै प्रेम सरस विलसहीं गति मिलि सलिता सुख सिंधु री।।टेक।।
जुबति जूथ चलि आवही पुर पुर तैं खेलन फागु री।।
सब हरि सन्मुख वृज सुंदरी मिलि गावै सारंग राग री।।१।।
कनक कलस केसरि भरै लियैं सौंज सकल भरि आर री।।
आई हरि चरनन कारणैं करि करि बहु विविध सिंगार री।।२।।
एक नैन निरखि सुख पावही मुख बोलत मीठे बोल री।।
तन मन धन हरि कै वसि कर्यो चेरी हम हैं बिन मोल री।।३।।
एक पांय परै सिर नांव ही कर जोरि रहि हरि धेरि री।।
पावै कब बहुर्यौं बावरी यो औसर ऐसी कहूं फेरि री।।४।।
सब भरण भई हरि कारणै लज्या बल बंधन तोरि री।।
पीव कौं परमल पहिरावहि हरखि मन सौं मन जोरि री।।५।।
कस्तूरी चौबा अगरजा सुमिल धसि अग्र कपूर सुवास री।।
श्री खंड सुचंदन चरच ही पुरवत अपमन की आस री।।६।।
ल्यावै बहु भरन न विरंब ही अति आतुर धरत न धीर री।।
धावत अप वपु न संभार ही उतरत उर सिर तैं चीर री।।७।।
चरचैं निरसंक न संक ही ताकि डारत भरि भरि झाल री।।
वरि खैं बहू कूं कूं कुम कुमा अति उड़त अबीर गुलाल री।।८।।

रुति बरिखत भरण सघण भयो अंबर धर अरुण सुरंग री।।
चरचे बहु भांति विराज हीं सब सोभित सुंदर अंग री।।९।।
मिलि अरस परस चरच ही उमगें हरि आनंद रुप री।।
ब्रम्ह सिव कौतिग देख हीं सव सुर पुर के भूप री।।१०।।
मन सौं मन लाय विचार हीं जैसो सुख बरिखत हेरि री।।
बाजैं मृदंग दुंदुभि बासुरि सरमंडल महू बर भेरि री।।११।।
सुणि सुणि धुनि जहां तहां नाचहीं नाना गति तानत रंग री।।
बहु रुझ झींझ डफ झालरी मिलि ताल तंति राग बहु रंग री।।१२।।
हंसि गावै गारी सुहावनी अति सुंदर सबद रसाल री।।
सुनि श्रुति मंडल सुख पावही हरि मंगल दीनदयाल री।।१३।।
अपणूं अवणूं सुख पेरव ही प्रीतम हरि कै संग लागि री।।
जे गावै सुणै दरसन पावै तिन कौ है बड भाग री।।१४।।
हरि सुख सिंधु ओतरि भयो झूलत मिलि निरसंस री।।
परसराम प्रभु संगि रंगे निति केल करत निज हंस री।।१५।।१।।

राग सारंग--

मन मोहन मन मेरो झूमि कै लागै सुन्दर सेव लाल हो।।
पार ब्रम्ह प्रीतम भयो अविगत अलख अभेव लाल हो।।टेक।।
अकल सकल पति कैसवे जीव की जीवनि प्राण लाल हो।।
हरि हरि हरि अंतरि गह्यो परम सनेही जाणि लाल हो।।१।।
हरि राग रहित चित बस्यो हृदै सुथिर करि ग्रेह लाल हो।।
अब न चलै निहचल भयो उपज्यो अधिक सनेह लाल हो।।२।।
और कहू बिरवै नहीं मन तुम बिन रह्यो न जाय लाल हो।।
अब न तजौं भजि संगि रहौं चरण सरण ल्यौ लाय लाल हो।।३।।
जोइ सुख सरणै पाइये सो सुख अनतै नाहीं लाल हो।।
निमख न न्यारो सहि सकौं राखि रहूं मिलि मांहि लाल हो।।४।।
मन मंदिर मैं लै धर्‌यो बांधि बांधि प्रेम की डोरी लाल हो।।
जाइ कहां जो अब बसि कर्‌यो लोक वेद भ्रम तोरि लाल हो।।५।।
महा सरस सुअमृत झरै प्रेम पुंज की धार लाल हो।।

परसा रस विलसै सखी पति संगति कौ हार लाल हो ।।६ ।।२ ।।

राग सारंग--

मन मोहन मन हर लीयो घर वन कछु न सुहाय हो ।।
देखि चरित चित थकि रह्यो हरि तजि अनत न जाय हो ।।टेक ।।
लोक वेद विधि बीसरि करम भर्म व्यौहारौ हो ।।
सो चितवनि चित ही रहै देर को दिष्टि आपरो हो ।।१ ।।
चरण कवल भजि भै मिट्यो पायो निर्भै साथ हो ।।
जीवन जनम सफल भयो अवगति नाथ हो ।।२ ।।
आदि अति परिमिति नहीं पूरो पर्म दयाल हो ।।
तासगति मैलौ भयो अब भागे अंतरि साल हो ।।३ ।।
इतवत तैं न्यारो रहै सहज सुन्नि मैं वास हो ।।
परसा तन मन भेंट दै तहां विलंबै दास हो ।।४ ।।३ ।।

राग सारंग--

रहि न सकौं पीय तो बिनां मेरे प्रीतम हो प्राणन के नाथ ।।
स्याम सनेही सुनि सांच कहूं भावत है मोहि तेरो साथ ।।टेक ।।
तन मन तेरे वसि भयो निमख न होई चरणन तैं दूरि ।।
ता बिछुर्यां क्यौं जीयबौ जै बिन देख्या दुख मरै बिसूरि ।।१ ।।
संग बिछुर्यौ पीव धौं कब मिलै ता दुख तैं हम खरै उदास ।।
मेरो प्रीतम प्रीति न बूझई जीवै क्यौं बिरहनि बिन आस ।।२ ।।
सुनि साच कहूं मन मोहनां मोहन हो तैं मोहै सब साथ ।।
सिव विरंचि सुर मुनिजना गण गंधर्व मोहै नव नाथ ।।३ ।।
राखि सरणि सुमिरण करौं हौं प्रेम सरस पीऊं ल्यौ लाय ।।
मेरी या प्रीति पीव विचारिये प्रसराम प्रभु करो सहाय ।।४ ।।४ ।।

राग सारंग--

सुणि प्रीतम तुमसौं कहौं तैं मोह्यो मन मेरौ हो मोहन ।।टेक ।।
ज्यौं चात्रग चिति रुति बसै यौं उरि धरि सुमिरैं हो मोहन ।।
लग्यौ सनेह सदा रहै सो नाहिंन विसरत हो मोहन ।।१ ।।
नाद लीन मृग ज्यौं आपणपौं सूंपि दयौ सबहि हो मोहन ।।

यौं हमरौ मन ता तन कौं लिये मोह्यो जात जहीं हो मोहन॥२॥
ज्यौं मधुरिख मधु कारणै सर्वस सौपि दियो हो मोहन॥
यौं रसिया रस सौं रस्यौ मन दै मोलि लयो हो मोहन॥३॥
ज्यौं अलि कुसुम सुबास सौ बेध्यो लागि भजत हो मोहन॥
यौं मन लोभी रस लेन कूं चर्ण कमल न तजै हो मोहन॥४॥
मोह तुमारो लागनूं जिनि मोह्यौं मोह हमारो हो मोहन॥
जो जाय मिल्यौ सुतहीं रह्यो सो न रह्यो न्यारो हो मोहन॥५॥
ज्यौं नैन नंद अभै भयो मिलि निधि नहीं रह्यो हो मोहन॥
उलटि अपूठौ सिंधु तैं सौं सलिता न बह्यो हो मोहन॥६॥
ज्यौं जलहि जीवनि मीन कैं उपज्यै बसै नहीं हो मोहन॥
यौं हमारे हरि जल बिनां जीवनि और नहीं हो मोहन॥७॥
जगौं तरंग जलधि कौं जल यौं हम तुम सूं मिलै हो मोहन॥
दो सरीर मन एकै अब और न कहीं मिलत हो मोहन॥८।
मन सुख सिंधु सुमिलि रहै रस अमृत पीवै हो मोहन॥
जहां प्रेम पलटि ना जाणैं तहां परसा जन जीवै हो मोहन॥९॥५॥

राग सारंग--

हरि भजिये मन हेत सों हरि भजि तजिये और रे॥
सब तजि हरि भजिवो भलो हरि हरण सकल दुख रौरे रे॥टेक॥
हरि सुख बिन सुख और जो कहिएं मन ऊपर की दौर रे॥
और कही कछू वै करि कामना यह सकल काल कौ कौर रे॥१॥
हरि पावक बिन कौ दहै सब कलि जुग के कर्म कठोर रे॥
भव तारण चिंता हरण इहां हरि बिन कोई नाहिंन रे॥२॥
कछु हरि सुमिरण विण जो कर्‍यो सोई मिथ्या जग झौर रे॥
हरि बडो धर्म मन जो वरै व्रत स्याम सकल सिरमौर रे॥३॥
हरि सौं दृढ करि लीजै प्रीति ज्यौं चंदा सों करत चकोर रे॥
सोई करुणा सिंधु संभारिये नर हरि कैसो कृष्ण किसोर रे॥४॥
अति सुंदर स्याम रूप अनुपम पद सेवग संगि गौर रे॥
प्रीति कीयां सौं हरि प्रीतमा उर तैं नहीं टरत चितचोर रे॥५॥

हरी दीपग जहि हिरदै बस्यो दुरिगयो तिमिर भयो भोर रे।।
सोई परसा प्रभु न विसारिये हरि, पर्म संजीवनि ठौर रे।।६।।६।।

राग सारंग--

वन फूले अति सोभ हीं आयो री सखि मास वसंत।।
नाना रंग बास नवी नवी नव नव तर नव पल्लव विगसंत।।टेक।।
नव नव सुर कोकिल बोलही गुंजित अति मधुकर मैमंत।।
पंखि बहु वाणी चवैं गुणगण नव नव गावत सुर संत।।१।।
नव नव किसलै दल बीनहीं नव नागरिकर भरि बरिखंत।।
नव नव संगति नव नेह सौं नव नागर नवरस विलसंत।।२।।
रति नाइक सति विहरहीं राजित अति तामैं हरि कंत।।
परसराम प्रभु भजि लीजै हरि सुख सब सोभा को अंत।।३।।७।।

राग सारंग--

मन मोहन सौं मिलि रह्यो सखि सो तो न्यारो न रहाय री।।
हरि रति सोहि मानैं नहीं तू तौ रही मनाय मनाय री।।टेक।।
हरि मिलि पलटि गयो मन मोतैं कछू तासौं न बसाय री।।
मनि हरि मिलि गयो तो सार्‌यो नहीं मोही कौं लेत बुलाय री।।१।।
बहु उपाय करि थकि अबल मैं रही बहुत समझाय री।।
हरि प्रीतम पायो जिन सजनि सो मन मोही न पत्याय री।।२।।
जबहि नैक पलक मिलि ऊंधरी मोहि मिलत हरि आय री।।
विलस्यो प्रगट पर्म रस वसि करि सो सुख कह्यो न जाय री।।३।।
कहा कहूं कछु कहत न आवै सागति बहुत बनाय री।।
पिय मिलवै की रीति प्रीति करि अब कासौं कहूं सुनाय री।।४।।
हूं सोवत जागि उठि सपनौं लै अति आतुर अकुलाय री।।
रही न सकौ इत उत व्याकुल तन मन गयो सिराय री।।५।।
हरि सौं भुज भरी मिलि निरंतरि सानिधि उरि न समाय री।।
प्रगट अधर उर छाप सुकर की सौं तन तैं न दुराय री।।६।।
मिलणि वसी उरि मिलि जु करि हरि मन सौं मन लाय री।।
तनु तापति की प्रीति रही भरि परतन बीचि विराय री।।७।।

जाकौं प्रान बसै जामहि सो ताहि न कबहूं बिसराय री।।
हरि जीवनि जल हीन होय सो क्यौं न मरे पछिताय री।।८।।
प्रेम सिंधु सुख मूल सुमंगल सो कबहूं न भुलाय री।।
हूं कहा करसैं कैसे रहू मोहि ता बिन रह्यो न जाय री।।९।।
पीव सौं प्रगट मिलन आरति करि लीनि रुचि उपजाय री।।
ठाडी निकसि भुवन वाहरि नवसत सिंगार बनाय री।।१०।।
बोलि लई सब सखी सूं मिलि गुण गावत न लजाय री।।
निकसि चली वृखभान पुरै तैं नंद गांव दिसि जाय री।।११।।
चाहती पथ तरल तर तैं तर चढ़ि आपन हरि राय री।।
पठ्यो देखि सखा सनमुख पति ताडत पत्र लिखाय री।।१२।।
उमगि अति आनंद कंद जब सुनि पाये स्याम सहाय री।।
हरि गावत बैन बजावत मिलै जहां चरावत गाय री।।१३।।
बूझि लई निकैं करि कैं तब हरि ब्यौरे सौं बिगताय री।।
अति सुगौर सुन्दर सखियन मैं राधा नाम कहाय री।।१४।।
कृष्ण दरस परसत मनि मंगल पाय परत सिरि नाय री।।
हरि अंतरि तजि मिलत अंक भरि लीनि उरि लपटाय री।।१५।।
भयो सखि सुख सिंधु समागम प्रगट प्रेम कैं भाय री।।
जुगल हंस निजराज जोड़ि परि परसा जन बलि जाय री।।१६।।८।।

राग सारंग--

मन मान्यौ री मोहन लाल सौं मोहि विसरि गई गति और री।।
कमल नैननि वस्यो हरि नागर हृदै नवल किसोर री।।टेक।।
नैन मिलत मन मिल्यो सुमन सो पायो प्रेम निवास री।।
सो रंगि रंग्यो सुरंग स्याम सौं लग्यो प्रीति को पास री।।१।।
अलप जीव कै ज्यौं जल जीवनि रहत सदा ल्यौ लीन री।।
यौं जीवत्त सुख सिंधु सुमिलि हम मरत हरि जलहीन री।।२।।
हू तौ तोसूं साच कहत हूं तुहू कित चलि उठि रिसाय री।।
हरि प्रीतम चित्तचौरि सबनिकौं सौं तैं लियो अपनाय री।।३।।
तेरो कह्यो रह्यौ तौंहि पैं मोहि कहा कहि बिगारैं बोलि री।।

धरि राखो जहां हुं तौ तहां ही कहावै जौ फिरि डोलि री ।।४ ।।
मैं कीयो जाकैं वसि तन ताहिं सखि मन दै लीयो मोलि री ।।
बांध्यो गांठि खरौ करि सजनि सौं क्यौ डारि तिहू खोलि री ।।५ ।।
हूं भजि हूं री हरि तजि हूं नहिं हरि सुंदर दीन दयाल री ।।
हूं दरसी परसी जा वसि भई मन मोहन मदन गोपाल री ।।६ ।।
हूं निमख न न्यारो सह सकूं तन मन मैं रह्यो समाय री ।।
अब कोई कैसेहि कहो मोहि तो ता बिन रह्यो न जाय री ।।७ ।।
अंतर तजि आरति करि हरि सौं जिनि बांध्यौ निति नेम री ।।
परसा पर्म हितू प्रभु सब कौं पैं वसि ताकै जाकै प्रेम री ।।८ ।।९ ।।

राग सारंग--

कोई न रहै थिर हरि बिना धर्‌यो सकल मिटि जाय हो ।।
तातैं नर कछू निह कर्म होई भजिये राम सहाय हो ।।टेक ।।
ब्रम्हा बहु तन गिणि सकौं संकर अधिक अपारौ रे ।।
इन्द्रादिक सुर नर हूंते तेंऊ गये आस असारौ रे ।।१ ।।
सेस गणेसन को गिणै सके पवन आदि बड देवौ रे ।।
को जाणै केते गये अविचल अलख अभै अषा बोरे रे ।।२ ।।
जलसर मेघ असंखि घण वरखिये कै जामांहे रे ।।
हरि दरिया सुभर भर्‌यो अकल सुकल्यौ न जाय रे ।।३ ।।
रवि तारा ससि तेज मैं धर अमर फल फूलो रे ।।
जग पल्लव अगिणत गहे रह्यो सुराघो मूलो रे ।।४ ।।
गिगनि भुवन भ्रमि ठहि परे कोई न लहै उनमानो रे ।।
सकल विस्व अलटै पलटै मिटै अजु सु जोगि ध्यानो रे ।।५ ।।
अगम निगम सुगण सबै विणसे घट विश्रामो रे ।।
अविनासी थिर केसवा परसराम प्रभु रामो रे ।।६ ।।१० ।।

राग सारंग--

मनुवा मन मोहन गाय रे ।।
अति आतुरत होइ कै हरि हरि सुमरि सुमरि सुख पाइ रे ।।टेक ।।
हरि सुख सिंधु भजन भजतां सुणि सब दुख दोस दुराय रे ।।

यौं औसर फिरि मिलै न मिलिहै अब तो भजि लीजै हरिराय रे ॥१॥
हरि पतित पतित पावन करि कै जमपुर तैं लेत बुलाय रे ॥।
यह साखि समझ सुणि चित करि भजि मन विरमन लाय रे ॥२॥
करि आरति हित सौं हरि सनमुख जो सक्यो न सीस नवाय रे ॥
तो जनमि जनमि जम द्वारि निआदर बारौं बार निकाय रे ॥३॥
अति सकट बूडत भौ जल मैं अंति न और सहाय रे ॥
तिहि औसरि हरि पर्म हितू बिन को राखै अपनाय रे ॥४॥
जग पंडित भुवपाल छत्रपति हरि बिन गये खिसाय रे ॥
अति बलवंत न वदत और कौं काल सबन कौं खाय रे ॥५॥
पायो नर औतार बिगार्यो मुगध कहा कीयो यहां आय रे ॥
करि न सक्यो हरि विणज अचेतनि चाल्यो जनम ठगाय रे ॥६॥
हरि सेवा सुमिरण बिन जाकौं तन मन वादि विलाय रै ॥
परसराम प्रभु बिन नर निरफल वहि गयो बस्त गंवाय रे ॥७॥११॥

राग सारंग--

तु हू मन गोविंद गुण गाय रे॥
गोविंद गुण गायां विण प्राणी जनम अकारथ जाय रे ॥टेक॥
गोविंद ग्यान ध्यान करि अंतर व्रत धरि सुमरि सुनाय रे ॥
हरि सुमरन वैंकुठ प्रगट सुख तजि जमपुर को जाय रे ॥१॥
जग मगल पद हरि जीवन जस भजि अध तिमिर विलाय रे ॥
प्रगट प्रकास करण करुणा मय सोई उरि आनि वसाय रे ॥२॥
देखि प्रगट संसार स्वाद सुख मन तन उनतै न डुलाय रे ॥
पर हरि और भर्म निरफल चित चरन कमल सौं लाय रे ॥३॥
सुणि गुर सबद सदा सुकृत फल तोहि कहूं समझाय रे ॥
हरि दुखहरण सकल सुखदायक तुहू ताकूं न भुलाय रे ॥४॥
हरि मारग चालत सब काहू की हारि न कहनी जाय रे ॥
मन मद अंध भरै मैं रीतौ जिनि जाहि जगत हसाय रे ॥५॥
कहिये कहा बहुत करि मन हठ जो नखसिख बात बनाय रे ॥
रुचि विण हरि सु अमृत फीकों परसा जोई पीजै सुभाय रे ॥६॥१२॥

राग सारंग--

तुहू मन हरि नांव संभारि रे॥
निस वासुर एक तार अविसर उरिधरि पल न विसारि रे॥टेक॥
मन मेटहि जिन कह्यो हमारौ मानि करुं मनुहारि रे॥
हरि सुमिरण बिन वादि जहां तहां पायो जन मन हारि रे॥१॥
कहत कहतहि अंध आप वलि जिनि जाहि बात विगारि रे॥
पायो नर औतार सुफल करि हरि भजि लेहु सुधारि रे॥२॥
सोइ करि आरंभ सुकर तैं पासा ज्यौं जाणैं त्यौं डारि रे॥
यौं तजि भवसिंधु विचारि खेलि हारै जिनि जिति सारि रे॥३॥
और विडाणि बात दूरि करि तुहू आपणी आप विचारि रे॥
अंतहि जहां कहूं होय बसेरो तुहू सोई ठौर संवारि रे॥४॥
अब सीखि सुणि कहि इत उत की बात बहुत विस्तारि रे॥
परसराम प्रभु बिन सब निर्फल तजि हरि व्रत धारि रे॥५॥१३॥

राग सारंग--

तुहू हरि प्रीतम करि मानि रे॥
जिनि दीनो तन मन प्राण दान तोही सुहरि सति करि जानि रे॥टेक॥
जिनि हरि रचि तोहि बनायो तुहू अब तासों वाणिक वाणि रे॥
हरि तोहि न विसारत तुहू विसरत तजि कठिन कुवांणी रे॥१॥
चरण चिहुर कर नासि नैन मुख श्रवण सास सिर ठाणी रे॥
सब नखसिख सौंज संवारि साजि करि तोहिं दई हरि दानि रे॥२॥
जिनि जल देवल सौं धर्यो विधाता तुहु मानि तही सह नाणि रे॥
परम उपगारी आतम गुणदाता तासों तोडि न अब ताणि रे॥३॥
चिंता हरण सकल भै टारन बांधन सिंधु पखाणि रे॥
रक्ष्या करण सदा हरि सम्रथ जन हित सारंग पाणि रे॥४॥
कर्म भर्म जग आसा पास परहरि हरि धर्म पिछांणि रे॥
हरि सुमरण बिनि जो कछु करिये है सोई बड़ हाणि रे॥५॥
हरि सेवा सुमरण करि व्रत धरि हंसि हरि नाम वखाणि रे॥
करि हरि प्रेम नेम नेहचौ धरि ज्यौं थिर नीर निवांणि रे॥६॥

करि बंदगी सुमरि सनमुख रहि भगति भाव मैं आणि रे।।
परसराम प्रभु कूं भजि मन दै तजि संसौ कुल काणि रे।।७।।१४।।

राग सारंग--

हो सुणि वृजराज राग सारंग सुरि गावत गुण व्रजनारी।।
अति सनेह आरति हरि उरि धरि रहि न सकत पल न्यारी।।टेक।।
श्याम समागम भयो जहां तहां सोई सोई लै उरधारी।।
करत प्रीति की बात प्रगट सब सुणि लागत अति प्यारी।।१।।
सब बोलि लई हरि निकटि आप दिसि मेटि मुरारी।।
गावत सरस सुकंठ सुमिल सुक रीझत बरु बनवारी।।२।।
वणि विविध सोभा हू तैं सोभा तरुण विरधवै वारी।।
पावत प्रेम परम रस अमृत प्यास विरह की जारी।।३।।
मगन भई नाचत चाचरि गति समि दै दै कर तारी।।
हंसि हंसि आप हंसावति औरनि देत परसपर गारी।।४।।
प्रभु भजि वधू विलास विवसि भयो मन हरि रत त्रिपुरारी।।
हरि सुख सिंधु भयो सुमंगल परसा सखी सलिता उन हारी।।५।।१५।।

राग सारंग--

मन मोहन मन मैं बसि रह्यो सखि दिष्टि अचानक आयरी।।
सोई हरि सुमन विवसि भयो भावत अब कैसै करि जायरी।।टेक।।
अब छूटत नहीं जनमि जो लागो पूरि करारो रंग री।।
पलु पलु प्रीति नई नागर सौं अब न होई रसभंग री।।१।।
सो कैसे विसरत है सजननि जापति सौं पणु प्रेम री।।
अब न तजौं भजि हौं बरिव्रत धरि मैं बांध्यो नित नेम री।।२।।
चितवत प्रगट भयो चित ही मैं चिंतामणि चितचोर री।।
ताकौ रूप नाम गुण गावत कछु चीति न आवत और री।।३।।
जीवनि जनम सफल सुख विलसत हम जीवत हरि लाग री।।
परसराम प्रभु सों सदा समागम रहै सोई है बड भाग री।।४।।१६।।

राग सारंग--

कान्हर फेरी कहौ जु कहि तब तौ कौ मेरी संस रे।।

सोवत जागि जसोदा उठि सुनि सुत सबद न ऊंस रे ।।टेक ।।
लछिमन बाण धनुष दै मेरे मोहि जुद्ध की हूंस रे ।।
सिया साल कौ सहै सदा दुख करिहू असुर विधूस रे ।।१ ।।
प्रगटि आय जोद्ध विद्याबल सुमन सिंधु सारौ सरे ।।
परसराम प्रभु उमगि उठै हरि लीने हाथि हथूस रे ।।२ ।।१७ ।।

राग सारंग--

राम न विसरौ मैं धन पायो।
जाकी साखी प्रगट धू दीसै वेद वदत गुर साच बतायो ।।टेक ।।
सिव विरचि सनकादि स्वाद रत सेस सहस सुमरित न अघायो ।।
सुर नर मुनि सक्रादि सु अमृत नारदादि अचवत मन भायो ।।१ ।।
उधौ विद्र अक्रूर उग्रसेन जन रमि भज्यो व्यास सुक गायो ।।
अबरीष प्रहलाद वभीषण पन्डु सुवन वसुदेव वसि आयो ।।२ ।।
नांऊ जाट चमार जुलाहो छीपैं हूं निज निसांण बजायो ।।
जै देव सूर परमानन्द पीपा उनहूं सुणि सीख्यो रु सिखायो ।।३ ।।
और भगत सबहि हरि सुमरिन कारण भूतादि आपै यह जायो ।।
परसराम प्रभु साखि उजागर सुणत मुदित मेरो प्राण पत्यायो ।।४ ।।१८ ।।

राग सारंग--

मै मन लै करि कै वसि कीनौं ।।
साध्यो जात न मोपैं पल भरि पाय लागि ताहि कौ दीनौं ।।टेक ।।
कहा करौं जो मेरे वसि नाहिं मिश्री हूं मैं जातन पीनों ।।
सौंपि दयो ताकौं ताहि कूं आलि झालि अपणौं हरि लीनों ।।१ ।।
बहुत जतन करि मैं देख्यो निकसि जात आतुर अति झीनों ।।
जिन हरि मोहि दयो ऐसो करि रहत सदा ताहि सूंल्यौ लीनों ।।२ ।।
हूं अब न तजत अस्थिर घर पायो छाडि बस्यो पूरै पंखि हीनौं ।।
परसराम प्रभु सौं मिलि सजनि मोहि न मिलत हरि कै रंगि भीनौं ।।३ ।।१९ ।।

राग सारंग--

हरि प्रीतम अपणौ करि लीजै ।। सखी सर्वस हरि कौं लै दीजै ।।टेक ।।

साच सनेह कीयां हरि धीजै ।। कपट कीयां कबहु न पतीजै ।।१ ।।
तन मन धन हरि बसि कीजै ।। परसा हरि अमृत रस पीजै ।।२ ।।२० ।।

राग सारंग--

हरि हरि भजिए कोई सफल धरी ।।
निरफल और सकल दिन देही जु विषै विकारी भरी ।।टेक ।।
निरफल नर औतार निर्बीज जिन हरि टेक टरी ।।
जीवन जनम अकारथ हरि बिनि बादहि देह धरी ।।१ ।।
भूलि परै हरि पुर मारग तै जमपुर जात वरी ।।
भजि न सक्यो त्रिभुवन व्रत धारी गरज न कछु सरी ।।२ ।।
सखी निगम गावत गज गनिका जु भव तिरि पार परी ।।
परसा पति पतितन कौं तारक पावन नांव हरी ।।३ ।।२१ ।।

राग सारंग--

यह हरि हम सौ किन कही खरी ।।
तैं कीनौं तिसकार हमारो सुकहा हम तैं बिगरी ।।टेक ।।
क्यौं भोजन मिष्ठान अभाये अणरुचि आणि अरी ।।
खायो जाय आद कैसै गुसो कारणि कौन हरी ।।१ ।।
भोजन भलो भाय क्यौं करी लागै जाकैं आपदा परी ।।
तेरै प्रीति न विपति हमारै यौं रहि रसोई धरी ।।२ ।।
हम राज भूपाल छत्रपति तुम गोपाल धरी ।।
हम तुम साख न कछू सगाई मींठ न सींव सरी ।।३ ।।
मोहि तैं उपजै सब मेरी वै हरि कछू वै न करी ।।
अंत असमझि कहत कित ऐसी अति अभिमान भरी ।।४ ।।
तेरो कहा विभो सब मेरो मोहि लेत न लगत घरी ।।
अरु देत न कछु विरंब सकल कौं होत न पलक भरी ।।५ ।।
श्री मुख वचन सुनत अरि ऐसे नखसिख अगनि जरी ।।
परसराम प्रभु कौं दरसि दुष्ट की दिष्टि न कदे ठरी ।।६ ।।२२ ।।

राग सारंग--

गोरधन गोपाल ही प्यारो ।। जामैं गोधन चरत सुरवारो ।।टेक ।।

बाल केलि लीला मन भावै।। गिरमंडल गोधन बगरावै।।१।।
घोख सैल नंद पैं जु पूजावै।। इंद्र विदोसी पाक हरि पावै।।२।।
नाना फल पकवान अलेखै।। अनत पाणी जीमैं सब देखै।।३।।
इंद्र कोपी वरस्यो जल धारा।। सो अचवन कीनों नन्द कुमारा।।४।।
गिरवर धर हरि मुरली सुरि धार्‍यो।। ब्रजनाइक बल ब्रजहिं दिखार्‍यो।।५।।
अमर नाथ हार्‍यो अविचारि।। जीते हरि गोवरधन धारि।।६।।
सुरपति लै सुरभि ब्रज आयो।। दीन भयो चरणन लपटायो।।७।।
ब्रजवासी हरखैं सुख पावै।। पाई परै हरि कौ सिर नावै।।८।।
ब्रजमंगल सब कौ सुख दाता।। परसा प्रभु धाता कौ विधाता।।९।।२३।।

राग सारंग--

उदित भये रघुकुल वै राम।।
जाणि सही सविता निसि कारणि ब्रम्ह अगम सारण सुर काम।।टेक।।
मुदित भये नृपराज महाबल मिटै विघन बहु विथा विराम।।
सुफल भये रिसि वचन पुरातन दीयो वर वंछित फल भाम।।१।।
सोभित पुर मंगल पद प्रगटे निरखत निमस भये निसि जाम।।
पावत दरस परस रघुपति कौ पावन सकल लौक धन धाम।।२।।
प्रगटै निर्गुण सगुण होई विसु पुरण आदि अंति सब कौ विश्राम।।
सोई पति प्रगट गाय जस परसा बार अगिण अध जारण नाम।।३।।२४।।

राग सारंग--

नृप दशरथ गृह मंगल चार।।
गावत उमगि उमगि सब जहां तहां प्रगट भये रघुपति औतार।।टेक।।
विप्र पढ़े बहु वेद महाधुनि नाचत सुर औसर निजसार।।
घूरै सरस नीसांण दुंदुभि अरु सकल पुर गूंजै जै जै कार।।१।।
अति आनंद बधावौ देखत बंदि पौल पढ़ै जस बारंबार।।
पावत दान मान मन वंछित रेवत जे सम्रथ दरबार।।२।।
देत असीस सकल सिर नावत वंदत चरण न पावत पार।।
परसराम प्रभु अंतर जामी राजिव लोचन सब प्राण अधार।।३।।२५।।

राग सारंग--

बलि रघुपति रायन कै राय॥

जाकौ जस कीरति वृत महिमा सेस सहस मुखि बरनि न जाय॥टेक॥

जाकौं वरणि विधाता भूल्यौ अरु अंति लीयौ आपण समझाय॥

सोइ पति प्रगट पर्म पुर पर हरि वे अवतरे अवधि पुर आय॥१॥

जाहि धरि ध्यान संभारत सिंभु निगम रटत नित प्रति ल्यौ लाइ॥

सोइ पावत नहीं पार पचि हारि वै ब्रम्ह अगम जनमै जनमाइ॥२॥

प्रगट समीर पोसि सब सोखैं ज्यौं सलिता जलसिंधु समाय॥

परसराम प्रभु राम अकल मैं सकल रूप धरि आवै जाय॥३॥२६॥

राग सारंग--

राजत सारंग कर धरै आजि॥

रघुपति राज सभा मैं सोभित सुन्दर राजि कै राजि॥टेक॥

दीनूं चाप चरण करि करणि करण कौं हरि साजि॥

उठै असह असुर देखत ही भूप चले भै भाजि॥१॥

नाना रूप अनूप जनक कैं धारैं हैं गरीब निवाजि॥

परसराम प्रभू प्रगट स्वयंवर राम सीया कैं काजि॥२॥२७॥

राग सारंग--

रघुपति हितू बिना दिन जात॥

सोई दिन आदि न अलखै लागत निसि ही निसि निति होत न प्रात॥टेक॥

इह अति अंदेस जु राम विण राकिस अधिक होई किनि तन घात॥

ज्यौं मृगि वन बिछुटी बाग तैं देखि सोई असुर पुर अधिक डरात॥१॥

सही न सकत न दुख दर्द डाह उर आस लाग्यो नहीं प्राण समात॥

सूलत सर हरि विमल नीर विण प्यास सु चात्रिग ज्यौं बिल लात॥२॥

पावत नाहिं ताहिं बहुरि बावरि याहुँ अबला अति भई अनाथि॥

नाहिंन कछु अंति वसि मेरौ प्राण बान भई तापति कै हाथि॥३॥

बीचि पर्‌यो जलनिधि कौ अंतर यहां कौ आवै कहूं संग न नाथ॥

क्यौं मिलिये परसा प्रभु कौं अब बैंहैं कछू सु जाणै रघुनाथ॥४॥२८॥

राग सारंग--

सोई अब न पलटि पतिव्रत लजाऊं॥
परहरि निज रघुनाथ महाबल हूं न आसुर आगैं सिर नाऊं॥टेक॥
क्रोध अगनि की झाल प्रकट करि छिन यक मैं बहु लंक जराऊं॥
सकैं कनक पुर छार वार नहीं तां ठोहर की सब धूरि उडाऊं॥१॥
सिव सेवा कीयां को जो फल सो फल तुम कौं हूं अबहि दिखाऊं॥
मारि असुर सघरि पलक मैं सिव कारणि सिर भेट पठाऊं॥२॥
ये दस सीस बीस भुज अबहिं हौं खड खंड करि प्रेत पकाऊ॥
रावण असुर समस्त आदि दै भोजन अलप त्रिपति नहीं पाऊ॥३॥
यौं दरिया करि मंजन करि हूं अचवन कौं जल और मगाऊं॥
तौं त्रिखान जाय पर्म जीवनि बिन सिंधु अगिणयक सास सुकाऊ॥४॥
राखति हूं रघुपति कैं कारणि वातैं हूं असुरण न तोहि सताऊ॥
यौं जु कह्यो हति हूं कर अपणैं सो तापति की हूं पैंज निभाऊं॥५॥
वीरा रिण संग्राम करण रुचि मोहि कह्यो चलि हूं यह आऊं॥
परसराम प्रभु राम सुमंगल देखि प्रकट पौरिष जब गाऊं॥६॥२९॥

राग सारंग--

देखि यह मोहि अचिरज आवै॥
जाकौं नाम अतिरगिण तारण सु महासिंधु करि सिंधु बन्धावै॥टेक॥
जाकि सकति जगपति जग जीतै जगत जीव बलि सो न बन्धावै॥
जाकै काजि आजि ब्रम्ह कपि दल बल बीरा रिण मांझ सूर कहावै॥१॥
प्रलै कालि निजरूप परमापति महावीर वीरा रस भावै॥
रामचन्द्र रिण रमित विराजित कर गहि बाण दसौं दिस धावै॥२॥
सवै सुभट्ट भै कम्पनि पौरिष महाकाल की झाल दिखावै॥
झपटत लपट असुर वन दाझत सुर्ण समान पतंग गिरावै॥३॥
महा मृगराज नमै दूरि चित दैनि जग जरा जन चींटि चावै॥
जो पर्म हंस विलसत मुगताफल ताकौं भोजन कीट न भावै॥४॥
जाकै अर्थ पलक ब्रम्ह बहु बीते ताकौं क्रोध नृपति कहा पावै॥
परसराम रघुनाथ हित सौं सति सुदरद निसास सुणावै॥५॥३०॥

राग सारंग--

हो कपि आयो तो मोहि भायो॥

जो प्राणनि कै प्राण सनेही वै जो कह्यो बतावो॥टेक॥
प्रथम समादि कहौ तापति की आन निसास दुरावो॥
है आरोग अखिल के नायक सो सुख श्रवनि सुनावौ॥१॥
सिंधु विछुरि सलिता सुख नाहीं रवि मारथ कौं मावो॥
देखत जाय विलाय वादि ही बहुरि न होत मिलावो॥२॥
सुख न कहूं विण सरणि सदा निसि देखि न तुम सुख पावौ॥
सुनि वनचर वर विपति कंत बिनि मरत सुरति समझावो॥३॥
जात घटचो न प्राण दरस बिनि यहै बहुत पछितावो॥
परसराम रघुपति बिन जीवनि धृग सोई जनम कहावो॥४॥३१॥

राग सारंग--

हो कपि रघुपति मोहि मिलावो॥

प्रगट सरूप संजीवनि मेरी संगि करि कै लै आवो॥टेक॥
लोचन है संग्राम दरस कौं अब जनि विरंब लगावो॥
आसुर पति अगण समारि सोहि तो वीरा रसहि जिमावो॥१॥
अमर अधीर असुर संकट तैं आतुर आय छुडावो॥
यौ दुख दरद संदेसो परसा पति कौं जाय सुनावो॥२॥३२॥

राग सारंग--

अब जननि जग जीवन ल्याऊं॥

बिलम न करौं निमस मोहि आरति सो आग्या जो पाऊं॥टेक॥
हूं सही न सकूं दुख दरद तुम्हारो सब संघारि दुराऊं॥
असुर अपुर रघुनाथ कृपा तैं लै जम लोक पठाऊं॥१॥
ईस जगईस सुरेसुर कै पुर करि सोई कथा सुणाऊं॥
डरपति हूं अपजस सिर पर धरि कालै बदन दिखाऊं॥२॥
कितयक संक निसाचर निसि की अब रवि राम बुलाऊं॥
बाण किरणि की अगनि प्रगट करि असुर पतंग जराऊं॥३॥
तुम देखत रघुपति कै कर सों बंदै सीस गिराऊं॥

भुजा उपारि पछारि धरणी परि कपि चौगान खिलाऊं ॥४॥
प्रगट करुं निज रूप महाबल तौं आगै सिर नाऊं ॥
परसराम रघुपति रिण राजित देखि पर्म सुख पाऊं ॥५॥३३॥

राग सारंग--

अब माता मन जनिहि डुलावो॥
धीरज धरौ भजो सोई सति करि पति चित तैं न भुलावो ॥टेक॥
बिछुरण विरह वियोग सुरति धरि अब तन कौ न जरावो॥
सोई दुख हरण करण कारण प्रभु सुमरि सुमरि सुख पावो ॥१॥
अब एक निसासे सहैं को तेरो त्रिभुवन प्रलै पठावो॥
कितियक संक असुर दस सिर करि जो वरत लजावो ॥२॥
जाकैं पति रघुनाथ महाबल ताहि कहा पछितावो॥
परसराम प्रभु प्रगट करो अब मांगौ आइ बधावौ ॥३॥३४॥

राग सारंग--

अजहूं न तजत असुर असुराई॥
राम सधीर देखि रिण राजित अमर सुमंगल करत बधाई ॥टेक॥
महाकाल तरु वीरा रसफल दीसत ज्यौं दरपन मैं झांईं॥
देखि चरित भै कंप असुर पुर ज्यौं रवि किरण राहु की छांईं ॥१॥
प्रगट अगनि रघुनाथ उजागर जिनि पावक बहु लंक जराईं॥
परत पतंग अगिण रावण उड़ि दाझत दुष्ट तूल की नाईं ॥२॥
महा मूढ अग्यान अंध पतित अनचेत्यो जोइ सिर खाई॥
करि तातौ अति तेल सुरति छिन जाणि सुभुजंग हते समि वांई ॥३॥
सो न भजै निभै पद नहिलि जिनि सिव की सकति अगिण बौराई॥
परसराम तासौं मन तेडौ जा प्रभु बिन और नहीं ठौर कहांई ॥४॥३५॥

राग सारंग--

राजित राजिव लोचन राम॥
लीये हर धनुष वाण टेरत हेरत समझि सकाम ॥टेक॥
ठाढै रिण रघुवीर धीर वर अति सोभित सब सुखधाम॥
पावत दरस प्रगट असुरासुर हरि अचिरज अभिराम ॥१॥

जैसी जाकी आसा तैसो ताकौ प्रभु अकाल सु मंगलनाम॥
परसराम रघुपति चरित भव पारि करण गुन ग्राम॥२॥३६॥

राग सारंग--

कंत कृपाबल कहत न आवै॥
प्रगट दरस रघुनाथ समागत हृदै उसास न उलटि समावै॥टेक॥
धनि यह देस राज रावण धनि जा ऊपरि आपण चढै आवै॥
धनि इह भौमि चरण धरै जापरि ब्रम्ह अगम कपि सैन खिलावै॥१॥
धनि यह सति अमर यहां आवै जाकैं हित रघुपति हित रघुपति रिण धावै॥
वीरा रिस रुचि खण वाण विधि पौरिष भुजा सचु पावै॥२॥
धनि यह वपु धर्यो आजु सुकल भयो हरि देखैं जाहि दरस दिखावै॥
धनि यह ग्रह गढ गांव असुरपुर सकल जामैं राम दुहाइ धावै॥३॥
सुनि वधू वचन मुदित भये रघुपति मांगि वर जो तोहि भावैं॥
कहत अमर करू योही रावण राज बहुरि अयोद्धा अटल बसावैं॥४॥
या गति सुगति यहै वर दीजै असुर न होय अरु सुरनि संतावै॥
परसा राम प्रभु वीरा रस जस सोई पति जाय परम पुरि गावै॥५॥३७॥

राग सांरग--

तबहि सब आनन्द हमारै॥
जबहि रामचन्द्र चिंतामणि वन कौ तजि निज भुवनि पधारे॥टेक॥
जाकी हम पाटि पावडी पूजैं सोई पति जो निज वदन दिखारैं॥
छाडि गुमान प्राणधन अपणूं लै रघुनाथ रुप परि वारैं॥१॥
लै सब राज पाट सिंधासन रघुपति बैठि छल सिरधारै॥
छागै सुभट्ट भूप अंदीजन ठाढै निकट चंवर कर ढारै॥२॥
वंदहि ईस जगदीस सुरेसुर देव गण जु आरति उतारै॥
घूरै सरस निसणं सुमंगल जै जै घुनि सुनि निगम उचारै॥३॥
उज्जल प्रेम पुर मंडल उमगि गान तन मन न संभारै॥
मानों सिंधु सनमुख लै नीर भेंटें सिंधुनी सिधारै॥४॥
सीस नाई अरु कर जोरइ कन्त परम परमपवित्र पांवरि झारै॥
जब जब उठहि तबहि धरौ आगै कृपा सिंधु सुभ दिसि निहारै॥५॥

सोवत जागि जसोदा उठि सुनि सुत सबद न ऊंस रे।।टेक।।
लछिमन बाण धनुष दै मेरे मोहि जुद्ध की हूंस रे।।
सिया साल कौ सहै सदा दुख करिहू असुर विधूस रे।।१।।
प्रगटि आय जोद्ध विद्याबल सुमन सिंधु सारौ सरे।।
परसराम प्रभु उमगि उठै हरि लीने हाथि हथूस रे।।२।।१७।।

राग सारंग--

राम न विसरौ मैं धन पायो।
जाकी साखी प्रगट धू दीसै वेद वदत गुर साच बतायो।।टेक।।
सिव विरचि सनकादि स्वाद रत सेस सहस सुमरित न अघायो।।
सुर नर मुनि सक्रादि सु अमृत नारदादि अचवत मन भायो।।१।।
उधौ विद्र अक्रूर उग्रसेन जन रमि भज्यो व्यास सुक गायो।।
अबरीष प्रहलाद वभीषण पन्डु सुवन वसुदेव वसि आयो।।२।।
नांऊ जाट चमार जुलाहो छीपैं हूं निज निसांण बजायो।।
जै देव सूर परमानन्द पीपा उनहूं सुणि सीख्यो रु सिखायो।।३।।
और भगत सबहि हरि सुमरिन कारण भूतादि आपै यह जायो।।
परसराम प्रभु साखि उजागर सुणत मुदित मेरो प्राण पत्यायो।।४।।१८।।

राग सारंग--

मै मन लै करि कै वसि कीनौं।।
साध्यो जात न मोपैं पल भरि पाय लागि ताहि कौ दीनौं ।।टेक।।
कहा करौं जो मेरे वसि नाहिं मिश्री हूं मैं जातन पीनों।।
सौंपि दयो ताकौं ताहि कूं आलि झालि अपणौं हरि लीनों।।१।।
बहुत जतन करि मैं देख्यो निकसि जात आतुर अति झीनों।।
जिन हरि मोहि दयो ऐसो करि रहत सदा ताहि सूंल्यौ लीनों।।२।।
हूं अब न तजत अस्थिर घर पायो छाडि बस्यो पूरै पंखि हीनौं।।
परसराम प्रभु सौं मिलि सजनि मोहि न मिलत हरि कै रंगि भीनौं।।३।।१६।।

राग सारंग--

हरि प्रीतम अपणौ करि लीजै।। सखी सर्वस हरि कौं लै दीजै।।टेक।।

साच सनेह कीयां हरि धीजै।। कपट कीयां कबहु न पतीजै।।१।।
तन मन धन हरि बसि कीजै।। परसा हरि अमृत रस पीजै।।२।।२०।।

राग सारंग--

हरि हरि भजिए कोई सफल धरी।।
निरफल और सकल दिन देही जु विषै विकारी भरी।।टेक।।
निरफल नर औतार निर्बीज जिन हरि टेक टरी।।
जीवन जनम अकारथ हरि बिनि बादहि देह धरी।।१।।
भूलि परै हरि पुर मारग तै जमपुर जात वरी।।
भजि न सक्यो त्रिभुवन व्रत धारी गरज न कछु सरी।।२।।
सखी निगम गावत गज गनिका जु भव तिरि पार परी।।
परसा पति पतितन कौं तारक पावन नांव हरी।।३।।२१।।

राग सारंग--

यह हरि हम सौ किन कही खरी।।
तैं कीनौं तिसकार हमारो सुकहा हम तैं बिगरी।।टेक।।
क्यौं भोजन मिष्ठान अभाये अणरुचि आणि अरी।।
खायो जाय आद कैसै गुसो कारणि कौन हरी।।१।।
भोजन भलो भाय क्यौं करी लागै जाकैं आपदा परी।।
तेरै प्रीति न विपति हमारै यौं रहि रसोई धरी।।२।।
हम राज भूपाल छत्रपति तुम गोपाल धरी।।
हम तुम साख न कछू सगाई मींठ न सींव सरी।।३।।
मोहि तैं उपजै सब मेरी वै हरि कछू वै न करी।।
अंत असमझि कहत कित ऐसी अति अभिमान भरी।।४।।
तेरो कहा विभो सब मेरो मोहि लेत न लगत घरी।।
अरु देत न कछु विरंब सकल कौं होत न पलक भरी।।५।।
श्री मुख वचन सुनत अरि ऐसे नखसिख अगनि जरी।।
परसराम प्रभु कौं दरसि दुष्ट की दिष्टि न कदे ठरी।।६।।२२।।

राग सारंग--

गोरधन गोपाल ही प्यारो।। जामैं गोधन चरत सुरवारो।।टेक।।

बाल केलि लीला मन भावै॥ गिरमंडल गोधन बगरावै॥१॥
घोख सैल नंद पैं जु पूजावै॥ इंद्र विदोसी पाक हरि पावै॥२॥
नाना फल पकवान अलेखै॥ अनत पाणी जीमैं सब देखै॥३॥
इंद्र कोपी वरस्यो जल धारा॥ सो अचवन कीनों नन्द कुमारा॥४॥
गिरवर धर हरि मुरली सुरि धार्‌यो॥ व्रजनाइक बल ब्रजहिं दिखार्‌यो॥५॥
अमर नाथ हार्‌यो अविचारि॥ जीते हरि गोवरधन धारि॥६॥
सुरपति लै सुरभि व्रज आयो॥ दीन भयो चरणन लपटायो॥७॥
ब्रजवासी हरखैं सुख पावै॥ पाई परै हरि कौ सिर नावै॥८॥
व्रजमंगल सब कौ सुख दाता॥ परसा प्रभु धाता कौ विधाता॥९॥२३॥

राग सारंग--

उदित भये रघुकुल वै राम॥
जाणि सही सविता निसि कारणि ब्रम्ह अगम सारण सुर काम॥टेक॥
मुदित भये नृपराज महाबल मिटै विघन बहु विथा विराम॥
सुफल भये रिसि वचन पुरातन दीयो वर वंछित फल भाम॥१॥
सोभित पुर मंगल पद प्रगटे निरखत निमस भये निसि जाम॥
पावत दरस परस रघुपति कौ पावन सकल लौक धन धाम॥२॥
प्रगटै निर्गुण सगुण होई विसु पुरण आदि अंति सब कौ विश्राम॥
सोई पति प्रगट गाय जस परसा बार अगिण अध जारण नाम॥३॥२४॥

राग सारंग--

नृप दशरथ गृह मंगल चार॥
गावत उमगि उमगि सब जहां तहां प्रगट भये रघुपति औतार॥टेक॥
विप्र पढ़े बहु वेद महाधुनि नाचत सुर औसर निजसार॥
घूरै सरस नीसांण दुंदुभि अरु सकल पुर गूंजै जै जै कार॥१॥
अति आनंद बधावौ देखत बंदि पौल पढ़ै जस बारंबार॥
पावत दान मान मन वंछित रेवत जे सम्रथ दरबार॥२॥
देत असीस सकल सिर नावत वंदत चरण न पावत पार॥
परसराम प्रभु अंतर जामी राजिव लोचन सब प्राण अधार॥३॥२५॥

राग सारंग--

बलि रघुपति रायन कै राय॥
जाकौ जस कीरति वृत महिमा सेस सहस मुखि बरनि न जाय॥टेक॥
जाकौं वरणि विधाता भूल्यौ अरु अंति लीयौ आपण समझाय॥
सोइ पति प्रगट पर्म पुर पर हरि वे अवतरे अवधि पुर आय॥१॥
जाहि धरि ध्यान संभारत सिंभु निगम रटत नित प्रति ल्यौ लाइ॥
सोइ पावत नहीं पार पचि हारि वै ब्रम्ह अगम जनमै जनमाइ॥२॥
प्रगट समीर पोसि सब सोखैं ज्यौं सलिता जलसिंधु समाय॥
परसराम प्रभु राम अकल मैं सकल रूप धरि आवै जाय॥३॥२६॥

राग सारंग--

राजत सारंग कर धरै आजि॥
रघुपति राज सभा मैं सोभित सुन्दर राजि कै राजि॥टेक॥
दीनूं चाप चरण करि करणि करण कौं हरि साजि॥
उठै असह असुर देखत ही भूप चले भै भाजि॥१॥
नाना रूप अनूप जनक कैं धारैं हैं गरीब निवाजि॥
परसराम प्रभू प्रगट स्वयंवर राम सीया कैं काजि॥२॥२७॥

राग सारंग--

रघुपति हितू बिना दिन जात॥
सोई दिन आदि न अलखै लागत निसि ही निसि निति होत न प्रात॥टेक॥
इह अति अंदेस जु राम विण राकिस अधिक होई किनि तन घात॥
ज्यौं मृगि वन बिछुटी बाग तैं देखि सोई असुर पुर अधिक डरात॥१॥
सही न सकत न दुख दर्द डाह उर आस लाग्यो नहीं प्राण समात॥
सूलत सर हरि विमल नीर विण प्यास सु चात्रिग ज्यौं बिल लात॥२॥
पावत नाहिं ताहिं बहुरि बार्वारि याहुँ अबला अति भई अनाथि॥
नाहिंन कछु अंति वसि मेरौ प्राण बान भई तापति कै हाथि॥३॥
बीचि पर्‌यो जलनिधि कौ अंतर यहां कौ आवै कहूं संग न नाथ॥
क्यौं मिलिये परसा प्रभु कौं अब बैंहैं कछू सु जाणै रघुनाथ॥४॥२८॥

राग सारंग--

सोई अब न पलटि पतिव्रत लजाऊं॥
परहरि निज रघुनाथ महाबल हूं न आसुर आगैं सिर नाऊं॥टेक॥
क्रोध अगनि की झाल प्रकट करि छिन यक मैं बहु लंक जराऊं॥
सकैं कनक पुर छार वार नहीं तां ठोहर की सब धूरि उडाऊं॥१॥
सिव सेवा कीयां को जो फल सो फल तुम कौं हूं अबहि दिखाऊं॥
मारि असुर सघरि पलक मैं सिव कारणि सिर भेट पठाऊं॥२॥
ये दस सीस बीस भुज अबहिं हौं खड खंड करि प्रेत पकाऊ॥
रावण असुर समस्त आदि दै भोजन अलप त्रिपति नहीं पाऊ॥३॥
यौं दरिया करि मंजन करि हूं अचवन कौं जल और मगाऊं॥
तौं त्रिखान जाय पर्म जीवनि बिन सिंधु अगिणयक सास सुकाऊ॥४॥
राखति हूं रघुपति कैं कारणि वातैं हूं असुरण न तोहि सताऊ॥
यौं जु कह्यो हति हूं कर अपणैं सो तापति की हूं पैंज निभाऊं॥५॥
वीरा रिण संग्राम करण रुचि मोहि कह्यो चलि हूं यह आऊं॥
परसराम प्रभु राम सुमंगल देखि प्रकट पौरिष जब गाऊं॥६॥२९॥

राग सारंग--

देखि यह मोहि अचिरज आवै॥
जाकौं नाम अतिरगिण तारण सु महासिंधु करि सिंधु बन्धावै॥टेक॥
जाकि सकति जगपति जग जीतै जगत जीव बलि सो न बन्धावै॥
जाकै काजि आजि ब्रम्ह कपि दल बल बीरा रिण मांझ सूर कहावै॥१॥
प्रलै कालि निजरूप परमापति महावीर वीरा रस भावै॥
रामचन्द्र रिण रमित विराजित कर गहि बाण दसौं दिस धावै॥२॥
सवै सुभट्ट भै कम्पनि पौरिष महाकाल की झाल दिखावै॥
झपटत लपट असुर वन दाझत सुर्ण समान पतंग गिरावै॥३॥
महा मृगराज नमै दूरि चित दैनि जग जरा जन चींटि चावै॥
जो पर्म हंस विलसत मुगताफल ताकौं भोजन कीट न भावै॥४॥
जाकै अर्थ पलक ब्रम्ह बहु बीते ताकौं क्रोध नृपति कहा पावै॥
परसराम रघुनाथ हित सौं सति सुदरद निसास सुणावै॥५॥३०॥

राग सारंग--

हो कपि आयो तो मोहि भायो॥
जो प्राणनि कै प्राण सनेही वै जो कह्यो बतावो॥टेक॥
प्रथम समादि कहौ तापति की आन निसास दुरावो॥
है आरोग अखिल के नायक सो सुख श्रवनि सुनावौ॥१॥
सिंधु विछुरि सलिता सुख नाहीं रवि मारथ कौं मावो॥
देखत जाय विलाय वादि ही बहुरि न होत मिलावो॥२॥
सुख न कहूं विण सरणि सदा निसि देखि न तुम सुख पावौ॥
सुनि वनचर वर विपति कंत बिनि मरत सुरति समझावो॥३॥
जात घट्यो न प्राण दरस बिनि यहै बहुत पछितावो॥
परसराम रघुपति बिन जीवनि धृग सोई जनम कहावो॥४॥३१॥

राग सारंग--

हो कपि रघुपति मोहि मिलावो॥
प्रगट सरूप संजीवनि मेरी संगि करि कै लै आवो॥टेक॥
लोचन है संग्राम दरस कौं अब जनि विरंब लगावो॥
आसुर पति अगण समारि सोहि तो वीरा रसहि जिमावो॥१॥
अमर अधीर असुर संकट तैं आतुर आय छुडावो॥
यौ दुख दरद संदेसो परसा पति कौं जाय सुनावो॥२॥३२॥

राग सारंग--

अब जननि जग जीवन ल्याऊं॥
बिलम न करौं निमस मोहि आरति सो आग्या जो पाऊं॥टेक॥
हूं सही न सकूं दुख दरद तुम्हारो सब संघारि दुराऊं॥
असुर अपुर रघुनाथ कृपा तैं लै जम लोक पठाऊं॥१॥
ईस जगईस सुरेसुर कै पुर करि सोई कथा सुणाऊं॥
डरपति हूं अपजस सिर पर धरि कालै बदन दिखाऊं॥२॥
कितयक संक निसाचर निसि की अब रवि राम बुलाऊं॥
बाण किरणि की अगनि प्रगट करि असुर पतंग जराऊं॥३॥
तुम देखत रघुपति कै कर सों बंदै सीस गिराऊं॥

भुजा उपारि पछारि धरणी परि कपि चौगान खिलाऊं ॥४॥
प्रगट करुं निज रूप महाबल तौं आगै सिर नाऊं॥
परसराम रघुपति रिण राजित देखि पर्म सुख पाऊं॥५॥३३॥

राग सारंग--

अब माता मन जनिहि डुलावो॥
धीरज धरौ भजो सोई सति करि पति चित तैं न भुलावो॥टेक॥
बिछुरण विरह वियोग सुरति धरि अब तन कौ न जरावो॥
सोई दुख हरण करण कारण प्रभु सुमरि सुमरि सुख पावो॥१॥
अब एक निसासे सहैं को तेरो त्रिभुवन प्रलै पठावो॥
कितियक संक असुर दस सिर करि जो वरत लजावो॥२॥
जाकैं पति रघुनाथ महाबल ताहि कहा पछितावो॥
परसराम प्रभु प्रगट करो अब मांगौ आइ बधावौ॥३॥३४॥

राग सारंग--

अजहूं न तजत असुर असुराई॥
राम सधीर देखि रिण राजित अमर सुमंगल करत बधाई॥टेक॥
महाकाल तरु वीरा रसफल दीसत ज्यौं दरपन मैं झांईं॥
देखि चरित भै कंप असुर पुर ज्यौं रवि किरण राहु की छांईं॥१॥
प्रगट अगनि रघुनाथ उजागर जिनि पावक बहु लंक जराईं॥
परत पतंग अगिण रावण उड़ि दाझत दुष्ट तूल की नाईं॥२॥
महा मूढ अग्यान अंध पतित अनचेत्यो जोइ सिर खाई॥
करि तातौ अति तेल सुरति छिन जाणि सुभुजंग हते समि वांई॥३॥
सो न भजै निभै पद नहिलि जिनि सिव की सकति अगिण बौराई॥
परसराम तासौं मन तेडौ जा प्रभु बिन और नहीं ठौर कहांई॥४॥३५॥

राग सारंग--

राजित राजिव लोचन राम॥
लीये हर धनुष वाण टेरत हेरत समझि सकाम॥टेक॥
ठाढै रिण रघुवीर धीर वर अति सोभित सब सुखधाम॥
पावत दरस प्रगट असुरासुर हरि अचिरज अभिराम॥१॥

जैसी जाकी आसा तैसो ताकौ प्रभु अकाल सु मंगलनाम॥
परसराम रघुपति चरित भव पारि करण गुन ग्राम॥२॥३६॥

राग सारंग--

कंत कृपाबल कहत न आवै॥
प्रगट दरस रघुनाथ समागत हृदै उसास न उलटि समावै॥टेक॥
धनि यह देस राज रावण धनि जा ऊपरि आपण चढै आवै॥
धनि इह भौमि चरण धरै जापरि ब्रम्ह अगम कपि सैन खिलावै॥१॥
धनि यह सति अमर यहां आवै जाकैं हित रघुपति हित रघुपति रिण धावै॥
वीरा रिस रुचि खण वाण विधि पौरिष भुजा सचु पावै॥२॥
धनि यह वपु धर्‌यो आजु सुकल भयो हरि देखैं जाहि दरस दिखावै॥
धनि यह ग्रह गढ गांव असुरपुर सकल जामैं राम दुहाइ धावै॥३॥
सुनि वधू वचन मुदित भये रघुपति मांगि वर जो तोहि भावैं॥
कहत अमर करू योही रावण राज बहुरि अयोद्धा अटल बसावैं॥४॥
या गति सुगति यहै वर दीजै असुर न होय अरु सुरनि संतावै॥
परसा राम प्रभु वीरा रस जस सोई पति जाय परम पुरि गावै॥५॥३७॥

राग सांरग--

तबहि सब आनन्द हमारै॥
जबहि रामचन्द्र चिंतामणि वन कौ तजि निज भुवनि पधारे॥टेक॥
जाकी हम पाटि पावडी पूजैं सोई पति जो निज वदन दिखारैं॥
छाडि गुमान प्राणधन अपणूं लै रघुनाथ रुप परि वारैं॥१॥
लै सब राज पाट सिंधासन रघुपति बैठि छल सिरधारै॥
छागै सुभट्ट भूप अंदीजन ठाढै निकट चंवर कर ढारै॥२॥
वंदहि ईस जगदीस सुरेसुर देव गण जु आरति उतारै॥
घूरै सरस निसणं सुमंगल जै जै घुनि सुनि निगम उचारै॥३॥
उज्जल प्रेम पुर मंडल उमगि गान तन मन न संभारै॥
मानों सिंधु सनमुख लै नीर भेंटें सिंधुनी सिधारै॥४॥
सीस नाई अरु कर जोरइ कन्त परम परमपवित्र पांवरि झारै॥
जब जब उठहि तबहि धरौ आगै कृपा सिंधु सुभ दिसि निहारै॥५॥

आगम ध्यान करत औलम्बन हरि आरतति उर तैं न विसारै ।।
यह जिय सोच होय जो साची सुनि कपि ऐसी हम सदा विचारै ।।६ ।।
बूझै कुसल सकल सुख दाता सनमुख बोलि बोलि दुख टारै ।।
परसराम जन भागि प्रगट प्रभु दरस परस मुखराम संभारै ।।७ ।।३८ ।।

राग सारंग--

राखि सरणि रघुनाथ सहाइ ।।
अघ मोचन जाकौं विरह कहिये अब तौ मिट्यां लाजपति जाइ ।।टेक ।।
सुत हिति नाम लीयां द्विज तार्‌यो कीर सिला संगति भाय ।।
आवा गवण मेटि भ्रम भौ दुख चरण कमल राखै लपटाय ।।१ ।।
गज गनिका पसु पंखि पर्मगति व्याध वधिक तारै हित लाय ।।
सोई सरणि रही विण सुमिरै बकी कहा कीनूं अधिकाय ।।२ ।।
सबै पतित तारे पति राखि पतित न पति विसर्‌यो कलि मांहि ।।
जात बह्यो कहूं थाह न पावत परसराम तुम बिन हरि राइ ।।३ ।।३९ ।।

राग सारंग--

जब लग सरै न हमारो काज ।।
तब लग कौण तुम्हारो सेवग काकै तुम राम खसम सिरताज ।।टेक ।।
हरि सम्रथ गुरवेद वदत यौं तारण पतित रह्यो ब्रद बाज ।।
अब लग तिर्‌यो न तार्‌यो तैं कोई जो पैं हम न लहै सु जिहाज ।।१ ।।
हम विण प्रतीत कही कौ मानै जो मनकी संक न जाइ भाजि ।।
जो अपणैं जन सौं न प्रसन प्रभु तौ क्यौं सेवइ साहिब सुख राजि ।।२ ।।
तुम राखै सरणि सबै सुख दाता आदि अनन्त अन्ति अरु आज ।।
परसा प्रभु सुनि साच कहत हूं क्यौं मोह्नि देखि आवै तोहि लाज ।।३ ।।४० ।।

राग सारंग--

केसौ कहि तन मन छीजै ।।
तुम अंतर जामी जन परचै बिन कही क्यौं प्राण पतीजै ।।टेक ।।
भौ मंडल दाझै संगि पावक बिण बिरखा क्यौं भीजै ।।
दीन दयाल सुणौ करुणामय कृपा सुकारण कीजै ।।१ ।।
होऊ कृपाल भगत हितकारी हित करि दरसन दीजै ।।

तुम बिन बिलपत परसराम जन सरणि आपणी लीजै ॥२॥४१॥

राग सारंग--

हो हरि नाम तुम्हारो सुणियत हरण विकार॥
प्रगट प्रताप अकल अघमोचन गावत वेद ब्रम्ह व्यौहार॥टेक॥
काम कठिन मन क्रोध महा छल ढिंभ कपट बल कौ संघार॥
मोह विघन दुविध्या दुख हारन आसा पास हनन हरि सार॥१॥
लालच लोभ विविध माया मद वाद विवाद विषम विषधार॥
पांच पिसन परबल भव जल तैं सम्रथ राम उतारण पार॥२॥
जिणि सुमिर्‌यो सोई भल जाणै निर्‌मल होइ मिल्यो तजि भार॥
नाहिंन अटक नीसांण बजावत पतित सरणि चलि जात अपार॥३॥
इहि मारग मुगत भये सब जाणै सिव विरंचि सुक व्यास विचार॥
परसराम प्रभु विडद उजागर भगत वछल निबहण एक तार॥४॥४२॥

राग सारंग--

मंगल गावत आवत गोपी॥ नन्द भुवन आंगंन अति ओपी॥टेक॥
जूथ जूथ जुवति जन आवै॥ हरि मुख देखि देखि सुख पावै॥१॥
धूप दीप कर कलस बंधावै॥ चरण कंवल वंदे सिर नावै॥२॥
परम मुदित सब अधिक विराजै॥ करैं बधाई बाजा बाजै॥३॥
उमगि उमगि आभूषण त्यागै॥ मगन भईं नाचै हरि आगै॥४॥
अति आनन्द प्रेम रस बरिसै॥ पर्म विनोद देखि सब हरिषै॥५॥
तन मन सुद्ध परम रस पीवै॥ हरि औसर देखै सब जीवै॥६॥
श्रवन सुजस विलसै सुख लोचन॥ हरि कृपा सिंधु सबकै दुख मोचन॥७॥
सबकौ प्रान जीवन धन येही॥ परसा पति गोपाल सनेही॥८॥४३॥

राग सारंग--

वसुदेव देवकी कैं वसुदेवा॥ प्रगट भये आप भुवन अभेवा॥टेक॥
संख चक्र गदा पद्म विराजै॥ चिह्न धरै चत्रभुज वपु भ्राजै॥१॥
ब्रज अवतरे ब्रम्ह धरि देही॥ रछ्या करण सकल के येही॥२॥
भादूं रुति वरिसा जल बाजै॥ निसि दामिनी चमकै घन गाजै॥३॥
अति भयांण पंथा जमुना बाढे॥ पोरी मुकत भई पाहरु पोढै॥४॥

तिहि औसरि नन्द भुवनि पधारै ।। मिटि गयो सोच कंस पचि हारै ।।५ ।।
इत उत मंगल सब सुख पावै ।। परसा जन जीवै जस गावै ।।६ ।।४४ ।।

राग सारंग--

कमल नैन नैननि चिति चोर्‌यो ।।
मो देखत मोरो मन मोहन हरि लीयो हरि न बहोर्‌यो ।।टेक ।।
मोहन मोहनि बसि करन वसि करि वलि छलि भुवनि ढंढोर्‌यो ।।
लैजु गये सरबसि वसि अंतरि नैक हंसि मुसकि मुख मोर्‌यो ।।१ ।।
निरखत बदन ठगोरी सी परगई रहि चित्र जैसो कोर्‌यो ।।
नैक बूंद जल पर्म सिंधु मिलि बिछुरत नाहिंन विछोर्‌यो ।।२ ।।
अब कहा होय कहैं काहूं कै जाणि बूझि जासौं मन जोर्‌यो ।।
भयो विवसि परसा प्रभू सौं मन नेह न तूटत तोर्‌यो ।।३ ।।४५ ।।

राग सारंग--

हरि चितवनि चितवत चित चोर्‌यो ।।
मानों कर बाण धनुष तैं अरि हित बल करि सुभट्ट बिछोर्‌यो ।।टेक ।।
हरि लीयो प्राण प्रानपति निरखत रही धरि सिखोर्‌यो ।।
मनु गयो बाज सिकारी कर तैं जाणि जंत्र कौं छोर्‌यो ।।१ ।।
परवसि परि पलट्‌यो मन मोसौं आवत नाहीं निहोर्‌यो ।।
ज्यौं वनचर बाजीगर कै वसि डोलत मुरझि परि डोर्‌यो ।।२ ।।
कठिन प्रेम की हिलग लूबध मन जाइ मिलत विणि जोर्‌यो ।।
ज्यौं दीपग दरसी पतंग प्रसन भयो जरत अगन हिं मोर्‌यो ।।३ ।।
तलफत दुखित जीव ज्यौं जल बिन मरत विरह को बोर्‌यो ।।
परसराम प्रभु कै वसि सर्वस अब जात सनेह न तोर्‌यो ।।४ ।।४६ ।।

राग सारंग--

खेलत रास रसिक राधावर मोहन मंगल कारी ।।
सोभित स्याम कमल दल लोचन संगि राधिका प्यारी ।।टेक ।।
सिर सिखंड उरि विविध माल मुरलि धुनि करण मुरारि ।।
कटि काछनी बन्यो उपरैनां पीताम्बर सोभित बनवारी ।।१ ।।
बन्यो अधिक गोपिनी कौं मंडल मधि गोवरधन धारी ।।

कर सौं कर जोरैं नटनागर नाचत केलि बिहारी।।२।।
राजित अति नाना गति निर्तत सुन्दर वर ब्रजनारी।।
मोहे सिव ब्रम्हादि मनोज सुर हरि औसर सुखभारी।।३।।
अविगत नाथ निर्गुण वपु धरि सगुण लीला विस्तारी।।
भगति हेति आधीन अभै पद परसा जन बलिहारी।।४।।४७।।

राग सारंग--

लै गये मोहन मन कौं चोरि।।
अब रहत न प्राण निमस तापति विण भई विकल मति मोरि।।टेक।।
करत विलास रास रूचि रचि हित कर सौं कर जोरि।।
सुतजत न लगि विरंब छिनक मैं मोह तिणां ज्यौं तोरि।।१।।
हूं मुरझि परि बेहाल लाल विण भई भर्म वसि खोरि।।
मिटच्यो न मन अभिमान मनावत सक्यो न स्याम बहोरि।।२।।
अब इतवत दूंढत फिरै वन बेलि द्रुम साखा फल फोरि।।
सोई सुख सिंधु न पावत सलिता सूकत बीचि बल छोरि।।३।।
धरि धरि ध्यान सम्भारत सोचत लोचत नैन निहोरि।।
परसराम प्रभु पकरि न राखै बंधि सुप्रेम की डोरि।।४।।४८।।

राग सारंग--

मोहन लाल हो मोहि चितवत दिन जाई।। कव देखिहूं हरि स्याम प्यारो।।
जोई हूतो तन प्राण हमारो।। ता बिना हम दुखित नछित्रगण तै रैंनि बिहाई।।टेक।।
घण मेघ सबल उमगि आय।। वरिखै जल सकल छाये दामनि मुसकाय।।
धीरे धीरे घर वन रहत न सुहाय।। मोहि स्याम संदेसन कहै कोय।।
सलिता बहैं द्रुम मैं दूरि, बोलत चात्रग सुनाय टेरि।।१।।
बोलहि पिक मोर मधुर गावै।। ब्रजवासिनी सुर सो भाये न सुहावै।।
होत है तन मन प्राण खीन।। तुम बिन अब पिय जनम हीन।।
परसराम इहि बार गाय।। प्रभु कबहूं मिलोगे आय।।२।।४९।।

राग सारंग--

प्यारे लाल हो लालनी लै संगि आय।।
निसदिन विलपत तूम्हारे दरस कौं पलभरि रह्यो न जाय।।टेक।।

दारुण दुसह भुवुगनि डस्यो मन पलक पल निघट्यो जाय।।
सोई विस मेटि सुवोखदि घसि दै हो मोहन मृतक जिवाय।।१।।
पीर न मिटै बिना पति पूरै अब तलफत प्राण बिलाय।।
दीन दयाल भगति हित कारी केसौ क्यों न करो सहाय।।२।।
विरह विषम पावक होय प्रगट्यो व्याकुल तनु अकुलाय।।
परसा जन याचत को तुम बिन साझल बरखि बुझाय।।३।।५०।।

राग सारंग--

लागौ रंग महारस नेह।।
सो न तजौं भजि निमष न विसरौं उपज्यो अधिक सनेह।।
विसर गई गति और ठौर की हरि चितवन की टेव।।
सावसि रही सरस जिय मेरैं पीवत रस रही सेव।।१।।
पायो मीत मनोहर प्यारो विसर्‌यो सब तन मन ग्रेह।।
परसराम तासौं बणि आई अवगति अलख अभैव।।२।।५१।।

राग सारंग--

सारंग राग सखि सुरि गावै।।
तन मन मगन प्रेम रस माती मोहन लाल लडाय रिझावै।।टेक।।
उरझि रही पीव रंगि पल भरि इतवुत चित न डुलावै।।
निमष न तजै भजै ल्यौ लाये हरि बिण और कछू नहीं भावैं।।१।।
अन्तरजामी अकल सकल पति वसि करि अपभुवनि बुलावै।।
परसराम बड़भागि भामिनी अवगति नाथ जास ग्रह आवै।।२।।५२।।

राग सारंग--

पर्म सुमंगल तौ सुरि गावै।।
प्रेम मगन तन मन अति आनन्द उमग्यो उरि न समावै।।टेक।।
निरखि निरखि मुख सुख लोचत सोचत सोच न आवै।।
उडि उडि मिलत मधुपद पंकज गति अति आरति रुति भावै।।१।।
देखि प्रगट सुख सिंधु समागम मिलि सलिता सुख पावै।।
परसा पति दुखहरण करण सौं अपणौ सबै सुणावै।।२।।५३।।

राग सारंग--

सखि हरि पर्म मंगल गाय॥
आज तेरे भुवनि आये अकल अविगति राय॥टेक॥
लोक वेद मरजाद कुल की काणि बाणि बहाय॥
हरि पर्म पद नीसाण निर्भै प्रगट होय बजाय॥१॥
उमगि सनमुख अंक भरि भरि भेटि कंठ लगाय॥
वारि तारि तन मन प्राण धन कछु रखिये न दुराय॥२॥
परसा प्रभु कौं सौंपि सर्वस सरणि रही सुख पाय॥३॥५४॥

राग सारंग--

स्याम सनेही करिये सत्य करि॥ मिलि रहिये मन दै आरति धरि॥टेक॥
जैसे मीन जल कौं मन दीनों॥ मन दै मीन मित्र जल कीनों॥१॥
जल तजि मीन अनत न जाई॥ मिल्यो रहै निज करि मित्राई॥२॥
ऐसे सखि स्याम संगि कीजैं॥ तन मन धन जाकौं ताहि दीजै॥३॥
परसा प्रभु तजि अनत न बहीए॥ स्याम सिंधु तासौं मिलि रहिए॥४॥५५॥

राग सारंग--

सुणि सखि स्याम अधिक मोहि प्यारो॥ जाणौं जो तन तैं होत न न्यारो॥टेक॥
तन मन सौंपि दियो सुख पौषे॥ उनि पिय प्राण सकल दुख सोखे॥१॥
राखि समीप सुधारस पीवो॥ परसराम प्रभु देख्या जीवो॥२॥५६॥

राग सारंग--

मंगल नाम हरि जो गावै॥ सोई मंगल जु मंगल पद गावै॥टेक॥
मंगल हरि कीरति फल मंगल॥ मंगल प्रेम पीवत रस मंगल॥१॥
मंगल कमल नैन सुख मंगल॥ मंगल अवलोकति सुख मंगल॥२॥
मंगल वपु लीला धर्‌यो मंगल॥ मंगल ध्यान करत निज मंगल॥३॥
मंगल कृष्ण प्रणाम सुमंगल॥ परसा प्रभु सेवत बड़ मंगल॥४॥५७॥

राग सारंग--

काहे कौं रचे सिंगार कंवारी॥
झूंठ सबै नहीं साच सखी सुणि जब लगहिं न वरै मुरारी॥टेक॥
न्यौंति कुटुंब न पोष्यो री नीकै पांच पचीस बरात निहारी॥

दुलह देखि न बांधो तोरण ब्याह न भयो न लाज उतारी।।१।।
करम भरम कुल काणि न मानै निर्भै होय मिटै संसारी।।
ब्याह पछैं सकल आभूषण पहरि निसंक भई पीय प्यारी।।२।।
जब तैं प्यारो प्रीतम पायो अंतरि हित तैं भावै रही न न्यारी।।
परसराम प्रभु कै मन माति तौ खेलि निसंक दिये करतारी।।३।।५८।।

राग सारंग--

उधौ जाहू किन ब्रज तैं आजू।।
सुनहूं संत संदेस यतनौ करौं सुफल सुकाजू।।टेक।।
गुण हेत प्रीति समाधि इत की उतैं कुसल सुनाइ।।
काम रिपु भै निसि विलासनि मरत धीर बंधाइ।।१।।
कौण मति गति चलत है क्यौं रहत कहां मन लाय।।
कौंण धौं पति वरत अंतरि बजत है किहिं भाय।।२।।
फलहीण पहुप अनेक सूकत कौं संभारै ताहि।।
सुजन सुमन सनेह सींचै सुहेत अंतर काहि।।३।।
प्रेम सरि क्यौं विरह प्रगट्यो अभै भाव दुराय।।
निरखि पति निजरुप उर तैं दियो क्यौं छिटकाय।।४।।
यहै बहुत विचारि चलि अलि अब न विरंब लगाय।।
सुनि समझ बल विश्राम परसा प्रकट करि यहां आप।।५।।५६।।

राग सारंग--

मधुप माधौं मन चोरि लीनों मेरो बल बोरि।। कैसे सुख होय मोहि जो दीनों न बहोरि।।टेक।।
वरिषा जल पूरि जैसे दीनों पुल फोरि।। सलिता कै सोत सायक लीनों सुनि चोरि।।१।।
करि करि बहु जतन संचि राख्यो हो जोरि। छिन मैं धन रंक राजि लीनूं सब टोरि।।२।।
बिगरी सब बात जात निघटि निज खोरि।। परसा प्रभु प्राण घात की नीति न सोरि।।३।।६०।।

राग सारंग--

मधुप सालै उर साल मेरैं हरि की वै बात।। विलपत चित आनि आनि सुनतैं न सुहात।।टेक।।
विछुरत पाय लागि बोलि भेट तन भरि बाथ।। चलति बेर नेक ताकौ मैं पकर्‌यो नहिं हाथ।।१।।
सबन कौं सुख दैत नागर अनाथनि के नाथ।। सोई विसरत नहीं पलक प्रेम प्रीतम कौ साथ ।।२।।
पारस को परस पावत पलटि कुल जाति।। ताकौ सुख तब न जान्यो अब न रह्यो जाति।।३।।

लोचन हरि दरस कारणि लोचत दिन राति ॥ परसा प्रभु मिलन की कब आय है वा घाति ॥४॥६१॥

राग सारंग--

मोहि हरि सोचतहि दिन जात॥

दीन दयाल दरस बिन विहरनि बिलपत बिरह जरात॥टेक॥

चितवत पंथ विचारि विसुरत मरत करत अपघात॥

यह औसर जो गयो तहा प्रभू तौ मिटि हैं मिलन की बात॥१॥

यह बड़ विथा हमारी हम कौं तुम विण डसि करि खात॥

सोई हम सहि कहौ परसा प्रभु तुम्हारो ही विडद लजात॥२॥६२॥

राग सारंग--

हो ऊधो ऐसी हम न सुहाय॥टेक॥

जदपि मन मैं हूंती तुम्हारे तऊं अंतरि राखि दुराय॥

जो तुम कह्यो सुभावत नाहीं न वादि बकत इहां आय॥१॥

जाकौ हम तन मन धन अरप्यो पहली प्रीति लगाय॥

सोइ सुख सिंधु सुमंगल परहरि कौ दुख मैं बहि जाय॥२॥

जो हरि हम लोचन भरि देख्यो मन ताकौं पतियाय॥

भई अब ज्यौं तजै दूध की दाधी पीवत दही सिराय॥३॥

रह्यो प्रेम नेम नीति तासौं जो उरि रह्यो समाय॥

जग्य जोग तप तीरथ व्रत जीवनि जादूंराय॥४॥

अब और न गति सत्य असत्य सोई तन विरह जराय॥

यौं पतिवरत हमारे रह्यो जु परसापति न भुलाय॥५॥६३॥

राग सारंग--

ऐसी असह सहै धौ कोय॥

जो तुम हम सौं करी कृपा करी सुलगात अगनि सम होय॥टेक॥

तुम सौं कहा कहै हम अबला साहस कछू न बसाय॥

कहि हैं सकल आपदा तब जब मिलि हैं स्याम सहाय॥१॥

हम तुम एक येक पति सिरपरि पठिये कौन सिखाय॥

अब डरत न प्राणघात करिये तैं मारत अजर जिवाय॥२॥

व्हे पुन्य हमारौ तुम कौं हम हति करि जाऊं जराय॥

परसा प्रभु सौं कहो बुद्धि बल सुजस तिलक लेऊ जाय॥३॥६४॥

राग सारंग--

मधुकर प्रीति तुमारी जाणी॥
जो कछु अंतर हुंती तुम्हारे प्रगट भई मुख बाणी ॥टेक॥
धाय मिलि आतुर बूझत कारण लागत अति प्यारे॥
मानूं षुध्यांरथ कै धूं फल पाये खाये जात न खारे॥१॥
जनमत ही जो लग्यो गूढ रंग स्याम होत नहीं पियरो॥
ससि और सूर समि वहि कहि क्यौं वो तातौं वो सियरो॥२॥
कहा भयो विधु अमृत स्रवे मुखि मीठो उरि कारो॥
येक मास मैं दोय वपु धारे पखि बूडो पखिवारो॥३॥
कहा भयो जो दोउ जमायो अंति अमिल पै पाणी॥
रह गई तक्र नीर तै न्यारी जब धरणी चीर धरी छाणी॥४॥
ज्यौं सलिता नीर निवांण बिण बही जहां तहां गयो विलाय॥
अब पलटयो प्रेम सिंधु जन परसा मिलै कूंण मैं जाय॥५॥६५॥

राग सारंग--

हम तौ विरहणि विरह निबोरी॥
कीणी वसि अपणै लै वनि मानो मृगि सिंघनी घेरी॥टेक॥
तापरी तुम पावक होई प्रगटै जरी जरावत जेरी॥
विगसत वपु जहां जहां ताहूं मैं खारी बांटि बटोरी॥१॥
तनहूं तैं मनि स्याम सांवरे मधुप महामति तेरी॥
मानौं निर्मल मैलो करिबे कौं आणि करि मसि ढेरि॥२॥
अब यह नेह विरह जरी रहि हैं पर्म प्रेम की पेरी॥
कमल नैन करुणामय परहरि कौ ताकैं षट सेरी॥३॥
तुमारो कह्यो सुणो फिरि तुमहि हम न फिरत अब फेरी॥
परसा प्रभू सुन्दर वर सिर परि हम ताही की चेरी॥४॥६६॥

राग सारंग--

हो ऊधो तू मेरौ तन मन प्राण॥
या हित कथा अबर की नाहिं सुणि हो सन्त सुजाण॥टेक॥

मेरो मन तेरे मन भीतर कहूं कहौ बहु आन॥
मोहि मोहि एक सरीर एक मन दुख सुख सोक समान॥१॥
तौ बिण सकल सिरोमनि ऐसे मानो गिरपाषाण॥
तुम सब जाहूं सिर मौर सनेही निसि नायक पति भाण॥२॥
तू मेरौ अति हितू पर्म गति मति पूरण विज्ञान॥
कहि न सकौं महिमा सुख सुमिरण अगिण सुजस बखान॥३॥
तातैं तुमहि पठावत पहली हेरत मिलि न ठाण॥
विरंव न लाय कह्यो सुणि सत्य करि चलि आगै अगिवाण॥४॥
अति आतुर हित कथा सुणावैं छाडै मन कौ मान॥
इतनौ कह्यो समझि सुणि परसा अपरस पर्म विवान॥५॥६७॥

राग सारंग--

माधौ जी मोहि भरोसो तेरो॥
तुम जु पठावत आन खंड कौं कौण अहि न आयो नेरो॥टेक॥
कौंण अधर्म उदै भयो कैसो कौंण विजोग निबेरो॥
ज्यौं जल मीन बसत ही ग्रास्यो आय काल कीयौ हेरो॥१॥
चरण सरण छाड्यो नहीं भावत फीको लागत फेरो॥
(परसा प्रीतम अब विरम्ब न लावौ बेगि बात निबेरो)॥२॥

राग सारंग--

चलूं क्यौं हरि मिटत न मन को मोह॥
लगी जु रह्यो पति प्रेम हेम होइ विण रवि रुति न बिछोह॥टेक॥
निज जीवनि तजि गवण करण रुचि धृग मति जनम सयान॥
परम परमारथ परहरि सुवारथ सुख न लहैं सोई प्रान॥१॥
जाकौं मन प्राण बसै जामाहीं सोई फिरि ताहीं समाय॥
यौ महासिंधु कौ जीव महाप्रभु निकसि न क्यौं पछिताय॥२॥
क्यौं तुमही न व्यापै पर्म कृपा निधि दीन दुखित कौ दोष॥
जो पै मीन तलफि तन त्यागै तौ क्यों नीर न सालै सोक॥३॥
मोहि तोहि विथा न येक अगह आरति विण चल्यो न जाय॥
यौ सहि न सकौं दुख दुसह चरण तजि परसा पति न पठाय॥४॥६८॥

राग सारंग--

दीन होय करत मनुहारि॥

सुणि सुख सिंधु सुवचन सत्यकरि विछुरन मिलन निवारि ॥टेक॥

चलत न चरण पंथ दिसि निसि बिन पलटत प्रथम विचारि॥

मन न तजत निज ठौर महाप्रभु अब लग्यो सनेह जु न टारि॥१॥

नैन झुरत जल झरण सरस गिर पावस रुति उन हारि॥

अब सास समात नहीं उर उलटयो दीन दयाल न मारि॥२॥

मैं अग्यानि न जाणियौ महिमा तू अपणो विरद सम्भारी॥

परसराम प्रभू विघन हमारो होत गवण सु व्यौहारी॥३॥६९॥

राग सारंग--

नीर सौं क्यौं मिटत मीन कौ नेह॥

निकसि न जाइ सहत दुख हित नहीं तजत प्राण निज ग्रेह॥टेक॥

एक भाव दिसि और न कोई प्रेम वरत वदि एह॥

जाहि दुखित जीव पीर न व्यापै सौई सिंधु न सनेह॥१॥

निर्गुण मित्र करि सगुण सनेही सुख न लहै धरी देह॥

मीन मरत नहीं डरत नीर पलु परसा यौ न कछु नेह॥२॥७०॥

राग सारंग--

जो तुम अन्तर जामी जाण॥

तो क्यौं न विचारहू करुणासागर लागत सबद सुवाण॥टेक॥

जल तजि मीन बसै क्यौं वाहरि मिटत विडद की आण॥

जीवै नहीं नीर बिनि पल भरि, तलफि तजै तन प्राण॥१॥

पतिवरता पति तजै न कबहूं ज्यौं गिरि नीर नीवाण॥

परसराम प्रभू चरण सरण तजि भजै न सु पाषाण॥२॥७१॥

राग सारंग--

तुम सूं कहा कहूं बहु आन॥

सुनो उधौ ब्रज जन की जीवनि जाण्यो नहीं अजाण॥टेक॥

सोई पति रथि सारथि कहावै पूरण ब्रम्ह निधान॥

सखा सुभाय समीप पर्म पद परसि न उपज्यो ग्यान॥१॥

सोई त्रिभुवन पति अन्तरजामी अविनासी हरि जाण॥
आये द्विजसुत मृतक जिवावन सोई प्राणणि के प्राण॥२॥
यह मिट्यो न कबहुं मेरे उर तैं अति अन्तर अभिमान॥
परसराम प्रभू प्रगट पर्म पुरि निसि न उदै निज भान॥७२॥

राग सारंग--

तुम सो हितू कहूं क्यौं ऐसी॥
जैसी किसी दिसि मैं देखि सोई उर भेद छेद करि पैसि॥टेक॥
उनि वपु धर्‍यो वर्‍यो मैं सोई सुलप सुरति मति मंध अनेसी॥
कहा कहूं कछु कहत न आवै विण पहिचाणि भई है जैसी॥१॥
कमल नैन बिन नैननि पौरिष पलटि प्रकास प्रगटी निसि वैसी॥
भयो अंधार सकल बिन दिनकर समझि न परै सु कहूं कहि कैसी॥२॥
ब्रम्ह चरित करि प्रगट दुराणों अभै कहाइ करि विधि भैसी॥
गयो समेटि सकल पति परसा बाजीगर बाजी करि तैसी॥३॥७३॥

राग सारंग--

ऐसी कहत न आवै मोहि॥
यह आग्या ताकौं निज सेवक कहि कहत हौं तोहि॥टेक॥
जो निजरूप धर्‍यो देवै ग्रेह अंति भये प्रभु सोइ॥
तजि कुलरूप पर्म पुरि पहुंचै कृष्ण चतुरभुज होइ॥१॥
लै औतार निऊतर हूंए वै जगनाथ जु कोइ॥
लै जक जूथ भार भुव टारण दीनै सिंधु समोय॥२॥
दियो न अंत आपणो काहू को जाणै गति दोय॥
वै बड ब्रम्ह जोग माया करि मिलै न अंतर खोय॥३॥
प्रगट सनेह भयो सुपनो सो कहि क्यौं दरसन होय॥
परसा प्रेम कंवल तैं बिछुड़्यो मधुप चढ़्यो गिरि रोय॥४॥७४॥

राग सारंग--

जब तैं जनम जुगति सौं पायो॥
माला तिलक प्रतिष्ठा पाई जब गुर राम कहायो॥टेक॥
हरि की सरणि अरु साध की संगति जो जब तैं नर आयो॥

जीवन सोई सुक्यारथ गिणिये जब कह भगत बुलायो ।।१।।
पायो फल सेवा सुमिरन सुख मन हरि चरन कमल सों लायो ।।
अब ताहि न चिंत चाहि काहू की जिनि परसराम प्रभु गायो ।।२।।७५।।

राग सारंग--

जा जन कैं हिरदै हरि आवत ।।
ताकै पाप पुरातन पल मैं पावक नांव जरावत ।।टेक।।
निर्वैरी निर्दोष करत निर्भै हरि दोष न ताहिं सतावत ।।
विधन हरण हरि नांव सुमंगल सुमिरत सोई सुख पावत ।।१।।
निर्मल करत सकल मल धोवत करि निमकर्म दिखावत ।।
पारि करत भवतारि ताहि हरि अपणैं पुरि पहुचावंत ।।२।।
जनम मरण जम कागर गारत अपणै पटे लिखावत ।।
देत कृपा करि मन वांछित फल हरि जैसो जाकौ भावत ।।३।।
पावन नांव भजत सोइ पावन पावन सुणत सुनावत ।।
पावन सदा रहत सोई तन मन हरि जामाही समावत ।।४।।
हरि कौं भजत पतित पाप पसु अति पावन होइ आवत ।।
परसराम ऐसो प्रभु परहरि तोहि और भज्यो क्यौं भावत ।।५।।७६।।

राग सारंग--

सांचौ जन प्रहलाद कहायो ।।
बहु संकट बहु त्रास असुर की अति हठ सौ हरि गायो ।।टेक।।
अग्नि झाल जल बल बहु विधि करि गिर हूं तैं बांधि गिरायो ।।
तऊ विसर्‌यो राम रसन तैं तऊ काढ़ि खडग डर पायो ।।१।।
मारि असुर उर फारि हंसे हरि अपणौं निकट बुलायो ।।
भगति हेत नरसिंघ रूप धरि धरि ही दरस दिखायो ।।२।।
तिणि प्रहलाद पिता कौं अपणैं अंतैः गोविन्द नांव सुनायो ।।
परसराम प्रभु हेति भगत कैं असुर सरणि पहुंचायो ।।३।।७७।।

राग सारंग--

मिल्यो हरि नांव देव कौं ग्रह आय ।।
पूरण ब्रम्ह भगत हित कारी अवगति नाथ कहाय ।।टेक।।

पीयो दूध दास कै वसि होय मोहन प्रीति लगाइ॥
प्रगट प्रताप छाप नहीं छानि मृतक जिवाइ गाय॥१॥
छानि छवाइ प्रत्यंग्या पुरई दीनै चीर धुवाइ॥
देवल फेरि दास दिसि कीनों करुणा सिंधु सहाय॥२॥
स्वान रूप धरि भोजन लीनों प्रेम प्रीति हितलाइ॥
परसराम नामा हरि एकै जन जीवै जस गाय॥३॥७८॥

राग सारंग--

सैंन भक्त हरि कौं अति भावत॥
जाकैं हेति अपना नृप कौं हरि आरसी दिखावत॥टेक॥
लेत छिनाय सिला संपुट षटवर बाजौट जरावत॥
मर्दन करत बैठि ता ऊपर यौं संतनि बचावत॥१॥
तहां सालिगराम मुगत करिवे कौ नृप कौ भलो मनावत॥
यौं पर उपगार निमति आपण पौं सौंपि दिये सुख पावत॥२॥
परवसि पर्‍यो भजन तैं भूल्यो तब ताकौं दरसावत॥
भगवत हेतु जन कौ वपु धारै नृप कैं तेल लगावत॥३॥
वासि वराट दुष्ट जन दोही हरि ताकै दोष दुरावत॥
डरत न कछु पूस तैं पावक पल महिं जागि जरावत॥४॥
करुण सिंधु कर्म काटण गुण प्रगट भयो मन भावत॥
पतित उद्धरण पाप हरण हरि क्यौं हिरदै न समावत॥५॥
अति आतुर गज ग्राह मुगति ता प्रभु कौं जस जन गावत॥
पतित पावन परसा प्रभु कौ गाय गाय मन हरसावत॥६॥७६॥

राग सारंग--

रिझायो कृष्ण कवीरै गाय॥
भगत कथा भगवंत सिरोमनि श्रवनि सुनि चित लाय॥टेक॥
सब लोक बल बंध विसार्‍यो अंतरि भई समाधि॥
प्रगट प्रकास चहूं दिस देख्यो पूरण ब्रम्ह अगाधि॥१॥
सिवादि सुकादि ब्रम्हादि विमोहित सोई रस लीनो चाखि॥
त्रिपति न भई सुअमृत पिवत मन सों मिलि सति भाखि॥२॥

असुर अबुध दीयो गज आगै जब गंगा हूं मैं डारि।।
दीन दयाल जाणि अपणौं जन लीनूं सरणि उबारि।।३।।
जगत अचेत न जाणघैं या महिमा हरिजन कथा विचार।।
अविगति नाथ मिल्यो सोई सेवग दियो अभै पद पार।।४।।
हरि जनम सकल सति करि मानौं श्री मुख वचन सुवाच।।
परसराम कृष्ण कबीरा एकै सब सुनो कहत हूं साच।।५।।८०।।

राग सारंग--

हरि की जीवनि जन रैदास।।
जाकैं हिरदै प्रगट प्रकास्यो आपण लियो निवास।।टेक।।
विसर्‌यो सब माया मोह पसारो जग आसा घर वास।।
छुटि गयो कुल कुटुम्ब कुमारग कटे भर्म भव पास।।१।।
मिट्यो विघन छल काल विषै बल भयो अविद्या नास।।
पियो सरस सुअमृत सीतल जग तैं भयो उदास।।२।।
सुमिरन सार पि हरि सुख पायो गायो ब्रम्ह विलास।।
प्रेम प्रीति हरि निमस न विसर्‌यो भाव भगति वेसास।।३।।
निर्वैरी निर्दोष सुनिर्मल कंचन कंवल सुवास।।
परसा सो संसारि सु मन्दिर दीपक सकल उजास।।४।।८१।।

राग सारंग--

पिपो भयो भगति अंभमति धीर।।
अडिग न डिग्यो चरण तजि कबहू महा सुभट बडवीर।।टेक।।
उभै रूप बड भूप उजागर उदित उदधि की तीर।।
नाच निर्ति करत हरि द्वारै जरत बुझायो चीर।।१।।
देख्यो सुण्यो भज्यो जिन तिन की मिटि गइ मन तन की पीर।।
मन क्रम वचन सिरोमनि सेवग सागर सुख कौं नीर।।२।।
महा अंग निजसंग सनेही जो सु प्रेम सरस की सीर।।
परसराम प्रगट नहीं छानी पिपो हरि एक सरीर।।३।।८२।।

राग सारंग--

हम से जनम बिगारन आये।।

परम निवास नाम नाहीं जाण्यो माया हाथि बिकाये ।।टेक ।।
सर्‍यो न काज एक आसा तैं आदि अंति विष लाये ।।
अपणैं पटे लिखै जम कायथ लै जमि लोकि पठाये ।।१ ।।
हरि सुमिरन वेसास न उपज्यो अक्रम कर्म कमाये ।।
क्यौं तिरिये भवसिंधु महादुख परसराम न गाये ।।२ ।।८३ ।।

राग सारंग--

कबहूँ मैं हरि प्रीतम न सम्हार्‍यो ।।
स्वामी पणैं भरोसैं तेरैं जनम सुबाजी हार्‍यो ।।टेक ।।
हित करि करी पराई निंदा डिंभ कपट उर धार्‍यो ।।
भेष पहरि आसा वसि भर्म्यौं हरि वेसास विसार्‍यो ।।१ ।।
दक्ष्या दई लई नहिं कबहूं हठि दण्डोत करायो ।।
मुयो बूडि मान सलिता मैं माया संगि बहायो ।।२ ।।
जग आधीन बस्यो विषयन मैं विषै विकार चढ़ायो ।।
परसराम सतसंग सरण सुख नैंक न हिरदै आयो ।।३ ।।८४ ।।

राग सारंग--

ऐसे क्यौं हरि भगत कहाय ।।
काम क्रोध तृष्णा चित्त लालच माया ही कैं चाय ।।टेक ।।
जो कोई आवै दास दुवारे तौ पर घर देत बताय ।।
जो कोई देत तुलसी काहू तौ आपन लेत छिनाय ।।१ ।।
पर घर जाय फिरै तहां फूल्यौ और अंग न माइ ।।
ज्यौं तूल तिंण उडत वाय बिन चचल चपल सुभाय ।।२ ।।
नाचत डिंभ काछि नटकै ज्यौं नाना स्वांग बनाय ।।
अति कठोर अन्तरि अभिमानी गर्व गुमान न जाय ।।३ ।।
लेत देत नाहिं कछु ता बिन रोवत रैंन बिहाय ।।
परसराम स्वारथ मन बांध्यो भज्यो न जादूं राय ।।४ ।।८५ ।।

राग सारंग--

हरि जन बिन हरि भगति न काय ।।
माया मोह विषै रचि करि मूयें तृपति न पाय ।।टेक ।।

कहा सर्‌यो जो नाच्यो गायो देखि अधिक दिखाय॥
आसा पास परे जग जाच्यो तृष्णा तपति न जाय॥१॥
कहा कथा कही सुणि सुख पायो जो मनसा मनि न समाय॥
परवसि परे गये बहि भौ जलि करि कलपना सवाय॥२॥
स्वारथि स्वांग पहरि सुख पायो कीनि पेट भराय॥
भाव भगति वेसास न उपज्यो भ्रमि बड़ सौं जगवाय॥३॥
कहत सुणत सुमिरत जमि लूटे सुणुं कहत हूं ठाई॥
परसा स्वांग पहरि झक मार्‌यो जो दृढ भगति आई॥४॥८६॥

राग सारंग--

राम विमुख धृग धर्म विचारो॥
तन मन धन मनसा वसि किये जो न भज्यो हित सौं करि प्यारो॥टेक॥
धृग विद्या करणि कुल दीरघ अति अहंकार मिट्यो नहीं गारो॥
धृग सोई रूप अनूप भूप बल अमृत डारि पीवत जल खारो॥१॥
धृग तप ग्यान ध्यान व्रत संजम जु भगति हीन चाहत निस्तारो॥
जहां न प्रेम प्रतीति न परचौ भाव बिना निरधन निज न्यारो॥२॥
धृग कवि सूर परम गति परहरि सेवत जे रिधि सिद्धि कौ द्वारौ॥
धृग सोई मतौ सयान जान धृग जब लग पति सूझत न उधारौ॥३॥
धृग वपु धर्‌यो फिर्‌यो जो परवसि चिति नि कियो दुख मेटनहारों॥
विण वेसास निवास आस वसि थिर न अरु न पावक ज्यौं प्यारो॥४॥
जहां न प्रकट प्रकास न दीपक निसि मैं निति रहत अन्धारो॥
प्रलै समाय सकल मिलि तासौं तहां न सुभ सन्तोष उजारो॥५॥
धृग आरम्भ कर्म काची मति जा हित बांध लियो भ्रम भारौ॥
परसराम सत संग सरन बिन सुख न कहूं देख्यो फिरि सारौ॥६॥८७॥

राग सारंग--

मन तन धर्‌यो अकारथ थारौ॥
परहरि पार ब्रम्ह पति चित तैं तै जु कह्यो सब ही मैं म्हारो॥टेक॥
ज्यौं ग्रीष्म ऋतु मारुत संगि जुग जुग नीर बिनां पावक कौ चारौ॥
देखत गयो बिलाय वादहि जनम जनम भ्रम बूडन हारौ॥१॥

ज्यौं जल ओलौ जसि गिरयो गगन तैंमिलि गयो भोमि रह्यो नहिं सारौ॥
यौं उपज्यो खप्यो बिनां निज जीवनि पैंतन मन पलटि भयो नहिं थारौ॥२॥
मुवा व्यौहार विकार भार तजि भजियो न पर्म हितू हरि प्यारौ॥
भगति हीण जीवन जग झूंठो परसा या हि बड हाणि विचारौ॥३॥८८॥

राग सारंग--

कहत विषै सुख हरि सुख नांजी॥
तासौं कहा बसाय दास कौं आणि अगति मैं डारत भांजी॥टेक॥
मानत नहीं कह्यो संतनि कौ सत्य सत्य हरि कहत न हांजी॥
परहरि परम अमी रस रोगी पिवत मांगी प्रीति सौं कांजी॥१॥
सूझत नहीं निपटही कछू बेचार्‍यो जो आखि ना कदे आंजी॥
परसराम गुरु सरनि दीन होय भूलि न कदे ग्यान सौं मांजी॥२॥८९॥

राग सारंग--

गयो मन जित तित विषै विलाय॥टेक॥
जाणि धसि सुरसरी सिखर तैं सिंधु समानी जाय॥
स्वारथ स्वादि पर्‍यो पसु पासि परवसि मन उरझाय॥
बहु दुख सहत वादि वन चर ज्यौं घरि घरि द्वार बिकाय॥१॥
थिर रह्यो कबहू चित पति सौं पलभरि प्रीति लगाय॥
बिन वेसास निवास नांव तजि कीनैं बहुत उपाय॥२॥
कलपत मूवो कृपण भ्रमि भौजलि अक्रम कर्म कमाय॥
गयो असार विकार धार बहि बिनि रघुनाथ सहाय॥३॥
जमपुरि पंथ फिरत नित निसि मैं निर्फल फलहि गवाय॥
परसराम आधीन कर्म वसि मुगध परत कूप मैं धाय॥४॥९०॥

राग सारंग--

मन परवसि बंध्यो सु बिगोवत॥
हरि तजि भ्रमत निसार स्वान ज्यौं पायो जनम सु खोवत॥टेक॥
माया मोह विषै जोबन मद मगन भयो भरि सोवत॥
चेतत नहिं निरअंध निरंकुश अंकुस जागि न जोवत॥१॥
प्रेम भजन सुख सिंधु हृदै धरि कायर कर्म धोवत॥

और करत नित नेम गहै पैं मनसा मन न समोवत॥२॥
धृग जीवनि भगवंत भजन बिनि कबहू विरहनि रोवत॥
परसराम भरि भार भ्रम धार मैं नांव सबरणी डुबोवत॥३॥६१॥

राग सारंग--

जब लग तन मन मैं नहीं सोध्यो॥
तब लग विध्या वादि पढ़ी जो जात न प्राण संमोध्यो॥टेक॥
त्रिपति हीण सुख लहत न कबहुं फिरत सदा अति क्रोध्यो॥
तजत न कुवाणि काणि कलजुग की आतम राम विरोध्यो॥१॥
को मैं को तैं अरु को पति प्रेरग मिलि जु आपौ नहिं षोध्यो॥
कारज कछू न सर्‌यो जन परसा स्वारथि जगत प्रमोध्यो॥२॥६२॥

राग सारंग--

जग लग मनि निहचौ न धरै॥
तब लग हरिख सोक दुख गुख तैं कारिज कछु न सरैं॥टेक॥
मिटै न त्रिपति ताप तन मन तैं रू स्वारथि सदा जरैं॥
भावहीन हरि भगति विमुख नर भ्रमि भव पासि परै॥१॥
अति अग्यान आप वपु बेध्यो अंध न कह्यो करै॥
बिण बेसास भजन तन तासौं कौ बकवादि करै॥२॥
त्रिपति हीण जल थल कुल कलपत मरि जम दंड भरै॥
परसराम पतिव्रत प्रेम बिनि क्यौं करि प्राण कहां उबरै॥३॥६३॥

राग सारंग--

भर्म्यो रे मन राम विसार्‌यो॥ बिन बेसास महानिधि हार्‌यो॥टेक॥
विष स्वारथि वनिता सुख संगा॥ ज्यौं पावक जरि मरत पतंगा॥१॥
जिह्वा इन्द्री हाथि न आई॥ घर घर फिर्‌यो स्वान की नाईं॥२॥
जाच्यो जगत जगपति खोयो॥ परवसि परि निरधन ह्वै रोयो॥३॥
परसराम धृग धृग ऐसो जियो॥ सब परहरि जोइ नाव न लियो॥४॥६४॥

राग सारंग--

मन की समझि परै जो काहू॥
ताकी टेक मिटै नहीं कबहूं हरि सुमिरै निरबाहू॥टेक॥

बदै न लोक वेद की कछू वै हरि सुमरत मतै उधारै ॥
गरजत गगनि चढ़यो गुर सबदैं लगत न दिष्टि पसारै ॥१॥
चेतन सदा अचेतन न कबहूं मनसा मोह निवारै ॥
ज्यौं दरपन साग्दिष्टि सु उर मैं निज प्रतिबिंब निहारै ॥२॥
रहै सदा लीप लीण मगन भयो भ्रम अगनि तन जारै ॥
अचवै अजर अमी समी कर कै पलटि न पूठौ डारै ॥३॥
सोई महावीर अति सूर धरि ऋणि जु पायो डांव न हारै ॥
रहै सदा सुसौंज मरण कौं सोच न पोच विचारै ॥४॥
वरै सुवर संग्राम संजीवनि हरि हथियार संभारै ॥
पहिरै प्रेम सनाह सुदिढ होय सार अणि अरि मारै ॥५॥
जु रहै अजीति जीति सब दोषी कबहू दोष न अंतरि धारै ॥
सोई जन अमल अलैप जगत मैं जु परसा पति न विसारै ॥६॥६५॥

राग सारंग--

सुनि मनु तोहि करौं मनुहारि॥
इहै अचरज गोपाल भजन बिन पायो जनम न हारि॥टेक॥
पर्म पदारथ प्रान सनेही हरि उर तैं न विसारि॥
राम रसायन रसना रचि रचि बारौंबार सम्हारि॥१॥
भ्रमत भ्रमत अबकैं बनि आई बात न वादि बिगारि॥
नर औतार सिरोमनि सबतैं हरि भजि लेहु सुधारि॥२॥
बार बार पाये नहीं याहि औसर ऐसो समझि बिचारि॥
परसराम प्रभु सुमिर कृपानिधि श्री गुर कै उपगारि॥३॥६६॥

राग सारंग--

मन हूं तोहि समझावत हार्‌यो॥
मिटि न कठिन कुवाणि तुम्हारी अति अहंकार बिगार्‌यो॥टेक॥
जो दशरथ सुत रतन राम सुख सो कबहू न संभार्‌यो॥
पढ्यो अधिक जम रीति प्रीति करि करुणा सिंधु विसर्‌यो॥१॥
भज्यो न साच सुरस परमारथ मिलि स्वारथि सरिमार्‌यो॥
परसराम हरि भगति हीण गुन जान वादि वपु धार्‌यो॥२॥६७॥

राग सारंग--

मन पछिताहिगौ रे तू मनमोहन सौं ल्यौ लाय॥
सोच विचारि संभारि विषै तजि हरि भजि हरि भजि हरि विण और न कोई सहाय॥टेक॥
माया मोह करम कारण भ्रम धार कुभार भरे रे ऐसो जिनि ताहि जनम ठगाय॥
चेति मुगध मन बड सौंज सिरोमनि तोहि दई नरदेह भजै किन अंतरि ताहि॥१॥
यौं संसार विकार महादुख सुख नाहिंन बिन राम भजन सुनि वादि ही बहि जाहि॥
आरति आतुर चात्रग ज्यौं प्रेम सरस रसना हित सौं परसा प्रभु लेहू किन गाय॥२॥९८॥

राग सारंग--

मन हरि गाय लै हो हरि बिनि पायो जन मन हारि॥
कह्यो हमारो मानि समझि सिख तोहि कहूं अपनाइ सो हित सौं करि करि मनुहारि॥टेक॥
कित अंध भयो अभिमानी अभागे रतन जनम कौं पाय हरामि भ्रमि भव कूप न डारि॥
हरामी ऐसौ औसर पायसि नाहिं बहुर्यो नर औतार सिरोमनि तैं हरि भजि लेहु सुधारि॥१॥
सुमिरि सुमिरि अपणौं मन वसि करि हरि विसरै जनि कबहु बारौंबार संभारि॥
परसा भजि प्रेम नेम धरि बिरंब न करि आतुर सति करि हरि पतिव्रत धारि॥२॥९९॥

राग सारंग--

हरि न विसारिये हो अपणौं प्रीतम प्राण अधार॥
भजि मन भजि मन राम रमापति रघुपति राजीव लोचन सतिकरि हरि सुख मंगल चारि॥टेक॥
सुमरि सुमरि सुख मूल कलपतरु कृष्ण कमल दल लोचन सब करहि लीला नित बिहार॥
नाहिंन कहा समझ जल थल नभ कुल भेष अनेक धरै धीरज फल हरि अगिणत औतार॥१॥
लख चौरासी प्रतिपालन करन परि सकल भरण पोषण कारन हरि दाता परम उदार॥
धरणि वियोम जलधि सुमिल सुखरासी भेद रहत भवभूत निवासी व्यापक ब्रम्ह अपार॥२॥
जनंम रहित अजपाजप आलंब आनंद पद गुन नांव निरालंब रहत सदा निरभार॥
परसराम प्रभू निर्मल निजवर अवगति अकल अनंत अभै कर हरि हरण विकार॥३॥१००॥

राग सारंग--

चरण कंवल सो जो मन लागैं॥
जीवन जनम सुफल सुख सोई प्रेम भजन भजिये अनुरागैं॥टेक॥
धनि सोई मतौं महातम महिमा हरि सुमरण संगति मति जागैं॥
धनि सोई समझि सुरति संसौ हति सेवत अभै सरनि बड भागैं॥१॥

पावन नांव पतित कौ तारण मन क्रम वचन सुनत भ्रम भागै ॥
सोई पति सति जाणि सो सुमिरै तन धरि मरि नाहिं न दुख झागै ॥२॥
निस दिन राम रतन जो रटिये प्रीति पोय रसनां के तागैं ॥
परसराम जन प्रगट पर्म गति होय यही कौ जाणैं आगैं ॥३॥१०१॥

राग सारंग--

रहिये मन हरि की सरणाई ॥ हरि सुख तरु सबकौ सुखदाई ॥टेक॥
आनन्द मूल निगम निति गाया ॥ प्रेम अमी फल सीतल छाया ॥१॥
हरि अंतरगति की सब सिधि जानैं ॥ ता हरि तैं कछु दुरै न छानैं ॥२॥
परसा श्री गुरु यहै बताया ॥ निज विश्राम अखिल कौ राया ॥३॥१०२॥

राग सारंग--

सुजस मन काहै न गावै ॥
असरण सरण अनाथ जाणि कै कृपा हेति सदगति पहुंचावै ॥टेक॥
जो गति दई भभीषण रावण सोई गति वकी जसोदा पावै ॥
हिरणाकुस प्रहलाद येक गति देत निसक न पल पछतावै ॥१॥
दुरजोधन सिसुपाल कस थिर जरासंध फिर गर्भि न आवै ॥
जेई जेई असुर हतै कर अपणैं ताहि कौ निज ठौर बतावै ॥२॥
जाकौं नांव प्रहार पाप पतित को सहाय न विडद लजावै ॥
गनिका वकी व्याध बधिकन कौ तारक नांव भजिये किन भावै ॥३॥
तजि भामा वैकुंठ सुख गजपति मन पहली मोहन उठि धावै ॥
देखि दुखित गज ग्राह महापति दोऊ एक संगि सुगति पठावै ॥४॥
जाणि अजाणि हरि भजै जो कोई ताहि कूं हरि सरणि बुलावै ॥
परसराम या साखि जाणि जिय हरि भजै सो भगत कहावै ॥५॥१०३॥

राग सारंग--

भजि मन राम विसंभर राया ॥
मैं मेरि कैं फंद पर्‌यो पसु मूरखि मरम न पाया ॥
पति जियत विवचार करत कित करता आप कहाया ॥१॥
कनक भुवन सुंदरी सुत बंधव यह परपंच पराया ॥
ताकौं देखि फिरत कित फूल्यो अति गारै गरवाया ॥२॥

मेरी तेरी तेरी मेरी कहि कहि जनम गंवाया॥
यह जाकी है ताही पैं जैहैं तू को देखि भुलाया॥३॥
खेति मुगध हरि भजि मन मूरखि को करता काकी या माया॥
परसराम भगवंत भजन बिन कह कौंणौं सचु पाया॥४॥१०४॥

राग सारंग--

राम न विसारौं मैं धन पायो॥
जाकी साखि प्रगट धू दीसै वेद विदित गुर सांच बतायो॥टेक॥
जन प्रहलाद अक्रूर अरु ऊधौ सुक मुनि जन नारद जस गायो॥
सिव विरंचि सुर नर सब सेवग सेस महेस सुमिरत न अघायो॥१॥
नाऊ जाट चमार जुलाहो छींपै हू निज नीसांण बजायो॥
परसराम प्रभु साखि तुम्हारी सुणत मुदित मेरो प्राण पत्यायो॥२॥१०५॥

राग सारंग--

राम रमत कित करिये लाज॥
जिनि सब सौंज दई मनवंछित नखसिख मुख सुंदर सिरताज॥टेक॥
अति बल काल फिरत तर दीयैं ज्यौं व जिनावर ऊपर बाज॥
लैहैं उझकि नरक मैं दैहैं घात बर्षा न मिटै जमराज॥१॥
छाड़ि बिकार भर्म जिनि भूलै जैहैं मूल बिसाहत ब्याज॥
परसराम प्रभुराम महानिधि ताकौं सुमरि सरैं सब काज॥२॥१०६॥

राग सारंग--

जाकै तन मन जीवनि राम॥
सोई सेवग संसार सिरोमनि निरवैरी निहकाम॥टेक॥
त्रिपति भई सब ही बिनि सार्यो सुमरि सुकाम॥१॥
सो न गहै दूजी दिस हरि बिन आसा पास हराम॥
परसराम बेसास परम पद पायो बड़ विश्राम॥२॥१०७॥

राग सारंग--

राम अगम गम आवत नाहीं॥
निगम रटत नित नेत नेत कहि महासिंधु भजि सेस भुलाहीं॥टेक॥
वरुण कुबेर इंद्र अवतारी देव असुर सुर केलि कराहीं॥

सप्त दीप नव खंड मंड सुरचि चवदह लोक पलक की छांही।।१।।
संकर ध्यान धरै जाहि खोजत मन मनसा होऊ औगाहीं।।
आदि अन्त अनंत नाथ गति मुरझो सिंभु विचारत माहीं।।२।।
ब्रम्हाहू ब्रम्ह सम्हारत भूले हम आये कहां तै कवण दिस जाहीं।।
कंवल कली खोजत कल बीते यह अचिरज देख्यौ न कहांहीं।।३।।
वो अंकार सबद सुणि सकुचे सोचत सुनत अहं तजि काहीं।।
परसराम ता प्रभु की ताकौं समझि न परी सु अजहू पछिताहीं।।४।।१०८।।

राग सारंग--

श्री गोपाल तिलक त्रिभुवन तन धरि हित करि जो गावै।।
भगति राज पद प्रेम भजन सुख मन वंछित फल पावै।।टेक।।
धर्म काम अरथ मुकति पदारथ जैसों जाकौं भावै।।
सोई सोई देत कृपाल कृपा करि जो सनमुखि सिर नावै।।१।।
धनि सोई जनम पर्म बडभागी नरहरि भक्त कहावै।।
ताकी सम कोई सूर न त्यागी पंडित गुणी न आवै।।२।।
सोही उत्तम औतार सिरोमनि चरण कमल चित लावै।।
हरि कलपवृछ सेवत जन परसा सो न बहुरि पछितावै।।३।।१०९।।

राग सारंग--

जो कोई गोपालहिं गावै।।
सोई सूर पंडित मुनि त्यागी नर उतिम औतार कहावै।।टेक।।
सोई कवि गुनी जान सुचि सबतैं भयो पवित्र न पतित कहावै।।
सदगति सदा रहे सतसंगति पीवै प्रेम परम गति पावै।।१।।
परम पुनीत नाव सुमिरण मुखि आप सुमरि औरनि सुमरावै।।
परसराम ता जनकी महिमा सेस कहै तऊ कहत न आवै।।२।।११०।।

राग सारंग--

भावै मोहि नांव गोपाल लाल जीको।।
जदपि कछु कहौ कोई क्यौंही सोई मोहि अति लागत है फीको।।टेक।।
हरि सुन्दर सुख रूप सुमंगल पद गावत सुमिरत अति नीकौ।।
जै दरसत परसत पति ऐसो भूरि भाग कहियत तिनहीं कौ।।१।।

पीवत प्रेम नेम धरि सेवत संत सदा हरि सिन्धु अमी कौ।।
निर्मल अकल सकल निसतारण साखी सब कोई ताही को।।२।।
औरन कछु सुहाई सुरस तजि ग्यान विचार न लगत सही को।।
परसराम प्रभु परम सनेही हरि प्रीतम सबही को टीकौ।।३।।१११।।

राग सारंग--

करियै मन गोपाल सनेही।।
सरनाई सम्रथ सुख दाता निगम साखि सबकौ फल येही।।टेक।।
कह्यो मानि कछु समझि सुरत करि करुणा सिन्धु सुमरि किन लेही।।
असरन सरन अनाथ बन्धु बिन सर्वस जिन खौवे करि खेही।।१।।
जाकै प्राण नाथसौं प्रीतम ताहि विपति व्यापत धौं केही।।
जाऩत सकल सूल अंतर की दुख सुख सोच पोच मन रेही।।२।।
दीन दयाल भगत वछल भजि पुनरपि जनम धरिये देही।।
परसराम प्रभु अंतर जामी जैसे कही इत हरि हैं तैसे ही।।३।।१२०।।

राग सारंग--

गोपाल भजन किन करिये हो।।
करूणा सिंधु सहाई सकल पति तजि भ्रमि कूप न परिये हो।।टेक।।
गर्भ वास में वास सदा फिरि फिरि जमदण्ड न भरिये हो।।
बिनि भगवंत भजन भै जुगि जुगि जनमि बह मरिये हो।।१।।
परहरि और उपाय सकल सुख हरि मारगि अनुसरिये हो।।
जन जीवनि दुख हरण कृपा निधि निज नायक वर वरिये हो।।२।।
निर्भै पद निर्वान महाबल प्रकट सुजस उर धरिये हो।।
परसा प्रेम सरस रसनां अचवत तृपति न करियै हो।।३।।११३।।

राग सारंग--

हूं गोपाल भजन कौं पाऊं।।
त्रिपति न करौं पर्मरस अचवत या रसनां रचि कैं जसु गाऊं।।टेक।।
तिरि भव सिंधु सरणि सतन की निर्भै निज नीसांण बजाऊं।।
छांडि सबै तन मन मेरे की सनमुख होय चरननि कौं धाऊं।।१।।
यौं संसार कठिन करूणा मैं ता दुख मैं फिरि काहै कौ आऊं।।

परसराम जल बून्द होय कैं प्रभु हरि दरिया मद्धि समाऊं ।।२।।११४।।

राग सारंग--

कृष्ण कृपाल कंवलदल लोचन सब कारन करन येही।।
कृपासिंधु कल्याण करन पदसेय सुमरि किन लेही।।टेक।।
कृपानाथ कलि मूल कलपतर कलीकाल सरनाई।।
कीरति रूप करण किरतारथ कलिमल हरण बडाई।।१।।
कुसमनाभ कवलापति केवल कंवलाकंत कन्हाई।।
कामरूप कामेस कामकुल कामहरण हरिराई।।२।।
कैसीदवण कालछल कैसोकाल राजगति साई।।
महाकाल कालेसुर करता कायाकाल न खाई।।३।।
कृपन पार कर पार कमठवर करूणा मैं सुख दाई।।
करूणासिन्धु परम मंगल भजि परसा अनत न जाई।।४।।११५।।

राग सारंग--

भावत है मन मोहन गायो।।
जनमि जनमि जो प्राणसनेही सोई प्रीतम क्यों विसरत बिसरायो।।टेक।।
भगत बछल भैहरण कृपानिधि करूणासिंधु संगि मैं पायो।।
अब न तजूं तन मन दे भजिहूं मन क्रम बचन सत्य उरि आयो।।१।।
उदित भयो निज भान सुमंगल मिटि गई निसि निज वर दरसायो।।
प्रेम सिन्धु सुखरूप सुमंगल आपण अजै जगत जिन जायो।।२।।
जिनि जिनि भज्यो प्रगट तिन तिन कौं सकल विस्व मुख मद्धि दिखायो।।
परसराम प्रतिपाल करण प्रभु ब्रम्ह जीव संगि रहत समायो।।३।।११६।।

राग सारंग--

भजिवे कौं तरसत जिय मेरी।। अंतरि ध्यान रहौ हरि तेरौ।।टेक।।
अंतरि बसौ ब्रम्ह बनवारी।। राखौ सरणि करो रखवारी।।१।।
तुम गोपाल अधिक मोहि प्यारे।। नैननितैं जिनि होउ नियारे।।२।।
यो रस रसिक मनोहर पाऊं।। परसा प्रेम सरस जस गाऊं।।३।।११७।।

राग सारंग--

तरसत मन मोहन कै ताईं।। देखि सघण चात्रिग की नाईं।।टेक।।

विरह अगनि तन मनहि जरावै ।। सहिन सकौं दुख कोई न बुझावै ।।१ ।।
नैन सुरति पतिपल न बिसारूं ।। हरि मारग चितवत तन हारूं ।।२ ।।
अति आतुर पल रह्यो न जाई ।। हरि बिन विरह भुवंगम खाई ।।३ ।।
कब देखौं जीवनधन प्यारो ।। परसा जावसि प्राण हमारो ।।४ ।।११८ ।।

राग सारंग--

हरिजन हिति निज निर्वाण कढ्यो ।।
अभै अगाहि सुन्यौं श्रीमुख तैं विधि निधि जानि गढ्यौ ।।टेक ।।
मन मैं कसि मनसा मन वसि करि रचि रचि प्रेम मढ्यो ।।
बड नीसांन उजागर सुनियत गरजत गगनि चढ्यो ।।१ ।।
नारद व्यास निगम रस विलसत रसुनां सब निरढ्यो ।।
गावत सेस सिंभु सनकादिक पद सुख सिंधु बढ्यो ।।२ ।।
श्री गुरु समझि सुअखिर बांच्यो हित सुक सुभटि पढ्यो ।।
निर्मल नांव प्रगटि उरि राख्यो भै भ्रम सूंड सढ्यो ।।३ ।।
बांध्यो गांठि खरौ निर्मोलिक तन मन प्राण चिढ्यो ।।
हरि जीवनि हरि व्यास कृपा तैं परसा हृदै दिढ्यो ।।४ ।।११९ ।।

राग सारंग--

भगत सुपति मेरी निज आस ।।
यह सुमरन नित नेम हमारै अविनासी बल और विनास ।।टेक ।।
हरि मंदिर हरि दास हमारै तामैं बसूं कियै रिधि वास ।।
जद्यपि रहूं सकल मैं व्यापक जन मैं मेरौ पर्म निवास ।।१ ।।
भगत मूल साखा भई वांणी फल मैं अजरसु अकल उदास ।।
धनिवै जन मन सौं मिलि विलसत सोई फल अंतरि धरि वेसास ।।२ ।।
भाव भगति परतीति पर्म गति गावत सुमिरत सरस विलास ।।
वै जाणत मेरी गति सति करि प्रेम भजत तजि आसा पास ।।३ ।।
भगत विडद विसरू नहीं कबहूं सुमरन करूं धरैं मनि प्यास ।।
परम पुनित अधिक हितकारी भगत कर्म काटण भौ पास ।।४ ।।
तप तीरथ व्रत सब सुख सेवग दरसनि परसि मिटै सब त्रास ।।
भुगति मुकति वैकुंठ आदि दै टीकै भगत दुती कौ नास ।।५ ।।

मैं जगतपिता जगदीश जगतगुर भगत सुगुर मेरे मैं दास॥
परसराम प्रभु आप कहत यौं साखि सुनन नारद मुनि व्यास॥६॥१२०॥

राग सारंग--

प्रभु जीसो प्रभुही सुखदायौ॥
याहि औसरि यह विपति हमारी और हरन हरि कौन कहायौ॥टेक॥
निबही आदि अंति आतुरता प्रथम साखि त्यौं गज मुकतायौ॥
अति श्रमवंत दूर पंथी ज्यौं वदन देखियत रज लपटायौ॥१॥
सुरति सुवसि सायक सारंग ज्यौं हुतौ निकट पैं दूरि बतायौ॥
नाच्यौ हूं वसि पर्‍यो तुम्हारे ज्यौं जाण्यौं त्यौं तुम ही नचायो॥२॥
राजा कह्यो सुण्यों मैं सोई गयो तहीं चलि जहां पठायौ॥
तैं द्रोपती बहुरि हूं सुमर्‍यो उलटि वहां तैंईहां बुलायौ॥३॥
भगत हेति आधीन धेन ज्यौं बंध्यो प्रेम जन हाथि बिकायौ॥
सहि न सकी सोई बिरंब सुनत ही भति आतुर तातैं हूं आयौ॥४॥
पूंछति रजपट सौं पाय लागति भयो हमारे मन कौ भायौ॥
बड बाहरू प्रगट भयो परसा दरसि परसि दुख दूरि गवांयौ॥५॥१२१॥

राग सारंग--

हरि हति करि जाकै वसि आयो॥
ताकौ कारिज सुफल सत्य करि हरि कियो काहूं पैं न करायो॥टेक॥
अवगति अविनासी अजनमा फल सोई वसुदेव देवकी पायो॥
चिंता हर बालक वपु धरि हरि भुज भीतरि उरसौं लपटायौ॥१॥
त्रिभुवन वर व्यापक सचराचर माखण साटै महरि नचायो॥
नाच्यो घर बाहरि ब्रजवन मैं गोद लीये नर नंद खिलायो॥२॥
ज्यौं काम दुग्धा लघुबछ वाणि जितही तित चलि दुख दोष दुरायो॥
गोपी गाय ग्वाल लीलासुख विलस्यो मिलिहरि कौं अति भायौं॥३॥
ज्यौं बालक वसि मातपिता सबसूंपि दियो कछु बैन दुरायो॥
यौं अपणैं जनकौं आपणपौं परसा प्रभु दे भलौ मनायो॥४॥१२२।

राग सारंग--

जो वृत धरि हरि हाथ बिकायो॥

ताही कै वसि भगत बछल भयौ सुमर्‍यौ जहीं तहीं आयो ।।टेक ।।
प्रथम साखी प्रहलाद प्रगटही जाकौं हरि जहां तहां दरसायो ।।
जलथल गिरज्वाला खड़ग खंभ मैं बोलि उठ्‌यो जन जहीं बुलायो ।।१ ।।
श्री नरसिंघ देव सोवसि करि असुर भुवन भीतरि पधरायो ।।
जन लीयो उछंगि तात माता ज्यौं चाटत हरि चूंबत उरि लायो ।।२ ।।
सज्यासन वैकुठ श्रिया सुख गरूडासन आवत छिटकायो ।।
अति आतुर करि धरै सुदरसन ग्राह ग्रह्या तैं गज मुकतायो ।।३ ।।
राखि लियो पडव कुल कलतैं लाखाग्रह जरतैं न जरायो ।।
सोई प्रगट्यो पूरन द्रोपती कौ चीर चिंता तैं राट उठायो ।।४ ।।
गर्भ कष्ट भैभीत परीछत ब्रम्हशस्त्र तैं जरत बचायो ।।
सोई पति प्रगट महाभारत मैं चक्र लिये भीषम दिसि धायो ।।५ ।।
तरू तारण कारण करुणा मैं आप अलूखल बैठि बंधायो ।।
परसराम प्रभु सौ प्रभु कोई जन कौ जन हरि सौ न कहायो ।।६ ।।१२३ ।।

राग सारंग--

जिन हित करि कौ जस गायौ ।।
ताहीं कौ सर्वस हित करिकैं हरि दीयो कछु वैन दुरायो ।।टेक ।।
पायो सुख संतोष त्रिपति घर हरि जल सौं उर जरत बुझायो ।।
सोई सोई परम पवित्र भयो जन ग्रभ संकट फिरि बहुरि न आयो ।।१ ।।
जाकौ प्रेम नेम लै निबह्यो हरि पतिव्रत उर तैं न डिगायो ।।
ताकी समतिहूं लोक उजागर सुन्यो न कोई काहू न बतायो ।।२ ।।
जिनि जिनि हरि अमृत रस पीयो तिन तिनकौं रस और न भायौ ।।
परसराम हरि सुख सु मिलत जो ताही अबर सुख लगत अभायो ।।३ ।।१२४ ।।

राग सारंग--

भगतबछल मोहि गायो ही भावे ।।
मन क्रम वचन सत्य सुमिरन कौं हरि बिन ह्रदै और नहीं आवै ।।टेक ।।
हरि उग्रसेन कौं छत्र सिंघासन दे आपण आगै सिरनावै ।।
व्है सेवग सुकुंवार सकल पति चरण जुगल करसौं सहिरावै ।।१ ।।
करि सेवा सब टहल जिग्य की चरन धोय नृप बोली जिमावै ।।

दीन दयाल भगत हितकारी पार ब्रम्ह कर झूंठि उठावै ।।२।।
जग्य पुरुष पाछै चिति आयौ सुधिन भई ऋतु लागि बधावै ।।
कीट पतंग सकल विस्वपूरण मांगि प्रसाद दास पैं पावै ।।३।।
जिन लिनों चक्र महाभारत मैं देखत सुभट प्रगट जो धावै ।।
राखत पैज भगत भीषम की अपनी निज परतीति दुरावै ।।४।।
सुरग सधीर कूप की सेवा गज चींटी कै नेत्र समावै ।।
परसराम भगवंत भगत वसि महासिंधु कौ बूंद न चावै ।।५।।१२५।।

राग सारंग--

सोई भगवंत भज्यौ मोहि भावै ।।
जाको नांव अगम अपजारण सुगावत सुनत परम सुख आवै ।।टेक।।
ज्यौं अंध भुवन दीप प्रकासे तब सब सूझे भ्रम तिमिर बिलावै ।।
सूका तिन तूल अनेक मेरे सम छिन यक पावक प्रगटि जरावै ।।१।।
ज्यौं दिनकर उदै मिटै निसि देखत सुधिन परै कहूं जाहि समावै ।।
ऐसो अकल सकल दुख टारन जो सुमरै सोई सुख पावै ।।२।।
सिव विरंचि सनकादि सेस सुक नारद व्यास निगम निति गावै ।।
परसा तारण राम प्रगट जस पतित पतित सब सरनि बुलावै ।।३।।१२६।।

राग सारंग--

भजिवै कौ हरिसम कोई नाहीं ।।
महाकलपतरू प्रेम सरस फल पर्मनाम निर्मल थिर छांही ।।टेक।।
ओतिरै भव सिंधु नांव बलि निकसि निसंक परमपुर जाहीं ।।
महा पतित लै संगि सत्य करि निर्वाहै आपण दै बाहीं ।।१।।
भाव भगति बेसास भज्यो जिन वैन कदे जन फिरि पछिताहीं ।।
हरि सुमिरत तन ताप न व्यापै अभै सरणी छली काल न खाहीं ।।२।।
परम रूप मिलि रूप न धरि है नानां रूति अवतार बिलाहीं ।।
परसा पूरन ब्रम्ह प्रगट योही घट धरि अघट बिराजत माहीं ।।३।।१२७।।

राग सारंग--

हरि बिन और कहूं सुख नाहीं ।।
मैं देखी सब ठौर अबर फिरि जनम करम भम्र्यौं परि माहीं ।।टेक।।

सुर्ग मिर्ति पाताल आदि जौंनि अनेक सुगिणी नहि जाहीं।।
लघु दीरघ जलथल कुलकाया हूं कितीयेक कछूं जुअगिण औगाहीं।।१।।
आवत जात खिर्‌यो बहु वरीयां मन मनसा सुन पल पछिताहीं।।
महा मोह अग्यान अंधमति उरझि पुरझि वझीविषै समाहीं।।२।।
अहंकार की झाल जलत जग सुधि न संभाल सुवादि विलाहीं।।
ता महा प्रलै बूडत जिनि राख्यो परसा वे पति अब न भुलाहीं।।३।।१२८।।

राग सारंग--

सब सुख तजि भगवंतहि भजिये।।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि आदि दै इन्द्रविभौ वदिये बेकजिये।।टेक।।
भोग विलास स्वारथ मिलि धन जोबन अपनाय न सजिये।।
सब बैकाम राम सुमिरन बिन अमृत डारि अखाज न खजिये।।१।।
सुक चींटी माखी कनि कैं ज्यौं परवसि तन मन बेचि न वाझीये।।
महा मोह भव सिंधु जगतपुर प्रगट अग्नि परिमांहि न दाझीये।।२।।
धृग जीवनि अपणों पति परहरि देखि अनूप आन मन रजीये।।
सोई विवचार कीयां फल ऐसो परसराम सति करि पति लजीये।।३।।१२९।।

राग सारंग--

करिये हरि सुमिरण सौं पिछाणी।।
पायी भेद भर्म कित बहीये पकरि जीवकी वांणी।।टेक।।
आन धर्म अपमारग परहरि निर्भै निज उर आणि।।
अन्तरजामी अकल सकल पति भजिये सारंगपाणि।।१।।
प्रेम सरस रसनां रटिये मेटि कर्म की कांणि।।
दिढ वेसास परम पद परसा पर्म सनेही जाणी।।२।।१३०।।

राग सारंग--

हरि भजि तजिये भ्रम आसा पास।।
मन क्रम वचन सत्य करि करिये अबर सकल कौ नास।।टेक।।
जब लगि मन विश्राम न पावै तब लग बहुत विनास।।
त्रिपति हीन कलपत कलिजुग मिलि पडत काल की पास।।१।।
महा मोह भव सिंधु सु पावक विष भोजन घर वास।।

संसौ सदा रहै सुख नाहीं तौका सेयैं वनवास ॥२॥
कहि सुणि करि जो रहै निऊतर पसु होय चरै न घास॥
तौ घर मैं वसि भावै वसि वन मैं जो उपजै वेसास॥३॥
प्रेम भगति सदगति रस बिलसै हरि सुख सिंधु निवास॥
परसराम तन धर्‌यो सुफल सोई सकल अरत निजदास॥४॥१३१॥

राग सारंग--

भौ तारण हरि नांव प्रगट जस जाकाहूं कौं भावै॥
सोई कविसूर पर्म तत्वेता पंडित गुणी कहावै॥टेक॥
वईसी सूद्र खत्री द्विज अंतिज जो हरि कों सिरनावै॥
सोई सोई पर्म पवित्र पर्म गति हरिपुर मैं घर छावै॥१॥
सकल धर्म व्रत जग्य जोग तप तीरथ जो मन न्हावै॥
तऊ हरि सुमिरण बिन सुद्ध न होई गर्भवासि फिरि आवै॥२॥
अति अम्रत निधि प्रेम परम रस पीवै सोई सुख पावै॥
तन मन पलटि कीट भृंगी ज्यौं जीव ब्रम्ह होई जावै॥३॥
सिल सिलतर गनिका गज बनचर ब्याध वकी द्विज गावै॥
परसराम साखि पतित पावन की श्री गुरू संत बतावै॥४॥१३२॥

राग सारंग--

जापर कृपा कृपाल करै।
ताकौं श्रीपति सकल संपदा दै दुख दोष हरै॥टेक॥
महा इन्द्र प्रहलाद थप्यो थिर धूपुर पुरनि परै॥
वभीषण लंकेसराम बलि काहूं तैं न डरै॥१॥
सिंघासन बैठाय तिलक दै आपण पाय परै॥
भगत राज पदई कौ अपणैं जन सिरि छत्र धरै॥२॥
करुणासिंधु सकल सुखदायक दीन सुभाव वरै॥
निति नेम गहै नृप हेति सुमंगल पंडू सग विहरै॥३॥
जग तारण द्रोवै पटपूरण वाचा तैं न टरै॥
भगत बछल भीषम पति राखण भारथ जाय लरै॥४॥
हरि पर्म जिहाज सुजस पावै सोई भव तिरि पार परै॥

रहै अमिल जन प्रभु मिलि परसा जनमैं सो न मरै ॥५॥१३३॥

राग सारंग--

तुम हरि असरण सरण सबैं औ गाहैं॥ हम असरण सरनाई चाहैं ॥टेक॥
तुम दीनबन्धु हरि दीनदयाला॥ हम हैं दीन आधीन दुखाला॥१॥
तुम अनाथ के नाथ कहावत॥ हम अनाथ क्यों तुमहिं न भावत॥२॥
तुम क्रपन पाल कृपासिंधु कहावो॥ हम हैं क्रपन तुम कृपा न दुरावो॥३॥
पतित पवित्र करन तुम कहिये॥ मोसौं पतित अबर कोई लहिये॥४॥
तुम दया सिंधु दातार गुसांई॥ हम तुम बिन निजल मीन की नाई॥५॥
सुणि सुणि साखी सरन हूं आयो॥ सरणि गयो सु न कोई पछितायो॥६॥
परसा जीव सरणि कहा आवै॥ सकति सरणि तेरो विरद बुलावै॥७॥१३४॥

राग सारंग--

वरत उधारण कौ हरि साह्यो॥ सरणी गयो सोई निर वाह्यो॥टेक॥
भव बूडत गज पारि पठायो॥ गज सगति हरि ग्राह बुलायो॥१॥
गनिका हरि पुर मैं घर छायो॥ विप्रन फिरि ग्रभ संकटि आयो॥२॥
गीध समाहि न भौ भरमामो॥ व्याधि न खिजिजम लोकि वसायो॥३॥
वकी जसोदा कौ फल पायो॥ कर सौं गहि उरसौं हरि लायो॥४॥
सोई हरि अंतरि रहत समायो॥ परसा मन दै जात न गायो॥५॥१३५॥

राग सारंग--

हरि कौ महा प्रसाद जो पावै॥
तन मन सुद्ध होय ताही को सोई फिरि कैं ग्रभवासि न आवै॥टेक॥
हरि नई वेद प्रेम नेम सौं मनसा वाचा करि जाहि भावै॥
जानत सकल संतत सुख की महिमां बहू ब्रम्हा मुखि गावै॥१॥
वर्त जग्य सदगति सब कोई हरि भुगता तहां सब त्रिपति ता पावै॥
साखा पत्र पहुप फल पोषे जु मूल समझि जड मैं जल नावै॥२॥
मानै कोई साधु असाधु न मानैं निगम सदा कहि कहि समझावै॥
एक सीत हरि की जूठनिं कौ सकल विस्व बैकुंठ पठावै॥३॥
सैवे सदा सुब्रत धरि हरि कौं तन तन सौंपि सुभोग लगावै॥
परसराम निर्मल जन पदई तामैं और न कछु समावै॥४॥१३६॥

राग सारंग--

जिनि हरि सुमिरन व्रत धर्‌यो॥
आवागवण विसुद्ध नांव रतनन धरि सो न मर्‌यो॥टेक॥
लोक वेद भ्रम आसपास दिस और सबै विसर्‌यो॥
प्रीतम प्राणनाथ अधमोचन सोई वर जाणि वर्‌यो॥१॥
सोई पडित रिणि सूर महामुनी हित सौं हरि सुमर्‌यो॥
नरक खरक दुख सुख तैं न्यारो दहूं तैं दुरि टर्‌यो॥२॥
कहा भयो जो राम रूप धरि आपण दिष्टि पर्‌यो॥
सो न धरै परतीति कर्म की जिनि निहक्रम अजर जर्‌यो॥
नाहीं कछू दास कै भावैं जुहरि भजि प्रेम भर्‌यो॥३॥
और उपाय न ठौर सु निर्मल देख्यो सुण्यो कर्‌यो॥
परसराम प्रभु नांव महानिधि हरि भजि सबै सर्‌यो॥४॥१३७॥

राग सारंग--

हरि सुमरै सोई सति विचारो॥
और जनम बेकाम राम बिन कोटि कलप जीवनि सोई डारो॥टेक॥
ज्यौं वरषा रूति बूंद सिन्धु मैं आय मिलै सोई जल खारौ॥
ता सायर संगि सीप स्वाति रत तासुत निपजि नीरहूं तैं न्यारो॥१॥
ज्यों श्रिक चन्दन संगति अहि सीतल सरस सुगन्ध देव गति प्यारो॥
और सकल पावक कै कारणि अगिणत काष्ठ अठारह भारो॥२॥
ज्यों मधुरपि मधुकरत एक तरत व देखै सब प्रगट उधारौ॥
नर वनचर पंखी पसु काहू यह न समझी खोजौ खल सारौ॥३॥
बहु खग बैखग सूर सुरग समि नहीं गमि नीर खीर निरवारौ॥
हंसै यहै सुभाव सहज ही सुखिम समझी सुरती व्यौहारौ॥४॥
ना कछु मेर सुमेर महागिर अतिर अभखि अरू बूडन हारो॥
ताकी गति प्रापति काकी मति जु पारस परसि मिटै कुल कारौ॥५॥
मन क्रम वचन अवीसर पति कौं हेति भजै तजि आस पसारौ॥
परसराम तामस कोई नाहीं ताकै निस दिन अगम उजारो॥६॥१३८॥

राग सारंग--

प्रभुजी सौं प्रीति परम सुख सोई।। प्रीति कीयां प्रीतम वसि होई।।टेक।।
तन मन धन हरि कै वसि कीजै।। ताहि हरि कौ नाम नेम धरि लीजै।।१।।
हरि सेवत सुमिरत मन धीजै।। सोई हरि रूप नैंन भरि पीजै।।२।।
जीवन जनम सुफल फल येही।। जो हरि सौ करियै परम सनेही।।३।।
भाव भगति हित कीयो जानैं।। सर्वस ताहि देत न मानैं।।४।।
परसराम जन विरंब न कीजै।। हरि प्रीतम प्रान नाथ करि लीजै।।५।।१३६।।

राग सारंग--

याही कृपा दीन परि कीजै।।
मन क्रम बचन तुम्हारो सुमिरन सेवा मोकौं दीजै।।टेक।।
दिढ वेसास उपासन हरि हरि उपजै प्रेम भगति मन धीजै।।
पर्म रसाल रसायण रसुनां गाइ गाइ श्रवननि सुणि लीजै।।१।।
अभै करण निज रूप तुम्हारों प्रगट देखि मेरो प्राण पतीजै।।
सीस नाय कर जोरि सुमन दै जनम सुफल अपणौं करि लीजै।।२।।
परम उदार दरस नखसिख लौं निरखि निरखि लोचन भरि पीजै।।
परसा परम सुमंगल परसत वारि वारि तन मन डारीजै।।३।।१४०।।

राग सारंग--

तुम बिन कौन गरीब निवाजै।।
दीन दयाल भगत वछल प्रभु कृपन पाल वृद तुमहिं विराजै।।टेक।।
जापरि कृपा कटाछि तुम्हारी सोई नीसांण मढ्यो सुरि वाजै।।
अभै प्रताप दियो सो दुरै क्यौं तीन लोक उपरि चढि गाजै।।१।।
रहत निसंक मगन लयो लायें नैंक न मनहूं जगत तैं लाजै।।
परसराम प्रभु तुम्हारै नांव बलि जावत और सकल बेकाजै।।२।।१४१।।

राग सारंग--

तुम बिन को पतितन कौ तारै।।
बूडत मिलि भव दोष सिंधु मैं दया सिंधु दे बांह उबारै।।टेक।।
अपणैं निकटि राखी सुख पोषै अभैदान दे कैं भै टारै।।
जु राम रमण जम ताहि न ग्रासै जो कोऊ हरि की सरणि संभारै।।१।।

वकी व्याध गनिका द्विज गज सिल सिंधु नांव पैज पुकारै ।।
आदि अंति निरवाह विडद को परसा प्रभु बिन को प्रति पारै ।।२ ।।१४२ ।।

राग सारंग--

जा प्रभु कौं सकल लोक की लाजा ।।
सोई मेरैं बडराज विराजत महाराज राजनि के राजा ।।टेक ।।
जल थल सकल जीव जुग जामैं ताही मैं आपण जयो आजा ।।
सुर्ग निरति पाताल आदि कै हरण करण सारण सब काजा ।।१ ।।
हरि सम्रथ भव रूप सिन्धु मैं पर्म नाम की बांधी पाजा ।।
तिरत अनेक निसंक संक तजि वरजि सकै को है अन्दाजा ।।२ ।।
अभै राज अस्थिर घर निज वर पलटि न कबहू होत दूराजा ।।
आदि अंति इकतार एक रस रहत सदा हरि पुर हरि भ्राजा ।।३ ।।
अष्ठ सिद्धि नव निद्धि नियादर भूली फिरत मुकति बेकाजा ।।
सिव विरंछि श्रुति सेस सुनत धूंनि सबद अनाहद बाजै बाजा ।।४ ।।
हरि सुख सिंधु पर्म सोभा सम दीजै को नाहिं न उपराजा ।।
परसराम प्रभु अखिल भुवन पति पार ब्रम्ह सबके सिरताजा ।।५ ।।१४३ ।।

राग सारंग--

वैसी प्रीत प्रगट जो होई ।।
जैसी मन मोहन उर उपजी तन मन अंतर खोई ।।टेक ।।
बस नहीं न तन खीन दीन द्विज आवत वखिल गोई ।।
ता सनमुख धावत उठि श्रीपति अति आतुर रुति जोई ।।१ ।।
मिलत निसंक अक भरि भरि हरि हृदै लगावत रोई ।।
सोई धरत न धीर निमष निज निर्भै भै टारण प्रभु सोई ।।२ ।।
ले आये भुज भीरि भुवन मैं अति हित सौं उर ढोय ।।
दे आदर आसन सिंघासन लेत चरण रज धोई ।।३ ।।
बूझत कुसल सकल पति सति करि कही कृपा करि मोही ।।
गुर हित निसि वनि वसे सुदामा सुधि आवत है तोहि ।।४ ।।
जो कछु हमहि ले आये हित करि राखत कहा लकोय ।।
देत दया करि सकल संपदा मांगत तदुल दोय ।।५ ।।

करूणा सिंधु पर्म सुखदायक सम सेवग नहीं कोय ।।
परसराम प्रभु हरि जन कौं जस गावत प्रेम समोय ।।६ ।।१४४ ।।

राग सारंग--

जब लग प्रेम भगति नहीं लहिये धृग सोई जन मन जीवन कहिये ।।टेक ।।
जब लग दास भाव नहीं आयौ ।। तौ रतन जनम भ्रमि वादि गमायो ।।१ ।।
जब लग ब्रम्ह सुदीपक नाहीं ।। तो चार्यों सूनि सदा निसि मांही ।।२ ।।
जब लग फल वेसास विसार्यो ।। तब लग राम महानिधि हार्यो ।।३ ।।
सतगुरू सबद स्वाद नहिं आयो ।। परसा सो प्रान कलि लै खायो ।।४ ।।१४५ ।।

राग सारंग--

तुम हौ उत्तम जात के जिनि कहौ हमारी ।। मैं महापति कुल जाति हीणं दहूं नष्ट भिखारी ।।टेक ।।
सुचि संजम आचार विधि करणी तुम जानी ।। मैं राम कह्यां तैं सुख लहूं मति मूढ अज्ञानि ।।१ ।।
तुम सुरता बकता बडे हमहीं कछु नाहीं ।। परसराम व्यापक ब्रम्ह देखौं सब माहीं ।।२ ।।१४६ ।।

राग सारंग--

जो जन सांचै ही गोविंद गावै ।।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि सकल सुख घर ही बैठो पावै ।।टेक ।।
काम क्रोध अभिमान चातुरी त्रिष्णा चित न डुलावै ।।
संसौ कहा पर्म पदई कौ उधरत वार न लावै ।।१ ।।
माया मोह लोभ दुख पूरण कलियुग घोर कहावै ।।
परसुराम प्रभु सौं मन मानैं तौ दुख मैं काहै कौ आवै ।।२ ।।१४७ ।।

राग सारंग--

हरिजन जीवै हरि गुन गाय ।।
हरि प्रीतम भजि और ठौर कूं सो न मरै पछिताय ।।टेक ।।
हरि तै विमुख जीव आसा वसि भ्रमैं जहां तहां जाय ।।
दीन मलीन लोभ कौ घाल्यो घरि घरि द्वार बिकाय ।।१ ।।
हरि वेसास त्रिपति सुख ताकै जाकै स्याम सहाय ।।
सदा अकल्प अभैवल परसा कारण केसौराय ।।२ ।।१४८ ।।

राग सारंग--

हरि गुन गावत मन पतियाइ ।।

हरि सेवा सुमिरन विन करिये सुआन धर्म न सुहाई॥टेक॥
पावन नांव पतित कौं तारण सुमिरै सु न पछिताय॥
जिनि जिनि भज्यो भजै जै अबतै सु वसै परम पद जाय॥१॥
जावै सबै बहि और अविद्या रहौं भजन बलि भाय॥
परसराम जस नेम हमारै जीवनि जादूंराय॥२॥१४६॥

राग सारंग--

हरि की भगति सत्य फल सोई॥
और कर्म भर्मादि बादि रस हीण सु पोरिस छोई॥टेक॥
आसण पबन उड़त मौंनि मन हठि मन सुद्ध न होई॥
हरि सेवा सुमिरन बिन साधन सधि पर्म सिधि खोई॥१॥
तप तीरथ व्रत जग्य जोग करि कारिज सर्‍यो न कोई॥
हरि कण बिन सब धर्म निबीरज द्वारै लहत न ठोई॥२॥
सुचि संजम न वेद विद्याबल विधि निषेध करि जोई॥
पाप जीव के प्रभुबिन परसा को डारत है धोई॥३॥१५०

राग सारंग--

विद्रु बस्यां हथनापुर गांव॥
और सबै बड़ाई वादि भगति बिन का दुरजोधन नांव॥टेक॥
करि न सक्यौ सनमान स्याम कौ भाय भुवनि पधराय॥
कीये उचिष्ट कनक मैं मंदिर मूरखि ममित लगाय॥१॥
सर्वस सौंपि दीन दासी सुत हरि वसि रह्यो बिकाय॥
श्री पति तहां स्वाद करि सगुसा पावत प्रीति लगाय॥२॥
यहै साखि साची सुणी भजिये असरण सहाय॥
परसराम प्रभु गर्व प्रहारी दीन दयाल़ कहाय॥३॥१५१॥

राग सारंग--

जन कौ मोहन अग्याकारी॥ भगत बछलता टरत न टारी॥टेक॥
जाकी साखि निगम निति बोलै॥ जन कै संगि लागै हरि डोलै॥१॥
लीला कौ प्रभु सेवग सारै॥ परसा जो सुमरै ताहि पारि ड़तारै॥२॥१५२॥

राग सारंग--

हम तो हरि तुम बिन बेकाज॥
हरि सेवा सुमिरन कौ जो सुख तन धरि कैं न सर्‌यो सोई काज॥टेक॥
निर्फल गयो सकल सुख दुख मैं का लघु जनम कछु सिर ताज॥
ले न सक्यो रसनां रस मन दै भवतारण हरि नाम जिहाज॥१॥
तिनकी कहा कहूं करुणामैं जीव तजे हरि विमुख निलाज॥
तन मन धन दातार कलपतर सो भूलै जो वर बडराज॥२॥
काहू कै काहू की आसा अरु काहू कै काहू कौ बल ग्राज॥
परसराम जन कहत सुनौं प्रभु मेरी तौ तुमहीं कौं लाज॥३॥१५३॥

राग सारंग--

वदन हरि कौ हेरत नैन॥
सोभित मधुर मधुर गावत भावत मुख कै बैन॥टेक॥
अति ही उदार सुकुमार रूप देखि भयो चैन॥
मनु मधुपनि पायो मन वंछित कुसमनि कौ ऐंन॥१॥
कमल लोचन की चितवनी मेरे लोचननि कौं सैन॥
मन अपणैं बसि करन कौं हरि सर्वसु भये लैन॥२॥
गोरोचन कौ तिलक भाल झलकत मधि सुनैन॥
परसराम प्रभु विराजत सुंदर वर सुख दैन॥३॥१५४॥

राग सारंग--

जाकै उरि हरि नांव समायो॥
ताकै हृदय सत्य करि हरि बिन कर्म न कोई आयो॥टेक॥
परवसि परि स्वारथि की सेरी भर्मि न भेष लजायो॥
रह्यो अकलप कलपतर कौं भजि मन अनतैं न डुलायो॥१॥
जग सनबंध मोह माया कौ देह न दाग लगायो॥
रह्यो अलिप्त पदम पाणी ज्यौं निज मंगल पद गायो॥२॥
चरण कमल विश्राम सदा थिर परम प्रेम घर पायो॥
हरि सुमरन सेवा सुख परसा मानि लीयो मनि भायो॥३॥१५५॥

राग सारंग--

उबर्‌यो अभै सरणि जो आयो॥
और असरण जीव सोधि सर्पिणी ज्यौं डाकिणी चुणि चुणि खायो॥टेक॥
मार्‌यो मरत मोह माया कौ हरि बोलत न बुलायो॥
अपणै वसि करि कैं नटनी नाना गति जगत नचायो॥१॥
गटक्यौ सब संसार सभागनि रुचि सौं लगत सभायो॥
ताहि सदा संतोष न उपज्यो मन कबहूं न अघायो॥२॥
पसरी अगनि झाल होय आसा तिनको कौन जरायो॥
लियो लपेट दास बिनि दिष्टिक जिनि देख्यो तिनि गायो॥३॥
हरि मारग चालत भव वन मैं बाधनि बीच न पायौ॥
बीच गयो काल दिष्टि तैं देषत बहुरि न जननी जायो॥४॥
अति आतुर आधीन अकेलो अबल जीव लै धायो॥
निबह गयो सत संग सरण मिलि हरि भव पारि पठायो॥५॥
फिरि चितयो हरि पौरि पैसतां अति भै डरत डरायो॥
अन कहिये कहा बहोत करि परसा न कही नांव भुलायो॥६॥१५६॥

राग सारंग--

या तौ जैहै रे रहि है नहीं देही॥ लीजै करि गोपाल सनेही॥टेक॥
हरि सनेह तैं सुख मैं रहिये॥ हरि सुख बिनां सदा दुख सहिये॥१॥
बिनस जाय कछु विरम न लागै॥ ऐसी सौंज फेरि न पईयत आगै॥२॥
जो दिन रहै सु लाहो लीजै॥ परसा हरि निर्मल जल पीजै॥३॥१५७॥

राग सारंग--

चलिबौ तौ करिबौ न पसरो॥ तजि ताकौं भजिबौ हरि प्यारो॥टेक॥
हरि फल बिन निर्फल जो करीये॥ तन धरि-धरि मरि-मरि औतरीये॥१॥
माया मोह प्रगट जग बेड़ी॥ सुख मैं सोई निबहै जिन रेड़ी॥२॥
चलिबौ अंति न उबरन कोई॥ परसा हरि भजिये सुख सोई॥३॥१५८॥

राग सारंग--

हरि भजिये भ्रमि कर्म न करिए॥ कर्म करत मरि मरि औतरिए॥टेक॥
सब परहरि हरि व्रत धरिए॥ हरि हरि सुमरि सुमरि निस्तरिए॥१॥

हरि विण जो करिये सो काची।। परसा प्रभु भजिये सोई सांची।।२।।१५९।।

राग सारंग--

जाहि रुप नारायण परसै भावै।। सो न बहुरि कबहूं पछितावै।।टेक।।
जे रुपनारायण कौ जस गावै।। सोई नर मन वंछित फल पावै।।१।।
सदा सुखी रहै जू चलि दरसन आवै।। परसराम प्रभु कौं सिर नावै।।२।।१६०।।

राग सारंग--

ऊधो भली भई तुम आये।।
हरि प्रीतम की कथा अनूपम हम चाहती तुम ल्याये।।टेक।।
आरती अधिक हुति सुवदन देखत ही नैन सिराये।।
मानूं ऋति ग्रीषम कैं अंत कि मैं दादुर मरत जिवाये।।१।।
निसि वासुर हेरत ही तुम कौं अति आतुर हम पाये।।
अब कहि नीकैं परसा प्रभु के गुण मुखि मीठे मन भाये।।२।।१६१।।

राग सारंग--

सुंदर वदन रुप राजा।। अति उदार सारन सब काजा।।टेक।।
जे दरसे परसे पद सेवै।। तन मन परम प्रेम रस भवै।।१।।
परसराम प्रभु कौं जे गावै।। मन वंछित इछ्या फल पावै।।२।।१६२।।

राग सारंग--

मंगल देखिये हो जहां हरि आनंद सरुप।।
निरखि निरखि नख सिख सुख उपजत वन राजत ब्रज भूप।।टेक।।
जहां त्रिविध समीर चलत निज निर्मल मन वंछित सुखकारी।।
तहां प्रभु गहिर सघन वन छाया बिहरत वधु बिहारी।।
तहां अधिक सुवास रहसि तर फूले मधुकर सुर घन घोर।।
तहां गावत गुण नाना विधि पंखी चर चात्रिग पिक मोर।।१।।
तहां जल पूर बहत जम भगनी ब्रजपति कौं अति भाई।।
तहां जल केल करत करणा मैं सखिनि सहिति सुखदाई।।
उमगि उमगि उरि अंक भरत हरि सोभित अधिक अपार।।
अति औसर सुरपति सुर देखत उचरत जै जै कार।।२।।
मोहे सब पसु पंखी थिर चर हरि मुरली टेर सुनाइ।।

निर्मल सरद सरदपति निर्मल निहचल देत दिखाइ॥
थकित भयो विधु चलत सुरग मैं देखत परम विलास॥
प्रगट करी बृज बनिता मांड्यो जमुन तट मंडल रास॥३॥
बाजैं बहु बाजिंद्र मधुर धुनि लागत अधिक सुहाई॥
तहां निर्ति करत नागरि नटवर गति उर पति सु लिपटाइ॥
कर परि कर धारै भुज परि भुज मन हरि मनहिं मिलाइ॥
मनूं सिखर तैं निकसि दामनी फिरी ताही सिखर दुराइ॥४॥
ब्रम्हा वरुण कुबेर सेस सिव बैठि विमाननि आए॥
भादूं रिति मनु सिखर सुरग के भुव बरिखण कौं छाये॥
बरिखत प्रेम प्रवाह सु अमृत लीला आनंद कंद॥
नारदादि सनकादि स्वाद रत पीवत मिर्ली मकरंद॥५॥
मोर मुकट सिर वन माला उर कटि काछनी बनाई॥
श्री खंड खौरि सब गात धात दीये नाचत कुंवर कन्हाई॥
सब सोभा की सोभ स्याम घन सुन्दर नैन सरोज॥
विलसत राज केलि रस दरस्यो सुगयो खिसाय मनोज॥६॥
परम विनोद रस्यो त्रिभुवन पति देखि सकल सुख पावै॥
देखैं सुणें सोई सोई पावन परम पवित्र कहावै॥
सोई निहकर्म कुलीन जान घण हरि गुण गावण जोगि॥
सदगति हरि संगति जन परसा रहै सदा आरोगि॥७॥१६३॥

राग सारंग--

प्राण सनेही याहो पीय दरस देऊ किन मोहि॥
प्रीतम परम हित मिलिवै की क्यौं उपजत नहिं तोही॥टेक॥
ज्यौं चात्रिग स्वाति प्यास नीर की पिय पिय टेर सुनाई॥
सोइ साइक होइ लागी सरीरहि मोपै सही न जाई॥
लीनी जीति विरह वसि अपणैं बिलपति हैं दिन राति॥
यौं जीवनि क्यौं होत हमारो प्रेम तुमारै साथि॥१॥
ज्यौं जल हीन मीन गति यों हम तुम बिन अधिक उदासी॥
नीर घटच्यां जात सौंज सब बढच्यां बढ़त सुखरासी॥

यह विचारि गुन धारि धारि उर अबल विसूरत चैन॥
हरि सुंदर वर सर्ण संग बिण वन से लागत ऐंन॥२॥
ज्यों जल हीन मलीन कमलनी ससि की पोष न मानैं॥
हरि जल रसित बोध वरषा गुण हम उरि और न आनैं॥
जिहिं करि हरि दिखावत ही सो गयो वरिषि ज्यौ मेह॥
सोइ सुख उरतैं टरत न परसा प्रभु सौं पर्म सनेह॥३॥१६४॥

राग सारंग--

मंगल पद गावत जन आवत॥
नेम धरैं उरि प्रेम सहित सब उमगि उमगि आनन्द बढावत॥टेक॥
ज्यौं विद्युत प्रगट सुधा अमृत रस आपण पीवत ओरनि पावत॥
सो न वदत बलि कहूँ काल कौं पूनिम पूरौ सोम दिखावत॥१॥
भूतल सकल सफल रुति रन वन भाण किरनि करि जल वरिषावत॥
यौं हरिजन हरि अमृत वरिषत जहां तहां जस जगहिं जिवावत॥२॥
ज्यौं सलिता जल सिंधु समागम येक भयो दुतिया न दिखावत॥
यौं पति संगति सुख विलसत दरस परसि मन मनहिं मिलावत॥३॥
जै जै कार करत पुरि पैसत नर नारी कर कलस बंदावत॥
करि सनमान सआदर सूं मिलि हरि जन हरि मंदिर पधरावत॥४॥
पोषत सोधि परम पतितन कौं पावन करि हरि पुरि पहु चावत॥
असरन सरन भगत भजि परसा हरिजन कौ रुप कहावत॥५॥१६५॥

राग सारंग--

हरि वनतैं खेलत घरि आवत॥ सोभित अति सबकै मन भावत ॥टेक॥
नांना धुनि बंसिका बजावत॥ निर्तत अति मन मोद बढावत॥१॥
सब औसर देखत सुख पावत॥ जै जै कार करत सिर नावत॥२॥
संगि सखा बहु वंद सुहावत॥ उमगि उमगि गोपालहिं गावत॥३॥
पुरजन आरति कलस बंदावत॥ सुखर पहुप पुंज बरषावत॥४॥
जा हरि कौ मुनि महल न पावत॥ सोई परसा प्रभु ब्रजराज कहावत॥५॥१६६॥

राग सारंग--

कालिंद्री क्रीड़त जलधारा मन मोहन सुखकारी॥

निरखि तरंग तरल मन उमगत अति सोभा सुखभारी।।टेक।।
संगी सखा बहु वृंद बिराजत ब्रज नायक अधिकारी।।
झूलत अतिराजत हरि औसर सुर देखत बलिहारी।।१।।
करत सकल जल केलि कुलाहल अरस परस नरनारी।।
गावत सारग राग सकल मिलि सुंदर वर बनवारी।।२।।
त्रिभुवन वर पायो वसि आयो सोई व्यापक ब्रम्ह बिहारी।।
व्रज नारी गोपाल ग्वाल सरस बिलसत सुमिल मुरारी।।३।।
ब्रम्हादिक वंदन पद पावन सोई ब्रज लीला धारी।।
देखत हरि मंगल जन परसा मुनि विसरत मन तारी।।४।।१६७।।

राग सारंग--

को जाणैं मानैं हरि कैसी।।
जो पहली कहूं आप सलझिये तौ औरनि सूं कहिये तैसी।।टेक।।
कब पहरी गल मैं गज माला छापा तिलक दिये कब ग्राहि।।
कब गनिका कीनैं तप वसि हरि वकी भज्यो कब मूंड मुंडाइ।।१।।
कबहिं ब्याध व्यापक हरि जानैं विप्र पढै कब वेद बनाय।।
कब पंखी मृग व्रत कीये कबहिं तिरे तरु तीरथ न्हाय।।२।।
का सिसुपाल रिझाये कथणी जोति आप मैं लई समाय।।
का करणी हिरणाकुस रावण दुरजोधन बैंकुंठहिं जाय।।३।।
नांव रूप सम्रथ सम सुकृत ज्यौं हरितैं हरि कैसोराय।।
परसराम प्रभु अकल सकल कै सदगति करण सदा सुखदाय।।४।।१६८।।

राग सारंग--

हरिजन सब परिवार हमारौ।।
जहां कहूं सुमिरै जो हरि कौं सोई हमकौं लागत अति प्यारो।।टेक।।
नामदेव जैदेव तिलोचन जन कबीर सधना रैदासा।।
पीपा पदम सूर परमानन्द सेन धनां ऱोझा कुल खासा।।१।।
भीम भुवन हरिदास चत्रभुज कृष्णा दास आधारा।।
व्यास तिलोक दिवाकर द्यो गूना मान्योहूं जिन हरि प्यारा।।२।।
सोभूराम जसौधर धोमी सुमान दास कटहरियो।।

श्री भट श्री व्यास देव परि चेरौ परसराम हरि करियो ॥३॥१६९॥

राग सारंग--

मन दै गाइये गोपाल॥
गोपालैं गावत सुख उपजत मिटत सकल दुख साल टेक॥
सरनाई सम्रथ सुखदाता कारण कलपत वाल॥
जहां कहूं सुमर्‍यो जिन किनहू तही भये रछि पाल॥१॥
जाकौ सुजस सकल की सोभा सुणि संकित जम काल॥
पार करण संसार धार तैं जग जिहाज प्रतिपाल॥२॥
विघन विकार भार भै टारन हरि जारन अघ जाल॥
ता प्रभु कौं सेवन सुमिरत जन जल तन जग की झाल॥३॥
नख सिख पूरि रह्यो सचराचर सब की करत संभाल॥
मन क्रम वचन सत्य सोई करिये प्रीतम दीन दयाल॥४॥
सोई हरि जन सिंधु नाम जल तहां सनकादि मराल॥
पावन परम पवित्र पर्म पद परसा परम रसाल॥५॥१७०॥

राग सारंग--

हरि निर्मल सुख हमारौ सु अब कहा हमतैं बिगरी॥टेक॥
क्यौं भोजन मिष्ठान न भाये अणरुचि आणि अरी॥
खायो जाय विद्र कै सगुसा सो कारण कौण हरी॥१॥
भोजन भलो भाय करि लागै कै आपदा परी॥
तेरै प्रीति न विपति हमारै यौ रही रसोई धरी॥२॥
हम राजा भूपाल छत्रपति तुम गोपाल हरी॥
हम तुम साख न कछू सगाई मिटै न जो बिगरी॥३॥
तुम ही से नर नृपति कहावत नरनि परि अनरी॥
कछू कहि न सकत बलिराम काणि तैं आई आव टरी॥४॥
वनचर ज्यौं विचरत हौ ब्रज मैं हरि संगति सगरी॥
खोसत खात छाछि घर घर की साखि सबै सखिरी॥५॥
तेरो कहा विभौ सब मेरो जाहिं लेत न लगत घरी॥
अरु देत न कछू विरंब सकल कौ होत न पलक भरी॥६॥

काहै कौं बहु बकत वादि ही वाणी अति अजरी॥
गाय चरावत वनहि बिरानी मति लज्जा न मरी॥७॥
मोहि तै उपजै सब मेरी तैं कछु बैन करी॥
अंध असमझि कहत कित ऐसी अति अभिमान भरी॥८॥
श्री मुख वचन सुनत अरि ऐसे नख सिख अगनि जरी॥
परसा प्रभु कौं दरसि दुष्ट की दिष्टि न कदै ठरी॥६॥१७१॥

राग सारंग--

गोविन्द गाइये मन लाय॥
गोविन्द बिन गायां सुनि प्राणी जनम अकारथ जाय॥टेक॥
सोंपि देह आपण पौं हरि कौं हिरदै आणि बसाय॥
तन मन धन दे राखिये ज्यौं कबहूं छांडि न जाय॥१॥
मनसावाचा कर्मनां जो सखस दीन्हो जाय॥
सर्वस दीनां का घटै जो हरि लीजै अपणाय॥२॥
हरि सनमुख रहिये सदा ही हाथ जोरि सिरनाय॥
जग लज्या आयो अन्तर तजि लागिये हरि पाय॥३॥
गोविन्द ग्यान ध्यान रत जो मत ताकौं काल न खाय॥
परसराम गोविन्दहि गावत जन गोविन्द मिलाय॥४॥१७२॥

राग सारंग--

प्रीतम करि लीजै गोपाल॥
मानैं बहुत प्रीति को नातौ प्रीतम दीन दयाल॥टेक॥
रहै न ऊंची ठौर बिन जल ताकै पाताल ॥
प्रीति कीयां प्रीतम पाणी ज्यौं ढुलि आवै जहिं ढाल॥१॥
भगति हेत आधीन कृपा निधि भयो नंद घरि ग्वाल॥
गोपी गोप लोक बृजपुर के कहत नांव नंदलाल॥२॥
घरि बाहरि बिहरत वनवारी संग लीयै बृजबाल॥
ज्यौं वै चलत त्यौं ही हरि चालन पसु पाल पालनि की चाल॥३॥
अति विचित्रता धाय दीये तन उर राजत वन माल॥
कर मुरली सिर मुकट मोर कौ आड़ तिलक दियै भाल॥४॥

हरि सोभित सब अंग स्याम घन लोचन बहुत विसाल॥
पीताम्बर बांधे कटि काछै नाचत रसिक रसाल॥५॥
मोहे पसु पंखी थिर चर सुर भव विरंचि भू पाल॥
परसराम प्रभु सब सुख दाता हरि मनोज कौ साल॥६॥१७३॥

राग सारंग--

सुनियत हरिजन के रछिपाल॥
असरण सरण अनाथ बन्धु प्रभु भगत बछल प्रतिपाल॥टेक॥
भगति हेत औतार धरि हरिजन की करन संभाल॥
मुकत करन वसुदेव देवकी भयो कंस कुल काल॥१॥
जहां कहूं सुमरे तहीं आये आतुर दीन दयाल॥
पंडव पण राखण द्रौवे पति हरि साखी सूं डाल॥२॥
दोष सहै सो समझि आपकै राखे हदै सम्हालि॥
निंदा करी असुर अर्जुन की सही न श्री गोपाल॥३॥
विरम न करी भये आतुर प्रभु सिर काट्यौ लै थाल॥
जग्य सभा माहीं नृप देखत हरि मार्‌यो सिसुपाल॥४॥
राखी बहुत भगत भीषम की लज्या कृष्ण कृपाल॥
करि लीनौं भारथ माहैं हरि अर्थ चरण चक्राल॥५॥
निराकार आकार धारि भयो भूपनि महिं भूपाल॥
परसराम प्रभु हरि अविनासी व्यापक जनम निराल॥६॥१७४॥

राग सारंग--

हरि मंगल पायो सोई गाऊं॥
अति अमृत रसनां रूचि करिहूं पीऊ पीवे ताहि प्याऊं॥टेक॥
हरि गुन ग्यान ध्यान हरि सेवा करिकै हूं हरि कौ सिर नाऊं॥
हरि सौं प्रभु तजि और कौ भजन भजिहूं अपनी जननी न लजाऊं॥१॥
चरन चारु दल कमल को सरस मनु मधुकर तामद्धि बसाऊं॥
ता रस सौ लिवलीन दीन मन मगन भयो सोई हूं न डुलाऊं॥२॥
अब सहि न सकौं अन्तर जो उलटौ तन मन धन दै भलौ मनाऊं॥
सौंपि दयो सर्वस रस लीयो सोई पीऊं प्यास सदा सुख पाऊं॥३॥

निहचल निधि पाई मन वंछित हरि पुर बीचि बसौं घर छाऊं ।।
हरि सुख सिंधु समागम परसा सो परहरि भौ माहिं न आऊं ।।१।।१७५।।

राग सारंग--

मथुरा पुरि पैसत सोभित हरि।। मानौं मराल के वृंद मानसरि।।टेक।।
सखा सुमिल बहु भीर भई भरि।। मानों भूपरि आयो घन घर हरि।।१।।
जै जै कार सुनत मुरझै अरि।। असुर असह अघ भागि दुरे डारि।।२।।
बाजे बहु बार्जिद्र मधुर सुरि।। नट नागर नाचत नीकी परि।।३।।
हरि कौं सब परसत पाय न परि।। धूप दीप मंगल बहु विधि करि।।४।।
नर नारि गावैं गुन घर घरि।। सोभित नगर धुजा रही फरहरि।।५।।
परसा प्रभु राजित हरि मंदिरि।। पावत दरस सकल लोचन भरि।।६।।१७६।।

राग सारंग--

राजित रंगभूमि तैं आवत हरि जीतें रिण खेत।।
बर्णौं अधिक संग्राम सोभ मनु चरचित अंबर सेत।।टेक।।
हरि आये वसुदेव धरि भेटन सखा सहेत।।
प्रेम मगन लोचन जल पूरित मिलत स्याम करि हेत।।१।।
हरि दरसन कौं दरसि देवकी मात बलीयां लैत।।
ल्याई कनक थार भर मुतियन वारि वारि कैं दैत।।२।।
हरि अपार उर वारपार विण निगम कहत निति नेत।।
सोई अपणैं मुखि कहि कहि समझावत आप धर्म को भेत।।३।।
बंधन मुकत करन हरि सम्रथ करत प्रसंसनि सेत।।
पर उपगार निमति प्रभु परसा पावन परम सचेत।।४।।१७७।

राग सारंग--

चलि री सजनी हरि पैं जइये।। हरि सौं मिलि अपनी सब कहिये।।टेक।।
यह जाणौं कौन कहा तैं आयो।। अलि न कहत मन की जो ल्यायो।।१।।
सुनि संदेस सुख सो न कही सै।। जब लग प्रीतम दिष्टि न दीसै।।२।।
न्यौंतौं दीया अधरि न दीझै।। भूकौं भोजन पाय पतीजै।।३।।
हरि सुख सौं सुख पाय न तजीयें।। करि सनेह परसा प्रभु भजिये।।४।।१७८।

राग मल्हार--

बोले चात्रग मोर सुनि सखी सावण आइयो ।।
यह पछिताओ मोहि आलि हरि बिन जनम गवाइयो ।।
गवाइ जनम सुजान हरि बिन हीन बुद्धि अबला भई ।।
झुखंत निसि गोविंद कारण सूणि बिण से जा रही ।।
मनि घणी चिंत अदेस हरि बिन नैन जल उल वल भरे ।।
चमकै सुदामनि मेघ बरिषै पावस रूति जल अति झूरे ।।
इकतार त्रिभवन मनहिं मैली कहौ सखीये किम करौ ।।
रस लूबध हरि कै रंग राति रूदन मन मांही झूरौ ।।
एक कृपन धन मन संचि राख्यों अहल जनम गवांइयो ।।
कोकिल चात्रग मोर बोले सखी सांवन आइयो ।।विश्राम ।।१ ।।
अति घन वरिषै मेह गहर गंभीर आयो भादवो ।।
देखि नहीं जल पूरि मनि नैणों झड़ मांडियो ।।
माडियो झड़ मन माहि नैंणों इन्द्र पावस ज्यौं झुरी ।।
नदीयांन नीर समाय नाहीं बहै भादूं जलभरी ।।
बोलैं सुपिक बैण दादुर मोर चात्रिग केलि करैं ।।
मैं मैंमंत विरह बियोग बांधी विथा दुःख विह्वल भरैं ।।
देही तपति तन खीन होई नृगुण सरसूं कै सुआ ।।
मनहिं मारि बिसारि मेली कहौ औगुण हम किआ ।।
बिलबिलूं ठाढ़ी झूरौं मनि नैण न देखौं माधवो ।।
जल पूरी नदीयां प्रीति पावस आयो कैसो भादवो ।।विश्राम ।।२ ।।
आयो आसोज मास मन आसा पूरे बोरड़ी ।।
पूरन पर्म दयाल मारग देखौ हूं खड़ी ।।
मारग देखूं खडी गोविन्द पथ इणि आवे सही ।।
अवल गोपि मुरार कारणि अधर कर जोरैं रही ।।
मन मांहि मूग्ध सुजाण सोचै कोई कहै हरि आइया ।।
अनेक रतन अवलि मोति लाख द्यौं बधाइया ।।
पल भयो पलक न रहूं हरि बिन विरह बलिसि नाइये ।।

हियौं हिलूंसैं मिल्यों चाहै मिलन माधो जाइये।।
आसा लूबिधी पंथ देखौं सरस सीतल रूति वली।।
हरि खोजतां आसौज आयो आस मनि पुर वौरली।।विश्राम।।३।।
भलैं आयो कातिक मास जिन ऋति कृष्ण पधारिया।।
गोप्यां कीयो सिंगार बहु विधि वै न विसारिया।।
विसारी बैन अनेक बहु दुःख सकल कारिज सारिया।।
जिनि मिल्यां तनि त्रास भागी भलैं कृष्ण पधारिया।।
पहरियां आभर्न चीर तनि सिंगार सोभा बनि रह्यौ।।
गावति मंगल कलस आरति कंवल दल लोचन जयौ।।
रलबली मैं हदै माधौ हरखि हरि आनन्द भयौ।।
रस लुब्ध मोहन रमैं क्रीला उरि अधर राधा रह्यौ।।
सेज्यां सुरति रसवनि रतिरंग स्याम सौं ब्रज नारियां।।विश्राम।।४।।
अति वरिषा रुति राज सखी सांवण सिखरनि बन्यों।।
हरि आरति विण और मन न सहत देख्यो सुन्यौं।।
देख्यौ न सुन्यौं सुहात हरि बिनि सरस सांवण बलि वहै।।
स्याम पर्मदयाल बिन जल बूंद पावक ज्यौं दहै।।
व्रथा तन मन जनम हरि बिनि अफल सब देख्यो सुण्यों।।
परसा प्रभु सुख और दुख सखी सांवन सिखानि बण्यो।।विश्राम।।५ ।।१।।

राग मल्हार--

सखी वरिषत भादूंरी मास सर सलिता जल पूरिया।।
उर विहसत हरि चित नैन चुवत चपलनि चूरिया।।
चपला चहूं दिसि अधिक चमकति मधुर सुर घणहर करै।।
मोर कोकिल चवै चात्रिग विरहनि कौ बल हरै।।
हरि न प्रीतम निकटि अति दुख दरद हरन सुदूरिया।।
परसा प्रभु बिन सुख न सोभा भादूं रूति जल पूरिया।।१।।विश्राम।।
सखी प्रगट भयोरी आसौज हरि न अवधि आय भरि दई।।
विलपत हम हरि हीण भुव राजित गहवर भई।।
भई मुदित जल मिलि सकल सोभित सुफल द्रुम वेली सुखी।।

विथा अपनी कहैं कासूं अबल हम हरि बिन दुखी ।।
पंथ देखत दिन वितीत अवधि वदि आसौज लूं ।।
करत प्रभु की आस परसा प्रान तन वासौं जलूं ।।२ ।।विश्राम ।।
सखी कातिग करुण री कंत मिलिहैं री मैं सुपनों लह्यौ ।।
मैं पायो सुनि चैन जबै हरि आगम आवन कह्यो ।।
आवन कह्यो सखी सत्ति करि हरि विरह तन न जराइये ।।
हरि कथा गुण गण ग्यान मंगल सुमरि सुणि सुख पाइये ।।
बन्धौ नखसिख प्रेम वसि सोई गाई किन लीजै बुलाई ।।
परसराम प्रभु प्रगट कातिग कृपा करी मिली है सुआई ।।३ ।।विश्राम ।।२ ।।

राग मल्हार--

धनि दिन यह राति धनि जसोदा नंद सुख भरे ।।
धन्नि महर बडभाग कंवरि घरी औतरे ।।
औतरे स्याम सुजाण गोकुल उमगि ब्रजवासी मिले ।।
सुरलोक सेस महेस ब्रम्हा वेदी धुनि गावत चलै ।।
जस जग वोंआकांर जै जै स्याम तहां तहां गाइये ।।
परसराम अपार लीला देखि अति सचु पाइये ।।१ ।।विश्राम ।।
आनन्द नन्दजी के द्वार।।
ब्रज सुंदरि गावत चली गावै मंगलाचार।।
पुखत है मन की रली।।
पुखै सुमन की रली सुंदरी नंद द्वारे गांवही ।।
स्याम पर्म दयाल दरसन कनक कलस बंदावही ।।
आरती कंचन थाल माला चौक चन्दन विधि भली ।।
परसराम नंद द्वार आन्नद उमगि ब्रज सुंदरि मिलि ।।२ ।।विश्राम ।।
धनि धनि गोकुल गांव कान्हरि जहां लीला धरि ।।
देखि चरित ब्रजनारी भुवन सुत पति बीसरी ।।
विसरी सुन्दरी भवन सुत पति स्याम छबि हिरदै रही ।।
देखि बाल विनोद लीला सुरस रस गावे सही ।।
दधि भरण हलद गुलाल केसरी कीच नन्द द्वारे मची ।।

धनि धनि गोकुल गांव परसा स्याम जहां लीला रची।।३।।विश्राम।।
वलि वलि कान्हर नांऊ ब्रज कुल सोभा भयै।।
गावैं कंठी लगाय मोहन मुख देखै सहै।।
देखि मुख गोपाल पति कौ सखी जन सुख पावहीं।।
सकल पति बैंकुंठ नायक स्याम लै उरि लावहि।।
देखि सरस विनोद गोकुल सुख निधि गाइये।।
परसराम प्रभु स्याम उपरि सखी वलि वलि जाइये।।४।।विश्राम।।३।।

राग मल्हार--

मिलि गौपाल सौं झूलैं खेलहीं।।
अति रस केली विलास झूलैं खेलही।।टेक।।
खैले सुकेली विलास रस मिली सुन्दरी सखी रूप।।
सकल पति आन्नद लीला रचित अधिक अनूप।।
जहां रैंनी घौस न सूर ससी हरि सुरंग छांह न धूप।।
अगम गति अभिराम अचिरज रमित त्रिभुवन भूप।।१।।
परम सुन्दर सौंज सोभित अखिल दीन दयाल।।
विमल गम्भीर सुख जल कंवल दल सुविसाल।।
भंवर गण गुंजार सुर कोकिला मोर मराल।।
प्रगट प्रेम प्रवाह गावत सबद सरस रसाल।।२।।
मंगल सकल दिस दिस जहां सुं तहां रहसि केली कराहीं।।
सलिता सखी सुख सिन्धुपति रूति एक मिलाहीं।।
निर्भै न भै संक्या न कछु निरसंक सब जामांहि।।
अधिक औसर देखी मुखं पै कहत आवै नाहीं।।
अगह खंभ अनुप अति गति लखै न को मति थोर।।
कर मुकत रतन अमोल मणिगण जटित जुगति हिंडोर।।
अनेक जन निजरूप नवत गुण करी जौरि।।
निकट सुक सनकादि नारद चंवर कर लिये डोरि।।
अनेक रस बहुवास पर्मत करत केसरी खोरी।।
चरचैं सुघसि भ्राखंड चंदन आर्गजा बहु घोरि।।

अति मनोहर बैन बोलत नैंन नैननि जोरी।।
चितई चितई सनेह इनकौं लेत हरि चित चोरि।।
अकल सकल समीप सोभित विविध विधि संकेत।।
दरस परसत मन सुमन है मिलन करि करि हेत।।
अधिक रूचि पीय प्यास करि उरी अंक भरि भरि लेत।।
निरखी अवगति नाथ नागर सबनि कौं सुख देत।।
हरि चरित्र अपार अद्भुत लेत करि बहु भेष।।
वै प्रगट करि करि दुरावत करत और अदेस।।
ता सुगति कौं लखै न वै सुर सक्र संकर सेष।।
देखि परम विनोद प्रमुदित करत विधि अवसेष।।
संगि नव नव रंग राजत नागरी नव नेह।।
उमंगि अन्तर छोरी परसत प्रीति पर्म सनेह।।
सकल वर संजोग श्रीपति भेद रहित अगेव।।
परम सुख सन्तोष परसा सुफल हरि की सेव।।३।।४।।

राग मल्हार--

हरि जी कौ सरस हींडोलनो झूले पिय पुर मांहि।।
छाया न माया अचल तरवर देखिये निरबंद।।
तहां रच्यो रहत हिंडोलो थिर काया न निकन्द।।
बिन रैंनि द्यौस अनंत दीपक उदैसूर न चंद।।
अखण्ड मंडल मधुपुरी देखिये एक अनंद।।१।।
जहां प्रेम खंभ अभंग अंनभै अकल कल औ न जाय।।
देखि चिरत सुथ क्यौ चित सोई रहयो सकल समाइ।।
अवगति अपार न पार आवै जीवै जन जस गाय।।
प्रीति पर्मदयाल सौं लयौं डोरी लाल लगाय।।२।।
सुरसती संगम गंग जमुना बहै निर्भर नीर।।
त्रिकुटि महल गोपाल झुले पर्म गति गम्भीर।।
देखि सरस विनोद लीला उपज्यो मोही धीर।।
चित लग्यो लाल दयाल सौ मिटि गई मनकी पीर।।३।।

अनभै अबीर अगाध पति निजराज रोरी रंग॥
सोई राखि अंतरि प्रति करि फिरि होय जिन रस भंग॥
काम क्रोध विकार तृष्णा नीति आसा जंग॥
भूका भर्म अब दूरि करि भजि राम निर्भै संग॥४॥
रंगि रमैं सहज सिरोमनि सुख सुरति सुंदरि साथि॥
नव नेह रंग सुरंग मिलि मिटी गई सब कुल जाति॥
क्रीला विलास निवास निज निधि चढ़यो हीरौ हाथि॥
परसराम मानत जौं पति मति अवगति नाथि॥५॥५॥

राग मल्हार--

स्याम सघन वर्षा रूति आई॥
देखि घटा घनघोरि चहुं दिसि पावस प्रीति सवाई॥टेक॥
बोलत मोर बूंद विष लागत हरि बिन कछु न सुहाई॥
कवण आधार जीवैं हम विरहनि पति पतियां हूं पठाई॥१॥
तुम अति चतुर सुजान सिरोमनि हम अधम अजात कहाई॥
परसराम प्रभु तजि सब औगुन मिलि मोहन सुखदाई॥२॥६॥

राग मल्हार--

उमग्या बादल वरषन आवै॥
देखि सघन घन अरि दल वरषत इन्द्र निसांण बजावै॥टेक॥
लागत बूंद विषम पावक सम हरि बिनि तनहिं जरावै॥
क्यौं सहिये दुख दरसन दुरलभ विरह भुवंग सतावै॥१॥
गिर गिर सिहरि सिहरि दामिनि सोहभित मोहि न सुहावै॥
सुंदर सौंज सरस घर सर वन मोहन दिषि न आवै॥२॥
कठिन परी सुख तैं दुख उपज्यो मो पति कोई न मिलावै॥
परसराम प्रभु अबर सहूं क्यौं मोर मलार सुणावै॥३॥७॥

राग मल्हार--

गिगनि घण गरजत लीला नाथ॥
प्रगट नीसांण सुनत सुर सुरपति सेस न बरनी जात॥टेक॥
चतुरानन पिक सिंभु सु चात्रिग टेरत पीय पीय घात॥

प्रेम प्रगट झुरत सर भरियत सीतल सरस सुबात ।।१ ।।
दादुर व्यास मीन सनकादिक ता जलि केलि करात ।।
सुक जन हंस विहंगम बहु भुनि सोभित सरणि दिखात ।।२ ।।
महा चरित्र अगम गति औसर अचिरज उर न समात ।।
नृमल अकल सुठौर सुदरसन परसा तज्यौ न जात ।।३ ।।८ ।।

राग मल्हार--
आजु अति देख्यो चरित अपार।।
कहि न सकौं पति की गति सति करि भेद भुवन निरधार ।।टेक ।।
नहीं जड़ मूल डाल फल छाया तरवर अकल उदास ।।
माया ब्रम्ह रहत बड औसर पूरन पर्म निवास ।।१ ।।
नहीं जल कंवल सिखर ससि ठाहर मधुकर लगे सुवास ।।
सींपि न सिंधु तहां जन मोती निपजत वेसास ।।२ ।।
नहीं निसि द्यौस घरणि रवि मंदिर दीपक सकल उजास ।।
सौं नित वसैं प्रगट पद दीसै परसा निज परकास ।।३ ।।९ ।।

राग मल्हार--
सुमंगल गावत ब्रम्ह अपार।।
देखि अगम गति उदित भयो पति धरि लीला औतार ।।टेक ।।
गरजत घन त्रिय लोक उजागर सुनत सकल संसार ।।
फूटत सुर ब्रम्हंड विराजत देखि अदिष विचार ।।१ ।।
आदि न अंत निकट नाद सुर सरपति सुर कौ देव ।।
लीयो निवास न जाणैं कोई हरि सेवग की सेव ।।२ ।।
सिंधु उलटि सलिता जल पूरे फिरि घिरि सु हरि समाइ ।।
बिर चढ़ि सिहरि समाय न बिछुरत ज्यौं दामिनी दरसाय ।।३ ।।
पावक पडि पावक मैं दाझइयो पावक सीमट्यो प्राण ।।
प्राण पावक संगि लाग्यो निसा प्रकास्यो भाण ।।४ ।।
महा प्रलै मिटि सुन्य समानो प्रेम प्रगट भयो आय ।।
परसराम मिलि आनंद उपज्यो सो सुख कह्यो न जाय ।।५ ।।१० ।।

राग मल्हार--

प्रेम बिन प्रिय काहू कौं न पतीजै॥
जानत है सव के अन्तर की जहां जहां जो जो कछु कीजै॥टेक॥
झगरत झूंठ सांच सगि सर भरि करि अपराध न खीझै॥
ताकौ कहौ कवण गुण चित करि हरि अरीझ जो रीझै॥१॥
तन मन धन सर्वस अन्तर तजि कैं जब लग नहिं दीजै॥
देखौ सबै सौचि करि जिय मैं कवण हेति हरि लीजै॥२॥
हित की प्रीति बिनां हरि प्रीतम कपट न कबहूं धीजै॥
है कोई विथा अबर जन परसा प्रभु बिन विरह न छीजै॥३॥११॥

राग मल्हार--

प्रीति बिन हरि नागर न पतीजै॥
पर्म सुजाण चतुर चिंतामणि सो परपंच न धीजै॥टेक॥
तब लग होत नहीं वसि प्रीतम जब मन नहिं दीजै॥
मन दीनैं बिन सुमन परायो क्यौं अपणूं करि लीजै॥१॥
हम न अपणयौं दीयो न हित करि क्यौं हरि कौ मन भीजै॥
यौं रीति रही स्वाति वरिषा संगि सिंधु सीप बिन पीजै॥२॥
जासौं प्रेम नेम निहचौ नहीं अरू मन की न कहीजै॥
परसराम प्रभु तजि दोस तैं अब कहा सोच करि कीजै॥३॥१२॥

राग मल्हार--

हो ऊधौ जो तुमहारि गई॥टेक॥
विरह विकल विलपत तन तलफत खोवत सौंज नई॥
निकसि न जात प्रान पंजर तैं सविता सांझ रही॥१॥
जैसी जिसी कर्म गति अपणी अब तौं इनि बही॥
कहीयो यौं परसा प्रभु तुम बिन विरहनि दही॥२॥१३॥

राग मल्हार--

मेरी मानैं कौन कही॥
प्रथम पिछाणि न मिलीरी गोपालैं सो जीय बहुत रही॥टेक॥
कठिन वियोग विथा तन जारत सो नहीं जात सही॥

जाणैं मेरो प्रान पलक नहीं बिसरत निसदिन चिंत गही ।।१ ।।
अति अभिमान मिट्यो नहीं मेरौ नां लिवलीन भई ।।
नांव कुबुद्धि विसरि परसा प्रभु भौजलि भूलि नहीं ।।२ ।।१४ ।।

राग मल्हार--

जो जो मन हरि जी की सरणि गयो ।।
सोई सोई मन संसार धार मैं फेरि न हरि पठयो ।।टेक ।।
पीवत प्रेम नेम धारैं रस सोई सदगति निबह्यो ।।
चरन कंवल मकरन्द लुब्ध भयो विलसत तहीं रह्यो ।।१ ।।
पायो थिर विश्राम पर्म सुख भै तजि अभै भयो ।।
सोई निरमल निरभार नृदोसिक जो निज ठौर नयो ।।२ ।।
तन मन धन आपणपौं प्रभुजी कौं सर्वस सौंपि दियो ।।
परसराम कसि कर्म कसौटी हरि अपनाय लियो ।।३ ।।१५ ।।

राग मल्हार--

रूप अनूप बनैं हरिराय री।।
सोभित अति सुन्दर वर नागर स्याम वरन तन छबि वरनि न जाइ री।।टेक।।
हरि मुख कंवल बसत नैननि मैं टरत न इत उत सब सुखदाई री ।।
मूरति मधुर सदा थिर उर मैं सो सुख सजनी तज्यो न जाइ री ।।१ ।।
अति रस लुब्ध भयो री मन लोभी पीवत प्यास अमी निधि पाई री ।।
प्रेम मगन तन मन ता रस सौं सुरति सरोवर मद्धि समाई री ।।२ ।।
कह री कहूं कछु कहत न आवै हरि सुंदर सुंदरताइ री ।।
निरखी निरखी नख सिख रूप रुझानी परसा प्रभु तन चितय सिराइ री ।।३ ।।१६ ।।

राग मल्हार--

हरि जू करत कछु कब कौ जानै ।।
देखत ज्यौं दिष्टक कौ दिष्टक उपजि खपत सब तैं सब छानैं ।।टेक ।।
उदित भयौ प्रहलाद हेत करि अभैदान दायक भै टारै ।।
जिनि रच्यों सकल ब्रम्हंड सिंघ में महासिंघ अरि को उर फारै ।।१ ।।
भुवन चतुर्दस जसुमति कौं हरि माटी मिसी मुख मद्धि दिखारै ।।
नाना रूप करै को जाणैं ज्यौ तरंग सूरि किरण पसारै ।।२ ।।

ब्रम्हा बृच्छ हरे तहां सौं तैं एक ही कृष्ण सरूपनि सारै॥
बहुरि प्रगट बहु रूप अवंछित दुरजोधन नृप कैं दीये द्वारै॥३॥
नर तहिं नारी करैं नारी तहिं नरू बांवन वपु धरि बहुरि बधारै॥
पलहि करै हरि सुंदरि तैं सिल सिल तैं सुंदरि फेरि विचारै॥४॥
नृप तैं तरू करैं तरू तैं नर हरि कर्ण सकल सम्रथ समि सारै॥
नाचत आप नचावत सब कौं बाजि भई बाजीगर सारै॥५॥
केसव के सर चित कहा विरबै स्याह सुपेत सदा रूति धारै॥
नीर रूधिर बैमिलैं जमावै सुहरि बहुरि न्यारो करि झारै॥६॥
अगिणि चरित लीला गुण अपणै हरि अचिंत इच्छा बिसतारै॥
परसराम प्रभु कौ जस पावन जो सुमिरत सुतिरत भवपारै॥७॥१७॥

राग मल्हार--

सुभारैं भजिनि लीयें पतित पावन करि हरि॥
हूं कितेक कहूं भजनहारै बहु अधम अतिर भवपार गये तरि॥टेक॥
मैं सुणि तिरत सिल सिंधु नीर परि तापर वनचर इह अचरज हरि॥
चरण कमल रज तैं रिषि पतनी कीर गयो तिरि नाव भार भरि॥१॥
जिनि खायो विषै जनम भरि रूचि करि अंतकि नाम लियो नर कौ नरि॥
वै तारे द्विज गज व्याध गीध तुम ग्राह छुवत चक्र सुपारी परि॥२॥
ताकि सुक संगति विष वनिता वकी विकारी भरी पहुंची धरि॥
अब मोहि यहै परतीति महा प्रभु हूं नर किन जाऊं न जम कैं डरि॥३॥
तुम्हारो सरण भै हरण कृपा निधि पायो मैं रहि हूं गहि व्रत धरि॥
अब न तजौं तुम कौं कबहूं परसा प्रभु करि भजि हौं जनम भरि॥४॥१८॥

राग मल्हार--

हो प्यारे हरि रायन औ क्यौं नहिं घरि आये॥
तुम जु कह्यो दिन दस मैं आवन यिते और कहां लाये॥टेक॥
निरखि निरखि नैननि दुख उपजत पावस लगत डराये॥
हम अब क्यौं जीवैं हरि हीन अबल भई अबधि गई हूं न आये॥१॥
विचि आवत अटके हरि किनहूं मिलि विरहनि विरमाये॥
अब क्यौं आवत आली हरि आतुर मन मोहन भाये॥२॥

कमल नैंन कौं नेह न सजनी जु पद अंबुज न दिखाये।।
विरह जरत उर प्रेम नीर बिन कैसें जात बुझाये।।३।।
यो दुख दरद मिटै नहीं कबहूं जु हरि हम मिलन न पाये।।
परसराम प्रभु हरि भुज भरिकै मैं मिलि उर सौं न लगराये।।४।।१९।।

राग मल्हार--

री सजनी हरि अजहूं न घरि आये।।
जाय बसे कहूं दूरि देस महिं या सुरति सबै विसराये।।टेक।।
तहां नहीं वरषा रूति सिखर सुर्ग मैं मेघ न वरिषण पाये।।
तहां नहीं दामिनि चमकत निसि आतुर घन गरजत न सुहाये।।१।।
तहां नहीं सरवर सलिता जल जहां तहां दादुर उरगनि खाये।।
तहां नहीं गिरवर चात्रिग पिक वानी मोर मुयें न जिवाये।।२।।
तहां न भौमि हरित द्रुम बंलिं फिरि न बदत मुरझाये।।
तहां सनेह विरह न विरहनि स्याम सघन तहां छाये।।३।।
अब कैसे आवै हरि हम पैं जो तन मन दै न मनाये।।
परसराम प्रभु चलती बेर हम पाय लगि पहुंचाये।।४।।२०।।

राग मल्हार--

समझि मन करि लै राम सनेही।।
तेरा तब न बसाय कछू जब छूटि जाय नी देही।।टेक।।
धन जोबन तन प्रान पसारौं यह परपंच पराया।।
उपजै खपै प्रगट सब सूझै यह बाजीगर की माया।।१।।
मात पिता कुल कुटुंब झूठ सब झूठी साख सगाई।।
झूठा पुत्र कलत्र सहोदर साच सदा हरिराई।।२।।
चवर छत्र गज बाजि राज निधि चाल्यो छांडि सबांई।।
और हूते दस बीस नजीकी पैं भयो न कोय सहाई।।३।।
चूक पर्‌यो सब कौ तिहि औसर बचो न राखि भरि वायौ।।
सुणियो सबै जगत कौ मिलिवौ कोई अन्ति न संगी गायौ।।४।।
देख्यो सोचि विचारि समझि मैं हरि सौं हितू न कोई।।
जाकी सरणी सदा सुख परसा आवा गवण न होई।।५।।२१।।

अथ गोविन्द लीला राग सोरठ--

गोविन्द लीला की बलि जांहि॥
उलटि गति गोपाल तेरी कछु समझि आवै नाहीं॥टेक॥
ब्रह्म सुर सिव लोक ऊपरि पर्म पुर निज ठाम॥
चत्रभुज तहां देखिये वै सकल सेवग स्याम॥
मुगति फल मुगत पाइये हरि विरष सीतल छाम॥
सकल पति वैकुंठ तजि करित क्यौं गोकल गाम॥१॥
ब्रम्हादि सिव सनकादि नारद जपै जै जै कार॥
रात दिन मुनि रहत खोजत तऊ न पावै पार॥
इहां वेद छंद गुन कहत द्वारै कर्त नाहिं संभार॥
नंद ग्वाल अहिरि मथुरा तहां लयो औतार॥२॥
बकी सकटा सुरनि याते-प्रथम लीला बाल॥
बक तृणाव्रत अघ हते जिनि ग्रसे गोधन ग्वाल॥
नथन सुर मधु कटि सोखण दंतवक्र सिसुपाल॥
चाणूर केसी कंस मार्यो गिरि गयो सब साल॥३॥
इन्द्र जाकी करै सेवा सकल सुर हित कारि॥
सेस सज्यां बिस्तरे सोई रूठे नंद कुंवारि॥
सात वांच अहीर के सुत मिले गोप कुंवारि॥
बालि लीला रमैं तिनमैं देत धावत गारि॥४॥
अनेक तापस तप करै मुनि रहै तारी लाई॥
तिन कौं न दरसन देत हरि सुपनैं न सह सुभाई॥
यहां आय घरि घरि द्वारि कहि लेत ग्वाल बुलाई॥
निसि न जागै परम हित सौं वन चरावन गाई॥५॥
धरि नाहिंन धरत व्याकुल भये भै पसुपाल॥
कहत संगी जरत हैं हम राखि दीन दयाल॥
मूदि लोचन रहौ करसौ कहत यौं नंदलाल॥
राखि लीनैं जरत तिन तरसवै गोधन बाल॥६॥
अति भयानक लगत देखत प्रबल पावक झाल॥

आतुरहिं आवत लपट झपटहिं अगनि अति जु अकाल।।
ऐसो प्रगट दावानल गिल्यो जो हूतो सब कौ काल।।
सोई फूंक दै दै पीवत पै कों अगम गति गोपाल।।७।।
जहां वेद धुनि ब्रम्हा करै महामंत्र वोअंकार।।
चित दैंन हरि श्रवनां सुनै बोलै न एकैं बार।।
मुरली बजावै टेर सो चढ़ि उच्च द्रुम की डार।।
धेन बन मैं चरै तिण रुचि तहां दै हौंकार।।८।।
अनेक सुर संजमि रहै वै लेत छाक दिखाय।।
कोटि जिग्य प्रवाह भोजन तहां न देखन जाय।।
खाटा न मीठा गिनै नाहिंन जातिपांति काय।।
मांडि मारग तहीं खोसै चोरि माखन खाय।।९।।
अनेक सायर जल भरन कौं होत हैं पनिहार।।
जाकैं चरन नख गंगा बसै भुवकौ उतारन भार।।
सोई प्रभात कर गहि जाय वन मैं करे गोधन सार।।
जीमि जमुना को चलै सोई चलू-भरन अपार।।१०।।
ग्वाल लीला करन भोजन तहीं जमुनां तीर।।
अधिक सोभित मद्धि मोहन सुमिल स्याम सरीर।।
तहां बछ बालक हर ब्रम्हा भयो तुष्टन हरि।।
हरि करे जैसे के तैसे समझे न आन अहीर।।११।।
सुर पति को बलि मेटि कैं हरि लीयो भोजन ग्रास।।
मेघ मिलि मरजाद लौपित बरस्यो ब्रज बास।।
देखि जल विह्वल भये जब इन्द्र दीनी त्रास।।
वाम कर पर धर्‌यो गिरकौ थंम बिनि आकास।।१२।।
अनेक रमा मोहिनी मद मस्त अंग सुवास।।
कमला न पावै पार हरि को रहै चरन निवास।।
इहां अधम जात अहिर गूजरि करे भोग विलास।।
कर जौरि स्याम समीप खेलैं रच्यो मंडल रास।।१३।।
असुर नरकासुर हत्यो सुख सहज देव मुरारि।।

सोला सहस विवाहि ल्यायो स्याम राज कुंवारि।।
इहां येक घरनि न राखि सकियो राम रघ औतार।।
रंक रावण लै गयो सोई आनि ग्रह के द्वार।।१४।।
चरन रजतैं सिला तारी देखतां सत कालि।।
चरनि काली कीयो निरविष नाथि आण्यो आलि।।
जमला सु अर्जुन चरनि तारे नारद श्राप संभालि।।
तिनही चरनि बलि चंपीयो क्यौं गयो सप्त पथालि।।१५।।
उधौ कौ ब्रजही पठावै भजन भेद बताय।।
इहां गीध व्याध गज ग्राह गनिका बकी बैकुंट जाय।।
कवनी विधि सुमरन करौ सठ बुद्धि न आवै काइ।।
परसराम जन सरनि अपणी राखि अवगति राइ।।१६।।१।।

राग मारु--

राजा रघुपति सौ जगि को है।।
अति उदार दातार सुर यह रामचन्द्र कौं सो हैं।।टेक।।
राजहंस राजेंद्र राजपति राजन महिं अधिकारी।।
धर्म धुरंधर धर्म सींव हरि येक प्रिया व्रत धारी।।१।।
बांध्यो सिंधु प्रगट सब दैखै डुबत न देखि पतीनौं।।
अपणैं करसों सिला तिरावत लिखि नांव नगीनौं।।२।।
रावन राज विभीषन कौं प्रभु सिरनावत ही दीनौं।।
हुतो कृपन पैं एक पलक मैं हरि लंकापति कीनो।।३।।
श्री मुख वचन कहत मिलि रावन आय अजोध्या दैहूं।।
अबहीं बोलि विभीषण हूं कौ दै लंका फिरि जैहूं।।४।।
सम्मुख आय मिल्यातैं तोपर दोष न कछूवै धरिहूं।।
सत्य सुवचन अजोध्यापुर कौ रावन राजा करिहूं।।५।।
सीतापति रघुपति सोई श्रीपति सब अंतरि की बूझे।।
सेवन को रघुनाथ सारिखो और न कोई सूझै।।६।।
जाकै पति रघुनाथ महाबल सुमर्‍यां काज संवारै।।
ताकौ भगत जगत मिलि परसा सो क्यौं अपनौं बल हारै।।७।।१।।

राग मारु--

हो पिय रघुपति लंक पधारे॥
लयें सब सैन संगि वै आवत दीसत वादर कारे॥टेक॥
धावत है वनचर दिस दिस तैं अति आतुर अहंकारे॥
मानूं घटा मेघ की उमगी घूरत अति जलधारै॥१॥
तिरत सिला सितबंध सिधुजल करत केलि किलकारे॥
सिंधु पारि वरवारि मद्धि बहु अति चंचल बहभारै॥२॥
सिंधु सकति करि दूरि आप बल कपि समूह हरि तारै॥
आय भरे भुवन भुवन भीर बहु रोके पोरि पगारे॥३॥
मानूं गिरवर तजि भजत जलधि कौं जल पुरित नहीं नारे॥
आय बस्यो दल सिंधु तिरि महाकाल असुरारे॥४॥
दिष्टि अगनि करि जिनि आगैं हरि बहु लंकापुर जारै॥
इन रघुनाथ अनंत अंत विनि रिणि रावण बहु मारै॥५॥
तैरो कहा अधिक बल उनतैं जु हरि हिरणाखि संघारे॥
जीत्यो नहीं जुद्ध करि कोई जु बहुत असुर पचिहारे॥६॥
मानि कंत सिख सौंपि सिया लै मेटौ साल हमारे॥
परसा प्रभु सौं मिलौ दीन होय करौ बहुत मनुहारे॥७॥२॥

राग मारु--

जाकौं मन हरि हरि हरि सुमरै॥
ताकी सत्य करि श्रीपति रछ्या आपु करे॥टेक॥
चरन कंवल विश्राम सदा थिर हरि वर जाणि वरै॥
सरणाई सम्रथ सुखदाता सब दुख दोष हरै॥१॥
अति आतुर आये हरि पुरतैं गज हिति ग्राह तिरै॥
पंडु वधू कौं चीर आप हरि दीनौं आय धरै॥२॥
जो हरि भजे भजे हरि ताकौं हरि विसर्‌यां विसरै॥
उग्रसेन कौं छत्र सिंघासन दै हरि पाय परै॥३॥
गज भुजंग गिरि त्रास दई अरि मार्‌यो सो न मरै॥
रछ्या करण सदा संगि जाकै सरणि जमकाल डरैं॥४॥

असुर अबुद्ध अगनि मैं डार्‌यो जार्‌यो सो न जरै ।।
साखि प्रगट प्रहलाद उजागर क्यौं हरि विरद दुरै ।।५ ।।
ताकी महिमा को कहिवै कौ जो हरि ध्यान धरै ।।
ब्रह्मा विष्णु महेस सुरेसुरु सेसन कही परै ।।६ ।।
ऊंचै तैं ऊंचौ लै राख्यौ धूपुर पुरनि परै ।।
परसा थिर उतानपाद सु टार्‌यो सो न टरै ।।७ ।।३ ।।

राग सारंग--
नंद बधाई देहु कृपा करि तेरै गृह हरि मंगल आयौ ।।
कृष्ण जनम सुनि सुनि उमगे सब ब्रजवासी आतुर उठि धाये ।।टेक ।।
अंकुस कुलिस बज्र धुज जब सो चरन चिह्न अंकित दरसाये ।।
संख चक्र गदा पदम पाणि लीये राजित हरि उर मद्धि वसाये ।।१ ।।
दरसि दरसि परसैं पद बंदै फूलै अति तन मैं न समाये ।।
धनि धनि नंदराज भाग बड तुम ऐसे राम कृष्ण फल पाये ।।२ ।।
बड़े बड़े रिषि राज़ महा मुनि वेद व्यास से विप्र बुलाये ।।
ऊंकार अपार वेद धुनि सर्व सांति पढि चौक पुराये ।।३ ।।
चिरिजिवो बृजराज नंद सुवन वारि वारि कर कलस बंदाये ।।
देत असीस सकल सुख मानत हरि सुंदर सबके मन भाये ।।४ ।।
चंदन तिलक दूर्वा वदन धूप दीप सजि सीस नवाये ।।
सबै मुदित कौतूहल घरि घरि गोपी गोप मोद बढ़ाये ।।५ ।।
बाजैं बहु बाजेन्द्र मधुर सुर घन गरजत अति लगत सुहाये ।।
नंद भुवन आंगन अति आनंद दधिकांदौ भादौं जल छाये ।।६ ।।
बंदीजन पुरजन बृज के जन अंतर सब कौं पदराये ।।
पायो दान मान वंछित अति सुख दै सब घरहिं पठाये ।।७ ।।
जाकौ दरस देव मुनि दुर्लभ निगमहूं अगम अगाध बताये ।।
त्रिभुवन वर व्यापक सचराचर अविनासी नंद नंदन कहाये ।।८ ।।
भगत हेति आधीन कृपा निधि अपणैं जन के हाथ बिकाये ।।
साखी नारदादि सुक परसा जिनि हरि प्रेम नेम गहि भाये ।।९ ।।१ ।।

राग सारंग--

वन फूले अति सोभहिं आयो री सखी मास बसंत।।
सखी मिलन कंवल दल कारणैं अति आतुर रुति आरतिवंत।।टेक।।
सखी तन मन धन आदि दै रुति मंगल जहां तहां दरसंत।।
मन मोहन मन वसि कर्‍यो सो तजि ताहिं न जात अनंत।।१।।
नाना रंग पास नवी नवी नव नव तर नव पल्लव बिगसंत।।
नव नव लता बहु माधुरि हरि निरखत हरिखत परसंत।।२।।
नव नव सुर कोकिल बोलहीं गूजित अति मधुकर मैमंत।।
पंखी बहुवानी चवै गुन गन नव नव गावै सुरसंत।।३।।
नव नव किसलै दल वीनहीं नव नागरि कर भरि बरिखंत।।
नव संगति नव नेह सौं नव नागर नवरस विलसंत।।४।।
रति नायक रूति विहरहीं राजित अति तामैं हरिकंत।।
परसराम प्रभु भजि लीजै हरि सुख सब सोभा कौ अंत।।५।।२।।

राग सारंग--

मंगल मैं हरि मंगल टीकौ।। हरि आनन्द बधावो नीकौ।।टेक।।
गावै सुनै सकल सुख पावै।। मंगल मिलि पावन होय आवै।।१।।
पावन तैं पावन सुख सागर।। साखि सुरसरी नीर उजागर।।२।।
निस मंगल निसही मैं नीकै।। रवि मंगल प्रगट्यां सब फीकै।।३।।
जग मंगल हरि मंगल राजा।। हरि मंगल जन योग्य जिहाजा।।४।।
हरि मंगल हरि पुरि पहुंचावै।। हरि मिलि फिरि भौ माहिं न आवै।।५।।
जिनि हितकरि हरि मंगल गायो।। मिनही मन वंछित फल पायो।।६।।
हरि मंगल महमां जिन जानी।। सदगति सदा सुफल सो प्रानी।।७।।
परसा मन हरि सौ जिनि बांधौ।। तिनहीं हरि मंगल पद लाधौ।।८।।३।।

राग सारंग--

गोवरधन पूजा सब पूजे।।
इन्द्र आदि ब्रम्हादि सेस सिव व्है हैं प्रसन्न देवता दूजे।।टेक।।
तृण द्रुम नीरस घण फल छाया सुख निवास सब निधि जामाहिं।।
पूजन कौं गोरधन सारिख और देव दूजा कोइ नाहीं।।१।।

गुफा अनेक तहां बहु मुनि जन वसेई रहत भजन के ताईं॥
अति ऊंचौ दीर्घ वन ब्रज सौ महिमां अधिक नंद की नाईं॥२॥
जहां काम दुग्धा अति होत सुखारी मन वंछित चरि चरि सुख पावै॥
बाल केलि लीला वनि मंगल ग्वाल मंडली मोर नचावै॥३॥
ए मम वचन सुनहु सब मानहूं हूं साच कहत हौ नंद दुहाई॥
व्है हैं प्रगट कहत परसा प्रभु ब्रज मंडल की बहुत बड़ाई॥४॥४॥

राग सारंग--

माई री धनि री धनि दिन आज कौ॥
जीवन जनम सुफल मेरौ मैं देख्यो मुख ब्रजराज राज कौ॥टेक॥
आजु बधाई सुदिन सुमंगल महा महूरत महाराज कौ॥
प्रगट भयो सुखसिंधु सकलपति दुखहरण जुवराज कौ॥१॥
निरखि निरखि लोचन रस विलसत अति सुख जगत जिहाज कौ॥
दरसि परसि पावन भयो तन मन विरद गरीब निवाज कौ॥२॥
अति अवसर आनंद मैरि धरि घरि उछाह रविराज कौ॥
सुनत सकल जानत जन परसा सुजस स्याम सिरताज कौ॥३॥५॥

राग सारंग--

आई हम हरि जी कै पायनि लागनि॥
हरि सुंदर सुख सिंधु सुमंगल दरसैं जै परसैं बड़भागनि॥टेक॥
न्यारी होत न पलक सुमन तैं मिली रहत जैसें पहुप परागनि॥
हरि अमृत रस पीवत प्रेम सो त्रिपति न करत रहत अनुरागनि॥१॥
उपज्यो अधिक सनेह स्याम सौं पलटि न कबहूं हो दुहागनि॥
तन मन सौंपि भई ताहीं वसि पर्म सती सोई पर्म सुहागनि॥२॥
हरि भुजदंड भुजनि सौं जुरहै मनु राजित गज सौं गज नागनि॥
निर्तत नट नागर पट फरकत सोभित ज्यौं हरि भुवन धुजागनि॥३॥
निकसत फिरि पैसत ताही मैं मानों बादलि दरसीयत दामनि॥
वर्णै बहुत कछु कहत न आवत अति सोभित परसा प्रभु भामनि॥४॥६॥

राग असावरी--

ब्रत धरि सुमरि हरि जी कौ नाम॥

सत्य करि हरि वरत बिन वदि और व्रत बेकाम॥टेक॥
दुख हरन दीन दयाल व्रिद सुख मूल सुंदर स्याम॥
पतित पावन करन केसौ दैन पद अभिराम॥१॥
व्याध गीध तमाल बनचर वकी साखि सकाम॥
ग्राह गज गनिका अजामेल कौंन व्रत कौ नाम॥२॥
हरि वरत बिन वहू वरत करबै चलत मारग वाम॥
भगत के हरि वरत पतिव्रत ज्यौं व कपिकै राम॥३॥
हरि धर्म परहरि करत पसु बहु कर्म भर्म हराम॥
परसराम अपार प्रभु सौं वै क्यौं लहत विश्राम॥४॥१॥

राग कल्याण--

राज को राज महाराज विराजै॥
पति को पति महापति परमानंद मंगल अधर सुमंगल धाजै॥टेक॥
बीज को बीज महाबीज सवीर्ज मूल कौ मूल महामूल विसाल॥
फल को फल महाफल फलदायक रस को रस महारसिक रसाल॥१॥
सेस को सेस महासेस सुमंगल जाप कौ जाप महाजाप सुजाप॥
विधि कौ विधि महाविधि वाणी वर वेद कौ रूप कौ रूप महारूप॥२॥
पवन को पवन महा पवन सुपावन मन कौ मन महामन मन नाथ॥
जीव को दया जीव महाजीव सजीवनि सिव कौ सिव महासिव सु साथ॥३॥
सुर को सुर महासुर सर्वेसुर सुर्ग कौ सुर्ग महासुर्ग सधीर॥
देव को देव महादेव सुदीर्घ नाथ को नाथ महानाथ गुर पीर॥४॥
नीर को नीर महानीर सुनिर्मल सिंधु महासिंधु निखार॥
काल को काल महाकाल कलपतर कौ पार महापार अपार॥५॥
तेज को तेज महा तेज पुंज अति रवि कौ रवि महारवि तमहार॥
सोम को सोम महासोम सुअमृत परसा प्रभु सुख कौ सुखसार॥६॥१॥

राग केदारो--

हरि रस अगम जाणै कोय॥
रहै सरणि न चरण छाडै ता दास मालिम होय॥टेक॥
आकास वास उदास अंतरि रहै आपो खोय॥

राम पर्म दयाल दरसन जानि है जन सोय॥१॥
छांड़ि आस निरास व्है रस पीवै जो मन ठौय॥
परसा पति पहचानि तिन जन लीयो तत्व बिलोय॥२॥१॥

राग केदारो--

पद रज पावन राम तुम्हारी॥
सदगति भई सिला अबही अब देखि प्रगट साखि रिषि नारी॥टेक॥
पलट गयो पाषाण पलक मैं यह अचिरज लागत अति भारी॥
कटे कलंक सकल पद पंकज परसत दिव्य देह जिनि धारी॥१॥
बरनि सकै कवि कौण सुमहिमा जाणि अजाणि सेस विस्तारी॥
सोई दीजै किन रघुनाथ कृपा करि परसा जन काज भिखारी॥२॥२॥

राग केदारो--

हम तुम राम न काम सनेह॥
तुम कोई हम कृपन करि कुल छुप न सकत चरणनि की खेह॥टेक॥
अब तो हम न पत्याहीं तुमको जु पद रज परसि भई मति एह॥१॥
तातैं हूं डरत न ल्याऊं नवका तुम्हारे छुवत कटे क्रित रेह॥
ऐसी हांणि सहूं कैसे करि मैं अनाथ निरधन बिन तेह॥२॥
योही कुल व्यवहार हमारै हम धींवर जाती नीर नांव सौं नेह॥
और न करि जानत कहुं उद्दिम याही सौं सिधि साधन गुन ग्रेह॥३॥
मन क्रम वचन कछु दुरावत नांहिन साची कहूं सुणू करि येह॥
परसराम प्रभु चरन छुवतहीं मेरी नांव उडै मोहि यहै संदेह॥४॥३॥

राग केदारो--

हरि भजि जात कंवल कुमिलायो॥
लागी चोट भिद्यो भ्रम भीतरि मन चंचल तिन छायो॥टेक॥
वसै सुभोमि सरस दल जल मैं ज्यौं रुचै त्यौं पावै॥
कोण वियोग विरह बल त्यागै यह कोई समझावै॥१॥
अंतरि बस्यो डस्यो जो मधुकर ता सुकचे मुरझावै॥
लागो रंग सरस रस चाख्यो सो तजि और न भावै॥२॥
जैसे सीप समद तिण जाण्यो स्वाति बूंद जब पाई॥

परसराम सागति तन मन की अकथा कही न जाई ।।३ ।।४ ।।

राग केदारो--

जब लग धरत मन बहु रूप।। तब लगे दिवि दिष्ट नाहीं परत भ्रमि भौ कूप ।।टेक।।
अध मति अग्यान अपणै ग्यान सूझै नाहिं।। नैन विनि कर दिव्य दर्पन कहा देखे माहिं।।१।।
प्रतिबिम्ब को प्रतिबिम्ब मिले जो एक मेक नहोय।। आपणै निज रूप कौं आपण न देखैं सोय।।२।।
मिटै नाहिंन चाहि चित कबहू न होइये निर्द्वंद।। बिनां पति संतोष परसा जात बह्यो मति मंद।।३ ।।५ ।।

राग केदारो--

भेषि न भाजई बहु भीड।।
रघुनाथ अंतरि बसै बिन क्यौं मिटै मन की पीड ।।टेक ।।
करि कर्म भर्म विकार बंधन विषै बल छल क्रीड ।।
बेसास वास निवास निहचौ प्रेम पति नाहिं नीड ।।१ ।।
बहु ग्यान ध्यान स्नान साधन पठन जप पतझीड ।।
परसराम विसारि हरि फल खात हरषि गरीड ।।२ ।।६ ।।

राग केदारो--

सब सुख निधि गोपाल न गायो।।
प्रेम भगति हरि चरन कमल तजि मन मधुकर जित तित उरझायो ।।टेक ।।
परम कथा परमारथ परहरि स्वारथि लागि न पल पछितायो ।।
सो क्यौं करे आस हरिपुर की खात विषै विषयन न अघायो ।।१ ।।
परवसि प्रान सौंपि सुख मान्यों तन मन दै पति कौ न रिझायो ।।
काच पकरि हित सौ उरि सांच्यो परम रतन करतैं छिटकायौ ।।२ ।।
आसा तजि वेसासि न उपज्यो कलपत निस जनम गंवायो ।।
भरमत फिर्‍यो मंद मति जग संगि सोई द्रोही पति कांमिनि आयौ ।।३ ।।
तुम सौं कहा कहूं करुणामय मन कारणि कौण सरूप बणायौ ।।
परसराम प्रभु यहै अंदेस मोहि पोषि भुजंग कवण सुख पायो ।।४ ।।७ ।।

राग केदारो--

मन हरि सुमरि जीवनि ठौर।।
नाहिं नैम हरि नांव चाखै प्रगट औखदि और ।।टेक ।।
निगम सुरजन करै कीरति साखि सुणि तजि झौर ।।

साध संगति हरि भजन बिन झूठ दूजी दौर॥१॥
सोच समझ विचार देख्यो सबै भरम ठगौर॥
परसराम प्रभु राम जी नांव सबै सिरमौर॥२॥८॥

राग केदारो--

मोहन मोहि तुम प्यारे॥
मेरे नैनन पल भर्यो प्रीतम टरौ जिनि टारै॥टेक॥
अन देखतां दुख होय मोहि सुमरत अनभारे॥
मेरी जीव जीवनि प्राणपति तन तैं न हो न्यारे॥१॥
और नाहिंन बसत चित मैं तुम हितू म्हारे॥
येक औगण नाहिं मोकौ सबै गुणधारे॥२॥
देखि जीतूं सुरस पीऊं भरमि भौ जारे॥
परसराम प्रभु वदन ऊपरि तनक भौ जारे॥३॥९॥

राग केदारो--

आरति अधिक अवगति राय॥
देहू दरसन दीन बन्धु दास बलि बलि जाय॥टेक॥
तुम सकल चिंताहरण कहियो करौ क्यौं न सहाय॥
भ्रम कूप सींचि सबाहि करतैं देहू किन छिटकाय॥१॥
तुम कृपनपाल दयाल सम्रथ सकल जस रह्यो छाय॥
पतित पावन प्रगट सुनिये विरद अब न लजाय॥२॥
जल बिनां क्यौं मीन जीवै तलफि तलफि समाय॥
यौं दुखित जन क्यौं जीवै तुम बिन बेगही मरि जाय॥३॥
क्यौं तुम न व्यापै पीर मेरी आजु रहे हो जु रिसाय॥
परसराम प्रभु उलट पलट न साल सह्यो हू जाय॥४॥१०॥

राग केदारो--

प्रेम सर जाहि लागौ सोई जानैं॥
भीतरि भिद्यो न लागै औखद काहि कहूं को मानैं॥टेक॥
अणी सुद्ध खरसाण परस पति सुभट धीर धरि लायौ॥
निकसि गयो तुषार पार तजि मन चंचलिन धायो॥१॥

जीत्यो हार विकार भार तजि घायल घूंमत डोलै ॥
भयो सुमार मरमि सर लागौ सूर कहा कहि बोलै ॥२॥
भयो विहार धार धर न्यारौ दिसै सोही न जीवै ॥
सो मन अविचल रंग लागौ जो अणभै रस पीवै ॥३॥
छुटि आस जाण आवण की होहू कछू जो भावै ॥
परसराम मन रह्यो मगन होय सहजैं राम समावै ॥४॥११॥

राग केदारो--

अंतरि वसी री मेरै॥
प्रीति परम दयाल पीव लगि रही हीय रै ॥टेक॥
सखी संगिन मिली तिणि रंगि आपणैं पीव रै ॥
लोक लाज निकाज परहरि कंवल दल घेरैं ॥१॥
प्रेम रस रुचि पियो चाहै सहजि हरि हेरैं ॥
परसराम प्रभु नाम ले ले उमंग सो टेरैं ॥२॥१२॥

राग केदारो--

हरि मन सौं मन जावै न बांध्यो॥
आपणैं ही अभिमान मान गहि मैं पिय सौं पतिवरत न साध्यो ॥टेक॥
करि न सकी निज नेह निरंतरि अंतर तजि हरि उरिधरि न अराध्यो ॥
परम रसिक रस पीयो न प्रीति करि ता सुख बिन कैसें होत समाध्यो ॥१॥
कमल नैननि वस्यो थिर सेवा फल निर्मल सु न लाध्यौ ॥
परसराम प्रभु नेम वसि हठि न मिलै सुख सिंधु अगाध्यौ ॥२॥१३॥

राग केदारो--

सखी सुखि रमैं रसिक वसि आयो॥
अति आनंद महा मनि मंगल प्रीति लगाय प्रेम पति पायौ ॥टेक॥
तन मन भेट दियो करि आरति प्रीतम अपणौं आणि बसायो ॥
रहत समीप सदारस विलसत चरण सरण हित करि चित लायो ॥१॥
सलिता सिंधु मिलि कैसें बिछुरैं ज्यौं दामनि घण हरिषि बछायो ॥
परसा स्याम सखी रंग लागौ एक भये रस रसहिं समायो ॥२॥१४॥

राग केदारो--

आवै वनतैं भुवन स्याम सुंदर सोहै॥ देखै सुरनर मुनि सोभा सब कौं मोहै॥टेक॥
गोप को धर्‌यो सरूप, कौतिग भूलै वै भूप, अति ही अनूप रूप, सोहै अंतरजामी॥
सबकी जीवनि प्राण, पायन फिरै पंथाण, अखिल खिलै सुजाण, सम्रथ हरि स्वामी॥१॥
मोहन बजौं सुवेण, गावत संगी सुर्गेण, नाचत आवै सुधेण, आनन्द नन्द जी कै॥
मंडित सहूसुरेण, देख्या तैं सिरात नैंण, सुरभी सखा सुचैन, अति पावत नीकैं॥२॥
बहू बानिक सुवर, सोभित अति नागर, सुख कौ हरि सागर, ताहि कौण धौं डोहै॥
औसर अति अपार, पावै को ताकौ न पार, राजत सकल सार, उपमा कौण कहै॥३॥
ताकी न को सरभरि, दीजै को कीयो न हरि, देख्यो है नीकै करि, करे हरि सो छाजै॥
अगिण चरित्र क्रीला, परसा मंगल ईला, हरि जो धरत लीला, सोई सो अति राजै॥४॥१५॥

राग केदारो--

अब मन लग्यो मेरो तोहि॥
राम अमृत नांव छिन छिन पीवत ही सुख होय॥टेक॥
उदै अस्त न देखिये नित प्रात दीपक जोय॥
ताहि देखि विसास उपज्यो रह्यो मन थिर होय॥१॥
अब न छाडौ चरण चित तैं गहौं प्रेम समोय॥
परसराम अपार प्रभु कौं मिल्यौ अंतर खोय॥२॥१६॥

राग केदारो--

हरि कहां हैं नाहिं कोई कहौ धौं कैसे॥ जिनि जहां जाण्यो जैसो ताको तहांहीं तैसो॥टेक॥
व्यापक सबही मांहिं, कहिये तहां धौं नाहिं, अस्थिर आवै न जाहि, देखण हरि सारै॥
पूर्‌यो है सबही हरि, बाहरि तैसो भीतरि, सेवै जो काहू कौं करि, ताकौं सोई लै तारै॥१॥
सन्मुख सो सन्मुख व्है, बोलै तासों बात कहै, मिलै सु मिल्यौ ही रहै, बिछुरै सोई नाहिं॥
सूधे सौं सूधो ही रहै, टेढे सौं टेढौ ही बहै, नाहीं सौं नाहीं सो रहै, हरि बसै तो मांहि॥२॥
जो अहं सौ अहं होई, दीन सौं दीन सौ सोई, सांचे सौ साचो ही होई झूठे सौं होई झूठौ॥
काल सूं काल ह्वै वहै, साधसौ साधनि वहै, रूठै सूं रूठौ ही रहै, पूठे सौ हरि पूठौ॥३॥
अन्तर दिया तै सोई, अन्तर राखै न कोई, आपै सौ आपो सौ होई, अंतर नाहिं डोहै॥
दूरै कौ दूरि दिखावै, नीरे कौ नीरो ही आवै, देख्यातैं देखि बुलावै, मन कौ हरि मोहै॥४॥
जु निर्मल को निर्मल, हरि सौ भर्मे सकल, भारी सौ एक अकल, दीसे दूजे कौ दूजौ॥

सौ नित सोवै न जागै, खारे सो खारौ ही आगै, मीठे सौ मीठो ही लागै, अमी कौ चाखैहूं जौ॥५॥
रातै सो रहत रातौ, ज्यौं नीर भोमिसौ नातौ, रूति के गुण सूंतातौ, सिलौ औरे हैं सोई॥
जु प्रेम सौं प्रेम प्यारो, प्रीति तैं रहै न न्यारो, सबको इहै विचारो, तो भाव सिद्ध होई॥६॥
अंस के उज्यारो होई, अंध के अंधारौ सोई, पूरे सौं पूरो है कोई, ओछो ओछी ही बूझै॥
अहि कौ आलम्भ कैसौ, अमृत बिगारै पैसो, परसा जाके है जैसो, ताकौ तैसोई सूझै॥७॥१७॥

राग केदारो--

समझि मन हरि भजि और न आनि॥
बेगि विचारि रहत नहीं पावै भयौ कहा अजानि॥टेक॥
झूठौ माया मोह पसरौ नाहि रच्यौ सुखमानि॥
सोई सुख उलटि भयौ दावानल दाझि मूवो निग्यानि॥१॥
तू जानत है यह सब मेरी मैं जुकरि भुज पानि॥
इह करत गयो पचि निर्फल तोहि भई बड़ हानि॥२॥
अक्रम कर्म करत नहीं हार्‌यो सोचि न मानि कानि॥
निगुरां व्है जिन तिन दुख पायसि व्है है प्रेत मसानि॥३॥
अति अंहकारी गयौ बहि भौजल अंतरि बसी कुवाणि॥
परसराम अब भयौ मुसकिलि बिन रघुनाथ पिछाणि॥४॥१८॥

राग केदारो--

नरहरि भै मानि न जो अनुराग्यौ॥
सौ नाहिंन जीवन अपराधी मृतक सदा रहि मूढ अभाग्यौ॥टेक॥
धन मह भयौ अंध अभिमानि सोवत निसिदिन जात न जाग्यौ॥
हरि सुमरि बिसूरिन चेत्यो उर कबहूं न विरह सर भाग्यौ॥१॥
सुनि न सक्यौ मन हरि वापक अरू साध संगति रंग न लाग्यौ॥
हरि तै विमुख भयौ भौ भरमत आवत जात जर्‌यो जग आग्यौ॥२॥
हरि सेवा सुमिरण बिण निरफल जनम गयौ फिरि मिलत न मांग्यौ॥
परसराम प्रभु सुमरिन न जाण्यों यौ जीव गयौ जमपुरि हरि त्याग्यौ॥३॥१९॥

राग केदारो--

हरि रास रच्यौ रसकेलि करण कौ॥
वृंदावन जमुना तटि मोहन प्रगट करण बृज सौंज सरण कौ॥टेक॥

लीनी कर मुरली हरि हित करि तिहि औसरि अधरनि जु धरण कौ ॥
सुनि सुनि धुनि आई ग्रह ग्रह तै सब गोपी पति आय सरण कौ ॥१॥
थकित पवन सुणि जाण पर्म सुख जात न चलि जल जलधिकरण कौ ॥
मोहै पसु पंखी थिर सुर लोचत सकल सरोज चरण कौ ॥२॥
सोभित अति सखि सरद मुख देखै स्याम सनेह वरण कौ ॥
परसराम प्रभु सुख दायक हरि मंगल परदोष हरण कौ ॥३॥२०॥

राग केदारो--

पौढे हरि राय सुख सेज रंग महल मैं ॥
परम सुखराज खनि चरण उर धरै रहि धरि ध्यान निजरूप के गहल मैं ॥टेक॥
विमूल कूल कल निबिन पर्म दीपक सजल, जलनि तजि सत्य सुख महल मैं ॥
पर्म मंगल अकल काल जामैं जलै रहत निर्भार प्रतिबिम्ब ज्यौ पहल मैं ॥१॥
पर्म गम्भीर अति धीर धीरज धरै रह्यौ भरपूरि जल थल सकल टहल मैं ॥
पर्म पद परसि पावन भये अगिण जन गाय परसा सुपति राखि मन अहल मैं ॥२॥२१॥

राग केदारो--

पौढिये सेज श्रीगोपाल ॥
आपणै सुख सकल सुखपति पर्म रूचि नन्दलाल ॥टेक॥
पल न पलटत पलक लोचन कंवल दल सुविसाल ॥
निरखि सुन्दर राज मन्दिर प्रसन दीन दयाल ॥१॥
सुनिधि करूणा सिन्धु श्रीपति हरण हरि उरसाल ॥
चरण सेवा करत परसा दास भयो निहाल ॥२॥२२॥

राग केदारो--

पौढिये नन्दनन्दन राय ॥
सुख सेज सुन्दर स्याम प्रीतम राधिका उर लाय ॥टेक॥
चौवा चन्दन अंग लेपन कुसुम सेज बनाय ॥
परसराम प्रभु रवनि आनन्द बृज जन सुखदाय ॥१॥२३॥

राग बसन्त--

आयो निज बसन्त निर्भै निवास ॥ आनन्द छन्द गावे सुदास ॥टेक॥
धू अम्बरीष प्रहलाद आस ॥ नारद सारद सुक कृष्ण व्यास ॥

सेस आदि सनकादि सेव।। पति पारब्रह्म सुदेवादि देव।।१।।
ब्रह्म रू इन्द्रादि जाण।। सुरनर मुनि कौतिग चढि विवाण।।
सब देखे मिलि औसर अपारा।। सोई मंगल पद त्रय लोक सारा।।२।।
ब्रह्म पिण्ड लीला बिहार।। मोहै अनन्त पावै न पार।।
महा चरित गति लखै न कोय।। भजि परसराम प्रभु प्रगट सोय।।३।।१।।

राग बसन्त--

तन राम सुमरि निवार्ण राय।। धर्‌यौ सकल जामै समाय।।टेक।।
सुचि संजम पूजा विधि निषेध।। आचार अगिण पावै भेद।।
जप तप करणी विद्या विवेक।। तीरथ ब्रत हरि अंतरि अनेक।।१।।
अनेक ध्यान पावै न सोय।। कवि ज्ञान बहुत भर्मै सुखोय।।
यक अर्थ भेद खोजै अपार।। तामाहि सकल पावै न पार।।२।।
अनेक विरह वैराग जोग।। बहु सुरति निरति अणभै विजोग।।
बहु सेज समाना सुन्नि मांहि।। अन्नेक सुन्नि जामहि विलाहिं।।३।।
अन्नैक वेद धुनि नाद होय।। अनैक मुकति आदरे न कोय।।
रचि सौंज सकल त्रय लोक मांहि।। ऐसो महासिन्धु कछु अन्त नांहि।।४।।
आनन्द केलि सोभा सिंगार।। अनेक प्रेम अंतरि उदार।।
बहु मौनि मगन आसण उदास।। हरि आदि अन्ति सब कौ निवास।।५।।
अन्नेक चरित लीला औतार।। बहु भाव भगति हरि पाउं सार।।
भजि सत्ति संगति दूजी न दौर।। जन परसराम वेसास ठौर।।६।।२।।

राग बसन्त--

ऐसो राम अनभै अनन्त।। तासो मिलि खेलै जन बसन्त।।टेक।।
इक कनक कलस केसरि सजाहिं।। घसि चौवा चन्दन खोरि माहिं।।
अणभै अबीर सुर सौंज जोरी।। जु लयौ गुलाल लानि सुझोरि।।१।।
मिलि गावै गुण सुन्दरि सुढ़ार।। सोई अमृत सु रसना सुप्यार।।
तहां घुरै सरस नीसांण घाय।। रूचि रीझत हरि आपण बजाय।।२।।
जिनि रच्यो चरित लीला अपार।। सोई देखि कटे बन्धन विकार।।
तहां लागि रह्यो मन सुफल सेव।। जहां पार ब्रह्म देवाधि देव।।३।।
सुन्य सहर पुर प्रेम धार।। त्रिभुवण पतिनायक निति विहार।।

सुर संगि सखा तैंतीस कोरि।। निज निरखत निति आनन्द औरि।।४।।
ब्रम्हंड पिण्ड पूरण निवास।। जाकी व्यापि रही सब मैं सुवास।।
हरि बाहरि भीतरि रह्यो समाय।। सोई परसा जन गोविन्द गाय।।५।।३।।

राग बसन्त--

हरि राम तामै मन लागा।। अब न बिसरो भय भागा।।टेक।।
जो निज रूप बसै भीतरि बाहरि आगम अपारा।।
निर्गुण गुण धरि घट घट प्रगट्यौ देखै देखण हारा।।१।।
घट घटि है पै अघट न घटि है घट धरि घट तैं न्यारा।।
नाना रंग अकल कल लाई सहजै किया पसारा।।२।।
निर्मल अकल अतीत सुदीपक विण ससि सूर उजारा।।
परसराम प्रभु हरि अवनासि सो है खसम हमारा।।३।।४।।

राग बसन्त--

तो बिन सुख नाहि हरि सहाय।। मैं प्रबल बंध बंध्यौ अनाथ।।टेक।।
मिलि विषै मोह संगति कुसार।। यौ जात बह्यो भव भर्म धार।।
है तू समर्थ हरि करि संभार।।१।।
काम क्रोध तृष्णा विकार।। तन विविध ताप व्यापै अपार।।
मन माया रूचि न उपज्यो न ज्ञान।। यौं परलै पड़ि भूल्यौ निधान।।२।।
भव सिन्धु सुपावक विषम जाल।। ता माहि जलत हरि करि सम्हाल।।
परसराम प्रभु सुनि मुरारि।। अब बांह पकरि जनकौ उवारि।।३।।५।।

राग बसन्त--

मन लागौ न कंवला किरणि आस।। भयो भाव भगति वेसास नास।।टेक।।
करि विषै भोग संजोग रोग।। सुख इन्द्री स्वारथ स्वाद सोग।।
यौं वादि गयो बहि समझि ताहिं।। जाय पर्‌यो अंध भ्रम कूप मांहि।।१।।
भवसिन्धु सकल निसि अंधकार।। तामै उपजत विणसत वार वार।।
सूझै न ठौर सेरी न सम्हाल।। निति जुरा मरण जम लोककाल।।२।।
मोह अगति अलखि अपार।। ता माहिं पर्‌यो पाऊं न पार।।
दुख परसराम उबर्‌यौ न जाय।। विसर कृपासिन्धु वैकुंठराय।।३।।६।।

राग बसन्त--

हरि मंगल गावत ब्रज की नारि।। सब मिलि आई जहां हुवे मुरारि।।टेक।।
सीस कलस करि कनक थाल।। हरि को पहिरावत पहुप माल।।
ल्याई धूप दीप आरती साजी।। मिलि बसंत बदावै बृजराजि काजि।।१।।
ल्याई चोवा चन्दन अति सुवास।। सब चरचत मिलि अति सुख निवास।।
अति सोभहि अबीर सौं मिलि गुलाल।। चस्वै अति सोभित श्री गोपाल।।२।।
अति दीन भई बहु परत पाय।। कर जोरि रही इक सीस नवाय।।
प्रेम मगन तन मन संभार।। सब देखै सुर औसर अपार।।३।।
बाजै चंग उपंग मृदंग ताल।। सब नाचत गोपी विविध ग्वाल।।
सबै मुदित सुख सिन्धु पाय।। परसा प्रभु प्रगट बसंत राय।।४।।७।।

राग बसन्त--

वृन्दावन विहरत श्री गोपाल।। संग सखा लिए हैं बहुत बाल।।टेक।।
बहु विलास जहां खेलि हासि।। प्रमदा सब परी है प्रेम पासि।।१।।
रस विलास आनन्द मूल।। निविड़ कुंज तहां फूले हैं फूल।।२।।
जहां विधि बसन्त आनब होय।। तहां परसराम जन देखैं सोय।।३।।८।।

राग गौड़--

दरसन देहूं किन केसवे।। बोलि बोलि न कहूं संदेसवे।।टेक।।
भीतरि बोलि सुणाऊं बाहरि।। इन बातनि मन मानै न वौ हरि।।१।।
तुम बिन हितू नहीं हरि कोय।। तौ न कहूं जी दूना होय।।२।।
तू ही विचारि न्याव तैं आगै।। क्यौं सेवग सेवा मत लागै।।३।।
राम सकल दुखहरण विकार।। मोहि आरति प्रभु सुणों पुकार।।४।।
प्यासो नीर श्रवण सुणि पीवै।। तौ तुम बिण परसा जन जीवै।।५।।१।।

राग गौड़--

बिन रघुनाथ न मंगलचार।। बसै अजोध्या सब संसार।।टेक।।
दसरथ सौ नाही वेसास।। सीताराम लियो वनवास।।१।।
लछमन भरत मिल्यो तही आय।। गयो चत्रगुण त्रिगुण समाय।।२।।
करि वियोग कैकई न जाय।। कौसल्या बैठी घर खाय।।३।।
आवै राम न रावण मरै।। भरमि विभिषण कलपत फिरै।।४।।

लंका बसै मन्दोदरी मांहि॥ परसराम तब लग सुख नाहीं॥५॥२॥

राग गौड़--

जाति न तारै तारै राम॥ हरि बिण कुल करणी बेकाम॥टेक॥
कुल करणि भजि बूडे जाणि॥ राम कहै सुनि रे निरवाणी॥१॥
सिला सु पसु पंखी उद्धरे॥ गनिका वकी अजामेल तरे॥२॥
कितेक कहूं महा अघ भार॥ राम सुमरि उतरे भवपार॥३॥
ऊंच नीच भ्रम आसा पास॥ परसराम भजन वेसास॥४॥३॥

राग गौड--

मन न तजै तन को व्योहार॥ हरि न भजै भ्रम बूझणहार॥टेक॥
स्वारथ बांध्यौ आवै जाय॥ त्रिपति हीण सोई थिर न रहाय॥१॥
रूति विण कारण कैसे रहै॥ मुकता पंथ दसौ दिस वहै॥२॥
चंचल चिंता कलपति फिरै॥ मृग तृष्णा वसि जनमै मरै॥३॥
तू नाना रूप धरे औतार॥ पलक पलक मैं बारौंबार॥४॥
परसराम प्रीतम क्यौं मिलै॥ फिरि फिरि जीव जगत मैं जलै॥५॥४॥

राग गौड--

झूठे मन कौ नाहीं ठौर॥ कथै करम करै कछु और ॥टेक॥
गाफिल स्वारथ लुबध्यो जाय॥ परमारथ खोजै न रहाय॥१॥
पहर्‌यो स्वांग भिस्तकै ताई॥ जाता दीसै दोजग मांहीं॥२॥
सांच मिलै न कारिज सरै॥ भर्म विगूचै भव मैं मरै॥३॥
परसापति कौ भावै सांच॥ हीरा तजि मन पकरै कांच॥४॥५॥

राग गौड--

गांवहि तौ मन रामहि गाय॥ राम बिनां बकि बहि जिनि जाय॥टेक॥
परहरि कर्म भर्म व्यौहार॥ राम सुमरि भौतारण हार॥१॥
राम सुमंगल पद निर्वान॥ जा घटि वसै सत्य सोई प्रान॥२॥
नर सोईं जो राम लिवलीण॥ राम विमुख ताकी मति हीण॥३॥
राम सुमरि निर्मल निज सार॥ परसराम प्रभु हरण विकार॥४॥६॥

राग गौड--

गांवहि तौ मन गोविन्द गाय॥ विण गोविन्द नहीं आन सहाय॥टेक॥

श्रवण सुधारस अंचय अघाय॥ प्रेम प्रसाद सदा रूचि पाय॥१॥
गोविन्द चरण कंवल चितलाय॥ तजि गोविन्द अनत जिन गाय॥२॥
हरि निजवर सौं नैण मिलाय॥ दरसि परसि आगै सिर नाय॥३॥
परसा सेई सकल कै राय॥ पद आनन्द सदा सुखदाय॥४॥७॥

राग गौड--

पांडे मोहि पढ़ावो सोय॥ जाहि मन निर्मल होय॥टेक॥
हरि हरि हरि सुमरिन मोहि॥ अपनी विद्या राखि लकोय॥
पांडे कहै सुणो प्रहलाद॥ मोहि हरि सुमिरन आने प्रहलाद॥३॥
परसराम हरि गुर यह कहि॥ हरि सुमिरे ताकि मति सहि॥४॥८॥

राग गौड़--

छांडि जंजाल भजौ गोपाल॥ हित सौ भज्यां न आवै काल॥टेक॥
का जप का तप तीरथ दानि॥ का पूजा विण राम पिछाणि॥१॥
भगति मुगति को टीको राम॥ ताकौ सुमरि सरै सब काम॥२॥
पूरण ब्रह्म सकल कै धणी॥ परसराम सुखि तासौ बणी॥३॥९॥

राग गौड़--

हरि भजि हरि भजि हरि भजि मनां॥ हरि की साखि सब हरि के जनां॥टेक॥
वेद पुराण कहै हरि सांच॥ हरि बिण और सकल कांच॥१॥
हरि हिरदै थिर राखि संभारि॥ हरि हरि सुमरि सुमरि न विसारि॥२॥
परसराम सबकौ फल एही॥ हरि हरि सुमरि धरि देही॥३॥१०॥

राग गौड़--

हरि प्यारौ नेरौ नहीं दूर॥ अन्तर खोजि रह्यो भरपूरि॥टेक॥
बाहरि भटकट मनसा राखि॥ चेति मुगध मन हरि रस चाखि॥१॥
जग की अगनि कहा तन दहै॥ घरि जप करि चरण किन गहै॥२॥
अध ऊरध देखिए अथाह॥ आगै अति अविगत है अगाह॥३॥
परसराम प्रभु की को लहै॥ बून्द सिन्धु की सोभा कहै॥४॥११॥

राग गौड़--

करता ताजन कौ पति आइ॥ जौ कुदरति खोजै काया माहि॥टेक॥
राखै मूल झाल दै ढ़ाहि॥ भिस्ति रहै दो जग छिटकाइ॥१॥

झूठौ स्वांग-धरयां पछिताई।। साचौ होई सुदरगह जाई।।२।।
परसराम ताकि बलि जाइ।। जो सब घटि देखै राम खुदाइ।।३।।१२।।

राग गौड़--

का तन धर्‌यो जो बेकाम।।
प्राण पति रघुनाथ जीवनि जो न जाण्यौ राम।।टेक।।
पाय नर औतार उत्तम किए मध्यम काम।।
हरि बिना सब सोधि सांचे तै न कछु राम।।१।।
सरयो नाहिन काज कोई आय कै जग मांहि।।
किए ओर उपाय बहु हरि भगति साधी नाहिं।।२।।
वादि ही बहि गयो औसर सक्यौ न हरि पहिचाणि।।
अ्ब पाइए क्यौं सौंज ऐसी भई नर निजहाणि।।३।।
अंधमति अभिमान उरि धरि चल्यो नर जम लोकि।।
प्रभू बिना नहीं पार परसा राखि है को रोकि।।४।।१३।।

राग गौड़--

कहि करि कर्म भर्म निरजीव।।
भगति विण भगवंत की सब नृफल जो कछु कीव।।टेक।।
सब धर्म ध्रिग हरि भगति बिण जल हीण ज्यौं भयै कूप।।
पलटि तन मन प्रेम भयो जब गयो तजि निज रूप।।१।।
ज्यौं सिंध देवल चरित चितवत चैन भै कछु नाहिं।।
आय पंखी बसत मुख मैं जीवत उड़ि उड़ि जाहिं।।२।।
मृतक होय न सोय जागै सुखी जीव जग आस।।
पर्म रस सौ पीवै कैसे बिना प्रेम पियास।।३।।
करत कर्म सुलाभ कारणि होत है घर हाणि।।
यौं साच विण बहु भेष भरमत अंध चाल्यो खालि।।४।।
ज्यौं अधिक रूचिमल हेत माखी मरत सीस भुलाय।।
यौं आसवसि नर नीच परसा परत पासी आय।।५।।१४।।

राग नट--

ताकौ कैसो होत निबेरौ।।

जो मिलि रहयो मोह सागर मैं हरि सुमिरण नहिं नेरौ ।।टेक ।।
भावत नहीं सुण्यौ परमारथ स्वारथ संगि बसेरौ ।।
डिंभ कपट कुल कर्म उपासिक मन माया कौ चेरौ ।।१ ।।
काम क्रोध मद-लोभ विषै बल काल असुर कौ डेरौ ।।
दुविधा भरयौ दुष्ट जन द्रोही राम विमुख जम केरौ ।।२ ।।
सत सगति बेसास भगति रस ता संगि नांहि बसेरौ ।।
परसराम सोई जीव जगत मैं वादि मूवौ करि फेरो ।।३ ।।१ ।।

राग नट--

जब लग हरि न दरसै मांहि ।।
तब लगै घोर अंध्यार उर गुर ग्यान दीपक नांहि ।।टेक ।।
संसार सैल सुमेर तैं अति कंदरा ग्रह कूप ।।
तामांहि सर्पिणि विषै निसि सूझे न हरि निज रूप ।।१ ।।
जहां मोह जंजाल माया गयो ता संगि लागि ।।
सुपन सोवत गयो सर्वस सुख न पायो जागि ।।२ ।।
हीण मति अपकर्म लागै मिटैं क्यौं विण भागि ।।
परसराम प्रभु प्रेम जल विण जलत जग की आगि ।।३ ।।२ ।।

राग नट--

तुम बिण नहीं आन सहाय ।।
कहौ किन प्रभु सरणि जाकी हूं उबरो ज्यौं जाय ।।टेक ।।
मैं भ्रम्यौं अगिण जल थल सकल कुल कुल पाय ।।
सुख न पायो कहूं तुम बिण अनत अविगति राय ।।१ ।।
सुणयो नाहीं न और सम्रथ कह्यौ गुर समझाय ।।
साखि संत पुराण बोले प्रगट जस रह्यौ छाय ।।२ ।।
सबै जाणत प्रगट जाकौ विडद क्यौ बहुराय ।।
प्रभु पतित पावन परसा राखि मोहि अपणाय ।।३ ।।३ ।।

राग नट--

रहि हौं पर्यो सदा दरबारी ।।
छांडि न जाऊं कहूं कायर होय हौं सेऊं व्रतधारी ।।टेक ।।

तुमही भले कहो कछु मौको हौं न कहू हरि तारि॥
करूणा सिन्धु कहावत हौ प्रभु सो मैं लई विचारि॥१॥
तुम धार्यो विड़द पतित पावन सिरि सो जिन देहूं विसारि॥
हम पतित पाप कौ पल न विसारत करत संभारि संभारि॥२॥
तुम असरण सरण अनाथ बंधु हरि सब कोय कहत पुकारि॥
परसा प्रभु निर्वाहि सांच करिकै क झूठ करि डारि॥३॥४॥

राग नट--

जाहि सदा हित सौं हरि भावत॥
ताकि दिषि प्रगट हरि प्रेरक जहां तहां दरसावत॥टेक॥
सोई पर्म सुजाण साधु सम दिष्टि हरि सेवा सुख पावत॥
उपजि नहीं तरवर कुल फल ज्यौं हरि नाहीं मांही समावत॥१॥
निसि वासुर इकतार अविसर हरि सुमिरत सुमरावत॥
ताकौ भजन जगत जीवन कौं सोवत जाय जगावत॥२॥
हरि निज रूप सुमंगल मूरति मिलि मन मांहि बसावत॥
परसत प्रीति नैण भरि दरसत हरि आगै सिर नावत॥३॥
प्रेम सहित नित नेम गहै मन मांहि मिल्यौ गुण गावत॥
हरि सुखसिंधु समागत परसा करि निहकर्म कहावत॥४॥५॥

राग गौडी--

मन रमि राम अविगतराय॥
सकल के दुख हरण कारण रह्यो हरि तर छाय॥टेक॥
अगम नीर निवास निहचल ठौर सख सुखदाय॥
सोखि जल जड़ मूल साखा पत्र पोषत पाय॥१॥
फल पहुप पत्र अनूप दल उपजि बिणसे वाय॥
सोई दुसह दोष न धरत अंतरि रहत एकै भाय॥२॥
तजत निज विश्राम देखत सकल खिरि जाय॥
प्रगट पति विस्तार पलट्यौ सुमरयौ वादि विलाय॥३॥
पर्म रस परिपक्क फल मैं बिरख बीज समाय॥
सत्य करि निज रूप सोई ताहि काल न खाय॥४॥

प्रेम पर्म रसाल रसना राचि तन मन लाय॥
परसराम न मरत सो जन जीवत हरि जस गाय॥५॥१॥

राग गौडी--

मनि रम राम पर्म निवास॥
त्रिविध ताप विकार खंडण सुमरि धरि वेसास॥टेक॥
एकमेक अनेक सूरति चितै जिततित सोइ रे॥
स्वयं ब्रम्ह अपार दरिया ओर नाहींन कोइ रे॥१॥
जाकै आदि अन्त न पार कोई कर्म काया नाहिं रे॥
सिंभु देव अदिष्ठ मूर्ति बसै घट घट मांहि रे॥२॥
अकल अविचल अजर अमृत पीवै कोई दास रे॥
सुर सरस विषहरण परसा प्रगट निज प्रकास रे॥३॥२॥

राग गौडी--

मनि रमि राम हिरदै राखि॥
श्रवण सुदि सुप्रीति करि सुणी साध जन की साखि॥टेक॥
काटै कौ आल जंजाल झांकै छाड़ि विषफल काचिरै॥
राम अमृत नांव निर्मल सुमरि करि हरि राचि रे॥१॥
तोहि काल खाय न जरा व्यापै पड़ै न जम की पासि रे॥
खोजि हंसा संगि तेरै ताहि सेय धरि वेसासि रे॥२॥
अगम गंज अपार दरिया सुफल सीप समेत रे॥
सौंज सरवर सुवाणीज करिलै जाय रे नर चेति रे॥३॥
परहरि न हरि सुख समझि सुकृत सोचि देखि सुठौर रे॥
परसराम निवास नरहरि नाम भजि तजि और रे॥४॥३॥

राग गौडी--

अविनासी हो प्रीतमां तो बिन अकल उदास॥
हरि चितवनि चितही रहै पुरवौ मेरी आस॥टेक॥
पंथ निहारो जी प्रीति सौ पीव मिलिवै की प्यास॥
विरहनि मन आतुर भई मिलि प्रभु प्रेम निवास॥
एक प्रेम पुंज निवास नर हरि नांव की बलि जाइए॥

मैं बहुत व्याकुल देहुं दरसन प्राण तहां विखाइए।।
आतुरी अधिक अपार आरति पीव मिलिवे की आसा।।
मोहि राखि सरणि मिलाइ लै प्रभु राम प्रेम निवासा।।विश्राम।।
राम हितू हम तुम बिना विलपत अबल अनाथा।।
बहुरि कहा मिलि करहुगे मिटि है औसर साथा।।
मिटि है सुसाथ अनाथ विलपत पीव वियोग न छिन सहूं।।
विरह पीर अनन्त अंतरि दुखित नित काठ ज्यौं जरि हूं।।
रितु घटी नीर निवाण पहुंच्यो अहल जन मंगवाइये।।
(परसराम प्राण चातक हरि जल सचुपाइए) ।।४।।

राग गौड़ी--

सुणित हो प्रीतम केसवे जन की जाणी पुकारा।।टेक।।
विरद तुमारी पतीत पावन तुमहिं लाज न आवई।।
प्रभु देखता बहि जाऊं भौजल सरणै न बुलावहीं।।
गुण धरै मोहि मिलन की हरि अवधि जो यौ ही गई।।
परसराम प्रभु तुम न साहिब दास मैं तेरा सही।।५।।

राग गौड़ी--

मेरे मन भजि श्री राम ज्यौं होय कछु चिन्त तुम्हारिये।।
मूरख बुद्धि आपण पायो जनम न हारिये।।टेक।।
हारिये जनम न जोनि हरि विण राम रंगि रहिए मनां।।
विण राम बंधु है कोय नाहीं और जो भर्मै घनां।।
छांडि संक निसंक सुमिरौ भूलि छिन न विसारिए।।
मेरे मन भजि श्रीराम राघौ जो कछू चिंत गति पारिए।।विश्राम।।१।।
जो पाई नर जोनि तौ हरि भजि विषै विसारिए।।
छांडि कपट करि हेत रसना राम संभारिए।।
संभारिए रसना राम निर्भै निगम जाहि कीरति करै।।
साखि सबल विचारि सुमिरौ नाथ जल प्रस्तर तिरै।।
सेस धरणि समानि सिरधरि सोइ न हरि विसरौ रति।।
मन मूढ़ चेति न बूड़ि भौजल सुमरि हरि त्रिलोक पति।।विश्राम।।२।।

मन हरि जी को सेव जो तोकौ सुख चाहिए।।
मिटहि जनम जम त्रास हरि सुमर्यां पति पाइए।।
पति पाइए हरि सुमरि रे मन प्रीति हित राखौ करी।।
जिन नांहि रोर कलंक जमपुर मिटहिं जो सुमिरौ हरी।।
छांड़ि और जंजाल बहु भ्रम नांव निज राखौ हृदा।।
होई सुमरि हरि सब लोक नाइक सरणि सुख उपजै सदा।।विश्राम।।३।।
हितू नहीं विण राम जो जन सति करि जाणै।।
भाव भजन भगवन्त विण दुनिया अबर न आणै।।
दुनियां न आणै अबर मन मैं भगति विण भगवन्त की।।
ब्रम्हपुर सिव लोक ऊपरि पर्म पद पावै सुखी।।
सोई सुमरि पलु न विसारि हरि हरि राम रमौं नितू।।
परसराम जन जाणि सत्य राम विण सम कोई नाहीं हितू।।विश्राम।।४।।६।।

राग गौडी--

वृन्दावन सोभित भयो रंग होरी हो।। चितवत स्याम सरूप स्याम रंग होरी हो।।टेक।।
गुंजास मधुकर करै रंग होरी हो।। कुसमति वास अनूप स्याम रंग होरी हो।।
देखि अधिक रूचि उपजि रंग होरी हो।। रितु बसन्त गोपाल स्याम रंग होरी हो।।१।।
खेले भीर बनायकै रंग होरी हो।। इत गोपी उत ग्वाल रंग होरी हो।।
निर्ति करै नट नागरी रंग होरी हो।। गावै सबद रसाल स्याम रंग होरी हो।।२।।
कूं कूं केसरि कुमकुमां रंग होरी हो।। धरि अगर कपूर सुवास रंग होरी हो।।
मिलि अरस परसपर चरचहीं रंग होरी हो।। अति आनन्द प्रेम विलास स्याम रंग होरी हो।।३।।
हलधर हित समझाय कै रंग होरी हो।। लीनों अपणी वोर स्याम रंग होरी हो।।
स्याम भरण भये कारणे रंग होरी हो।। चमकै चितह चकोर स्याम रंग होरी हो।।४।।
संकरषण सुणि विनति रंग होरी हो।। स्याम पकरी दै मोहि स्याम रंग होरी हो।।
सौंह करै वृषभान की रंग होरी हो।। हमहिं भरै जो तोहि स्याम रंग होरी हो।।५।।
संकरषण भुज भीरी के रंग होरी हो।। आणै स्याम सरीर स्याम रंग होरी हो।।
चौवा चन्दन वरषहीं रंग होरी हो।। अति उड़ै गुलाल अबीर स्याम रंग होरी हो।।६।।
एक भरण भरि ढारही रंग होरी हो।। एक राखै हरि कौ वोट स्याम रंग होरी हो।।
इक और और पे मांगहीं रंग होरी हो।। इक दोरै करि करि जोट स्याम रंग होरी हो।।७।।

इक नैननि अंजन करै स्याम रंग होरी हो॥ इक पूछै चन्दन चीर स्याम रंग होरी हो॥
एक भरण भरि थकि रही रंग होरी हो॥ एक रही उर भीरी स्याम रंग होरी हो॥८॥
सबै हंसी हरि देखि कै रंग होरी हो॥ सिव सरूप बलवीर स्याम रंग होरी हो॥
नैक अबहिं जो झूलहीं रंग होरी हो॥ विलज भई श्रम खोय स्याम रंग होरी हो॥६॥
हम तैं सरयौ सुहम कर्‍यो रंग होरी हो॥ अब करहुं जु तुम तैं होय स्याम रंग होरी हो॥
अंचल पकरि राधा गही रंग होरी हो॥ चन्द्रभागा मुसकाय स्याम रंग होरी हो॥१०॥
हलद कलस जल भेद सौ रंग होरी हो॥ रह्यो रंग रसदाय स्याम रंग होरी हो॥
ललिता लज्जित होय रही रंग होरी हो॥ जब दौरि गही हरिराय स्याम रंग होरी हो॥११॥
चिर भिजायो सीस तै रंग होरी हो॥ दियौ भरण छिटकाय स्याम रंग होरी हो॥
भाम सखि घर गहि रही रंग होरी हो॥ लौचन कर सौं भीचि स्याम रंग होरी हो॥१२॥
कीच मच्यौ ब्रज बीच स्याम रंग होरी हो॥ प्रेम सिन्धु सलिता मिलि रंग होरी हो॥
तन तन सुधि न सम्भाल स्याम रंग होरी हो॥ अति औसर सुर देख ही स्याम रंग होरी हो॥१३॥
उचरै जै जै कार स्याम रंग होरी हो॥ खेलि फाग सुख उपज्यो रंग होरी हो॥
हुंसित फिरे बृजलाल स्याम रंग होरी हो॥ चले जमुन जल झूलने रंग होरी हो॥१४॥
गोविन्द गोपी ग्वाल स्याम रंग होरी हो॥ गावै गुण बृज सुन्दरी रंग होरी हो॥
सुनत गोप दै प्रीति स्याम रंग होरी हो॥ परसराम प्रभु संगि सदा रंग होरी हो॥१५॥७॥

राग गौड़ी--

श्री गोपालहिं हिडोरै झूलै नन्द भुवन अति राजै॥
बने अधिक सुख मूल कलपतर झकझोरे रंग छाजै॥टेक॥
कनक खम्भ पिरोजा मणिगण हीरा जटित बिराजै॥
तोरन कलस ध्वजा मन्दिर अति रच्यौ चरित्र उस्ताजै॥१॥
बृज वनिता बहु वृन्द चहुं दिस ठाढ़ी नवसत साजै॥
निरखत बैठि झरोखनि जहां तहां अवनि अटारनि छाजै॥२॥
एक झुलावत चौर ढुरावति एक चितै चित लाजैं॥
मन मोहन सबके मन मोहै अति आरति उपराजैं॥३॥
तब लै आई भटु भरण सुवासिक चरनन हित हरि काजैं॥
चरचत बोलि परस्पर बृज पति सकल सखिनि सिरताजैं॥४॥
नाना धुनि बहु बाजिंद्र मधुर पंचासुर दुंदुभि बाजैं॥

नाचत करत कुतूहल गावत मानौं वरिषा घण गाजैं ।।५ ।।
पर्म विनोद सकल सुख पेखैं पर्म सुमंगल भ्राजैं ।।
जै जै कार पहुप सुर बरिखत सुणियत सरस अवाजैं ।।६ ।।
सुर नर सब कै सुख दायक जांणि गरीब निवाजैं ।।
प्रगट रूप व्यापक सचराचर सुजस प्रेम की पाजैं ।।७ ।।
बृज बालक लीला अवतारी वपु धारैं पर काजैं ।।
भगतारण कौं परसराम प्रभु हरि भये पर्म जिहाजैं ।।८ ।।८ ।।

राग गौडी--

झूलत डोल नंद नंदन वन सोभित सुंदर वारे ।।
रितु बसंत बडराज विराजित श्री गोपाल पियारे ।।टेक ।।
संगि सखा बहु वृंद विराजित प्रेम सिंधु नदिनारे ।।
एक मेक मिलि खेलत झूलत तन मन वसन विसारे ।।१ ।।
अति औसर सोभित पुर मंडल देखत कोतिग सारे ।।
और अमर सिव सक्र विधाता बैठि विवांनि पधारे ।।२ ।।
वरिषत सुर सिव पहुप पुंज अति जै जै सबद उचारे ।।
गावत सुजस सुमंगल सब मिलि परसा जन बलिहारे ।।३ ।।६ ।।

राग गौडी--

चलन कहत हरि द्वारिका रंग लागौ हो।। गोपी सुनावत स्याम रंग लागौ हो।।टेक।।
स्याम कहत सुणि सुंदरी रंग लागौ हो।। रहि हौ कि चलिहौ साथि स्याम रंग लागौ हो।।१।।
राज सुता वृषभान की रंग लागौ हो।। राधा नांव कहाय स्याम रंग लागौ हो।।
संगि तुमहारै वणि रही रंग लागौ हो।। अब कित बिछुओ जाय स्याम रंग लागौ हो।।२।।
जीव की जीवनि केसवे रंग लागौ हो।। कंवल नैन बृजनाथ स्याम रंग लागौ हो।।
और सबै विधि बीसरी रंग लागौ हो।। मोहि भावै यह साथ स्याम रंग लागौ हो।।३।।
तलफि तलफि जिय जाय स्याम रंग लागौ हो।। चितही मैं चितवसि रह्यो रंग लागौ हो।।
संगि समीप सभाव स्याम रंग लागौ हो ।।४ ।।
मेरे नैननि तैं नेरे रहो रंग लागौ हो।। तजि अनतै जिनि जाउं रंग लागौ हो।।
तबै निकटि हिरदै बसै रंग लागौ हो।। चलहु तासंगि लै जाहु स्याम रंग लागौ हो।।५।।
देहु सन्देसहू मिलै रंग लागौ हो।। अंतरि मिलै न कोय स्याम रंग लागौ हो।।

अंतर जामी तुम बिना रंग लागौ हो॥ भौ भ्रम दूरि न होय स्याम रंग लागौ हो॥६॥
जाति वरण कुल विसर्‌यो रंग लागौ हो॥ जब तैं भई तुम पासि स्याम रंग लागौ हो॥
जीवन जनम सुफल भयो रंग लागौ हो॥ मिटी तपति तन त्रास स्याम रंग लागौ हो॥७॥
मिटी आवण जाण की पास रंग लागौ हो॥ जनम कर्म बंधन कटे रंग लागौ हो॥
तोहि मिल्यां दुख बीसर्‌यो रंग लागौ हो॥ अब जु भयो सुख मोहि स्याम रंग लागौ हो॥८॥
कह्यो सुणौ जो दास कौ रंग लागौ हो॥ अब न भयहूं उदास जु रंग लागौ हो॥
प्रीतम प्रीति विचार स्याम रंग लागौ हो॥ तारण तरण मुरारि स्याम रंग लागौ हो॥६॥
जदपि सकल सुख देखि हौ रंग लागौ हो॥ तऊ त्रिपति नहीं तुम वसि रंग लागौ हो॥
परसा प्रभु या वीनती रंग लागौ हो॥ सुनि प्रीतम बृजराज स्याम रंग लागौ हो॥१०॥१०॥

राग गौडी--

राम सुमरि सचु पाइए तजिए विषै विकारौ रे॥
अमृत नांउ न छांडिए जनिए बारौंबार रे॥टेक॥
यो रस वादि न खोइए पीवत जो रस जोए रे॥
पीवै सो सुख जीवई ताहि विकार न कोए रे॥१॥
काल कर्म भ्रम परिहरौ निर्भै हरि गुण गाय रे॥
जा गायां फल पाइये आवागवण विलाये रे॥२॥
रे मन सोचि न देखई ऐसो जनम न बारौ-बारौ रे॥
रहत न कोई देखिये जात सकल संसारौ रे॥३॥
ऐसो प्रीतम खोजिये सांच सनेही सारौ रे॥
जीव की जीवनि केसवे अविगत अलख अपारौ रे॥४॥
सांच वचन ऐसें कहैं झूठ बंध्यो जिन जाये रे॥
हरि प्यारो अंतरि वसै तासौं मिलि मन लाये रे॥५॥
प्रकट पसारौ जिनि रच्यो छांदै जप्यो न जाये रे॥
बाहरि भीतरि सारिखौ सब घट रह्यौ समाये रे॥६॥
परसा सुणि सतगुरू कहै पर आसा निज जाये रे॥
अपणौ आप संभारिये प्रेम प्रीति ल्यौ लाये रे॥७॥११॥

राग गौडी--

धिग जीवनि नर हरि बिना भज्यौ न राम दयाल रे॥

प्रेम भगति उपजी नहीं चाल्यो जनम ठगाय रे ।।टेक ।।
मैं मेरी मैं बहि गयो मूरख माया जाल रे ।।
सतगुरु मिल्यो न भै मिट्यो सुमर्‍यौ न राम संभार रे ।।१ ।।
संगति करी न साध की अंतरि बस्यौ विकारो रे ।।
भौ सागर मैं बहि गयो बूडि मुए बेकामौ रे ।।२ ।।
झूठा सौं झूठौ रच्यो सोचि न पायो सांचौ रे ।।
हीरा डार्‍यौ हाथ तैं मुगध बिसार्‍यो काचौ रे ।।३ ।।
परसा आसनि मनि गहै माया संगि न बंधाये रे ।।
जनम सुफल तब जाणिए जब राम रमै ल्यौ लाये रे ।।४ ।।१२ ।।

राग गौडी--

राम बिसार्‍यो रे जीया।। मेरे जीव की जीवनि प्राण रे ।।टेक ।।
अंतगिति समझे नहीं भूला फिरै गंवार।। भूल्यां भरम न छूटई तौ मिलै न राम अपार।।१ ।।
का कहिये समझाइये जो कही न मानै कोय।। दीन न जाणैं आपणौं भूलि रही सब लोय।।२ ।।
हिंदू भूले भरम मैं करि भूतन की आस।। निर्फल हरि की भगति विण चाले छाडि निरास।।३ ।।
तुरक तेज तामस गहैं चालैं कुल की रीति।। मारै जीवत जीव को सेवै सौं न मसीति।।४ ।।
राचि रही सब झूठ सौं सांचै कोई न पत्याय।। परसराम प्रभु निकट है पैं प्रगट न देत दिखाय।।५ ।।१३ ।।

राग गोड़ी--

हरि प्रीतम सौं बिसर्‍यो मन लागौ झूठै स्वादि रे ।।
जग स्वारथ पासी मैं पर्‍यो तैं जनम गंवायो वादि रे ।।टेक ।।
सुपिनै को सुख देखि करि तोहि चढ़ि आयो अभिमान रे ।।
अंध भयो सूझ्यो नहिं तोहि हरि दीपक गुरु ग्यान रे ।।१ ।।
मगन भयो फूल्यो फिरै मोहयो माया कै जार रें ।।
सदा अचेतनि ही रह्यो छलि खायो संसै काल रे ।।२ ।।
जमपुर जात न धीर दै नैक सर्‍यो न काहू राखि रे ।।
विमुख भयो हरि नांव तैं तातैं भरत न कोऊ साखि रे ।।३ ।।
परसा प्रभु विण जो कियो तिहि कारिज सर्‍यो न कोय रे ।।
ज्यों आयो त्यौं ही गयो नर जनम पदारथ खोय रे ।।४ ।।१४ ।।

राग गौड़ी--

समझि मन मेरे हरि भजि।। विषै बिसारि सब तजि राम संभारि।।टेक।।
त्रिगुणि माया वसि भयो रे जात सकल संसार।।
चौथे चित लागै नहीं तौ कैसे मिलै अपार।।१।।
बहुत विगूचणि भरम की रे राम न आवै हात।।
डाल पकरि झखि पचि गये पैं मूल चढ्यौ नहिं हाथि।।२।।
कठिन भूलनी द्यौस की रे पंथ न लाभै राति।।
रनवन फिरत न पाइए रे सांच सनेही साथि।।३।।
जो आपण पौं न पिछाणिये तौ मन मानैं क्यौं माहिं।।
हेत न उपजै नांव सौं तो मनसा मनि न समांहि।।४।।
अन्तर गति उपजै नहीं परसा प्रेम प्रकास।।
राम मिलबो कठिण है जो मिटै न आसा पास।।५।।१५।।

राग गौड़ी--

सुमरि मन मेरे रे सब कुछ राम सहाय।। बकि वादि बह्यो जनि जाय।।टेक।।
केई पंडित कथनी कथै केई रीझै सुर गाय।।
केई सुणि करि सुख पावहीं केई पूजा ध्यान लगाय।।१।।
केई करणी कुल ऊंच नीच बहु भेष न येक कहाय।।
एकां समझि न आरसी एक मन देखैं तन मांहि।।२।।
सीर नहीं हरि भजन सौं कोई क्यौं पति पाइ।।
एकां राम न भावई एक राम रमैं ल्यौं लाइ।।३।।
एका नीर न भावई एक पीवै येक प्यास।।
जब बूडै नांव समंद मैं तब को काकै बिस्वास।।४।।
दह दिसि लागी अंधवन झालै झाल मिलाय।।
तब अपणौ अपणौ जीव लै सब आप आप कौं जाय।।५।।
एक जलेनि तैं ऊबरे एक दाधे माया लागि।।
नांऊं केरि जु लाईए जे निकसे है भागि।।६।।
एक जिगि जोग तीरथ करैं एक बधिक जीव बधिखाय।।
पाप पुण्य बांटे नहीं कोई बूडौ तिसै सुभाय।।७।।

एकां ऊजड़ काम है एक पैंडे लागा जाय॥
एक राजा इक रंक है तौ काको कहा बसाय॥८॥
दुखी पुकारै रात दिन सुखियां सुखहि बिहाय॥
औरां पीर न व्यापई कटै सोई कुमिलाय॥९॥
साहिब लेखा मांगि है जो जाकै सिर होय॥
अपणौं अपणौं सांच दै छूटैगा सब कोय॥१०॥
मिथ्या वाद न कीजई तेरा कीयां न होय॥
परसराम प्रभु सांच है कछु राम करै सति होय॥११॥१६॥

राग गौडी--

हरि निर्मल मल तजि गाय तहां मल नाहीं रे॥ जाहि गावत मल मिटि जाय॥टेक॥
सीतल रितु वरिषै सदा अमृत प्रेम प्रकास॥
पीवै सो सुख जीवई सोई दास मरै नहीं प्यास॥१॥
निहक्रम कर्म न व्यापई विद्या वाद न कोय॥
ताहि क्यौं कर्म लगाइये जो सरणि लेय कर्म खोय॥२॥
ब्रमंड पिंड पूरण धणी सब व्यापै जाकी आण॥
साचै झूठ न लाइए जो निर्भै पद निर्वाण॥३॥
आस कर्म पडदा सबै ग्यान ध्यान उनमान॥
भगति मुकति वादि है जन परसा भजि भगवान॥४॥१७॥

राग गौडी--

भजन भै हरण कौरे मेरै मन रह्यो समाय॥टेक॥
अगह गह्यो कर बंध बिण रे बंध बध्यौ निरबंधि॥
सोई लखै जु तहां रहै थिर अकल सकल की संधि॥१॥
अकल निरंजन कल रची रे कल मिटि अकल समाहिं॥
यह अचिरज जन कै बसैरे नाम निरजंन मांहिं॥२॥
राम चरित गति को लखै रे जन जी वै जस गाय॥
जस जीवनि हिरदै बसै भाई रे हरि भजि हरि मिल जाय॥३॥
अब न चलै मन थकि रह्यो रे पायो निर्भै साथ॥
परसराम निज नांव निधि भाई रे सब सुख अविगत नाथ॥४॥१८॥

राग गौडी--

राम रमि जीऊं रे मेरौ मन मानैं हरि गाय।।टेक।।
जाकी काया काल न ब्यापई रे अकल अतीत सु एक।।
बाहू विनोद वादी रची रे दीसै भेष अनेक।।१।।
बाजी दिन दस देखिये रे अंतै होय विणास।।
राम नाम निज थिर रहै रे ताहि लागि रहै कोई दास।।२।।
झूठ सबै जो देखिये रे उपजै खपै विलाय।।
परसराम प्रभु साच है निज भजि आवागवण विलाय।।३।।१९।।

राग गौडी--

जपौ निरंजनां मेरै अंजन सौं चित नांहि ।।टेक।।
अंजन आवत जात है रे उपजै खपै विलाय।।
तासौं मोह न बांधिये मन पाछैं ही पछिताय।।१।।
अकल अचल कल विणसि रे संतौ विचार।।
निहक्रम कर्म न लाइये जो अविगत अलख अपार।।२।।
अप समझयां जाणै सबै समझयां लहै न भेव।।
परसा पूजि न जाणौ वै पैं हरि सौं मेरा नेह।।३।।२०।।

राग गौडी--

स्याम सनेही प्रीतमां मोहन मिलि सुख देहि हो।।
रहि न सकौं पीव तो बिनां हरि लागौ मेरौ नेह हो।।टेक।।
तन मन तेरा सही नांव गांव विश्राम।।
जीवकी जीवनि केसवे हो जन के पूरण काम।।१।।
अंतरि बसौ न बोलहूं पीव कौंण तुम्हारी बात।।
ठगन करौ न ठगाय हौं हो तजि अविगत अपघात।।२।।
देखौ कहा न छाडि हौं पीव सांच वचन की रीति।।
तो सौं मोहन मन तजै न हरि लागी मेरी प्रीति।।३।।
प्रेम बिनां न पिछाणिये पीव साहिब जन परतीति।।
तू मिलि मोहि मिलाय लै हो बस्यौ हमारै चीति।।४।।
मोहि तोहि अंतरि मेटि दै हो परसा प्रभु मिलि आय।।

जन तरंग दरिया बसै हो जहां की तहां समाय॥५॥२१॥

राग गौड़ी--

तहां भै नाहीं रे जहां अनभै राम अगांहि॥टेक॥
अखिल भुवनपति थिर रहै सुरति निरति ल्यौ मांहि॥
दुख सुख तहां न व्यापई तहां दीसै घाम न छांहि॥१॥
राति द्यौस धरणी नहीं नहीं चंद सूर आकास॥
अकल निरंजन अचल है कोई देखै दास निदास॥२॥
जहां पाणी पवन न व्यापाई रे उतपति प्रलै न काइ॥
अविनासी विनसै नहीं सोई मरै न आवै जाइ॥३॥
आदि अंत परिमित नहीं अविगत अलख अभेव॥
वार न पार अथाघ है सब व्यावक पूरण देव॥४॥
छाया माया मूल मैं सब अपणैं सहज समाय॥
परसा अचिरज देखि कैं मन चरण रह्यो उरझाय॥५॥२२॥

राग गौडी--

भगति जन सो लहै रे त्रिगुण रहित रमै राम॥टेक॥
लोभ मति लालच तजै रे भजै निज हरि नांव॥
आसा तिष्णा परिहरैं भाई रे सो पावै निज ठांव॥१॥
मोह मद माया तजै रे काम क्रोध विकार॥
गर्व गांठि गुमान विण भाई रे सो सेवक निज सार॥२॥
मैं रतै अप बल तजै रे दुख रु सुख भ्रम हांणि॥
संसार मारग नां रचै भाई रे पहुंचै पद निर्वाणि॥३॥
राम नाम निरास सुमिरै प्रेम प्रीति लगाय॥
भाव भगति भीतरि भिदै भाई रे हरि रीझ जाय॥४॥
माया ब्रम्ह विचारि करि घर लहै अकल निवास॥
निरसंसै निरवैर होय भाई रे परसा सो निजदास॥५॥२३॥

राग गौड़ी--

कैसें करि हरि मोहि मिलाय॥ थिर न रहै मन जित तित जाय॥टेक॥
रसनां सदा स्वाद कौं लोचै॥ मेरो कह्यो कछु नहिं सोचै॥१॥

ना सुर बेध्यौ पहुप सुवास।। नाहीं हरि सुमिरण की प्यास।।२।।
श्रवण सुरति हरि कथा न भावै।। परिहरि सांच झूठ चित लावै।।३।।
इन्द्री रहत विषै वन घेरैं।। मैं का करौं नहिं वसि मेरैं।।४।।
नैण महारस लंपट प्रीति।। परसा राम न आवै चीति।।५।।२४।।

राग गौडी--

माया सब जग खाया रे।। तातैं गोविन्द नांव न पाया रे।।टेक।।
राजा रंक छत्रपति भोपति ग्यानी गुणी अहं बड सोई।।
चाले जात अचेतन अपवल तिन मैं रहत न दीसै कोई।।१।।
राम विसारी विकाराहिं बांधे गये अफल फल अपणै खोय।।
परसराम हरि भजि जन उबरे जाके दुख आस निरास न होय।।२।।२५।।

राग गौडी--

सब जग कालै सांप संघार्‌या।। मुहरा जहर जड़ी दिठि आई तातैं अधिक विकार्‌या।।टेक।।
चेला भोपा गारुड़ी गावै देखै लोग सवाये।।
पूछै कहै बोत कहूं नाहीं उठै मैड़ सवाये।।१।।
झाड़ै झूड़ै सुख न भयो कछु मंत्र जंत्र अधिकाई।।
भयो अचेत चेत कछु नाहीं विषै भर्‌यो मरि जाई।।२।।
जो कोई वैद बतावै वोखद तौ जग कै कीयां न होई।।
परसराम बिण राम धवंन्तर जीवै नाहीं कोई।।३।।२६।।

राग गौडी--

हरि विण धोखै बहुत बिगोई।। दरिया राम कलस है काया भरि पीवै सूर कोई।।टेक।।
अवरण बेलि सकल वन छाया दीसै पवन पसारा।।
तेज फूल पाणी फल जामैं सबै भयो विस्तारा।।१।।
है आकास अंत नहीं कोई सोई ऊंकारि समाया।।
पांचो तत्व वसैं ताभीतरि विणसै भेख बनाया।।२।।
मैं तैं माया मोहि मुस्यो जग आसा पास बंधावै।।
परसा घट फूट्‌यां सब छूटै मुकत होय घरि आवै।।३।।२७।।

राग गौडी--

दुनियां हरि तजि भरमि भुलानीं।। देखत नांहि निकट जमयानी।।टेक।।

तृष्णा तृपति मोह की ज्वाला।। राम बिनां न कटै भ्रम ताला।।१।।
पर अपवाद बदत सुख पावै।। प्रेम कथा रस राम न भावै।।२।।
वाह सव हतां राम न गावै।। प्राण थक्यां पाछै पछितावै।।३।।
परसा कही न मानैं कोई।। भव जल बूडत पार न होई।।४।।२८।।

राग गौडी--

भूले रे भूले भव भरमत सक्यौ न राम संभारौ रे।।
काहे कौं वादि विगूचत बरजत रतन जनम जिन हारौ रे।।टेक।।
दहं दिसि वैरी आय पहूचैं भागा जाण न पावै रे।।
घर भयो दूरि चलत भै भारी भीर पर्‌यां पछतावै रे।।१।।
ग्रीषम ऋतु अरु पावक आग्यो पवन मिली झल आवै रे।।
उबरण दूरी निकट जलि मरणां जल बिन कौण बुझावै रे।।२।।
ज्यौं जल भीतरि मीन रहत है कालि जालि छल लीया रे।।
अब कहा होय पाछैं पछितायैं जो मीत न मोहन कीया रे।।३।।
मीच जरा जम आय पहुंचे तब कछूबै न वसावै रे।।
परसराम प्रभु राम सरण बिन लीजत कोण छुड़ावै रे।।४।।२९।।

राग गौडी--

देखौ करता बुद्धि उपाई।।
आप निरतंर अंतर छाया दुनियां भरमि लगाई।।टेक।।
केई कहैं दूरि केई कहै नीरा समझि न परई काई।।
विण वेसास आस तजि हरि की चाले जनम गवाई।।१।।
घरि भूले बाहरि कौं भागे भौ फिरि सुरति न जाई।।
भुरकी लागि भुलाये जहां तहां आपु न दई दिखाई।।२।।
बाजी डाक मंडयौ बड औसर देखि सबै डर आई।।
ताकी गति जाणै जन भेदी दूजा कोई न पत्याई।।३।।
आपण अकल अनंत रूप धरि बहु भूलनी भुलाई।।
भर्म विकार मोह ममता वसि तामैं सबै समाई।।४।।
व्यापक ब्रम्ह सकल परि पूरण पडदै लख्या न जाई।।
परसराम प्रभू दूरि न दूजा एक रु नीरा भाई।।५।।३०।।

राग गवडी--

अविगत नाथ तुम्हारी गति कौं जीव कहा कहि गावैं ।।
सेस सहस मुख दई दोइ रसनां सोई पार न पावै ।।टेक ।।
ब्रम्हा विष्णु महेस सुरेसुर सो नाहिंन पहिचाणैं ।।
निगम रटत निति नेति नेति कहि जैसे तुम हो सू नहीं जाणै ।।१ ।।
अगम अगाहि अगोचर सब तैं सब काहू मैं बोलै ।।
अंतरजामी बसै निरंतर अंतर देव न बोलै ।।२ ।।
बाहरि भीतरि भीतरि बाहरि कहूं पाती कहूं पूजा ।।
देखै सुणै कहै सुख मानैं भयो एक तैं दूजा ।।३ ।।
कहिये येक कथणी करि करि बहु भेष दिखावै ।।
आपण अकल सकल सहजैं कल सौं कल लाइ चलावै ।।४ ।।
स्वर्ग सुरति बरिषा बादल करि का फूले कुमिलावै ।।
उपजि उपजि जाकी माया ताहि मद्धि समावै ।।५ ।।
बाजी सब बाजीगर कै बसि बाजीगर नहिं आवै ।।
परसराम कर की पुतली नाचै ज्यौं कोई नचावै ।।६ ।।३१ ।।

राग गौड़ी--

प्रभु दीन दयाल तुम्हारी महिमा सेस सहस मुख गावै ।।
दोय दोय रसनां नाव नये नये सुमरि सुमरि सुख पावै ।।टेक ।।
रटै सदा ऐका रस जीवनि ताई ध्वनि सुनै सुनावै ।।
हरि गुन वार पार विण मंगल पर्म अमीरस भावै ।।१ ।।
सिंघासण अपणैं उरकौ करि कैं ता ऊपरि बैठावै ।।
ता ऊपरि मणि जटित बिराजित फण कौ करि छत्र बनावैं ।।२ ।।
फण के फण की चंचल चहुं दिस रसनां करि चंवर चरावै ।।
रहै सदा इक टक ठाडो हरि सनमुख सीस नवावै ।।३ ।।
हरि मन्दिर सेज्यां सरीर करि हित हरि कौं पौढ़ावै ।।
अति विचित्र उपमां अनंत तन कै करि बसन उढ़ावै ।।४ ।।
हरिजी सौं प्रेम नेम निहचौ व्रत बांध्यो सु न छिटकावै ।।
करै अखंड चरण सेवा फण पंखा पवन उडावैं ।।५ ।।

ताही हरि को निजरूप निरंतर धरि सोई ध्यान लगावै ॥
सर्वस अपणौं हरि कै वसि करि मन मनसा न भुलावै ॥६॥
दीपक पर्म प्रकास तिमिर हर हरि ताही मद्धि समावै ॥
एकमेक परसा प्रभु जन न्यारो कबहू न दिखावै ॥७॥३२॥

राग गौडी--

हूं आयो हरि तेरी सरणाई॥
राखि लेहू सम्रथ सुखदाता भव बूडत भगवंत कन्हाई ॥टेक॥
भ्रमत भ्रमत बहु ठौर अब रमैं थकित भयो तुम करऊं बडाई॥
जाऊं कहां तुम तजि करुणा मैं सुन्यौ न को आन सहाई॥१॥
दीन दयाल कृपाल कृपानिधि कलिमल हरण विमल हरि राई॥
असरण सरण अनाथ बंधु प्रभु साखि पुराणनि गाई॥२॥
भगत वछल भय हरण अभै कर करुणा सिंधु सुण्यो सुखदाई॥
परसा पति तव चरण छुयै थिर अब न तजौ गोपाल दुहाई॥३॥३३॥

राग गौडी--

करता कपट कीयां न पत्याई॥
अधिक सुजाण भरम तैं न्यारा दीसै प्रीति लगाई॥टेक॥
ममता मारि धरै जो धीरज मोह पासि न बंधावै॥
तजि आकार बिकार दीन होय तब कोई फल पावै॥१॥
जीवत मरै जगत सब जाणै लागी मोहि न दाझै॥
विह्वल होय मिटै बल मन को तब जुति सौं जुति वोझै॥२॥
स्वारथ छाडि रहै परमारथ आया पर सम जानै॥
परसराम जो कहै करै सो ता जन की प्रभु मानैं॥३॥३४॥

राग गौडी--

पति कौ दुवध्या कबहूं न पावै॥
एक तजैं दिसि होय न चितवै पति ताक बसि आवै॥टेक॥
सब मैं राम बसै अंतरगति चहुं दिस पूरौ जाणै॥
सांच नाम सुख बंध्यो ब्रम्ह बसि या खोजै सु पिछाणै॥१॥
भाव भगति अंतरगति हित सौं आया पर सम जानैं॥

तुलसी तिलक पाक पूजा विधि ताजन की प्रभु मानैं ।।२।।
लै वैसास सहज घर पावै गावै निज तजि जौंही ।।
हरि पद प्रेम रहै ल्यौ लाएं परसा तिरिवौ यौंही ।।३।।३५।।

राग गौडी--

समता ऐसे दिष्टि न आवै ।।
अहंममता वसि जाय बह्यो मन पायो मूल गवांवै ।।टेक।।
ज्यौं वनचर वसि नाट चरित कैं नाना स्वांग दिखावै ।।
भूलौं भर्मि पर्म गति तजि करि विष स्वारथ रस गावै ।।१।।
अंग सुवास फिरै वन दूढ़त सारंग सुद्धि न जाणैं ।।
आस लुबधि जित तित जग भटकै घरि पति कौं न पिछाणै ।।२।।
बाहरि जाय बंधै नहीं परवसि पैसि भुवन मैं सोचै ।।
परसा राम दरस ताकौं दे जो हरि दरसन कौ लोचै ।।३।।३६।।

राग गौडी--

साहिब जन एकैं करि जानि ।। दो येक हैं जिनि सति करि मानि ।।टेक।।
ज्यौं जल तरंग दरिया मैं वासा ।। ऐसैं हरिजन एक निवासा ।।१।।
जैसे तरु अंतरि रहै छाया ।। तैसे ब्रम्ह दास तजि माया ।।२।।
दास भाव गति राम पिछाणै ।। राम भजन सुख सेवग जाणै ।।३।।
निज जन राम निरंजन गावै ।। दुनियां करि पूतला दिखावै ।।४।।
दुविध्या दूरि गया दुख भारी ।। ऐसे मतै होय संसारी ।।५।।
साहिब जन अंतर को नाहीं ।। परसा साच जाणि जिय माही ।।६।।३७।।

राग गौडी--

देवा यह अचिरज मोहि आवै ।।
गावै सुणै बजावै नाचै रीझै कौण रिझावै ।।टेक।।
गायां सुण्यां कह्यां नहीं रीझै है राम बिनां अनुरागी ।।
ताकी आस निरास रहै कोई महापुरुष बड भागी ।।१।।
अविगत कथा तुम्हारे घर की मोपैं कही न जाई ।।
अपणैं सहज सुरति ल्यौ लागै तब तुम देहू दिखाई ।।२।।
जल बिन कंवल कली विण ठाडौ पडे पार कछु नाहीं ।।

परसराम तन तजि मन रीझौ हरि सुन्दर की छांही ॥३॥३८॥

राग गौडी--

देवा सेवा न जाणौं तेरी॥

तू अथाह अविगत अविनाशी है न कछु मति मेरी॥टेक॥

कहां चरण तन सीस तुम्हारा मैं मूरख मरम न पाऊं॥

कहां धरौं तुलसी दल चंदन कैसें भोग लगाऊं॥१॥

कहां उत्तर दछिन पछिम दिसि केहां दिष्टि पसारा॥

तीन लोक जाके मुख भीतरी सोव कहां मुख द्वारा॥२॥

तुम ठाढ़ै रहौ कि बैठो कबहू किधौं जागि अजागि कहावौ॥

कहां वसौ घर कौण तुम्हारा नांव कहां समझावौ॥३॥

कौन बिड़द ऐसो तुम लायक का उपमा लै दीजै॥

परसराम को कहै सुणैं यौं कौ गावै को रीझै॥४॥३९॥

राग गौडी--

देवा तुम ही हौ मैं नाहीं॥

दुविध्या गई रही सोई जैहें तुम अस्थिर सव माहीं॥टेक॥

आदि रु अंति एक अंतर गति मोहि ऐसो दिठि आवै॥

तुम दीरघ लघु वसै भरम वसि तातैं तो कौं गावै॥१॥

यों दीसै सु सबै दुरि जै हैं दुर्यो सु प्रगट दिखावै॥

परसराम अनदेखि महा दुख देखि परम सुख पावै॥२॥४०॥

राग गौडी--

संतौ को हरि को जन कहिये रे॥

रमता राम रमैं सबहिनि मैं गुर गम करि किन लहिये रे॥टेक॥

भरमत फिर्यां न लहिये पति कौं जनमि जनमि दुख सहिये रे॥

साखा छाडि तत्व तरु करता प्रीति पेड़ किन गहिये रे॥१॥

हरि हरिदै परिहेत न उपजै विण परचै तन दहिये रे॥

परसराम प्रभु अंतरजामी तासौं मिलि किन रहिये रे॥२॥४१॥

राग गौडी--

संतौ सो सेवग हरि प्यारा॥

जो निर्भै भयो रहै निर्बैरी राग दोष तैं न्यारा ।।टेक ।।
जो जग करै सु दास न करई करै जु क्यौं हरि भावै ।।
छाडै आस निरास होय करि पद निर्वाणहिं गावै ।।२ ।।
सुरति सरोवर पिंड पखारै हंस करै रखवारा ।।
रहै हुस्यार निसांण बजावै मेटै भर्म पसारा ।।३ ।।
लांघै मरे सुमेर सुर होय धू करि कैं निधि पावै ।।
परसराम निष्कपट ताकै वसि सहज सूनि घर छावै ।।४ ।।४२ ।।

राग गौडी--

संतौ राम सगौ किन गावो ।।
तजि सींव कौ विकार महादुख झूठ कहा चित लावो ।।टेक ।।
पल्लव गह्यां न पेड़ पाइये पेड गह्यां फल पावै ।।
वा फल कौ रस चाखै कबहू तौ मरै न संकट आवै ।।१ ।।
बाहरि है सोई भीतरि खोजि सलूझै ।।
है ब्रम्हंड पिंड तैं न्यारा हरि सेवग कौं सूझै ।।२ ।।
रंग महल गति महली जाणैं महली मिल्यौ कहै मारौ ।।
परसा मरण सहै सोई देखै दुहूं मैं एक विचारौ ।।३ ।।४३ ।।

राग गौडी--

संतौ काम धेनु गहि आणी ।।
फिरी फिरी खाती खेत अचेतनि सो घर मांहि बंधाणी ।।टेक ।।
दीये कपाट द्वार सब रोकै सौं बाहरि जाण न पावै ।।
चरि न नीरूयां धसै गुसौ धरि सौं ही मार न आवै ।।१ ।।
बालक भागिहुं रे हरि जित तित कोई हंसै न बोलै ।।
मिट्यौ कलेस दसौ दिस आनंद बांधी रहै न डोलै ।।२ ।।
चारौ चरै न दूध न देई अण चीनी बहु दूझै ।।
वेसासी रस अमृत सर वै न्याणी बहुत असूझै ।।३ ।।
सहज सु भाय कहावै छिन छिन मन अंतर गति बूझै ।।
परसा ताकौ दूध पीयां सुख अगम ज्ञान गुरु सूझै ।।४ ।।४४ ।।

राग गौडी--

साधो मैं जीवनि की निधि पाई॥
देखि चरित चित रह्यो थकित होई सौ तजि अनत न जाई॥टेक॥
सुन्य सुन्य संसार कहत है सुन्य वस्तु दिठि आई॥
तहां वसै सुर लोक सकल पति अणभै अटल दुहाई॥१॥
जाकी जोति अनंत अनंत ही लाभै आप गवांए॥
व्यापि रह्यो ब्रम्हंड खंड मैं दीसै आप सवांए॥२॥
काहि कहौं को कही न मानै जानैं विरला कोई॥
परसराम राम हरि परसि भए थिर आवागवण न होई॥३॥४५॥

राग गौडी--

दरिया पूरौ रे भाई॥
अगम अगाहि न जाण्यो किनहूं नैक निगम गति माई॥टेक॥
सिव विरंचि सुर मुनि जन थोधे थोधे आई॥
खोजत खोज सबै खोजी जन अंतरि रहे समाई॥१॥
पैरुं होय कहां लग पैरे तीर पार होय क्यौं ही॥
जिनि जैसो उनमान विचार्‌यो त्रिपति भये सो त्यौं ही॥२॥
जे जे दुखित दीन भये हरि सौं उत्तम मध्यम कोई॥
परसा जन आधीन सलील हरि सरणि लीए विष धोई॥३॥४६॥

राग गौडी--

मन रे तू कछु करै सु काची॥
तेरा किया कछु नहीं व्है हैं कछु करि है राम सु सांची॥टेक॥
मैं मेरी कहि कहा बंधावै करता है कोई औरै॥
ताकौं सुमरि बसै घट भीतरि तेरी नांहिं न ठौरै॥१॥
जब लग मैं तब लग कछु नाहीं वादि ही जनम गंवावै॥
आपौ मेटि मिलै जब हरि सौं तब कहूं करै सुणावै॥२॥
तू है कौण कहां तैं आया कहां वसै कछु जाणां॥
परसा प्रभु तन कौं जब त्यागै तब धौं कहा समाणां॥३॥४७॥

राग गौडी--

मन रे राम बिना सु सब काची॥
बिण परतिति जगत का जाणैं का झूठी का सांची॥टेक॥
करणी कथणी पूजा पोथी भूत भरम की सेवा॥
सत गुरु सांच बिनां सब थोथी जो न भज्यो हरि देवा॥१॥
स्वारथ स्वांग धर्यां सुख नाहीं जो अंतर बसै विकारा॥
परसा हेत भगति हरि कै बिण नहिं कहूं निस्तारा॥२॥४८॥

राग गौडी--

हरि रस खारौ रे भाई॥
एक बूंद जो परै काहू मुख तौ ताकौ विष जरि जाई॥टेक॥
भोग विलास सकल सुख सुंदरि ऐसी मीठी माया॥
ताकौं तजि विषकौं को चाखै जारै अपणी काया॥१॥
कर्म भर्म कुल काणि वाणि विधि यह क्यौं मिटै सवाई॥
परसराम यह छूटि जाय तब हरि सौं रहै समाई॥२॥४९॥

राग गौडी--

कोई पीवै दास महारस हित करि जो कोई बड़भागी रे॥
परम पुरुष सौं प्रीति निरंतर सहज सुरति ल्यौ लागी रे॥१॥
जग व्यौहार तजै निज रीझै प्रेम झोरि ल्यौ वाझै रे॥
धीरज धरै रहै थिर हरि सौं जो तूटै ते सांधै रे॥२॥
दरिया ब्रम्ह सकल सुर मछा दास हंस रुचि ठानै रे॥
परम निवास नांव निधि कैसौ ता सेवा सुख मानै रे॥३॥
राम न तजै भजै भ्रम त्यागै गुण लीयें नृगुण समावे रे॥
परसराम .सो रहै अकल धरि संगि मिल्यो गुण गावे रे॥४॥५०॥

राग गौडी--

है कोई साध परम बडभागी राम सुमरि सुखि जीवै रे॥टेक॥
जहां वरषै ब्रम्ह गगन सर भरिये ताकि डिंग घर छावै रे॥
रहै समीप महारस विलसै मरै न संकट आवै रे॥१॥
आसातजै निरास रहै जो तिहौ गुणा तै न्यारा रे॥

अविगत नाथ सरणि सो सेवग रहे गहै निज सारा रे॥२॥
पार ब्रम्ह सौं प्रीति निरंतर सहज सुरति ल्यौ धारै रे॥
परसा जुगि जुगि दास अचल सोई जो हरि भजि पल न विसारै रे॥३॥५१॥

राग गौडी--

साध कहावत लागै बार॥
बूडत मिलि संसार धार मैं मन स्वारथ न मिट्या अहंकार॥टेक॥
कुल व्यौहार विपति गति न मिटी और कमावत विषै विकार॥
दिक्षा देत कहावत स्वामी माहिं रहे लीये सिरभार॥१॥
व्यास कहाय पर्म पंडित पति बोलत वांणि निगम निजसार॥
कहि कहि कथा जगत समझावत आप न समझत अंध गंवार॥२॥
बोलै कछू करै कछू औरैं चलि चालै पसूं आं कांई और॥
ज्ञान ध्यान वकि मौनि सुन्य मिलि पाई नहीं सदागति ठौर॥३॥
इंद्री जीति जती जोगी तप आसा पास न मिट्यो जंजाल॥
वाद विवाद आन कौ सुमरण लीये फिरत सदा संग काल॥४॥
नाच्यो गायो तूर बजायो जाचिग होय जाच्यो संसार॥
माया मोह विषै तृष्णा बसि मूएं बूडि न भज्यो अपार॥५॥
साचहिं मिलै साच चलि चालै मुख हिरदै मिलि साच कहाय॥
ऐसो घायल साधु मिलै धरि आयौ तौ परसराम तापरि बलि जाय॥६॥५२॥

राग गौडी--

मन जो चाहै पद अविनासी॥
तो बाहरि भूलि कहूं जिन भर्मौ खोजो तीरथ कासी॥टेक॥
मथुरा करि बसिये थिर तामहिं यमुना बह्यां न जइए॥
जनम पाय निर्मल तौ रहिये जो गंगा सौरो न्हइए॥१॥
वाराणसी पढ़ै पंडित होय भूलि अयोध्या न्हावै॥
गंगा सागर रहै बस्यो जो सो अपणौं पति पावै॥२॥
चले प्रयाग मकर जिन न्हावो उलधिउ दीसा फीका॥
जगन्नाथ का दरसन करस्यां ज्यौं फल होय सब नीका॥३॥
चलौ वराहि धर्म गति पहू खरि हरि मिलि फिरि जिनि आवो॥

द्वारा मति करौ जिन कबहूं दरिया संग न्हावो ॥४॥
परबत चढि पड़ि दुख पावौ कित हरि परचौ उड आणौं॥
बद्रीनाथ बसै घट भीतरि दुरमति छाडि पिछाणौं॥५॥
हारि पडै मरणेस आस ज्यौं दुख सुख तजि घरि आवै॥
परसराम जन निकट पर्म पद जापरि कृपा सुपावै॥६॥५३॥

राग गौडी--

मन रे भयो तुम्हारो भायो॥
गुरु की कृपा साधु की संगति मन वंछित फल पायो॥टेक॥
भाव भगति अंतर गति हित सौं सहज सुन्य मन मान्यो॥
सहज सुरति मिलि आनन्द उपज्यो पति अपणौं पहिचान्यौ॥१॥
जीवन जनम सुफल करि लेख्यो जो अंतर जामी॥
अब सुख भयो गयो दुख दुकृत संगि रमै सोई स्वामी॥२॥
मैं मिटि गया रह्या आपण मैं परसा जन ताहि गावै॥
जाकौ हुतौ मिल्यौ ताही कौं बिछुरै बहुरि न आवै॥३॥५४॥

राग गौडी--

अवनासी विनसै नहीं कहौं मोहि ऐसो प्रभु आवै॥
अपरंपर उरवार न ताकौं पार न कोई पावै॥टेक॥
ज्यौं नभ निकट नीर मैं निर्मल मल मिलि जाय न आवै॥
त्रिभुवन वर व्यापक सचराचर सोई जहां तहां दरसावै॥१॥
निर्गुण गुण धरि अन्तर जामी सोई गति प्रतिबिंब बतावै॥
श्री गुरु सुजस समझि सोई परचौ परसराम जन गावै॥२॥५५॥

राग गौडी--

हरि कंवल नैन कैसो करुणा मैं करुणा सिधु मुरारी॥
अति आतुर आवत सुमिरत ही सदा भगत हितकारी॥टेक॥
बल करि दुष्ट भाव दूसासन त्रिय तन भुजा पसारी॥
प्रभु प्रकट भये पट पूरण कौं द्रोपदी की ताप निवारी॥१॥
असरण सरण अनाथ बन्धु प्रभु पैज टरत नहिं टारी॥
भगत बछल भय हरण उजागर सुनियत हौं सुखकारी॥२॥

ऐसी समझी हो करौ किन ऊपर मिटत न सोच हमारी॥
प्रभु देखत परवसि भयो परसा तो रहि है कहा तुम्हारी॥३॥५६॥

राग गौडी--

सर्व रूप सर्वेश्वर स्वामी॥ सर्व जीव कौ अंतर जामी॥टेक॥
सर्व नाथ सब मांहि समायक॥ सर्व सरण सब कौं सुख दायक॥१॥
सर्व राय सम्रथ न अधूरा॥ सर्व भरण पोषण प्रभु पूरा॥२॥
सर्व नांव कौ नांव निरंजन॥ जामैं बसै सदा श्रव अंजन॥३॥
नित्य रूप अस्थिर परकाजै॥ परसराम प्रभु प्रगट विराजै॥४॥५७॥

राग गौडी--

जनि कोई करै देह कौ गारा॥
दीसै कपट कोट माटी कौ बिनसि जाय छिन लगत न बारा॥टेक॥
ज्यौं कागद की नांव नीर तिर न सकैं बूडै उखारा॥
गलत न लागै बार धार मैं सो कैसे उतरै भौपारा॥१॥
ज्यौं जल वाजि बुदबुदा बूडयो काचौ काया कलस विकारा॥
फूटि पर्‍यो भू मिल्यौ धार होय सुपनैं की गति को व्यौहारा॥२॥
यो परपंच रच्यौ बाजीगर सांचै दिष्ट कि झूठ पसारा॥
परसराम देखै सु कहै जन जाकै उर गुण ग्यान उजारा॥३॥५८॥

राग गौडी--

मनुआ हरि भजि तजि संसारी॥
बडै जनि भ्रम धार नांव बिण विषम झाल दीसै दुख भारी॥टेक॥
सांची साखी राम सुमरण की प्रगट प्रताप अहल्या तारी॥
गनिका अजामेल धीवर कुल वै उबरै भजि चरण मुरारि॥१॥
गज जल संकट ग्राह ग्रह्यां तै प्रलै काल रुति हरि हारी॥
परसराम प्रभु भजि जिन भूलहिं राम नाम सबतैं अधिकारी॥२॥५९॥

राग गौडी--

रसना हरि हरि हरि गाय॥ हरि परि हरि बकि बहि जिन जाय॥टेक॥
निर्फल आन बकणि विष वाणी जिन्हा बहु बोलनौं निवारि॥
चत करि निर्मल सुफल सुवीरज हरि माधौ हरि मुकुन्द मुरारि॥१॥

परहरि आल जंजाल जगत गुण हरि अमृत रस मुख भरि चाखि॥
हरि दुख हरण सकल सुख दायक सोई हरि हरि भजि और न भाखि॥२॥
जो हरि पार करण भव जल तैं सोई केसौ कृष्ण संभारि॥
परसराम प्रभु राखि हृदै धरि सुमरि सुमरि हरि व्रत धारि॥३॥६०॥

राग गौडी--

हरि ने विमुख जीव छलि लीये॥
उबर्‌यां कोई येक अपर घन और सकल पाणी करि पीये॥टेक॥
कर्म कठोर बज्र उर अंतर पति पारस पद कौं नहिं छीये॥
हरि के परम प्रेम विण कबहूं प्रघट होत नाहीं वै हीये॥१॥
विषै मोह मद काम क्रोध की अगनि झाल दाधे सु न जीये॥
हरि बल हीण असार अंध मति ज्यौं पतंग दीपक मिलि खीये॥२॥
आपण अछल अजीत जीति सब पकरी पकरी जम कौ लै दीये॥
परसा पार ब्रम्ह की बाजी को कोनहीं अपणैं वसि कीये॥३॥६१॥

राग गौडी--

सुमरि सुख पाइये रे अति अमृत हरि नांउं॥ हौं ता हरि की बलि जाउं॥टेक॥
अति अमृत रस प्रेम सौं कोई पीवै जन ल्यौ लीण॥
सोई जुग जुग जीवै जु रस पीवै अरु मरै जगत रस हीण॥१॥
हरि रस पीवै सुथिर रहै रे मरै न आवै जाय॥
हरि लिवलीण न हरि तजे हरि ही मैं रहै समाय॥२॥
जो हरि प्रेरक प्राण कौ रे सोई नख सिख रह्यो समाय॥
सोई हरि सब मैं सारिखो रे जहां तहां हरि साय॥३॥
साई सदा हजूरि है रे कोई जिन जाणौं दूरि॥
जहां तहां नाहीं कहां हरि रह्यौ सकल भरपूरि॥४॥
हरि सुकृत संसौ हरण सुख दायक सब जाण॥
सोई भजिये पावन परम गुरु हरि प्राणनि के प्राण॥५॥
बहु कर्म करतूति करि के कछु न आवै हाथि॥
रह्यां रहै चाल्यां चलै हरि निबहै नित साथि॥६॥
मैं देख्यो बहुत विचारि कैं रे कछु नाहीं नाम समतूलि॥

परसराम प्रभु हरि बिना कोई और न भजिये भूलि ॥७॥६२॥

राग गौडी--

भजत कित भूलिये रे सुकृत फल हरि नांउं ॥टेक॥
विण सुमर्‍यां दुख ऊपजै सुमर्‍यां सौं दुख जाय॥
सो तजि भरमि न भूलिये रे हरि भजिये मन लाय॥१॥
हरि सुमिरण सुख है सदा और सबै दुख जाणि॥
लाभ सो जु हरि सुमिरिये रे बिण सुमर्‍यां बड हाणि॥२॥
सोई उत्तम जो हरि भजै सोई निहकर्म कुलीण॥
हरि कौं भजि जाणैं नहीं तो मध्यम मति हीण॥३॥
सोई मूरख मति हीण नर जो न भजै हरि नांव॥
हरि को भजत न भूलई हौं ताजनि की बलि जांव॥४॥
जो न भजै हरि नांव कौ रे सोई नीचां तैं नीच॥
परसराम जो हरि भजै सोई नर उत्तम कुल ऊंच॥५॥६३॥

राग गौडी--

मन मोहन मंगल मुख सजनी निरखि निरखि सुख पाऊं॥
अति सुंदर सुख सिंधु स्याम घन हौं तासौं मन लाऊं॥टेक॥
निमिष न तजौं भजौं निहचौ धरि हरि अपभुवन बसाऊं॥
जाकौ दरस परस जस दुर्लभ हौ ताको सिर नाऊं॥१॥
तन मन धन दातार कलपतरु हूं ताको जस गाऊं॥
अति निर्मल निर्दोष भगति फल मोहि भावै बलि जाऊं॥२॥
प्रभु सौं प्रेम नेम निहचौ सर्वस दै अपणों भलो मनाऊं॥
और उपाय सकल सुख परहरि हरि सुख मांहि समाऊं॥३॥
सेऊं चरण सरण रहि हित करि मन हरि मनहिं मिलाऊं॥
लज्जा सकल लोक वेद की परसा परहरि दूरि दुराऊं॥४॥६४॥

राग गौडी--

होली खेलत मन मोहन मिलि बहुत भलो हित आजु री॥
पावन पर्म पवित्र परम फल हरि प्रीतम बड राजु री॥टेक॥
यह दिन समुहुर्त सजनी हरि सारण सब काज री॥

मंगल तैं मंगल अति मंगल हरि मंगल सिरताज री।।१।।
मिलि आई सब सुंदरि घर बर तै हरि संग खेलन फाग री।।
कोई सुकृत जो कियो हो कबहू सोई उठयो अब जाग री।।२।।
कनक कलस केसरि भरि सिर धरि लै आई हरि काज री।।
चरिचित मुदित भई हरि वर कौं परहरि सब कुल लाज री।।३।।
सिंघ पौरि बाढे हरि सोभित अति सुंदर सुख दाइ री।।
कहि न सकौं सोभा छबि सजनी आनन्द उर न समाइ री।।४।।
गोपी गोप ग्वाल बृजवासी नंद भुवन भर्‌यो आइ री।।
कृष्ण चरित गावत सुख पावत सुणि रीझत हरि राइ री।।५।।
स्यामा स्याम सूं मिलत अलापत गावत नाना राग री।।
जै जै जै उचरत सुर घरणी वंछित स्याम समाग री।।६।।
ल्याई गौरी अबीर अर्गजा रोली रंग अपार री।।
खेलत गोपी गोप इकंतर हरि हलधर निरभार री।।७।।
बाजे मृदु नाचैं नर नारी तन मन सुधि न संभार री।।
मगन भई अंबर आभूषण मागैं अधिक उदार री।।८।।
हरि अमृत निधि मिलि रस विलसत सखी सलिता बडभाग री।।
जिनकै वसि गोपाल सनेही तिनकौ सुफल सुहाग री।।९।।
भूरि भाग तिनकौं जे दरसैं हरि औसर आनंद री।।
सब सुख कौ सुख परसराम प्रभु अविचल आनंद री।।१०।।६५।।

राग गौडी--

बृज बनिता ब्रजराज बनैं बहु खेलत मिलि रंग होरी।।
मान सरोवर वृजवासी भये राजहंस हरि जोरी ।।टेक।।
संग्रफ सुमिल कुमकुमा केसरि कनक कलस भरि ल्यावै।।
अति सनेह सौ हरि प्रीतम कौं चरचैं सब सुख पावै।।१।।
घसि अगर कपूर खौरि करण कौ कूंकूं तिलक बनावै।।
ल्याई घोरि अबीर अरगजा हरि सनमुख छिटकावै।।२।।
बसन सुरंग गुलाल रंग हरि सोभैं अति भावै।।
विदि मंगल सुख मूल सबनि कौं अति सुंदर दरसावै।।३।।

सद फुलेल चौवा चंपेल भरि ल्याई कनक कटोरैं ।।
अपनैं अपनैं करसौं सब मिलि स्याम सीस परि ढोरैं ।।४।।
अति सुप्यार सौंधो तन पहरत हरि बंद छोरी ।।
हरि कैं लाय लगावत अपनैं करि मुसकत मुख मोरी ।।५।।
राजत उर हरि कैं रतनावलि अरु बैंजती बनमाला ।।
और विविध पहुपावलि प्रभु कौं पहिरावत ब्रजबाला ।।६।।
ल्याई पान संवारि सुद्ध करि सखि मुख बीरी हरि पावै ।।
देत न बोल रहसि आपसमहिं हरि सनमुख सिरनावै ।।७।।
दरसि दरसि नैंननि मिल परसत हरि लागत अति प्यारे ।।
अति सनेह अस्थिर तन मन तैं टरत न कबहूं टारे ।।८।।
अपनैं अपनैं मन अतर की कहि कहि सबै सुनावै ।।
गावै गारि सुणावै हरि कौ सुणि रीझै सुख पावै ।।९।।
कहौ कहौ अपणी सब हम-सो हम तुम तैं न दुरावै ।।
तन मन प्राण सुजाण स्याम सौं मिलि पावन करि ल्यावै ।।१०।।
हम पाय लागी बूझै कहि प्रीतम क्यौं राधा तोहि प्यारी ।।
सर्वस सौपिं दयो हग तुमकौ क्यौं इन तैं हम न्यारी ।।११।।
तुम हो कृष्ण भई ये जु तुम सी याही अचिरज समझावो ।।
इन कौन पुन्य कीन्हो तुम मान्यो जु राधाकृष्ण कहावो ।।१२।।
धन्य धन्य मति कहत सखी सब जो व्रत धरि हरि लागी ।।
जिनि कै वसि गोपाल सनेही राधा सोई सुफल सुहागी ।।१३।।
जाकै वसि त्रिभुवण सचराचर हरण करण अविनासी ।।
सो तेरैं वसि भयो सयानीं हरि परिहरि कंवला दासी ।।१४।।
परम सुजाणि चतुर चिति लागति तौं हरि कौं अति प्यारी ।।
तेरो भाग सुहाग सदा थिर वर जाकैं वनवारी ।।१५।।
सब सखियन कौं तिलक सखी तू जो हरि कैं मन मानी ।।
तेरे पाय परैं सब सजनी सूर सिद्ध मुनि ग्यानी ।।१६।।
तैं कीनौं भजि परम सनेही कंवला कंत विनाणी ।।
निगमहूं अगम अगाध बोध हरि तूहू ताकै पटराणी ।।१७।।

ब्रम्हां विष्णु महेस सेस सुर जाकौ महल न पावै॥
सो तेरे घरि आपण पैं हरि विण बोले चलि आवै॥१८॥
जेसे वै प्रेम नेम निहचौ धरि हरि उर तैं न विसारै॥
तिनकी रज ब्रम्हादि सिवादिक वंदन करि सिर धारै॥१६॥
हरि चरण कंवल लिवलीण निरतंर रहत सदा अनुरागी॥
पलटै नाहीं जाकै प्रेम पल प्रभु तैं जन सोई बड़ भागी॥२०॥
हरि सुख सिंधु सुमिल सलिता जन रहत सदा संगि नेरा॥
तिनकी रज वंदन कौ जुगि जुगि है परसा हरि चेरा॥२१॥६६॥

राग गौडी--

अवधू उलटी राम कहाणी॥
उलटचा नीर पवन कौं सोखै यह गति विरलै जाणी॥टेक॥
पांचौ उलटि एक घर आया तब सरि पीवण लागा॥
सुरही सिंघ एक संग देख्या पानी कौ सर लागा॥१॥
मृगहिं उलटि पारधी बेध्या झींवर मछुवा सोख्या॥
उलट्या पावक नीर बुझावै संगम जाई सूवा देख्या॥२॥
नीचैं वरषि ऊंचकौं चढियावा जब टेरी राख्या॥
ऐसा अणगत डूबा तमासा छावै था सोई छाख्या॥३॥
ऐसी कथै कहै सब कोई जो बर तैं सोई सूरा॥
कहि परसा तब चौकि पडौं ता बीज समेति अंकूरा॥४॥६७॥

राग गौडी--

अवधू उलंघ्यो मेर चढ्यो मन मेरा सुन्य जोति धुनि जागी॥
अणभै सबद बजावै विण कर सोई सुर ता अनुरागी॥टेक॥
चढि असमान अखाड़ा देखै सोई वदिये बडभागी॥
घर बाहरि का डर कछु नाहीं सोई निर्भै वैरागी॥१॥
रहै अकल तरसौं मिलि कलपि मरै नहीं सोई॥
निहचल रहै सदा सोई परसा आवागवण न होई॥२॥६८॥

राग गौडी--

भाई रे का हिन्दू का मुसलमान जो राम रहिम न जाणा रे॥

हारि गये नर जनम वादि जो हरि हिरदै न समाणा रे ।।टेक।।
जठरा अगनि जरत जिनि राख्यो ग्रभ संकट गैवाणां रे ।।
तिहिं औसर तिन तज्यो न तोको तै काहे सु भुलाणां रे ।।१।।
भांडे बहुत कुभारा एकैं जिनि यह जगत छुडाणां रे ।।
यह न समझि जिन किनहूं सिरजे सो साहिब न पिछाणां रे ।।२।।
भाई रे हक्क हलालनि आदर दोउ हरखि हराम कमांणां रे ।।
भिस्ति गई दुरि हाथ न आई दोजग सौं मन माणां रे ।।३।।
पंथ अनेक न और उझूझड ज्यौं सबका येक ठिकाणां रे ।।
परसराम व्यापक प्रभु वपु धरि हरि सबकौ सुरताणां रे ।।४।।६६।।

राग कल्याण--

पावन पद रज रघुवीर की।।
जा परसत सिलकौ तन पलट्यो गति भई देव सरीर की।।टेक।।
ल्याव नांव खेवट कहि बोलत ठाढे प्रभु तट नीर की।।
चल्यो पलायन चितवन फिरि धरि संका राम सधीर की।।१।।
करत परम गति पर्म कृपानिधि तारि पतित भौ भीर की।।
जात प्रगट वैकुंठ सभरणी नांव कुटुंब सौं कीर की।।२।।
सेस महेस निगम नारद मति सेवत ब्रम्ह उर नीर की।।
परसा सुक सनकादि भजत रति उर धरि गुण गंभीर की।।३।।१।।

राग कल्याण--

हरि हरि उर देहूं न भीर कैं।।
तारण सिल सलिता नहीं उतरत डरत कहा उर नीर कैं।।टेक।।
मैं महा पतित तुम कौं कैसें तारों रहत न मन धरि धीर कैं।।
महाभार बूडत अघ भौ मै सु नाम तिरत रघुवीर कैं।।१।।
यां पाया न पार लौं जल जो सूधि चलूं या तीर कैं।।
नांव बैठि तिरबौ अब लछिण लागत जगत न हीर कैं।।२।।
अरु नवका उडि जाय चरण छुयि तौ मैं कृपन भयो वसि पीर कै।।
कुल आलंब यह जीवनि कित हाणि करत मो कीर कै।।३।।
तव पदरज पावन तन पकर्यो परसत पर्म सरीर कैं।।

परसराम प्रभु सुणौं कृपा करि खेव करौ जिन चीर कैं ॥४॥२॥
राग कल्याण--
हरि गोविन्द मुकुंद मुरारी॥ विद्ठल वासुदेव वनवारी॥टेक॥
श्री गोपाल कृष्ण करुणा मैं॥ माधो मधुसूदन महिमा मैं॥१॥
कवंल नैन कमलापति कैसी॥ सम्रथ सर्वरूप सखेसौं॥२॥
श्री वैकुंठ विष्णु विश्राम॥ परसराम जपि जीवनि राम॥३॥३॥
राग कल्याण--
श्री वासुदेव वामन वराह॥ विष्णु ब्रम्ह वैकुंठ अगाह ॥टेक॥
विश्वंभर विसुपति विसु तात॥ विसु लोचन विसुचर विसुनाथ॥१॥
वनवारी विठल विश्रूप॥ परसा विश्वपूरण विसुभूप॥२॥४॥
राग कल्याण--
श्री गोपाल गोवर्धन धारी॥ गोविन्द गोपीनाथ बिहारी॥टेक॥
गोपीवर गिरराज गुसांई॥ गुण सागर गुण प्रेम तहांई॥१॥
गुण अतीत गुण सौं मिलि गावै॥ अगई गोकुल नाथ कहावै॥२॥
गरूडारूढ़ हरि गरूड़ागामी॥ गरूड ध्वज गरूड़ासन स्वामी॥३॥
गरूडराज गुण गहर न लावै॥ परसा प्रभु गह्यो गज मुकतावै॥४॥५॥
राग कल्याण--
हरि कौ भजन करि हो मन प्यारे॥
यक रसनां तुम क्यौं अरसा वो सेस सहस सुमिरत नहीं हारे॥टेक॥
जाकी सरणि पतित पति पावै गनिका कुबजा व्याध उधारे॥
अधम तरे अधिकार भजन तैं हरि सुमिरत सगरे दुख टारे॥१॥
अजामेल सुत नाम उद्धर्‌यो जल बूडत गज ग्राह उबारे॥
परसराम प्रभु ठाकुर सम्रथ वनचर भील पूतना तारे॥२॥६॥
राग कल्याण--
अब न चले चित आस बंधाणी॥
भरमत थकी सखी रन वन तैं प्यासैं पाये राम बिनाणी॥टेक॥
त्रिपति भई सुंदरि सुख मान्यो पीव कौं परसि भई पटराणी॥
पति कै संगि परमगति पाई मिटे सकल दुख आवण जाणी॥१॥

फाटि तिमिर घट भयो उजारो ससि प्रगटे निसि अंध विहाणी॥
परसा राम पर्म सुख की गति कहि न सकौ कछु अकथ कहाणी॥२॥७॥

राग कल्याण--

पीव लेहु देह चरणनि परी॥
प्राण गयो तजि सौंज सकल ही सौंपि तोहि परसण हरी॥टेक॥
मोहि तोहि यहै सनेह देह लौं जा हित तेरै हौ वसि करी॥
और न कोहि पहिचाणि जाणि जादौं पति तै मति दूसरी॥१॥
करत जिग्य जगदीस विमुख होय गर्ज कहातिन तैं सरी॥
अज्ञ पुरुष मागत मुख अपणैं प्रीति न पलु तासौं करी॥२॥
आई या मति उज्जल काजल विधि करि कर सौं यही॥
छूटत नहीं महा मसि उर तैं मिलि कागद कौं लै गही॥३॥
मानत नाहिंन कहै सुख सुनि मानौं वरिखत जल ऊंधी धरी॥
परसापति गोपाल दरस बिण नांहिन सुख पावत घरी॥४॥८॥

राग कल्याण--

हरि हरि मन काहे न भाखै॥ असरण कौं सरणाई राखै॥टेक॥
हरि पावन पतितनि कौ तारै॥ जनम मरण संदेह निवारै॥१॥
हरि निर्भै भव बंधन कापै॥ अभै करै भौ ताहि न व्यापै॥२॥
हरि दीन बंधु निरबंधन करई॥ प्रेम भगति सुख है दुख हरई॥३॥
हरि अर्द्ध नांव अगणित अघ जारै॥ सोई हरि सुमरि विघन बहु टारै॥४॥
परसा हरि जिन किनहू संभारि॥ हरि हरि सुमरि कहौ को हारि॥५॥६॥

राग कल्याण--

हरि भजि हरि भजि हरि भजि लीजै॥ हरि सुमिरत मन विरंब न कीजै॥टेक॥
हरि सुमिरण बिन दादि न आगैं॥ हरि तैं विमुख भयां जम लागैं॥१॥
ज्यौं दर्पण सुख अंध न देखै॥ त्यौं हरि बिन नर जनम अलेखै॥२॥
हरि सुख मूल भज्यां दुख छीजै॥ परसा हरि अमृत रस पीजै॥३॥१०॥

राग कनडी--

गगने सुर गम्य ग्यान न पावै॥ ग्यान राज अगई को गावै॥टेक॥
दिष्टि न मुष्टि निरजंन जोगी॥ जोग जुगति जप तप सुख भोगि॥१॥

सहज रुप सर्वेसुर नाथा।। निराकार तहां संग न साथा।।२।।
अगम अगोचर कहत न आवै।। परसराम जन होय सु पावै।।३।।१।।

राग कनडौ--

बिन भगवंत न आन सहायक।।
मैं देखी सब ठौर अबर फिरि सुन्यौं न कोई ऐसो सुखदायक।।टेक।।
देख्यो और उपाय न कोई जग्य जोग व्रत तप फल दायक।।
हरि सम को सम्रथ सुख दाता असरण सरण राखिवै लायक।।१।।
गृह तजि वन संजम जल सेवा भ्रमत अवनि पांणि होय पावक।।
कण बिण सो न कछु सो तजिये भजिये अभै अखिल कौ नायक।।२।।
तात न मात हितू कोई नाहीं सुनि सुत सति सतिये वायक।।
परसराम आसा दुख परहरि करिये मित्र राम मन भायक।।३।।२।।

राग कानडौ--

सुनि सुत यो परपंच परायो।।
यहै विचारि समझि सुख कौ फल जा करणि तू मारि उठायो।।टेक।।
लेत उसास उदास उभै दुख रुदन करत उरसौं लपटायो।।
रहू रहु बाल जाऊं बलिहारी जनम सुफल करि जो तैं पायो।।१।।
को नृपराज काज कुल काकौ को जननी कौणै को जायो।।
यहां न को मेरौ तेरौ बाल ताही कौं सुमरि जहां तैं आयो।।२।।
परहरि विभौ विलास आस दिस सुपिनै जिन भरमैं भरमायो।।
परसराम प्रभु भजि निर्भै पद जो पैं सुख चाहत मन भायो।।३।।३।।

राग कनडौ--

भज सुत श्री भगवंत सदा सुख।।
त्रिपति रूप संतोष सुमंगल जनम जनम कै हरण हरी दुख।।टेक।।
चिंताहरण अचिंत अभैकर सकल सूल मेटण मन की धुख।।
सुद्ध करण हरि हरख सोक जैं असरण सरण सदा सांची रुख।।१।।
पार करण संसार धार तैं अघमोचन जाणत जन कै दुख।।
परसराम प्रभु पर्म कृपानिधि सेय सुमरि आनन्द महा मुख।।२।।४।।

राग कनडौ--

धनि सुनीति जिन सुत समझायौ॥

राम भजन भजिवे कौं आतुर सुनत वचन बंधन तजि धायौ॥टेक॥

परिहरि सोच पोच सब संका चल्यौ निसंक नगन वन भायौ॥

तिहिं औसर निज रूप भूप वर सनमुख सोचि महामुनि आयौ॥१॥

को ससिरूप अनूप भप जो जात कहां कौणैं भर्मायौ॥

या बूझी मिलि भयो समागम चरण कंवल कर सीस छुवायो॥२॥

कह्यो प्रथम दुख दरद दीन होय मन विश्राम बिना अकुलायौ॥

हरि आरति आगम उर पूर्‌यो लोचन सुफल दरस मैं पायो॥३॥

पचि पचि गये पर्म तत्व वेता खोजत खोज न अंत दिखायो॥

तेरी धौं कहा सरसमति उनतैं उलटि जाह सुनि मानि मनायो॥४॥

धनि ए श्रवन सुण्यौ हौ जिन मैं ध्रिग ए बैण बदत बौरायो॥

धृग यो दरस परस फल छाया अमृत मति मेटि विष पायो॥५॥

मांगी मांगि वर वीर धीर धरि नारद गुरु निज भर्म सुणायो॥

भाव भगति वेसास सुअस्थिर चरण सरण विश्राम बतायो॥६॥

अभैराज दायक हरि सम्रथ मन क्रम वचन सत्य जिन गायो॥

परसराम सब लोक प्रकट जन भयो अडिग सु न जात डिगायो॥७॥५॥

राग कानडौ--

तेरा नांव भजन जो पाया मांगौ नहीं कहूं जिन अबतौ हो त्रिभुवन के राया॥टेक॥

नां बैकुंठ नां कौऊ संपति सौं मन मांगौं जो तऊ न दैहौं॥

तुम दैहो मैं त्रिपति न करिहौं फिरि तुम ही पछितै हौं॥१॥

तेरा नांव अधिक तुमहि तैं ताकै जन की माया॥

यहै बहुत विसरौं जिन कबहूं करौ हमारा भाया॥२॥

तेरे नांव प्रताप तिरे सब तेरुं हौ कोई नहीं तार्‌यां॥

परसराम प्रभु राम कहैं तै जन जीते तू हार्‌यां॥३॥६॥

राग कानडौ--

मन क्रम वचन भजन जो करिये॥ काहै को वादि स्वादि संग मिलि करि स्वारथ लागि भरमि बहि मरिये॥टेक॥

राम विमुख दुख है सुख नाहीं क्यौं बार बार मरिये औतरिये।।
अभै सरणि परिहरि हरि जीवनि परवसि बसि भौ पासि न परिये।।१।।
जो निसि मैं ससि सरद उजागर कृष्ण केलि कारण उर धरिये।।
त्यौं नर मैं नर औतार तिलक सोइ निगम कलपतर सम उच्चरिये।।२।।
ज्यौं विधु विधुप विवोम तरणि वर उभयो तिमिर तेज तजि वरिये।।
परसा परम प्रकास उदित उर परसत काल व्यालहिं डरिये।।३।।७।।
राग कानडौ--
भजिये श्री गोपाल कलपतर।।
सरणाई सुख मूल सुमंगल दुख मोचन बडराज अभैकर।।टेक।।
अतिम अमृत फल प्रेम नाम निधि पान करत विधी सेस सक्र हर।।
सुक नारद सनकादि स्वाद तहीं पंखी और सुवास त्रिपति कर।।१।।
छाया गहर गंभीर धीर अति लगत न उष्ण समीर मिटहिं डर।।
सब जीव जंत्र विश्राम सरण कौं परसा प्रभु व्यापक सचराचर।।२।।८।।
राग कनडौ--
गाय हरि जस हरि हरि हरि मन।।
दीन दयाल कृपाल कृपानिधि है पति ब्रम्ह होय भजि तू जन।।टेक।।
परहरि और विकार आस आदि सब एक राम निर्भै होय कर भजि।।
पार ब्रम्ह कैसो कंवलापति करुणा सिंधु सरणि रहि सब तजि।।१।।
जाकी सरणि रहत नर मुनि बहु पंखी पावत सुख निज गति।।
सु जन हंस विलसत मुकता फल मान सरोवर अकल पति।।२।।
सिव सुकादि निर्मल जल क्रीड़त ब्रम्हदेव नारद सनकादिक।।
परसराम निर्भै पद परसत पीवत सरस प्रेम के स्वादिक।।३।।९।।
राग कनडौ--
हरि ठाकुर मेरै जीय भाए।।
जै जे सुमरि गये हरि सरणैं तिनहीं कै दुख दूरि गवाए।।टेक।।
महा पतित सदूगति करि लीनैं आरति वंत होय जिन गाये।।
ताके पाप प्रवाह दूरि करि अपणी सरणि राखि मुकताये।।१।।
जीवन जन्म सब लोक प्रगट कर फिरि आपन तामद्धि समाये।।

असरण सरण अनाथ बंधु प्रभु हरि सब के प्रतिपाल कहाये ॥२॥
सम्रथ हरि सब के सुख दायक ताकौं सुमरि न कोई पछिताये ॥
परसराम प्रभु साखि प्रगट जस हमहूं सुणि सरणाई आये ॥३॥१०॥

राग कनडौ--

हरि कौ निज नेम प्रेम सौं लगाय कीजै ॥
तब मानैं सब ही गोपाल सो दयाल को कही जै ॥टेक॥
सब उर के भ्रम जाल भेदि भीतरि जो भीजै ॥ यो अतर तजि भजिये जब तब सुजाण धीजै ॥१॥
मन वच क्रम सति सति मन धन दीजै ॥ तब साचौ वृत धरत परम प्रीत सु पतीजै ॥२॥
यौं अपणैं वसि प्राण नाथ सर्वस दै लीजै ॥ परसा प्रभु सेय सुमरि संगि रह्यो रस पीजै ॥३॥११॥

राग कनडौ--

मोहन मोहनी मोह्यो मन ॥
अब न रहत इहां जात उहांई परि गयो ऐसोई बाण ॥टेक॥
अब कहा होय कहे काहू कैं नखसिख बेध्यो प्राण ॥
भृकुटी धनुष नैन सर कर सूं दै अंजन खर साण ॥१॥
नैंक चितै चित सौं चित जीत्यो दे राखी अप आण ॥
ज्यौं रवि किरण सोखि सब कौ रस नैक न दीनौं जाण ॥२॥
जाकै वसि त्रिभुवन सचराचर रज गज मसक समाण ॥
सोई वसि भयो परायैं परसा प्रीतम परम सुजाण ॥३॥१२॥

राग कनडौ--

मेरे तुम बिन और न जीवनि काय ॥
जो कछु कथा हमारे मन की और न जाणि जाय ॥टेक॥
तुम चिंता मणि-पद प्राण हमारे बसैई रहत उर मांहि ॥
सुणि सेवग निज वचन सत्य करि मोहि तोहि अंतर नांहि ॥१॥
तुम सब सुख सिंधु पर्म हितकारी तन मन रहे समाय ॥
तुम बिन और सबै दिस सूंनी बसत काल के भाय ॥२॥
पल न विसारत तुमकौं हौ चित्त तैं ज्यौं चात्रिग साति न भुलाय ॥
परसराम प्रभु रटत दास जस मुख अपणैं ल्यौं लाय ॥३॥१३॥

राग कनडौ--

निर्भैजन भगवंत भरोसै।।

नैक न गिणत जगत की संका गावत विडत संभारि सरोसै।।टेक।।
परहरि सब जंजाल काल मैं अचवत अगम नीर तजि बीसै।।
वदत न हरि प्रताप बलि काहू आनधर्म जग तैं निरदोसै।।१।।
असह न सहत असुर संसै न भाव हीण खर फिरत खसोसै।।
मानौं भ्रमत भंवर भादौं के तजै सुगंध द्रुगंध गवौसैं।।२।।
तिहुं लोक सिर मौर सुमंगल निरखि तिमिर सविताज्यौ सोखै।।
परसा दीन दयाल दास वदि पतित दरस परस दै पोसै।।३।।१४।।

राग कनडौ--

सोभित अति हरि कौ मंगल मुख।।

मानौ उदै मृग अंक कोटि छबि सुन्दर कंवल वदन देखत सुख।।टेक।।
सोभा सिंधु अमि निधि आनन राजित अति गति हरण सकल दुख।।
मेरे नैननि कौ परसराम प्रभु अभै सरण निहचल निर्मल रुख।।१।।१५।।

राग कनडौ--

हरिजल निर्मल नांव मल नाहीं।।

ता जल कौं निजहंस नेम धरि पीवत प्रेम रहत सुख माहीं।।टेक।।
हरि व्रत ज्ञान ध्यान सुचि संजम हरि तप हरि तीरथ नर न्हाहीं।।
हरि सेवा सुमिरण सुख विलसत चरण सरण तजि अनत न जाहीं।।१।।
और कर्म धर्मादि निवीर्ज नर हरि नांव हीण निर्फल बहि जाहीं।।
तिनकी आस लागि हरि परिहरि हरि जन पडि पर वसि न बिकाहीं।।२।।
नित निहकलप कलपतर कौ भजि रहत सदा अस्थिर हरि छाहीं।।
असरण सरण सुख सिंधु सुमंगल परसा निर्वाहै जन कौ दै बाहीं।।३।।१६।।

राग कानडौ--

तन मन दै हित सौ हरि भजिये।।

और भजन बल हीन निपोरस हरि फल विण निर्फल करि तजिये।।टेक।।
पर्म पुनीत नाम सुमिरण सुणि अपणौं तन पावन करि लीजै।।
जीवन जनम सुकारथ सोई जु हरि अमृत अपनै मुख पीजै।।१।।

सेस आदि ब्रम्हादि सिवादिक अजहौं भजत रहत लिलीनौ ।।
नारदादि सनकादि सुकादिक पीवत निगम प्रेम रस भीनौ ।।२ ।।
तिन की महिमां कौण कहि सकैं जिनकौ गान सुनत हरि रीझै ।।
अपणैं आप पराए सुणि सुणि जात भागि तन मन तै बीझै ।।३ ।।
जाकौ प्राण वसै थिर हरि मैं ताहि भज्यां सुख अति दुख छीजै ।।
अति हित सौं लै सर्वस अपणौं ता जन परि नवछावरि कीजै ।।४ ।।
हरि पति वरत धारि जिनि सुमर्‍यो जन सोई आवत हरि लेखै ।।
सोई निर्मल निकलंक प्रकट जन जु हरि कौ रूप आप मैं देखै ।।५ ।।
आप मिल्यां विण मिलै न दूजा आप मिल्यां मिलि है सब कोई ।।
जा जन कौं परसा प्रभु भावै ता प्रभु कौं भावै जन सोई ।।६ ।।१७ ।।

राग सोरठि--

मधुक माधो जी काहै न आये।। तुम सौं कहि जु संदेस पठाये ।।
हम हरि के हित की गति जाणी।। जो तुम बोले अलि मधुवाणी ।।
बोलि अलि मधुवाणि जाणी तुम जू कछूं आपी इहां ।।
सो न उर अंतर समावै अडर धरि राखै कहां ।।
अब जिन कहौ सुहात नाहिंन स्याम बिन बकिवौ वृथा ।।
मधु माधौ क्यौं न आये कहौ सोई हम सौं कथा ।।विश्राम ।।१ ।।
जो वे हरि हैं तुम्हारे हितकारी।। तौ एक सुणी एक ही हो हमारी ।।
जिहिं आरति तुम कौ हरि भावै।। ऐसी तौ हम पै कहत न आवै ।।
कहतां न आवै मोहि ऐसी जैसी कछु तुम कौं रूचै ।।
बिन समझि कासौं कहै को मति मूढ पद परहरि पचै ।।
तजि सकल स्वारथ स्वाद निर्फल अकल आनंद अविगतू ।।
निज नांव भजि भै हरण वर जो सत्य करि हरि दै हितू ।।विश्राम ।।२ ।।
उधौ जी कब मिलि हैं गोपाल पिया रे।। पर्म हितू हरि प्राण हो हमारे ।।
हम तौ मरत मीन की सी नांई।। ज्यौं जल हीन तलफि मुरझांई ।।
मुरझि ज्यौं जलहीण तलफत मीन तन मन वसि कीयो ।।
प्रगट जल पाताल गति यौं सौंपि हम सरवस दीयो ।।
हम रटत निसदिन दिसन दसर स्याम बिन

हरि प्राण धन गोपाल जीवनि कहौ वे मिलि हैं कबै।।विश्राम।।३।।
हरि जी सौं प्रीति मिलन की जो होई।। जो हम कहैं सु करौ किन सोई।।
तजि सुख संजोग भोग विलासा।। भजिये पति निहकर्म निरासा।।
भजि भाव पर्म निवास निर्मल कह्यो जो हमरो करौ।।
और आन उपाय परहरि सुमरि हरि दुस्तर तिरौ।।
तजि आस अगम निवास निज पद परसराम संभारिये।।
सत्य करि उरधरि निरतंर प्रेम पति न विसारिये।।विश्राम।।४।।१।।

राग सोरठी--

मेरो मन हरि लियो कन्हाई।। तातैं घर वन कछु न सुहाई।।टेक।।
सही न सकौं विष सम सब इत उत जीव कहां विरमाऊं।।
बिन देख्या तन जात इक्यारत देख्या तै सुख पाऊं।।१।।
कह्यां सुण्या परतीति न उपजै जन देख्यां तै जीवै।।
प्यास न मिटै मरे बिन पानी प्राण रहे जो पीवै।।२।।
कहा करो चितवन चित चोर्‌यो परि आपौ न संभार्‌यौ।।
तऊ होय गयो परवसी मन पल मैं टरत न कबहुं टार्‌यौ।।३।।
हरि वेसास निरास और सुख सोच सबै बिसराये।।
परसराम या कहौ कौन सौं तन भितरी मन खाये।।४।।२।।

राग सोरठी--

हरि बिन लागत भुवन भयान।। निरखि अंदेसा उपजत गयो बुद्धि बलज्ञान।।टेक।।
बलहीन दीन उदास अति गरि गयो गर्व गुमान।।
मानौ मृगी सिंग बन मैं बसि साय न प्रान।।१।।
कहत सुनत न बनत ऐसी सुनो सन्त सुजान।।
भई गति जो अंति कहिये हमें हरि की आन।।२।।
धरत जाही न धीर मनु मानो थाको पति बिन प्राण।।
तजि गयो पर्म प्रकास परसा भई निस बिन भाण।।३।।३।।

राग सोरठी--

मधुप न मिलत माधो मोहि।। हेत की हरि कथा अपनी क्यों कहत हैं त्योहीं।।टेक।।
ज्यौं त्रिविधि रुति ब्रम्हण्ड औसर पलट देत न छेह।।

बरस मास दुआग निस दिन करत कासो नैह ॥१॥
भोमी जो रज बीज राख्यौ सींच मदन मलेप ॥
सघन संगति प्रकट लीला करत रहत अलेप ॥२॥
निकसि नीर सुमीर घर तैं सींची सब सुख देत ॥
प्रगट करि रवि रूप अपणौं सोंखी सरबस लेत ॥३॥
जो जल बूंद रस सकेली सलिता सिन्धु सनमुख आई ॥
सोगुण न औगुण गिनत सुख दुख उलटि अनत समाहीं ॥४॥
जानि जो नट नाट नाचे काछि करि बहु भेष ॥
करि चरित भेद न देत काहू अंति एक कौ एक ॥५॥
निरखि तर विस्तार साखा पत्र नव नव रंग ॥
परसराम सु पोस सोखत करत क्यासों संग ॥६॥४॥

राग सोरठी--

मधुकर करती हौं मनुहारी ॥
सुनहू की नाहीं चित्त दै हमारी बात हृदैह बिचारी ॥टेक॥
हौं तुमहिं सांच सुभाय बूझति यह अंदेस निवारि ॥
कहौ कौण औगुण हमें मोहन दई मन तैं डारि ॥१॥
हा हा हा बलि गई तुम परि प्राण डारौं वारि ॥
प्रगट करि हरि प्राण जीवनी मरत लेऊ हू उबारी ॥२॥
हम धीर दे दे प्राण राख्यो आस पति व्रत धारि ॥
पल पहर दिन जुग बितिते सुनत क्यौं न मुरारि ॥३॥
यह है स्याम सुनाई कहियो कहा लहौं मारी ॥
परसराम दयाल हो प्रभु लेत क्यौं न बिचारी ॥४॥५॥

राग सोरठी--

मधुकर सुनि माधौ को नातो ॥ ब्रज माहि जु मोहन रातो ॥टेक॥
राखि समीप सदा अब किनि हरि हम सौं बयोगात ॥
मीन तलफी तन तझे पलक मैं पै नीर न बूझै बात ॥१॥
ज्यौं पतंग तन मन धन अरपै प्रेम सहित मरि जावै ॥
नैक दरद धरिकै उर अंतर दिपक दया न आवै ॥२॥

ज्यौं चाह मृग चात्रिग पतिव्रत नै धरै मनिगण बरिषत रहै प्यासा।।
जाचै नहीं और सर सुभर स्वाति बूंद की आसा।।३।।
जासौं हित ताकि गति ऐसी अति अंदेस मन मांही।।
परसराम हरि प्राण हमारै हम हरि तह कुछ नाहीं।।४।।६।।

राग सोरठी--

सुनि बृजनाथ बृज को नेह।।
एक निमस न तजत मुख तैं भजत तैं पर्म सनेह।।टेक।।
पल न पलटत प्रेम झुरत नैण ज्यौं घण मैंह।।
मगन मन तन गलित बिलपत गिनत बन जन ग्रेह।।१।।
रटत रूति नित नेम निस दिन हेत अधिक सुप्रे है।।
अडिग मन सुख सिंधु उनको वरत नदि कि जले है।।२।।
मरत ज्यौं जल जीव तलफत निघटि नीर निते है।।
पाय पति परसा सुधारस प्राण धन उन देहै।।३।।७।।

राग सारेठी--

सुनि बृजराज बृज की बात।।टेक।।
रटत निस दिन हरि हरि सुपन जागत जपत प्राणाधार।।
चलत हरि हरि वाणि उचरत वन भुवन इकतार।।१।।
उमंगि उदार गावत प्रगट लीला नेम।।
हमें सब सुधि बिसरि हरि देखी उनकौ प्रेम।।२।।
चरन कंवल न पल बिसारत जाणि जिवनि ठौर।।
परसराम सुध्यान परिहरि उर न आनत और।।३।।८।।

राग सोरठी--

देखौ भर्म जगत भरमाया।। रमता राम द्रिष्टि नहीं आया।।टेक।।
आवण जान विचारि जैसा।। लोक वेद सुनि भये निरासा।।१।।
आगै है बैकुंठ ह़मारा।। इहि धौके बूड़ो संसारा।।२।।
अंतर राम न जानै कोई।। पर आसा घर की निधि खोई।।३।।
परसा नाहीं आवण जाना।। प्राण पिंड भ्रमंड समाना।।४।।९।।

राग सोरठी--

जासौ कहतौ यौ सब ह्मारौ ।। अंत चलौ तजि हौ पसारौ ।।टेक ।।
कनक भुवन बंधु सुत भामा ।। सब पिंड भयै न दै विसरामा ।।१ ।।
मैं मेरी कहीं जनम गवायो ।। हंस चलत कछु संग न आयो ।।२ ।।
भूले भरमि बहै बेकामा ।। मुगध अचेत न जाण्यो रामा ।।३ ।।
परसा करि लै यक राम स्नेही ।। दूतिया वादि आदि बैदेहीं ।।४ ।।१० ।।

राग सोरठी--

काहै को कीजै नर रे मेरी मेरा ।। मरना है सिर उपर नेरा ।।टेक ।।
सबै पराई तु बिड़ तामैं ।। तेरा कोई नाहीं न बिन रामै ।।१ ।।
देखत सबै सकल जब मुआ ।। कोई न रह्यो मरि मरि हुआ ।।२ ।।
छांडि देऊ सब झूठ पसारा ।। परसा राम रमै निस्तारा ।।३ ।।११ ।।

राग सोरठी--

सतगुरु पति आसनि बतावै ।। तन मैं मन को लय सोई पावै ।।टेक ।।
दिल बाहरि दिदार न होई ।। तन तजि भरमि मरौ मति कोई ।।१ ।।
जब तुटै दुविध्या के ताला ।। तब घट भीतरि होई उजाला ।।२ ।।
परसा राम आस तजि गावै ।। ताकि दृष्टि पर्म यह आवै ।।३ ।।१२ ।।

राग सोरठी--

समझी न परै कछुयक पायौ ।। कहा कहैं जो अन्तर खायौ ।।टेक ।।
अचरज भयो सू तौ अंग न समायो ।। देख्यो जागि सकल सोई छायो ।।१ ।।
जाहिं कहौं ताहिं लगत अभायो ।। कोई पारिखु मिल्यो न मैं परखायो ।।२ ।।
परसराम परख्यो जिय भायो ।। मिल्यो अनन्त पैं अन्त न आयो ।।३ ।।१३ ।।

राग सोरठी--

सोई दास परम पद पावै ।। तीनों तजे सहज घरि आवै ।।टेक ।।
धीरज धरै प्रेम ल्यौं लावै ।। अकथ कथै मन कौं समझावै ।।१ ।।
परसा जन पतिकौं सोई भावै ।। जो अन्तरि मिलि बाहरि नहिं धावै ।।२ ।।१४ ।।

राग सोरठी--

पावै जन पति और न पावै ।। और न पावै जो वाकै उर न समावै ।।टेक ।।
यह तो राम सकल दिठि आवै ।। पैं रामहिं उलटि न दास कहावै ।।१ ।।

मैं करता हरि को न सुहावै।। सूली चढि हरि कौण रिझावै।।२।।
आपौ मेटि रहै निज गावै।। परसा जन हरि कौं सौई भावै।।३।।१५।।

राग सोरठी--

निर्मल सौ जु माया मोह न बहै।। ब्रम्ह अगनित न मन कौं दहै।।टेक।।
ज्ञान को ज्ञान गहै सहज को घर लहै।। हरि कौ वैसास लिये सुख मैं रहै।।१।।
कर्म करे न फूले भूलाणि देखै न भूलै।। व्यापै न छाया कौ छल हरि सम तूलै।।२।।
भेद न अभेद आणैं सब मैं सारिखो जाणैं।। घटि न बधिक हरि पूरौ पहिचाणै।।३।।
सम पैं दिष्ट जो आवै व्यापक देख्योई भावै।। प्रभु को दरस परसा जो आप मैं समावै।।४।।१६।।

राग सोरठी--

उधौ कब मिलि है अब सोई धौं कहौ।। और वादि ही बकत कित मौन हीं गहौ।।टेक।।
हम न ऐसी सुहाय तुम जु ल्याये बनाय।। प्रगट करौं जिन ऐसी इहां न बिकाय।।१।।
मेरे जीव की जीवनि प्राण प्रेम हितू सुजान।। हम लियो हैं वरत जाकौ ताहिं को ध्यान।।२।।
बसैई रहै उर मांहिं उरतैं टरत नाहिं।। सुंदर वदन देख्याहिं नैण सिराहिं।।३।।
ऐसे आए जो पाइये हरि प्रगट अपणैं घरि।। परसा प्रभु सूं उर लगाय भेटिये भुज भरि।।४।।१७।।

राग सोरठी--

प्रीतम हरि करिये करि कै संग रहियै।। हरि सौं सनेही बहुर्यौं कब लहिये।।टेक।।
सवेतां सुख कौ सिंधु आदरै दीन कौ बंधु।। समरथ सरण राखि जो मेटै दुख दंदु।।१।।
अंतरजामी सौं मानै जो अंतर गति की जानैं।। मन की सब कामना जातै है नाहिं न छानैं।।२।।
अति ही चतुर सो है जो चिंता कौ हरण वो है।। हरि सो उदार ऐसो और धौं को है।।३।।
हरि सो हितु न कोई जो पलटि दुजौ न होई।। सेइये परसराम सुनि कैं करि गाइये सोई।।४।।१८।।

राग सोरठी--

हरि जी कौं मन देहौं मन दे मिलि रहिहौं।। जस अपजस अपणैं सिर सहिहौं।।टेक।।
मन सौं मन मिलाय राखि हौ उर सौं लगाय।।
चलत न जान देहौं गहिहौं चरण धाय।।१।।
प्रीतम प्राण के नाथ छाडिहौं न ताकौ साथ।।
जित हरि चलि है तित गहि चलिहौं हाथ सौं हाथ।।२।।
न्यारो न रह्यौ सहाऊं हौं न बिछुरि जांऊं।।
संग संगिही रहौं गाऊं सदा ताही को नाऊं।।३।।

राखिहौं जतन करि नेह सौं सुवरि वरि॥
परसा प्रीतम हरि सेयहौं आपणैं ही धरि॥४॥१९॥

राग सोरठी--

मधुकर मरत हम निराधार॥
दीन बंधू दया धरि उरि करी क्यौं न संभार॥टेक॥
जात निघटी सौंज पल पल वादि अब की बार॥
यह बहुत अंदेस अंतरि जु हरि न बूझी सार॥१॥
हम क्यौं सहैं दुख सिंधु सालै सुख न संग उदार॥
विरह अरि वसि करि सतावत सु क्यौं न मेटौ मार॥२॥
ज्यौं धार कै उर भार सौं भरि भ्रमत भुवनि असार॥
परसराम सुपोत पति विण अब को लै उतारै पार॥३॥२०॥

राग सोरठी--

मधुकर करत कुछ न विचार॥
चलत अपणि सुधि श्रीपति सरस गति निज सार॥टेक॥
परस प्रीतम उत्तम ठौर पदवी प्रेम परम उदार॥
अब जाय मधुवन बसै हैं माधौ मूल मंत्र अपार॥१॥
हम सौंपि सर्वसि दियो पहिली मेटि करि कुल कार॥
अब न अंतर रहियो पल भरि प्रगट पति व्यौहार॥२॥
करि कुसुम सनेह भजि भजि तजत न लगत वार॥
परसराम अलेप मिलि सोई प्रभु रहत हरि निरभार॥३॥२१॥

राग सोरठी--

सखी री सुणि मन दीयै कौ सुणाऊं॥ हरि न तजत तउ आपणौ सुभाऊ॥टेक॥
मन मैं कछुवै रहै कछूवै न मुख सौं कहै॥
ऐसी सुणि सखि सुख ना होय जी दुख ही दहै॥१॥
जासौं न [illegible] बसाय तासौं कहिये कहा बणाय॥
ऐसे प्रभु कै तौ मन माई लागि री पाय॥२॥
का[illegible]ये का[illegible]हैं की लीला रस हिये सुण्यै सौ बार॥
परसा प्रभु सौं सनेह सो मिलत नाहीं इकतार॥३॥२२॥

राग सोरठी--

मैरो निरमोही सौं मोह उपज्यो सु अधिक मन आनन्द॥
सो प्रगट सुंदर रूप ना तजै सदा सुख नंदनंद॥टेक॥
सर्व कारण जीव जल निधि अकल सकल समंद॥
ऐसे प्रभु कौ सौही न देखै होय जो मतिमंद॥१॥
सोई पलटि जात न दूरि कहौ रहत निकटि न रिंद॥
कृपा सागर सरण सब कौ हरण हरि दुख दुंद॥२॥
ज्यौं उदधि नीर तरंग संगति सुमिल सोभित इंद॥
सुधा लुबध चकोर मान्यो सकल सो सम चन्द॥३॥
एक रस निर्वाह थिर नित अचल आनन्द कंद॥
विमल सीतल छांह परसा सुफल सुबर गोविंद॥४॥२३॥

राग सोरठी--

तू मेरौ साहिब मैं तेरौ चेरौ॥ लीयो मोलि भयो घर केरौ॥टेक॥
मेरौ गायौ सुण्यौ सकल के देवा॥ दीनै मोहि चरणनि कौ सेवा॥१॥
मैं अनाथ आधीन तुम्हारो॥ मेटौ जिन हरि नेम हमारौ॥२॥
तुम कृपा दृष्टि परसा प्रभु देखौ॥ मोहि सदा अपणौं करि लेखौ॥३॥२४॥

राग सोरठी--

रसनां मेरी हरि जस गाय॥ मौनि पकरि बकि बहि जिन जाय॥टेक॥
करणी कथणी सब जंजाला॥ परहरि झूठ सुमरि गोपाला॥१॥
प्रीति लगाय प्रेम की छांही॥ राम संभारि रमै घट मांहीं॥२॥
हरि परहरि चित आनन्द दीजै॥ परसराम सोइ महा रस पीजै॥३॥२५॥

राग सोरठी--

राम करारि रंग लागौ॥ अब विसरौं नहीं कबहूं भै भागौ॥टेक॥
मिट्यो पतंगा भरम फिकाई॥ भति सुरंग लाग्यो सु न जाई॥१॥
उपज्यो प्रेम महा रस जान्यौं॥ पति सौं ल्यौ लागी मन मान्यौं॥२॥
जाहि सुमिरत निर्मल भये अंगा॥ परसा जन राते ताहि रंगा॥३॥२६॥

राग सोरठी--

जुगिया देखौ जोग विदिता॥

घरि खोरि जगावता हौ कित गोरख नांहिन सूता॥१॥
दाझौ भुंजो ग्यान न सूझौं काल कर्म लैजूता॥
जोग जुगनिकी सार न जाणीं तौ मुंड मुंडाय विगूता॥२॥
जो गांव फिरै दसबीस दिहाडै मांगण उपरि रूता॥
पांचौ वसि न भई भौ भटकत फीरी फाडै जूता॥३॥
जागत रहै न सोवै कबहू ताहि खोजौ मांग अभूता॥
परसराम प्रभु गोरख गो मैं पति बोलै कहै पूता॥४॥२७॥

राग सोरठी--

हा हा राम सुमरि तोहि हारे॥ तैं कित सुमर संग कै मारे॥टेक॥
औघट घाट नहीं हौं पाऊं॥ कटे कठिण कहौं जाऊं न आऊं॥१॥
आवण जाण जगत भरमाया॥ झूठ सबै सांचे रघुराया॥२॥
परसा उबर्‌या सांचि अकेला॥ सतगुरु संग रमैं सुख चेला॥३॥२८॥

राग सोरठी--

हरि हौं कर्म हीण अज्ञानी॥
जो कुछ कृपा तुम्हारी मोसौं मैं मतिमूढ न जानी॥टेक॥
अति अविवेक अंधमति वोछी वोछि बात बिचारी॥
हरि वर सेल सिरोमनि सु कयो न मीत मुरारी॥१॥
मैं कीनी प्रीती नीच ऊसर सौं विषै खार जामाहीं॥
हरि अमृत सुख सिंधु निकट पैं ताको भरोसो नाहीं॥२॥
इद्रिनि सुवादी कह्यो सोई कीयो सोच पोच न पिछाणी॥
ब्रम्ह सकल व्यापक सचराचर ताहू की कांनि न मानी॥३॥
लीनौं मानि विषै सर्वस दै अण बूझ्यो अण जान्यो॥
सिर ऊपरि निज राज कलपतर सो न कछु करि मान्यों॥४॥
जगत जूठि आधीन स्वान मन लाग्यो रहत सोई गावै॥
बरजै बेद साध गुरू सति करि सो मानती न आवै॥५॥
हरि तैं विमुख विषै सौं सनमुख रहत सदा मन दीयो॥
परसा परम अमीरस परहरि मांगि मांगि विष पीयो॥६॥२९॥

राग सोरठी--

तुम सौं कहाँ सुनौं हो देवा।। मोहि दोस कहा जु न मानो सेवा।।टेक।।
तुम दीना नाथ अनाथ सनेही।। मैं तैं समझि धरी किन देही।।१।।
तन मन सौज तुम्हारी माया।। जहां तहां मोकौं तुमहिं पठाया।।२।।
तुम कृपनपाल गोपाल दयाला।। मोहि दोस देय जिन होय निराला।।३।।
सब मांहि तुम तौ मांहि सबांई।। सब एकमेक कुछ लख्यो न जाई।।४।।
परसराम प्रभु भया न विचार हूं।। सांच कहत मारहूं भावै तारहूं।।५।।३०।।

राग सोरठि--

हरि दीन दयाल भजौ रस पीऊं।। सोई पैंज न मिटै इहै सुणि जीऊं।।टेक।।
भगत वछल भगतानि के राया।। निगम साखि गुरु तुमहिं बताया।।१।।
व्यापक ब्रम्ह सकल के स्वामी।। तुम जानत हो सब अंतर जामी।।२।।
सब उपजै खपै सबै तुम माहीं।। तुम बिण राम अबर को नाहीं।।३।।
पतित सहाय विडद नित रहियो।। परसा सरणि गयां सब कहियो।।४।।३१।।

राग सोरठि--

सुणियै हो प्रीतम स्याम संदेसौ।। मैं दास दुखि दरसन बिण कैसौ।।टेक।।
विरह विथा व्यापै दुख देही।। सुख जब होई तब मिले स्नेही।।१।।
निस दिन सोच रहै जीय मेरैं।। परसा जन की पीर न व्यापै तेरैं।।२।।३२।।

राग सोरठि--

तुम दीन दयाल भगत हितकारी।। तो बिन दुख व्यापै मोहि भारी।।टेक।।
अंतर विथा बसै तन जारै।। तो बिन स्याम विरह सर मारै।।१।।
तन मन विकल बहुत दुख पाऊं।। सहि न सकौं हरि बैद बुलाऊं।।२।।
बैद बिनां रोगी क्यौं जीवै।। जब लगै प्रेम सरस नहिं पीवै।।३।।
परसा जन तुम बिन यौं सोचै।। अति आतुर मिलिवै कौं लौचै।।४।।३३।।

राग सोरठि--

भगति की गति प्रभु मैं न पिछाणी।।
परिहरि प्रगट प्रताप तुम्हारों कछु और और उर आणी।।टेक।।
कीयो कछू कह्यो कछू औरै हरि पति वरत न गायो।।
परहरि पर्म नांव अमृत फल आक धतूरौ खायौ।।१।।

जनमत ही तन मन धन अर्प्यो कर्म काल के तांई॥
पढि गुणि सुणि वरिषत रह्यो रीतौं औंधै कुंभ की नांई॥२॥
साखि साखां वेद विद्याबल कहत सुनत जम लूटे॥
निज विश्राम सरणि विण झूठी कहौ क्यौं जु हम घूटे॥३॥
तारे तैं जो तिरैं भगत भौ पारि साखि निगम नित गावै॥
रवि परकास प्रगट सब देखैं पैं अंध न परचौ पावै॥४॥
निगम निकलप समीप सदा सोई तजत न कबहूं साथ॥
ताकौ सुख ऐसो कहूं परसा मानौं दीप अंध कै हाथ॥५॥२४॥

राग सोरठि--

हरि की भगति न हिरदै आई॥
परहरि पर्म कपूर अभै बल जगत झूठि खलि खाई॥टेक॥
पीयो न न्है ल्यो लीण हीण मति अमीरस को झार्‌यो॥
घर घर फिरत दीन आसा वसि लोभ मोह कौ मार्‌यो॥१॥
ज्यौं माखी श्रिक चंदन परहरि मल सौ रत मंद भागी॥
यौं मन मगन स्वाद स्वारथ रत पति सौं प्रीत न लागी॥२॥
परसा प्रभु विण हाणि जाणि करि नाहिंन मन पछितायौ॥
तजी सरणी बडराज सिंघ की नीच स्वान सिर नायो॥३॥३५॥

राग सोरठि--

भांडी भई भगति बिण भारी॥ जो पै भज्यौ न देव मुरारी॥टेक॥
बिण भगवंत भजन जो करणी कथणी सुणी अति झूठी॥
निज विश्राम बिनां कहां बिरवै आवै ऊंति अपूठि॥१॥
मन वच कर्म पुकारत है सब संत निगम निज साखी॥
बिस्वा बीस सत्य कर श्री गुरु कहिवै कछु न राखी॥२॥
परसा जे जमद्वारि पर्‌यौ तै तिनका कौण अंदेसा॥
दाता गुणि सूर कवि पंडित सुणियौ सबै संदेसा॥३॥३६॥

राग सोरठि--

जो जिय उपजि न आवै काये॥
तब लग कहयां सुण्यां कछु नाहीं भावै वांचौ वेद सवाये॥टेक॥

दरिया भर्‌यो रहौ मुख नीरै जो पैं पीयो न जायें ।।
पियां बिना परम जल सीतल कैसे त्रिषा बुझाये ।।१ ।।
ज्यौं जल मांहि पषाण रहत है सो व कहा गलि जावे ।।
जो नर वाण द्रिष कौं बाहै फिरि सोई पछतावे ।।२ ।।
पाये बिना मरम मन कै हठि करणी करि पछतायों ।।
कलि जुग मूल भर्म बूडण कौ ताके हाथ बिकायो ।।३ ।।
जब लग प्रगट न होई उजारा भटकत भर्म भुलाये ।।
परसराम गुरू बाण वणै बिन तन की तपति न जाये ।।४ ।।३७ ।।

राग सोरठि--

कहैं कहा जो चेतन जाही ।। मन मूरख समझत नहीं माहीं ।।टेक ।।
देखत हीरा कर तैं खोवै ।। पाछै झूरि झूरि दूख रोवै ।।१ ।।
लागौ जीव कर्म की आसा ।। नाहीं हरि सुमरण वेसासा ।।२ ।।
नांहिन प्रीति प्रेम जो तारै ।। प्रेम बिना भौ जीविन हारै ।।३ ।।
परसा राम न कीयो सनेही ।। चाल्यौ हारि विषै वसि देही ।।४ ।।३८ ।।

राग सोरठि--

काहे कौ नाचै मन काहै को गावै ।। जो पै जीय वेसास न आवै ।।टेक ।।
पंडित वेद कथै समझावै ।। झूठ सबै जो मूल न पावै ।।१ ।।
काहै को पूजा भोग लगावै ।। जो मन परबसि अस्थिर नर होवै ।।२ ।।
परसराम प्रभु तजि जो धावै ।। पति पहिचांणि न सुखहिं समावै ।।३ ।।३९ ।।

राग सोरठि--

येक मन जहां कहीं ले लावो ।।
तहीं सुखी परमारथ स्वारथ पढि गुणि सुणि समझावो ।।टेक ।।
ज्यौं दर्पण दस बीस एक मुख जहिं सनमुख सोई देखै ।।
यौं सब राम काम परि पूरण जहां मन सोई लेखै ।।१ ।।
ज्यौं निर्मल नीर भर्‌यो यक दरिया रूचि बिण काम न आवै ।।
आरतिवंत पीवै सोई पीवै जो कोई तौ ताकी त्रिषा बुझावै ।।२ ।।
यौं भाव बिना भगवंत भर्म सम कारिज कछू न सरई ।।
जहां जहां प्रिति करत है यो मन तहीं तहीं अनुसरई ।।३ ।।

मन मैंमंत निरकुंस गज सम धरि आवत नहीं आण्यो।।
कोटि ग्रंथादिक परमोधै तऊ करत आपणौं जाण्यो।।४।।
तहां तहां जाय तहीं रुचि मानैं विष अमृत न पिछाणै।।
परसराम ममता या मन की कोई राम रमैं सोई जाणै।।५।।४०।।

राग सोरठि--

यो मन बरज न मानैं मेरी।। कैसे सरण रहूं हरि तेरी।।टेक।।
उलट्यो जात फिरत नहीं फैर्‌यो।। बलि मैंमंत विषै वन घेर्‌यो।।१।।
पहरत नहीं सहज की बेरी।। घरी न बसै निकसै करि सेरी।।२।।
परसा मन जीते जन कोई।। विन मन जित्यां बैकुंठ न होई।।३।।४१।।

राग सारेठी--

हरि हरि गाय रे मन गाय।।
सुणै किन मनुहारि सति करि कहत हूंअपणाय।।टेक।।
समझि निज गुर ग्यान चित दै वेगि विरंब न लाय।।
होत है तन हाणि दिन दिन जनम जूआ जाय।।१।।
पाय नर औतार औसर वादि दिन न गवाय।।
भजै किन भगवंत हित करि छाडि आन उपाय।।२।।
अंति जो डसै सोई निसदिन काल प्रगट्यो आय।।
देखतां बसि कीयो अपणौं तब न कछू वसाय।।३।।
सब छांडि दै जंजाल दुख सुख सोच पोच बहाय।।
परसराम अपार प्रभु की सरणि रहि सुख पाय।।४।।४२।।

राग सोरठि--

मन रे हरि विण हितू न कोई।।
बारंबार संभारि सुरति करि मति कबहुं दिढ़ होई।।टेक।।
कर्म उपाय सकल सिधि साधन साध्यां मिलन न होई।।
जो थिर राम बस्यो नहीं अंतरि तौ धरि वादि बिगोई।।१।।
जे जे कर्म आसधरि करिये जीव कौं बंधन सोई।।
राम सुमरि निरबंध आस तजि ज्यौं आवागवण न होई।।२।।
आसा छांडि निरास नांव निज तासौं जो परचौ होई।।

परसराम जन निकट पर्म पद मैं मेरी जब खोई ॥३॥४३॥

राग सोंरठि--

नैण राती है काहू और सों सु तोसौं न राचै॥ तू याकै मद काहे कौ नाचै॥टेक॥

ज्यौं कचरा बेली बध खारे॥ इन नारी जकि जकि बहु जरे॥१॥

बिन बोहयां उबर्‌यां नाहिं कोई॥ हाथि चढ़यो देखौ दिठि सोई॥२॥

याहि न लाज अबर की आवै॥ हरि की हजूरि गयो गहि ल्यावै॥३॥

पंडित गुणी सूर कवि जीते॥ आवत जात आस बसि रीते॥४॥

इनि केते नर विमुख करि खोये॥ गहि अपणौं रस मांहि समोये॥५॥

इनि सपणैं वसि करि बहु लुटे॥ हरि मिलि यांहि न मिले सेई छूटे॥६॥

या को यहै सुजानि विचारौ॥ परसा तजि जीतौ भावै भजि हारो॥७॥४४॥

राग सोरठि--

या तो तजि है रे तोहि तु याहि काहे को भजै॥

तू याकों भजि भावै तजि यातौ तोहि न भजै॥टेक॥

बाजी जु बनाई नाथि आवै न कहू कै हाथि॥

बहुतक पचि गयै चलि न काहूं कै साथि॥१॥

देखे हैं बहुत तोहि यह वसि न काहूं कै होय॥

मिलत न मन है सूं आपणौ अन्तर खोय॥२॥

पायो ही न काहूं कै मोहि जैहै रे उहकै तोहि॥

चंचल चलत साखि अस्थिर न होई॥३॥

काहू तैं रहै रिसाय काहूं कौ लेत मनाई॥

काहूं कौं चलत छाडि काहूं कै बसत जाय॥४॥

बहु तक वसि करै बहुतन कै मन हरे॥

परसा प्रभु की मति जीव काहूं तैं न डरे॥५॥४५॥

राग सोरठि--

माई मोहन मुख को देखत मोहनि परैं॥ अति ही अनूप रूप मन कौ हरैं॥टेक॥

अखियां देखन गई देख्या तैं तहिंकी भई॥ बूझ्यां तैं बोलत नाहिं लज्या की लई॥१॥

हो चितवनी मैं गही तैंसी न जात कहि॥ सुख को सदन देख्या ठगि सी रहि॥२॥

कहता कहि न जाय हरले सोई पत्याय॥ तजि न सकत तासौं रहत समाय॥३॥

पल न राख्यो रहाय वेध्यो सु ताहिं पैं जाय॥ परसा प्रभु कौं दरस पावत मन न अघाय॥४॥४६॥

राग सोरठि--

हरि हरिजन की बोर ढरै॥
दुरजन कष्ट दैंत तब तब ही आय साय करै॥टेक॥
व्यंग वचन केई कहत हासि करि कैई करि क्रोध लरै॥
कैई दुख देत लेत परचैं कौं कुल बल समत धरै॥१॥
कैई दुर्वाद वुचारत निर्लज बंघुनि कर्न भरै॥
फिरि सनमुख लै करत प्रसंसा मिलि नाव भरै॥२॥
केई वुतपात उठावत हटि हठि सेवा सौंज हरै॥
लै लै दोस लगावत हरिजन वाद विवाद अरै॥३॥
करत उपाय मरन कौ अनहित व्है मन मतै खरै॥
नित रक्षक करूणामय केसव दुष्टनि कहा सरै॥४॥
चरणोदक करि पियो हलाहल जग जीवत न मरै॥
ताकी साखि प्रगट मीरां जन जाकौं अजर जरै॥५॥
सोई नर असुर आत्मा घाती जो हरि तैं न डरै॥
भगति विमुख हरि सरण हीण नर निहचै नरक गरै॥६॥
जो निंदा करै पतित पापी पसु पाथर नांव भरै॥
सोई बूढे भगत तिरै जन परसा हरि भजि पारि तरै॥७॥४७॥

राग मारु--

हरि जन की यौं राखी रेख मही॥
मानौ जगत प्रहलाद भगत की कीरति पहुंमि कही॥टेक॥
चीर्‌यो गात जनेऊ निकस मिटि गई अटक ठही॥
बोले सालिगराम सरोतरि सुणि सब संकट ढही॥१॥
द्विज मंजन जल ऊंच कहित सुणि सलिता सोच गही॥
परिहरि सिंधु स पल कौं सनमुख यौं गंगा उलटि बही॥२॥
न्यौंते विप्र हहेड़ जुराणी गुरु हित दोष दही॥
भोजन करत उम्है आपस महिं कहत सुमिल तरुहि॥३॥
महिमां अमित सुणी मैं नींकै संतनि सापि कही॥

परसा नाम रविदास की पैंज प्रकटनि रही॥४ ॥१॥

राग मारु--

राजा श्री गोपाल हमारै॥
सरणई समरथ सुखदाता सब दुखदोष निवारै॥टेक॥
दुर्योधन सिसुपाल सरणि जो आई परै सु न डारै॥
विनसै नहीं कछु ता जन कौ जे रहै सदा हरि सारै॥१॥
हरि आपन पै अपणैं जन कै कारिज सबै संवारै॥
हरि की सरणि गयां जम डर पैं ताहि कहौ को मारै॥२॥
जन कौं सदा परखित कैं ज्यौं हरि आपन संवारै॥
जो सुमरै पापी अपराधी हरि तिनकै अघजारै॥३॥
परम जिहाज नाव भजि परसा जो भव सागर तैं तारै॥४॥२॥

(इति श्री श्री श्री श्री स्वामी श्री परसराम देव जी कृत ग्रंथ राम सागर संपूर्ण॥
श्रीराधामाधौजी॥ श्री सरवेस्वर जी॥ श्रीगोकुल चंद्रमा जी श्रीगोपीचंद
बल्लभजी॥.............)

श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज की तपःस्थली
के मध्य हवनकुण्ड एवं तुलसी माला के मनोहर दर्शन